प्रकाश और वर्ण

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला---६५

प्रकाश और वर्ण

(का स्वरूप, खुली हवा में)

लेखक
प्रोफेसर एम. मिनैर्ट
अनुवादक
भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव
एम एस-सी

हिन्दी समिति
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रकाशकीय

आकाश से गिरनेवाली बर्फ कभी-कभी काले रग की क्यो दिखाई देती है ? सूर्य की किरणे एकाध बार हरे रग की क्यो प्रतीत होती है, उगते हुए तथा डूबते हुए सूर्य का बिम्ब सामान्य से अधिक बडा क्यो दृष्टिगोचर होता है, वर्षा की बूँदो पर पडनेवाले प्रकाश की माया से किस तरह इन्द्रधनुष का निर्माण होता है, 'फाता मोर्गाना' मरीचिका किस तरह उत्पन्न होती है जिससे ऐसा जान पडता है मानो कोई जादू की नगरी अधर मे लटक रही हो ?

असाधारण प्रकाशकीय घटनाओ का अवलोकन करने पर इस प्रकार के सैकडो प्रश्न आपके मन मे उठ सकते है। यूट्रेख्त विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मिनैर्ट ने इस पुस्तक मे ऐसे ही सैकडो प्रश्नो के उत्तर दिये है। प्रश्नो का समाधान सरल तथा सुबोध शैली मे प्रस्तुत किया गया है जिसे कोई भी प्रबुद्ध पाठक आसानी से समझ सकता है। प्रकृति मे हम नित्य ही ऐसी चीजे देखते रहते है जो ऐन्द्रजालिक के चमत्कार की तरह अत्यन्त मनोरजक प्रतीत होती है। प्रयोगशाला मे बैठे रहने से इनका आनन्द नही उठाया जा सकता वरन् घरो के बाहर खुले आकाश मे सूक्ष्म निरीक्षण-मनन से ही इनका रहस्य समझा जा सकता है।

• यह रोचक ग्रन्थ न केवल भौतिकीज्ञो, ज्योतिर्विदो, भूगोल-शास्त्रियो तथा कला-पारखियो के काम का है बल्कि प्रत्येक विचारशील पाठक के लिए भी इसमे यथेष्ट रुचिकर सामग्री समाविष्ट है। प्रकाश और वर्ण के प्रतिदिन के पर्यवेक्षण का समाधान तो इसमे आपको मिलेगा ही, साथ ही इस क्षेत्र मे यह पुस्तक आपको नवीन अनुभवो का भी दिग्दर्शन करायेगी जो अन्यथा आपकी नजरो की पकड मे शायद ही कभी आ पाते। इसमे वे सशोधन तथा परिवर्धन भी समाविष्ट है जो अग्रेजी के आगामी सस्करण मे आनेवाले है और जिन्हे लेखक ने स्वय हमारे पास पहले से भेज दिया था।

ठाकुरप्रसाद सिह

सचिव, हिन्दी समिति

खुली सड़क का गीत

पैदल और हलके हृदय से मै खुली सडक को पकडता हूँ ,
स्वस्थ हूँ, स्वच्छन्द हूँ, ससार है मेरे सामने ,
है मेरे सामने लम्बी गैरिकवर्णी राह, ले जाती हुई मुझे, जहाँ भी मै चाहूँ ।

अब और मै प्रचुर वैभव नही माँगता, मै स्वय ही हूँ प्रचुर वैभव ,
अब और मै ठुनकता रोता नही, न और बिलमाता ही हूँ, न और कुछ चाहता ही हूँ,
हो गयी बस अब घर-भीतर की शिकायते, ग्रथालय, कलहमयी आलोचनाएँ,
दृढ और निश्चिन्त, मै खुली सडक की यात्रा करता हूँ ।

सोचता हूँ सभी वीर कर्मो का चिन्तन हुआ था मुक्त पवन मे ,
और सभी स्वच्छन्द कविताएँ भी ,
सोचता हूँ मै स्वय ही यहाँ रुक जाता और अद्भुत कर्म करता ,
सोचता हूँ, जो कुछ भी सडक पर मिलेगा, उसे मै चाहूँगा ,
और जो भी मुझे देखेगा, मुझे चाहेगा ,
सोचता हूँ जो कोई भी मुझे दिखाई देता है, अवश्य ही सुखी होगा ।

मै अनन्त व्योम के महान् झकोरो को साँस मे भरता हूँ ,
पूरब और पश्चिम है मेरे, उत्तर और दक्षिण है मेरे ।

जितना मैने सोचा था उससे अधिक हूँ मै विराट्, अधिक हूँ मै श्रेष्ठ ,
मुझे ज्ञात नही था कि इतना शिवत्व था मेरे भीतर ।

तो आओ ! तुम जो भी हो, मेरे साथ यात्रा करो !
मेरे साथ यात्रा करते समय तुम कभी थकन नही जानोगी ।

धरती कभी नही थकती ,
धरती है उजड्ड, शान्त, पहले पहल अबोध्य, प्रकृति है उजड्ड ,
और पहले पहल अबोध्य ,

मत हो निराश, बस चलती चलो, वहाँ है दिव्य पदार्थ भलीभाँति प्रच्छन्न ,
तुम्हारी शपथ, वहाँ है दिव्य पदार्थ, शब्द जितना वर्णन कर सकते ,
उससे भी कही अधिक सुन्दर ,

साथी ! तुम्हारी ओर हाथ बढाता हूँ !
तुम्हे अपना प्यार देता हूँ जो वैभव से अधिक मूल्यवान् है ,
तुम्हे मै अपने आपको ही देता हूँ उपदेश या कानून के सामने ,
क्या तुम मुझे अपने आप को दोगी ? क्या तुम मेरे साथ यात्रा करोगी ?
क्या हम, जब तक जियेगे, परस्पर इस सकल्प पर दृढ रहेगे ?

—वाल्ट ह्विटमन—(लीव्ज आव ग्रास)
(चुने हुए अश)
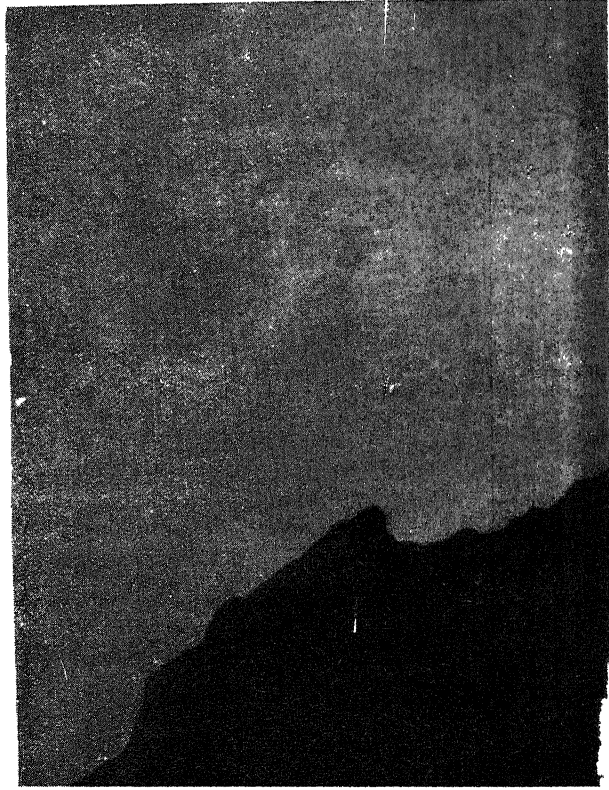
प्लेट I—ब्रोकेन की प्रेत-छाया

भूमिका

प्रकृति का प्रेमी एक आन्तरिक प्रेरणा से उत्प्रेरित होकर प्राकृतिक घटनाओ से उतने ही सहज भाव से प्रभावित होता है जितने सहज तरीके से उसका श्वास लेना या जीवन की अन्य क्रियाएँ चलती है। धूप और वर्षा, गर्मी और सर्दी, प्रेक्षण के लिए उसे समान रूप से ग्राह्य होती है, नगर मे, वन मे, रेतीले प्रदेश मे और समुद्र पर; सर्वत्र उसे नयी चीजे मिलती है जिनमे वह दिलचस्पी लेता है। प्रति क्षण नवीन तथा रोचक घटनाओ से उसका ध्यान आकृष्ट होता रहता है। देहाती क्षेत्रो मे उत्फुल्ल कदमो से वह घूमता फिरता है, उसकी आँखे तथा उसके कान सतर्क रहते है, आसपास के सूक्ष्म प्रभावो के प्रति वह सवेदनशील रहता है, सुवासित वायु मे वह भरपूर साँस लेता है, तापक्रम के सूक्ष्म अन्तर की भी अनुभूति करने की वह सामर्थ्य रखता है, यदा-कदा एकाध झाडी को वह छू लेता है ताकि धरती की चीजो से वह घनिष्ठतर सम्पर्क स्थापित कर सके—वह एक ऐसा व्यक्ति है जो जीवन की सम्पन्नता के प्रति अत्यधिक मात्रा मे अभिज्ञ है।

वस्तुत यह सोचना गलत है कि वैज्ञानिक रीति से प्रेक्षण करनेवाला व्यक्ति प्रकृति के भाव-प्रदर्शन की अपरिमित विविधता के काव्य-सौन्दर्य की अनुभूति नहीं कर पाता है, क्योकि प्रेक्षण के अभ्यास से सौन्दर्य की हमारी परख और भी पैनी हो जाती है, अत हर एक पृथक्-पृथक् तथ्य जिस विविध [illegible] पृष्ठभूमि पर चित्राङ्कित होता है उसकी आभा मे वृद्धि हो जाती है। घटनाओ के पारस्परिक सम्बन्ध, भू-दृश्य के विभिन्न अवयवो मे कार्य-कारण के तारतम्य, उन दृश्यों को सामञ्जस्य के सूत्र मे परस्पर पिरो देते है जो अन्यथा एक दूसरे से अलग-अलग घटनाओं के क्रममात्र बने रह जाते।

इस पुस्तक मे वर्णित घटनाएँ, अशत हमारे दैनिक जीवन की चीजें है जिनका वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करना रोचक होता है, तथा अशत ऐसी चीजे है जो अभी तक हमारे लिए अपरिचित रही है, यद्यपि उन्हे किसी भी क्षण देखा जा सकता है, शर्त केवल यह है कि हम नेत्रो पर इस जादू की छडी को घुमा दे कि 'देखना क्या है इसे हम पहले से जान लें।' और अन्त मे प्रकृति के कुछ विलक्षण और दुर्लभ ऐसे 'करिश्मे'

है जो जिन्दगी मे बस एकाध बार ही घटते है, अत अत्यन्त निपुण प्रक्षक को भी उनका अवलोकन करने के लिए बरसो तक प्रतीक्षा करनी पड सकती है। और जब उनका प्रेक्षण वह कर पाता है तो वह उनकी अभूतपूर्वता की अनुभूति तथा एक अवर्णनीय आह्लाद की भावना से ओतप्रोत हो जाता है—यह अनुभूति उसके अन्तरग मे पैठ जाती है।

चाहे कितना ही असाधारण यह क्यो न प्रतीत होता हो, किन्तु तथ्य यही है कि उन्ही चीजो पर हमारा ध्यान जाता है जिनसे हम परिचित रहते है, नयी चीजो को देख पाना अत्यन्त कठिन होता है, भले ही वे एकदम हमारी आँखो के सामने ही मौजूद क्यो न हो। प्राचीन काल मे तथा मध्य युग मे सूर्य के अनगिनत ग्रहणो का अवलोकन किया गया था, फिर भी १८४२ के पूर्व मुश्किल से ही सूर्य के क्रातिचक्र (कोरोना) पर किसी का ध्यान जा सका था, यद्यपि आजकल सूर्य-ग्रहण की यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण घटना समझी जाती है और नगी आँखो से भी हर कोई इसे देख सकता है।

इन घटनाओ के प्रति आपका ध्यान आकृष्ट करने के निमित्त मैंने इस पुस्तक मे उन चीजो का सकलन करने का प्रयत्न किया है जो प्रकृति के योग्य अध्येताओ के प्रयत्न-स्वरूप कालान्तर मे हमारे लिए सुपरिचित हो गयी है। इसमे सन्देह नही कि प्रकृति मे इनसे भी कही अधिक सख्या मे अनेक तथ्य भरे पडे है जिनका प्रेक्षण अभी तक नही किया जा सका है, प्रति वर्ष नवीन घटनाओ के सम्बन्ध मे अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होते है, इस बात पर विचार करना कुछ अजीव-सा लगता है कि अनेक ऐसी घटनाओ के प्रति हम कितने अन्धे तथा बहरे है, जिनका भविष्य की पीढियाँ अवश्य अन्वेषण कर लेगी।

प्रकृति के प्रेक्षण से अभिप्राय सामान्यत वनस्पतियो तथा जीवो का अध्ययन समझा जाता है, मानो वायु, ऋतुओ तथा बादलो के मनोरम प्रदर्शन, सहस्रो किस्म की ध्वनियाँ जो हमे अपने इर्द-गिर्द मिलती है, लहरे, सूर्य की किरणे तथा पृथ्वी की थरथराहट आदि प्रकृति के अवयव नही है! निर्जीव पदार्थ-जगत् के क्षेत्र मे भौतिक विज्ञान के अध्येता के लिए ऐसी पाठ्यपुस्तक, जिसमे उन सभी बातो का उल्लेख किया गया है जो उसके लिए विशेष रूप से प्रेक्षणीय है, उतनी ही आवश्यक है जितनी जीव-वैज्ञानिक के लिए वनस्पति तथा प्राणि-जगत् पर लिखी गयी पाठ्यपुस्तक। अनिवार्यत. हमे ऋतुविज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान, भूगोल तथा जीवविज्ञान के क्षेत्र मे प्रवेश करना होगा, फिर भी मुझे आशा है कि इस अध्ययन के फलस्वरूप इन विभिन्न क्षेत्रो के बीच ऐक्य का सूत्र हम पा सकेगे।

चूँकि प्रकृति के सरल तथा प्रत्यक्ष प्रेक्षण पर ही हम विचार करेगे, अत निश्चित रूप से हमे निम्नलिखित का परिहार करना पडेगा—(१) ऐसी चीजे जो केवल यत्रो द्वारा ही देखी जा सकती है (यत्रो के बजाय हमे इन्द्रियज्ञान पर ही विशेष रूप से आश्रित होना पडेगा और इसके लिए अपनी ज्ञानेन्द्रियो की विशिष्टताओ की पूर्ण जानकारी हमे होनी चाहिए, (२) ऐसे तथ्य जो केवल लम्बे काल तक के अगणित प्रेक्षणो के फलस्वरूप प्राप्त किये जा सकते है, (३) ऐसे सैद्धान्तिक तथ्य जिनका हमारी दृष्टि-अनुभूति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही है।

हम देखेगे कि इतने पर भी प्रेक्षण की प्रचुर मात्रा की सम्भावना शेष रह जाती है, दरअसल भौतिकी की एक भी प्रशाखा ऐसी नही है जो बाह्य क्षेत्र मे लागू न हो सके, और अक्सर तो बाह्य क्षेत्र मे यह विज्ञानशालाओ के किसी भी प्रयोग से अधिक व्यापक पैमाने पर प्रदर्शित होती है। अत यह बात ध्यान मे रखिए कि इस पुस्तक मे वर्णित प्रत्येक तथ्य स्वय आप की समझ और प्रेक्षण की सीमा के भीतर आता है। इसकी प्रत्येक बात आप के अवलोकन के लिए है, आपके द्वारा किये जाने वाले प्रयोग के लिए भी !

जहाँ कही हमारी व्याख्या कदाचित् अत्यधिक सक्षिप्त जान पडती हो, उस स्थल के लिए पाठक को हम सुझाव देगे कि वह किसी प्रारम्भिक पाठ्यपुस्तक की सहायता से भौतिकी के आधारभूत सिद्धान्तो का पुन अनुशीलन कर ले।

भौतिकी के शिक्षण के लिए बाह्य क्षेत्रो के प्रेक्षण के महत्त्व को अभी तक पर्याप्त रूप से आँका नही जा सका है। ये प्रेक्षण हमारी शिक्षा को दैनिक जीवन की आवश्यकताओ के अनुरूप समानुयोजित करने के प्रयत्न मे उत्तरोत्तर अधिक योग देते है, सहस्रो प्रश्न पूछने के लिए ये हमे स्वाभाविक तरीके पर प्रेरित करते है और उनकी बदौलत बाद मे हम जान पाते है कि स्कूल मे जो कुछ हमने सीखा है वह स्कूल की दीवारो के बाहर हमे बारम्बार देखने-सुनने को मिलता है। और इस प्रकार प्रकृति के नियमो का सार्वभौम अस्तित्व हमे एक सतत, आश्चर्यजनक तथा प्रभावशाली वास्तविकता के रूप मे प्राप्त होता है।

फिर यह पुस्तक उन सभी लोगो के लिए लिखी गयी है जो प्रकृति के पुजारी है, उन किशोरो के लिए जो विस्तृत जगत् के प्राङ्गण मे जाकर कैम्पफायर के गिर्द इकट्ठे होते है, उस चित्रकार के लिए जो भू-दृश्य के आलोक और वर्णविन्यास की प्रशसा तो करता है, किन्तु उसे समझ नही पाता है, उनके लिए जो देहाती क्षेत्रो मे रहते है, उन सब लोगो के लिए जो यात्रा के शौकीन है, तथा शहर मे रहनेवालो के लिए भी जिनके

लिए अँधेरी गलियो के कोलाहल मे भी प्रकृति के सौन्दर्य का प्रदर्शन लभ्य हो सकता है। प्रदक्ष भौतिकीज्ञ के लिए भी, हम आशा करते है कि इस पुस्तक मे कुछ नवीन तथ्य अवश्य मिलेगे, क्योकि इसमे वर्णित क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तथा अक्सर विज्ञान के सामान्य पाठ्यक्रम के दायरे के यह बाहर पडता है। अत अब यह बात समझी जा सकती है कि क्यो अत्यन्त जटिल प्रेक्षण का तथा साथ-साथ अत्यन्त सरल किस्म के प्रेक्षणो का भी समावेश इस पुस्तक मे किया गया है जिनका वर्गीकरण उनके पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर किया गया है। सम्भवत यह ग्रन्थ अपने ढग का एक मात्र प्रयत्न है, अत यह पूर्णतया दोषमुक्त भी नही है। विषयवस्तु के सौन्दर्य तथा उसकी व्यापकता की गुरुता से मै अत्यधिक अभिभूत हूँ, तथा इसकी समुचित व्याख्या के निमित्त अपनी असमर्थता के प्रति भी अनभिज्ञ नही हूँ। पिछले २० बरसो से मै व्यवस्थित ढग से इस सम्बन्ध मे प्रयोग करता आ रहा हूँ तथा इस पुस्तक मे मैने हर प्राप्त पत्रिका के हजारो लेखो का सार भी प्रस्तुत किया है, यद्यपि इसके लिए केवल उन्ही लेखो को मैने चुना है जो या तो व्यापक सर्वेक्षण पर आधारित है, या किन्ही अत्यन्त विशिष्ट तथ्यो पर प्रकाश डालते है। किन्तु इस बात से मै भली-भाति अवगत हूँ कि यह सकलन कितना अपूर्ण है। अनेक बाते जिनकी खोज की जा चुकी है, अभी तक मेरी जानकारी मे नही आ सकी है और अनेक बाते विशेषज्ञो के लिए भी अभी समस्याएँ ही बनी हुई है। अत मै उन व्यक्तियो के प्रति कृतज्ञ हूँगा जो स्वय अपने प्रेक्षण द्वारा या प्रकाशित सामग्री के आधार पर मेरी त्रुटियो के सुधारने मे या उन तथ्यो की पूर्ति मे जो छूट गयी है, मेरी सहायता करेगे।

—एम. एम.

विषय-सूची

प्लेट-सूची

XV	(a)	पुन्ज बादलो मे से गुजरनेवाली सूर्य-किरणो की शलाकाएँ	अन्त मे
	(b)	गड्ढे के पानी के विक्षुब्ध धरातल पर गिरनेवाली छाया	,,
XVI	(a)	हीदर पौदो के मैदान का दृश्य जब सूर्य सामने के रुख है, तथा प्रतिबिम्ब का दृश्य जिसमे सूर्य पीछे की ओर पडता है	,,
	(b)	लान पर घास काटने वाली मशीन के चलाये जाने पर निशान	,,

चित्र-सूची

अध्याय १

धूप और छाया

१ सूर्य्य के प्रतिबिम्ब

वृक्षो के झुण्ड की छाया मे भूमि पर प्रकाश के छोटे बडे अनेक "धब्बे" या खण्ड हम देखते है जो इधर-उधर बेतरतीब बिखरे रहते है, किन्तु सभी की शक्ल समान रूप से दीर्घ वृत्ताकार होती है। इनमे से किसी एक के सामने पेसिल सीधी रखिए, पेन्सिल और साये के हाशिये को मिलानेवाली रेखा वह दिशा बतलाती है जिधर से प्रकाश की किरणे आकर भूमि पर नन्हा धब्बा बनाती है। अवश्य ये सूर्य्य की किरणे है जो वृक्ष की चोटी के सूराख को भेद कर आ रही है, हमारी आँखो को पत्तियो के बीच यत्र-तत्र चकाचौध उत्पन्न करनेवाली चमक दीख पडती है।

आश्चर्य की बात यह है कि ये सभी धब्बे एक ही शक्ल के है, यद्यपि इस बात की सम्भावना कम ही है कि ऊपर के सभी सूराख और झरोखे इतने बढियाँ तौर पर एकदम एक ही सरीखे और गोल या मण्डलाकार हो। इनमे से किसी एक प्रतिबिम्ब के सामने कागज का टुकडा इस तरह रखिए कि किरणे कागज की सतह को लम्बवत् काटे। आप देखेगे कि अब यह धब्बा दीर्घवृत्त की शक्ल का नही बल्कि वृत्ताकार है। कागज को और ऊपर उठाइए, धब्बा छोटा ही होता जायगा। अत हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि किरणो की शलाकाएँ शकु की शक्ल की है और ये धब्बे दीर्घवृत्त की शक्ल के केवल इसलिए है कि भूमि की सतह इन्हे तिरछे काटती है।

इस घटना की उत्पत्ति का कारण यह है कि सूर्य्य एक बिन्दु मात्र नही है। कोई भी एक अत्यन्त सूक्ष्म छिद्र P (चित्र १) सूर्य्य का पूर्णतया स्पष्ट प्रतिबिम्ब A B बनाता है और अन्य सूक्ष्म छिद्र P′ कुछ थोडा हटा हुआ प्रतिबिम्ब A′ B′ (बिन्दुओ से प्रदर्शित) बनाता है, कुछ और बडा छिद्र जिसमे P और P′ दोनो ही हो, सूर्य्य का थोडा अस्पष्ट किन्तु अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब A′ B बनायेगा।

वास्तव मे हम कम-बेश हर तरह के चटकीलेपन वाले धब्बे देख सकते है, अधिक चटकीला धब्बा साथ ही साथ कम स्पष्ट भी होगा।
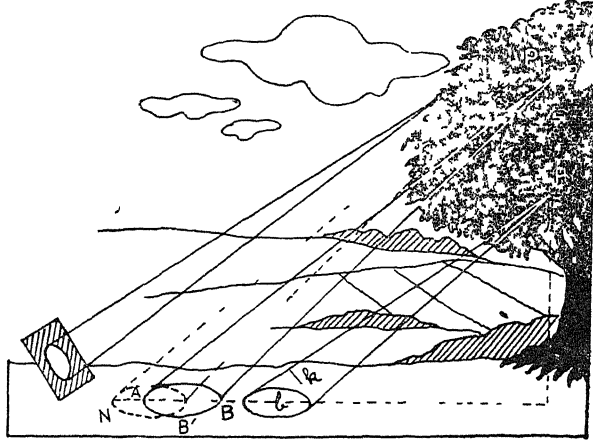
चित्र १—**वृक्ष के घने झुरमुट मे प्रवेश करती हुई सूर्य-रश्मियाँ।**

इसकी सम्पुष्टि मे इस बात पर ध्यान दीजिए कि जब सूर्य्य के सामने से बादल गुजरते है तो हर धब्बे के ऊपर से उनकी छाया को आप गुजरते हुए देख सकते है किन्तु ये उल्टी दिशा मे चलती है, सूर्य्य के आशिक ग्रहण के समय सूर्य्य के ये सभी प्रतिबिम्ब अर्द्ध चन्द्राकार, हॅसिया की शक्ल के बनते है। जब कभी सूर्य्य-पृष्ठ पर कोई बडा धब्बा प्रगट होता है तो यह नीचे बननेवाले स्पष्टतम सूर्य्य-प्रतिबिम्ब पर भी दृष्टिगोचर होता है। आप सूर्य्य का अत्यन्त स्पष्ट प्रतिबिम्ब इस प्रकार प्राप्त कर सकते है—दफ्ती के टुकडे पर सुई से एक छोटा पूर्णतया वृत्ताकार सूराख बनाइए और इसे धूप मे इस तरह पकडिए कि सूराख मे से गुजरनेवाली किरणे नीचे छाया की आड मे जमीन पर गिरे।

इस ढग से विभिन्न दूरी पर बननेवाले सूर्य्य-प्रतिबिम्बो को वर्गाकार खानेवाले कागज पर नापिए।

अत सूर्य्य-मडलक द्वारा धरती के किसी बिन्दु पर जो कोण बनता है वह सूर्य्य-प्रतिबिम्ब बनानेवाले शकु के शीर्षकोण A P B के बराबर होगा। इस तरह के छोटे कोण हम प्राय 'रेडियन' मे नापते है। हम जब कहते है कि यह कोण $\frac{1}{108}$ रेडियन

का है तो इसका अभिप्राय है कि 108 से० मी० की दूरी पर सूर्य्य 1 से० मीटर व्यास का प्रतीत होता है या 1080 सेंटीमीटर की दूरी पर यह 10 सेंटीमीटर व्यास का प्रतीत होता है (चित्र २)। अत प्रगट है कि स्पष्ट बननेवाले सूर्य्य-प्रतिबिम्ब का
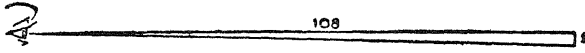
चित्र २—**सूर्य का मण्डलक हमे $\frac{1}{108}$ रेडियन के कोण पर दिखलाई देता है।**

व्यास उससे नापी गयी सूराख की दूरी का 108 वाँ भाग अवश्य होना चाहिए और धुँधले, अस्पष्ट प्रतिबिम्ब के व्यास के लिए इस मान मे पत्तियो के बीच के सूराख का व्यास भी और जोडा जाना चाहिए। वृक्ष के नीचे बननेवाले कम चटकीले किन्तु स्पष्ट प्रतिबिम्ब को कागज पर इस तरह प्राप्त करिए कि किरणे कागज पर लम्बवत् गिरे। रोशनी के धब्बे का व्यास k नापिए तथा एक डोरी से कागज और पत्तियो के झुरमुट के सूराख के बीच की दूरी भी नापिए। क्या k वास्तव मे $L \times \frac{1}{108}$ के बराबर है ?

सपाट सतह पर सूर्य्य के प्रतिबिम्ब जब दीर्घवृत्त की शक्ल के बनते है तब हम दीर्घवृत्त का लघु अक्ष k और दीर्घ अक्ष b नापते है। इन दोनो का अनुपात बराबर होगा वृक्ष की लम्ब ऊँचाई H और दूरी L के पारस्परिक अनुपात के। इसका अर्थ है कि ऊँचाई $H=\frac{k}{b} \times L=108\frac{kk}{b}$। इस ढग से 'बीच' वृक्ष की पत्तियो के झुरमुट के नीचे बनने वाले एक विशेष बडे आकार के सूर्य्य-प्रतिबिम्ब के अक्ष २१ इच और १३ इच नापे गये, अत ऊपर के सूराख की, धरती से नापी गयी ऊँचाई ८७० इच या ७२ फुट ६ इच हुई।

ध्यान दीजिए कि प्रात और सन्ध्या को सूर्य्य के प्रतिबिम्ब अधिक दीर्घ वृत्ताकार बनते है जब कि दोपहर के निकट ये अधिक गोल होते है। सूर्य्य के बढिया प्रतिबिम्ब प्राय 'बीच', 'लाइम' तथा 'स्काइमोर' वृक्षो के साये मे बनते है किन्तु पोप्लार, एल्म या मैदानी पेडो के नीचे बहुत कम।

छिछले पानी के किनारे खडे वृक्षो से बननेवाले सूर्य्य-प्रतिबिम्ब को देखिए, ये पानी मे नीचे पेदे पर विचित्र शक्लो मे बने हुए दिखलाई देते है।

२ छाया

धरती पर बननेवाली स्वय अपनी छाया को देखिए, आपके पैरो की छाया स्पष्ट होती है किन्तु सिर की नही। किसी वृक्ष के तने या खम्भे के निचले भाग की छाया स्पष्ट उभरती है जब कि ऊपरी भाग की छाया ऊँचाई बढने के साथ ही अधिक स्पष्ट और धुँधली होती जाती है।

कागज के तख्ते के सामने अपना हाथ फैलाकर रखिए, छाया स्पष्ट होगी। हाथ को और अधिक दूर रखिए तो प्रत्येक उँगली की प्रच्छाया सँकरी हो जाती है जब कि उपच्छाया चौडी और बडी होती जाती है, यहाँ तक कि दूरी बढने पर ये एक दूसरे से मिल जाती है।

इन विशिष्टताओ का भी कारण यही है कि सूर्य एक बिन्दु मात्र नही है, इसी के अनुरूप सूर्य-प्रतिबिम्ब मे भी हमने यही देखा। उडती हुई तितली या चिडिया की छाया देखिए (हम इन चीजो पर बिरले ही ध्यान देते है), और आप पायेगे कि यह छाया एक गोल धब्बे सरीखी दीखती है—यह एक "सूर्य-छाया-चित्र" है।

बाडे को घेरने के काम मे आनेवाली तार की जाली की (जिसमे आयताकार खाने बने थे) छाया एक बार मुझे बहुत ही अजीब-सी लगी क्योकि उसमे तो केवल खडे तारो की छाया दीख रही थी, आडे तारो की नही। सूराख-कटे हुए कागज को धूप मे रखे तो कागज का प्रत्येक सूराख जमीन पर दीर्घवृत की शकल का रोशनी का धब्बा बनाता है। इसी प्रकार तार की छाया को भी हम मान सकते है कि यह नन्हे-नन्हे समान आकृति के दीर्घवृतो से बनी है जो अवश्य इस बार काले दीखते है और एक दूसरे के निकट लगे हुए होते है। जब ये तार के दीर्घ अक्ष की दिशा मे पडते है तो छाया विशेष स्पष्ट उभरती है और लघु अक्ष की दिशा मे छाया अस्पष्ट रहती है। (चित्र ३)
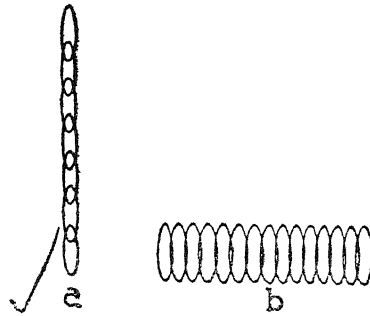
चित्र ३—सूर्य की तिरछी किरणो द्वारा लोहे के तार की छाया (a) स्पष्ट छाया, (b) अस्पष्ट छाया।

तार की जाली के पीछे एकदम निकट कागज रखिए और फिर इसे उत्तरोत्तर

दूर हटाते जाइए ताकि कागज पर क्रमश प्रगट होनेवाली विलक्षण छाया का अवलोकन किया जा सके। इसी प्रकार निरीक्षण उन दशाओ मे करिए जब सूर्य की किरणे धरती के साथ विभिन्न मान के कोण बनाती है, फिर जाली को तिरछी रखकर भी छाया की जाँच करिए।

लोक-कथाओ मे छाया को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसे भयानक शाप समझा जाता था कि किसी व्यक्ति की छाया विलुप्त हो जाय। ख्याल किया जाता था कि यदि किसी व्यक्ति की छाया सिर-विहीन है तो एक वर्ष के अन्दर ही उसकी मृत्यु हो जायगी। इस तरह की किवदन्तियाँ, जो हर देश और काल मे प्रचलित है, नि सन्देह हमारे लिए भी बडी दिलचस्प है, क्योकि इससे सिद्ध होता है कि नौसिखुए प्रेक्षको के निष्कर्ष पर विश्वास करने मे हमे विशेष रूप से सतर्कता बरतनी चाहिए, चाहे इन प्रेक्षको की सख्या कितनी ही अधिक क्यो न हो और वे कितने ही एकमत क्यो न हो।

३. सूर्यग्रहण और सूर्यास्त के समय सूर्य-प्रतिबिम्ब और छाया

सूर्य-ग्रहण के दौरान मे अधकार मे पडा चन्द्रमा सूर्य-मण्डलक के सामने सरकता हुआ-सा दिखलाई पडता है, अत थोडी ही देर बाद सूर्य के गोले का बस एक हँसिया सा आकार दृष्टिगोचर होता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस क्षण वृक्षो के झुरमुट के नीचे सूर्य के प्रतिबिम्ब चाहे छोटे हो या बडे हो अथवा अधिक या कम चटकीले, सभी नन्हे अर्द्ध चन्द्राकार हँसिये की शक्ल-जैसे बनते है, और इन सबके रुख एक ही ओर होते है।

ऐसे वक्त पर छाया की शक्ल भी इसी भाँति प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए हमारी उँगलियो की छाया अजीब किस्म की बनती है मानो सिरो पर पजो के नाखून टेढे बने हो। प्रत्येक नन्ही दीप्तिहीन वस्तु ऐसे समय अर्द्ध चन्द्राकार हँसियो की शक्ल बनायेगी, जैसे एक छोटे डण्डे की छाया एक ही किस्म के नन्हे-नन्हे हँसिया आकार की बहुत सी छाया के जुडने से बनती है, जिसमे हाशिये का मोड केवल सिरे पर प्रगट होता है।

इस तरह की दीप्तिहीन अलग-अलग पडी छोटी वस्तु का उपयुक्त उदाहरण गुब्बारा है। वास्तव मे सूर्यग्रहण के वक्त देखा गया है कि गुब्बारा तथा उससे लटकनेवाली टोकरी दोनो की छाया हँसिये की शक्ल की मुडी हुई बनती है। वायुयान भी यदि यह काफी ऊँचाई पर हो, ऐसे समय हँसिये के आकार की छाया डालता है।

सूर्यग्रहण चाहे वे आशिक ही क्यो न हो, प्राय कम ही लगते है। किन्तु खुले क्षितिज के पार जिस समय समुद्र मे सूर्य अस्त हो रहा हो, उस समय यदि खिडकी

के कॉच पर छोटे बडे आकार के सिक्के चिपका दे या उन्हे पतले तार से सीधे लटका दे तो उनकी छाया भी उसी प्रकार की हँसिये के आकार की टेढी बनती हुई देखी जा सकती हैं। सिक्को के छोटे बडे आकार के अनुसार छाया की शक्ल तथा प्रकाश-वितरण मे तबदीली होती है और जैसे-जैसे सूर्य क्षितिज के नीचे डूबता जाता है वैसे वैसे भी छाया की शक्ल तथा उसकी प्रदीप्ति बदलती है।

४. दुहरी छाया

वृक्षो की पत्तियाँ जब झड चुकी होती है तो प्राय हम दो समानान्तर टहनियो की छाया को एक दूसरे के ऊपर पडती हुई देखते है। जो टहनी हमारे निकट होती है उसकी छाया स्पष्ट और गाढी होती है, और जो टहनी अधिक दूरी पर होती है उसकी छाया अधिक चौडी और भूरी दीखती है। अब आश्चर्यजनक बात यह है कि जब सयोग से दोनो मे से एक छाया दूसरी के ऊपर पडती है, तब हम अधिक स्पष्ट दीखनेवाली छाया के बीचोबीच एक चमकीली रेखा देखते है अत यह छाया दुहरी प्रतीत होती है (चित्र ४)। इसका कारण क्या हो सकता है?

चित्र ४—**दुहरी छाया कैसे बनती है।**
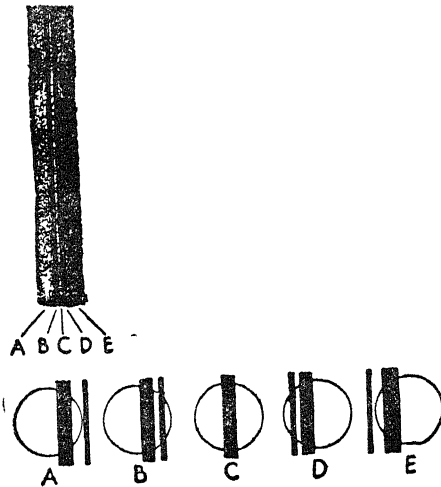
मान लीजिए कि दूरवाली टहनी अधिक मोटी है और निकट की पतली। छाया के विभिन्न भागो मे, तथा निकट की भूमि पर प्रदीप्ति कितनी है यह मालूम करने के लिए कल्पना करिए कि हम उन विभिन्न भागो से सूर्य की ओर बारी-बारी से देख रहे है। मान लीजिए, पहले हम अपनी आँख को छाया के हाशिये से कुछ इच बाहर की ओर रखकर सूर्य की ओर देख रहे है। हम देखेगे कि सूर्य का समूचा मण्डलक हमारी ओर रोशनी फेंक रहा है। अब माना कि आँख को हमने इस तरह हटाया कि आँख दूरवाली टहनी की उपच्छाया मे बिन्दु A पर स्थित है (चित्र ४)। अब यह टहनी हमे सूर्य-मण्डलक के सामने दीखेगी और चूँकि यह सूर्य के एक हिस्से को अपनी आड

मे रोक रही है अत इस भाग मे, जहाँ हमारी आँख स्थित है, प्रकाश की प्रदीप्ति कम हो जायगी। आँख और अधिक हटाएँ ताकि यह बिन्दु B पर स्थित हो, तब द्वितीय टहनी भी सूर्य के सामने आ जाती है और दोनो टहनियाँ एक साथ सूर्य के प्रकाश के अधिकाश को अपनी आड मे रोकती है। किन्तु यदि आँख को हटा कर बिन्दु C पर लाये तो वहाँ से दोनो टहनियाँ एक दूसरे की सीध मे दीखेगी और उस दशा मे सूर्य-मण्डलक का वह भाग जो टहनियो की आड मे पडता है, पुन कम हो जायगा और इस कारण भूमि के इस भाग पर रोशनी फिर बढ जाती है। यदि यह बात हम ध्यान मे रखे कि जब हम भूमि पर छाया को देखते है तो हम एक साथ ही उन सभी दशाओ का अवलोकन करते है जिन पर अलग-अलग ऊपर विचार किया गया है, तब आसानी से हम समझ सकते है कि क्यो समूची छाया का मध्य भाग बगल के दाहिने या बाये भाग की तुलना मे अधिक प्रकाशवान् होता है।

चित्र ४ मे मैने मोटे तौर पर यह दिखलाया है कि बारी-बारी से बिन्दु A, B, C, D, E पर आँख रखने पर सूर्य-मण्डलक कैसा दिखलाई देगा, अवश्य ऊपर की भाँति यहाँ मान लिया गया है कि दूरवाली टहनी निकट की टहनी की अपेक्षा मोटी दीखती है। प्रकट रूप से यह घटना उस दशा मे दीखेगी जब दोनो ही टहनियाँ भूमि पर सूर्य-मण्डलक (बिम्ब) की अपेक्षा छोटा कोण बनाती है।

'कुछ समय हुए मै समुद्रतट पर टहल रहा था मार्च की सन्ध्या का समय था। पश्चिम मे समुद्र के पीछे सूर्य अस्त हो रहा था, और चन्द्रमा पूर्व मे चटकीली रोशनी से प्रकाशित था। काफी लम्बे अरसे तक धरती पर डूबते हुए सूर्य के कारण मेरी छाया बनती रही जो पूर्व की ओर पड रही थी, **किन्तु बाद मे कुछ बहुत थोड़े समय के लिए मेरी छाया एकदम विलुप्त हो गयी** और तब चन्द्रमा की रोशनी अस्त होनेवाले सूर्य की रोशनी से अधिक तेज प्रतीत हुई और मेरी छाया पश्चिम की ओर पडने लगी।'[1]

क्या यह प्रेक्षण सही था ?

[पानी की सतह पर पडनेवाली छाया के लिए देखिए § २१६, २१७ और धुध पर पडनेवाली छाया के लिए १८३, छाया के हाशिये पर प्रकाश और छाया की स्पष्टता के लिए देखिए प्रकरण ९२]

1 From the Icelandic of S Nordal Hcl (1917)

अध्याय २

प्रकाश का परावर्त्तन

५ परावर्त्तन का नियम

ऐसी जगह ढूँढिए जहाँ अत्यन्त शान्त, स्थिर पानी की सतह से चन्द्रमा प्रतिविम्बित हो रहा हो। क्षितिज के ऊपर चन्द्रमा द्वारा बननेवाले कोण और क्षितिज के नीचे उसके प्रतिबिम्ब से बननेवाले कोण की परस्पर तुलना करिए—दोनो ही, प्रेक्षण की त्रुटि-सीमा के अन्दर-अन्दर, परस्पर बराबर होगे।

चन्द्रमा यदि आकाश मे बहुत ऊँचाई पर स्थित न हो, तो आप अपनी छडी को फैलायी हुई भुजा के छोर पर इस तरह सीधी खडी कर सकते है कि छडी का ऊपरी सिरा चन्द्रमा की सीध मे दीखे तथा हाथ का अँगूठा क्षितिज की सीध मे। अपनी भुजा को इसी स्थिति मे रखकर हाथ को भुजा के गिर्द इस तरह घुमाइए कि छडी का सिरा नीचे की ओर हो जाय, अब देखिए कि यह सिरा चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को छूता है या नही।

दूरबीन द्वारा नक्षत्रो के प्रतिबिम्ब की इसी ढग से नाप करके परावर्त्तन के नियम की अत्यन्त सही जाँच की गयी है।

दीवार मे भीतर की ओर स्थित खिडकी मे सूर्य की किरणे उस वक्त प्रवेश करती है जब कि सूर्य आकाश मे अधिक ऊँचाई पर नही होता (चित्र ५)। छाया अब आपाती किरणो की दिशा बतलाती है, परावर्त्तित प्रकाश अधिक चटकीली रोशनी के धब्बे के रूप मे B C की दिशा मे गिरता है। यह देखा जा सकता है कि अभिलम्ब[1] BN के लिहाज से ये दोनो दिशाएँ समित[2] है और इसलिये $\angle ABN = \angle CBN$। यह गुण परावर्त्तन का नियम नही है, वल्कि उससे प्राप्त एक परिणाम है, इसे सिद्ध करिए।

1. Normal 2 Symmetrical

दूर स्थित घरो की खिडकियाँ केवल उगते हुए या अस्त होने वाले सूर्य को ही क्यो प्रतिबिम्बित करती है ?
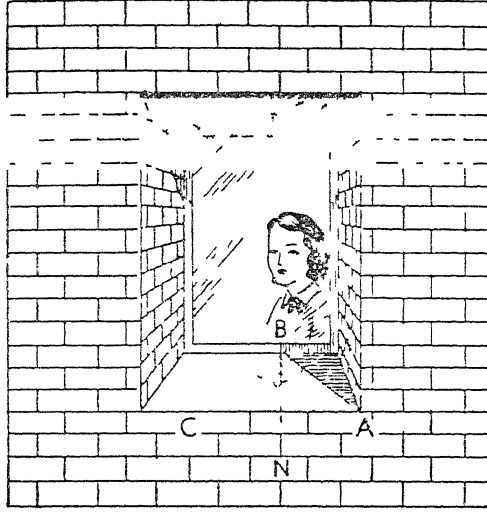
चित्र ५—भीतर धसी हुई खिड़की से सूर्य की रोशनी का परावर्तन।

६ तार से परावर्त्तन

टेलीफोन के तार धूप मे चमकते रहते है। यदि आप तार के समानान्तर चले, तो चमक की रोशनी का धब्बा भी आपके साथ-साथ उसी रफ्तार से सरकता हुआ दीख पडता है। इसी प्रकार हम देख सकते है कि किस प्रकार रात को, सडक के खम्भे का लैम्प ऊपर लगे ट्रामलाइन के तार पर प्रकाश की रेखा बनाता है। इन प्रतिबिम्बो की सही स्थिति किस बात से निर्धारित होती है ? अपने मस्तिष्क मे तार को स्पर्श करते हुए एक ऐसे दीर्घ वृत्ताभीय[1] ठोस की कल्पना करिए जिसके एक फोकस पर आपकी आँख स्थित हो और दूसरे फोकस पर प्रकाश-स्रोत (चित्र ६)। प्रतिबिम्बित प्रकाश के धब्बे की स्थिति उस स्पर्शीबिन्दु[2] पर होगी जहाँ तार दीर्घ-वृत्ताभीय ठोस को स्पर्श करता है, क्योकि दीर्घ वृत्ताभीय ठोस का एक सुप्रसिद्ध गुण

1 Ellipsoid 2 Tangent point

यह है कि इसकी सतह के किसी बिन्दु को दोनों फोकस बिन्दुओं से मिलाने वाली रेखाएँ उस बिन्दु के स्पर्शी धरातल के साथ बराबर मान के कोण बनाती हैं।
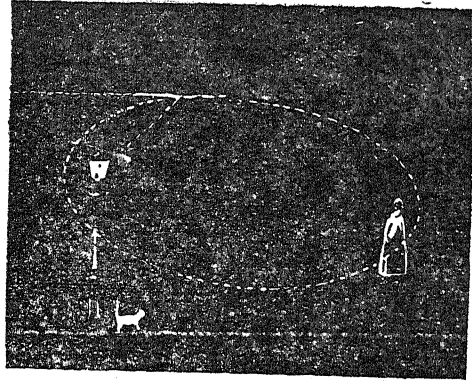
चित्र ६—**टेलीग्राफ के तारों से सड़क के लैंप का प्रतिबिम्बन।**

७. वस्तु और उसके प्रतिबिम्ब में अन्तर

बहुत-से लोगों का ख़्याल है कि शान्त, स्थिर पानी में किसी दृश्य का प्रतिबिम्ब ठीक उस दृश्य के मानिन्द दीखता है, केवल यह ऊपर से नीचे को उलट जाता है। यह धारणा नितान्त भ्रमपूर्ण है। ध्यान दीजिए, रात्रि में सड़क पर लगे लैम्प किस प्रकार प्रतिबिम्बित होते हैं! (चित्र ७क) किसी टीले को देखिए जिसका ढाल
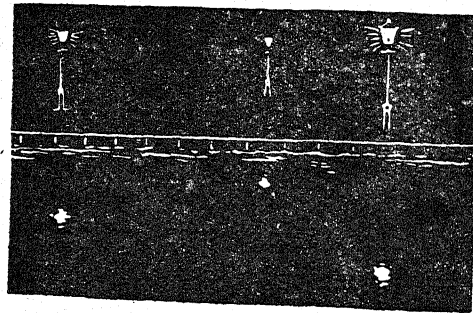
चित्र ७ क—**वस्तु अपने प्रतिबिम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है।**

पानी तक पहुँचता हो, तो पानी मे इसका प्रतिबिम्ब छोटा ही दीखता है और यदि पानी की सतह से हम काफी अधिक ऊँचाई पर हो तो प्रतिबिम्ब एकदम विलुप्त भी हो जाता है (चित्र ७ख)। पानी मे खडी पत्थर की चट्टान के सिरे का प्रतिबिम्ब आप कभी भी नही देख सकते।

ये सभी प्रभाव स्वाभाविक प्रतीत होते है बशर्ते आप यह बात ध्यान मे रखे कि परावर्तित प्रतिबिम्ब वास्तव मे दृश्य के ही तद्रूप होता है, केवल उसे देखने का पहलू बदल जाता है क्योकि प्रतिबिम्ब मुख्य वस्तु की स्थिति से हटा हुआ होता है। प्रतिबिम्ब मे हमे वस्तु इस प्रकार दिखलाई देती है मानो हम उसे पानी के नीचे के एक ऐसे बिन्दु से देख रहे है जो पानी की सतह से उतना ही नीचे है, जितनी हमारी आँख सतह से ऊपर है। वस्तु की दूरी ज्यो-ज्यो बढती है त्यो-त्यो यह अन्तर भी कम होता जाता है (देखिए §§ ५, १३०)।
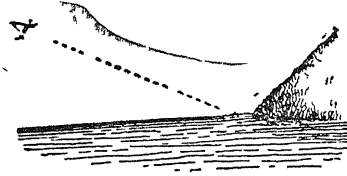
चित्र ७ ख—**वस्तु अपने प्रतिबिम्ब से भिन्न दिखाई दे सकती है।**

फिर एक और बात पर भी गौर करना होगा। छोटे तालाबो और सडक के किनारे के गड्ढो के पानी मे दीखनेवाली झाडियो और वृक्षो के प्रतिबिम्ब में स्पष्टता और रगो तथा शेड के सौष्ठव की मात्रा स्वय वस्तु के मुकाबले मे कही अधिक जान पडती है। दर्पण के प्रतिबिम्ब मे बादल जितने सुन्दर दीखते है उतने वे स्वय कभी नही दीखते। दूकान की खिडकी के काँच से जिसके पीछे पृष्ठभूमि के लिए गहरे रग का पर्दा लगा हो, सडक का प्रतिबिम्ब आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट दीखता है। ये अन्तर भौतिक की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक कारणो से अधिक उत्पन्न होते है। कुछ लोग इसका कारण यह बतलाते है कि प्रतिबिम्बित दृश्य ऐसी भावना उत्पन्न करते है मानो हम एक सपाट सतह मे पडी तसवीर देख रहे है (असलियत यह है कि ठीक वस्तु की तरह ही प्रतिबिम्ब के विभिन्न भाग भी विभिन्न धरातलो मे स्थित होते है)। अन्य लोगो का कहना है कि दर्पण के फ्रेम के भीतर प्रतिबिम्ब के बनने के कारण अन्तराल मे दृश्य स्थिति अनिश्चित जान पडती है, अत उसका उभार विशेष स्पष्ट महसूस होता है[1]। लेकिन मुझे तो इसका एक अधिक महत्त्वपूर्ण कारण यह जान पडता है कि प्रतिबिम्ब मे दीखने वाला दृश्य अपने इर्दगिर्द के आकाश की तेज रोशनी की चकाचौध से आँख

1. J, O, S, A, 10, 141, 1925

को प्रभावित नही करता अर्थात् दृश्य बहुत कुछ वैसा ही दीखता है जैसा किसी नली मे से देखने पर (§ ७१)। फिर प्रतिबिम्बित होने पर प्रकाश की दीप्ति भी कम हो जाती है, अत इस दशा मे आकाश और बादलो का हम अधिक आसानी से अवलोकन कर सकते है जो अन्यथा हमारी आँखो के लिए अत्यधिक चमक पैदा करते है ।

७ क गड्ढो और नहरो से प्रतिबिम्बित प्रकाश-किरण-पुज

धूपवाले दिन पानी की प्रत्येक स्थिर सतह सूर्य की किरणो का परावर्त्तन करती है और ये सभी किरण-रेखाएँ भूमि-प्रदेश पर ऊपर की ओर सर्चलाइट की भाँति आती हुई प्रतीत होती है । फिर भी इसे हम बहुत कम अवसरो पर ही देख पाते है, प्रकाश्यत इसके लिए अनुकूल परिस्थितियो की आवश्यकता होती है। इसके लिए सर्वोत्तम अवसर प्रात या सन्ध्या को मिल सकता है जब कि सूर्य आकाश मे नीचे ही
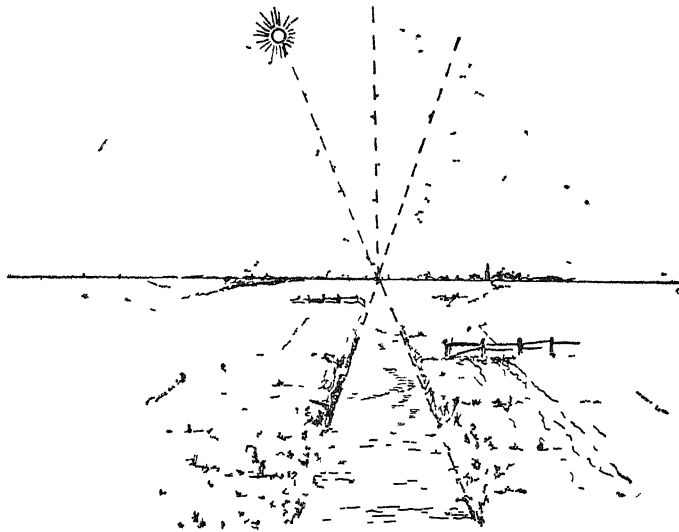
चित्र ७ ग—**नहर के पानी से सूर्य-रश्मियो का परावर्तन ।**

रहता है और इस कारण परावर्त्तन अधिक प्रबल हो पाता है (देखिए § ५२) । प्रत्यक्ष है कि हवा मे धुन्ध मौजूद होनी चाहिए ताकि किरणरेखा का मार्ग दृष्टिगोचर हो सके, किन्तु कुहरे की उपस्थिति इस घटना को दूषित कर देगी । पानी के गड्ढे या नहर की दिशा सूर्य की ओर होनी चाहिए ताकि किरणे आसानी से पानी तक

पहुँच सके। हमे सूर्य की दिशा मे देखना चाहिए, उलटी दिशा मे नही, क्योकि पहली दशा मे धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण अधिक प्रबल होता है (§ १८३)। पानी की सतह समतल, चिकनी होनी चाहिए, ऐसा उस दिन ही हो सकता है जब हवाएँ न चल रही हो, और गड्ढा लम्बा और सीधा होना चाहिए। निचले भूमि-खण्डो मे अक्सर अनेक समानान्तर खाइयाँ मिलती है, और यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हुई तो रेलगाडी पर इन्हे आडी दिशा मे पार करते समय हर खाई पर आपको प्रकाश-ज्योति ऊपर की ओर लपकती हुई दीखेगी।

इस बात पर ध्यान दीजिए कि नहर के बाये किनारे पर यदि आप खडे है तो आपको बायी ओर की किरण-शलाका दाहिनी ओर की किरण-शलाका की अपेक्षा अधिक तीक्ष्ण दीख पडेगी, और यदि आप दाहिने किनारे पर खडे है तो दाहिनी ओर की किरण-शलाका अधिक तीक्ष्ण दीखेगी (चित्र ७ग)।

८ कपट परावर्तन

मकानो की पक्ति गली मे काली छाया की पट्टी-सी बनाती है, किन्तु बीच-बीच मे रोशनी के अप्रत्याशित धब्बे भी दीखते है (चित्र ८)। रोशनी यहाँ कैसे पहुँच पाती है? धब्बे के सामने हाथ रखिए, और उसकी साया की स्थिति देखकर मालूम करिए कि किस दिशा से वहाँ प्रकाश आ रहा है। आप देखेगे कि गली की दूसरी ओर के मकान की खिडकी से परावर्त्तित होकर यह रोशनी आ रही है।

चित्र ८—**सँकरी अँधेरी गली मे धूप के धब्बे।**

इसी प्रकार पानी की नहर की सतह पर रोशनी के धब्बे देखे जा सकते है यद्यपि नहर स्वय साये मे स्थित होती है। दूसरी ओर स्थित मकानो से परा-वर्त्तित होकर ही प्रकाश इन धब्बो तक पहुँचता है।

पानी के किनारे खडे मकानो की कतार पूर्णतया साये मे होती है, तब भी उन पर रोशनी के धब्बे हिलते-डोलते रहते है जो एक नियमित शक्ल मे बहुत कुछ

समानान्तर लकीरो के रूप मे आगे की ओर चलते जान पडते है। ये पानी की लहरो से परावर्त्तित होनेवाले प्रकाश के धब्बे है (चित्र९)। लहर का भाग AB एक अवतल दर्पण सरीखा काम करता है और फोकस बिन्दु L पर यह प्रकाशकिरण की एक चमकीली रेखा बनाता है। लहर के भाग BC की वक्रता कम है, अत इससे परावर्त्तित होने वाली किरणे बहुत अधिक फासले पर मिलती है। इस प्रकार दीवार की हर दूरी के लिए लहर के कुछ भाग ऐसे मिलते है जो वहाँ प्रकाश की तीक्ष्ण रेखा बनाते है, जब कि अन्य भागो से वहाँ के लिए बस सामान्य रूप से रोशनी पैदा करने-वाला प्रकाश पहुँचता है। इसी प्रकार के प्रभाव बन्दरगाह के घाट तथा पुल के मेह-राब की भीतरी सतहो पर भी देखे जा सकते है (प्लेट IV a)। दरअसल यह उदाहरण टिमटिमाते हुए सितारे का नमूना (देखिए §४०) उपस्थित करता है।
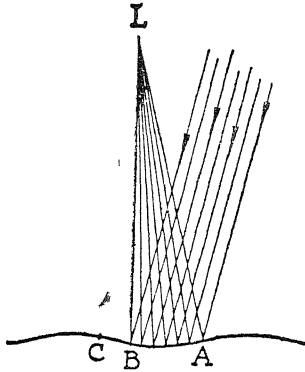
चित्र ९—**किंचित् तरंगित पानी द्वारा परावर्तन से प्रकाश-रेखाओ का निर्माण।**

९. प्रतिबिम्ब पर लक्ष्य वेधना

साल्जवर्ग के निकट 'कोनिग्सी' नाम की एक झील है जो चारो ओर से ऊँचे पहाडो से घिरी होने के कारण अत्यन्त शान्त रहती है। यहाँ गोली दागने की प्रति-योगिता का आयोजन किया जाता है। इस प्रतियोगिता मे प्रतियोगी लक्ष्य के प्रतिबिम्ब पर निशाना साध कर पानी पर गोली दागता है और तब गोली पानी की सतह से टकरा कर उछलती है और लक्ष्य को बेधती है। इस प्रतियोगिता मे भी लक्ष्य भेदने की सम्भावना कम से कम उतनी ही प्रबल अवश्य होती है जितनी उस दशा मे जब कि सीधे लक्ष्य पर ही निशाना साधा जाय।

इस सम्बन्ध मे विचित्र बात यह है कि गोली पानी की सतह से वापस नही उछलती बल्कि उसके अन्दर प्रवेश करके कुछ दूर तक भीतर वह चली जाती है। द्रव-गतिकीय सिद्धान्त से हम जानते है कि गोली के गिर्द के द्रव की हरकत का प्रभाव यह होता है कि गोली को वह सतह की ओर फेंके। फलस्वरूप, अन्त मे सतह से बाहर

दूसरी ओर गोली उसी कोण पर बाहर निकलती है जिस कोण पर पानी की सतह मे वह घुसी थी। पानी के अन्दर पर्दे लटका कर गोली की मार्ग-दिशा का अनुगमन सम्भव हो सका है[1]।

१० गॉस का हीलियोट्रोप

दर्पण को ऐसी स्थिति मे रखिए कि यह सूर्य की रोशनी को परावर्त्तित कर सके। दर्पण के निकट परावर्त्तित प्रकाश के धब्बे की शक्ल दर्पण की तरह ही होती है, कुछ दूर आगे जाने पर धब्बे की आकृति कुछ अस्पष्ट हो जाती है, और भी अधिक दूरी पर यह वृत्ताकार हो जाता है तथा बहुत दूर जाने पर यह सूर्य के सही प्रतिबम्ब की शक्ल अख्तियार कर लेता है। अब दर्पण के एक हिस्से को ढॅक दीजिए तो परावर्त्तित धब्बा अब भी वृत्ताकार बना रहता है, किन्तु इसकी प्रदीप्ति कम हो जाती है। ५० गज से अधिक दूरी पर रोशनी के धब्बे को देख सकना सम्भव न होगा, किन्तु इस फासले पर स्थित प्रेक्षक अब भी धूप मे दर्पण को तेज प्रकाश से चमकता हुआ देख सकेगा।

दर्पण को शिकजे मे लगाकर, या दो ईटो के सहारे, खुली जगह मे इस तरह रखिए कि सूर्य की किरणे परावर्त्तित होने पर पूर्णतया क्षैतिज तल मे पडे। अब दर्पण की ओर मुँह करके पीछे की ओर उतनी दूर तक हटिए जितनी दूर तक परावर्त्तित रोशनी आपको दीखती रहे। अवश्य परावर्त्तित किरण-पथ की सीध मे अपने को रखना कठिन होगा, किन्तु सौभाग्यवश इस किरणरेखा का व्यास, ज्यो-ज्यो पीछे हटे, त्यो-त्यो बढता जाता है। इस बात की जॉच करने के लिए आप किरणरेखा के पथ मे दाहने-बाये हटकर देख सकते है कि किरणरेखा का दायरा कितना बडा है, १०० गज की दूरी पर यह दायरा १ गज चौडा मिलेगा। फिर आपको यह ध्यान मे रखना होगा कि इस बीच सूर्य आकाश मे सरक रहा है, इस कारण इस प्रयोग के लिए दोपहर का समय चुनना चाहिए क्योकि तब परावर्त्तित किरणे, बिना किसी विशेष समायोजन के, क्षैतिज बनी रहती है।

आश्चर्य की बात है कि रोशनी का नन्हा-सा यह धब्बा कितनी दूर तक दिखलाई देता रहता है! त्रिकोण सर्वेक्षण मे गॉस ने इस तरीके से सुस्पष्ट प्रकाश-स्रोत हासिल किये थे जो नापनेवाले यत्रो की दूरबीन द्वारा ६० मील के फासले से भी देखे जा सकते थे। इस प्रकार बनाये गये हीलियोट्रोप मे विशेष यत्र सस्थान लगे होते है ताकि

1 Ramsauer Ann d Phys 84, 730, 1927

प्रकाश-रश्मियो को इच्छानुसार किसी भी दिशा मे फेक सके । प्रकाश को ढककर या उसे फिर खोल कर मोर्स सकेत (Morse Signats) दूर तक भेज सकते है ।

११. वाटिका-ग्लोब मे प्रतिबिम्ब

उत्तल दर्पण, जिनके बारे मे हम स्कूल मे पढते रहते है, छोटे आकार के होते है तथा इनकी वक्रता भी कम ही होती है । ये दर्पण वाटिका-ग्लोब के उस छोटे-से भाग A B के अनुरूप होते है जो हमारे ठीक सामने पडता है और जिसमे स्वय अपना प्रतिबिम्ब हम देख सकते है (चित्र १०) ।
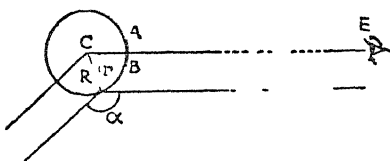
चित्र १०–**एक छोटे वाटिका-ग्लोब मे विश्व का प्रतिबिम्बन किस प्रकार होता है ।**

किन्तु समूचा वाटिका-ग्लोब तो अपेक्षाकृत बहुत अधिक दिलचस्प है । सबसे अधिक विलक्षण बात यह है कि इसके अन्दर समूचे गगनमण्डल (अधिक यथार्थ यह है कि आकाश और पृथ्वी) की सतह एक वृत्त के अन्दर हम देख सकते है । वाटिका-ग्लोब एक ऐसे प्रकाश-यत्र सरीखा काम करता है जिसका द्वारक आदर्श रूप से विशष रूप से चौडे मुँह का हो । अवश्य ऐसा इसलिए सम्भव हो सका है कि इसके अन्दर वनने वाले प्रतिबिम्ब विकृत होते है । ये बिम्व त्रिज्या की दिशा मे सकुचित हो जाते है, वस्तु, ग्लोब की सतह के जितने निकट होगी उतना ही अधिक विकृत उसका बिम्ब बनेगा (चित्र १०) । सहूलियत के लिए मान लीजिए कि वस्तु और निरीक्षक दोनो ही ग्लोब से काफी अधिक फासले पर है (ग्लोब की त्रिज्या R की तुलना मे) । अब वस्तु यदि ऐसी दिशा मे है कि यह रेखा C E के साथ कोण α बनाती है तो वह वस्तु ग्लोब के केन्द्र C से दूरी $r = R \sin \frac{1}{2} \alpha$ पर प्रतिबिम्बित होगी । सहज ही देखा जा सकता है कि कोण α जैसे-जैसे $180°$ तक वढता जाता है वैसे-वैसे r भी बढकर मान R के बराबर हो जाता है, अत समूचा आकाश और पृथ्वी ग्लोब पर प्रतिबिम्बित होता है । केवल वह नन्हा-सा भाग जो ग्लोब के ठीक पीछे पडता है, इस प्रतिबिम्ब मे मौजूद न होगा, अवश्य ग्लोब से जितनी अधिक दूरी पर हम खडे होगे, अनुपात से, ग्लोब की आड मे पडनेवाला भाग भी छोटा होता जायगा ।

हेल्महोल्ट्ज ने एक बार कहा था कि ग्लोब मे विकृत दीखनेवाला भूमि-दृश्य पूर्णतया सामान्य प्रतीत होगा बशर्ते दूरी नापने का हमारा मानदण्ड भी उसी नियम

के अनुसार लम्बाई मे घटा लिया जाय। यह कथन आपेक्षिकता-सिद्धान्त से निकट सम्बन्ध रखता है।

ऋतु प्रकाश-विज्ञान के क्षेत्र मे वाटिका-ग्लोव का उपयोग अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण के लिए किया जा सकता है क्योंकि आकाश के एक बृहत् क्षेत्र का अत्युत्तम सर्वेक्षण इससे प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप ग्लोब से चन्द गजो की दूरी पर खडे हो ताकि सूर्य आपके सिर की आड मे छिप जाय तो आप असाधारण स्पष्टता के साथ निम्नलिखित को देख सकेंगे (आगे देखिये)—(क) छल्ले, प्रकाश मण्डल (हेलो), रग-बिरगे बादल, बिशप का छल्ला, उषा के शेड, तथा (ख) हेडिजर का ब्रुश और आकाश से प्राप्त प्रकाश का ध्रुवण। प्रतिबिम्ब के छोटे बनने के कारण शेड का हलका चढाव-उतार गहरी प्रवणता मे तबदील हो जाता है अत प्रकाश की द्युति तथा रग के अन्तर आँखो को अधिक स्पष्ट प्रतीत होते हैं। वाटिका-ग्लोब मे देखने पर धुन्धवाले दिन आकाश नितान्त भिन्न दीखता है बनिस्वत उस दिन के जब वायु स्वच्छ तथा ध्रुवीय होती है। सायकिल के हेन्डल पर लगे उत्तल दर्पण की चमकीली सतह मे प्राय आकाश के नन्हे-नन्हे हलके किस्म के बादल दिखलाई पडते हैं जो सीधे ही देखने पर दृष्टि की पकड मे नही आते।

११ क. साबुन की झाग और बबूले मे परावर्तन

ब्वायज, जिसने साबुन की झाग की झिल्लियो से अनेक रोचक प्रयोग किये थे, परामर्श देता है कि किसी शान्त दिन, इमारतो या वृक्षो के दर्मियान एक सुरक्षित कक्ष मे बैठकर खुली हवा मे साबुन के [illegible]। तब आप उसकी कोमल सतह मे आश्चर्यजनक प्रतिबिम्बन देखेंगे। हमारे रुख की सतह एक उत्तल दर्पण जैसा काम करती है, और वाटिका-ग्लोब की भाँति ही सीधे प्रतिबिम्ब प्रदर्शित करती है, और इस सतह के जितने निकट हम आते है उतने अधिक विकृत और सकुचित ये प्रतिबिम्ब होते जाते हैं। किन्तु साथ ही साथ इस ओर की सतह के पार पीछे की सतह भी हम देखते है जो एक अवतल दर्पण-जैसा काम करती है और प्रतिबिम्ब को उलट देती है। सीधे प्रतिबिम्ब तथा उलटे प्रतिबिम्ब दोनो एक-से ही आकार के होते है, एक दूसरे पर पडने के कारण ये अस्पष्ट हो सकते है, किन्तु बचत इस बात से हो जाती है कि पहली सतह दूसरी सतह की तुलना मे हमारी आँख के अधिक निकट होती है।

विशेषतया इन पर ध्यान दीजिए—आकाश का दुहरा प्रतिबिम्ब, स्वय आपके

सिर की छाया-आकृति जो चमकीली पृष्ठभूमि के सन्मुख काले रग मे उभरती है, छतो की छाया-आकृतियाँ जो विचित्र रूप से विकृत होती है, आपके हाथ का (जिसमे आप नली पकडे है जिसके सिरे पर साबुन का बबूला लटक रहा है) प्रबल रूप से आवर्द्धित प्रतिबिम्ब (जो अवतल सतह मे सर्वोत्तम दीखता है), उस स्थल का प्रतिबिम्ब जहाँ से बबूला लटकता है (अवश्य केवल अवतल सतह मे ही), तथा बादलो के सुस्पष्ट प्रतिबिम्ब जो आकाश मे इतने अस्पष्ट और धुन्ध लिये हुए दीखते थे।

किन्तु सर्वोपरि, आश्चर्यमय उद्दीप्त बादलो के प्रतिबिम्ब को देखने मे आपको आनन्द आयेगा जिनके रग अधिक परिपूर्ण तथा सपृक्त होते हैं जब तक कि बबूला फूट न जाय। ये है न्यूटन के सुविख्यात व्यतिकरण के रग (§ १५५)।

इन बबूलो के तथा प्रतिबिम्बो के फोटोग्राफ लीजिए।

१२ पानी की सतह का अनियमित उभार

टीलो की आड मे पडे गड्ढे की कल्पना कीजिए जिसके पानी की सतह को हिलाने-डुलाने के लिए हवा वहाँ न पहुँच पाती हो। घास के इक्के-दुक्के डठल या नरकुल की नली पानी से बाहर निकली दिखलाई पडती है। यह दिलचस्पी की बात है कि प्रत्येक डठल ठीक जहाँ वह पानी से बाहर निकलता है वही रोशनी के धब्बे से वह घिरा होता है। डठल एक केशनलिका सरीखा काम करता है, अत. पानी के पृष्ठ-तनाव के कारण डठल के गिर्द पानी कुछ ऊपर चढ जाता है। पानी का यह उभरा हुआ भाग सूर्य की रोशनी परावर्त्तित करता है, अत दूर तक यह दिखलाई देता है। यदि गड्ढे के पानी का एक भाग टीले के सायेवाले ढाल को प्रतिबिम्बित करता है और दूसरा भाग चमकीले आकाश को, तब हम देख सकते है कि किस प्रकार टीले की छाया के हाशिये पर पडनेवाले जल के उठे हुए भाग प्रकाश और अन्धकार का विपर्यास प्रदर्शित करते है जो इस बात पर निर्भर होगा कि किस दिशा से हम देख रहे है।

इसी प्रकार किसी नदी मे जहाँ थोडा भी बहाव मौजूद हो, छोटे-छोटे भँवर हम देख सकते है। प्रत्येक भँवर मे भीतर की ओर दाब कुछ कम होता है, अत केन्द्र की ओर पानी की सतह नीचे दब जाती है। अनुमानत बीच के गड्ढे का व्यास २ इच होता है और इसकी गहराई करीब $\frac{१}{१०}$ इच। किनारे की छाया के हाशिये पर जहाँ प्रतिबिम्ब से अन्धकार और प्रकाश की सीमा पडती है, पानी के हलके आन्दोलन

भी स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। प्रायः इस स्थान पर नन्हीं-नन्हीं चकरियों की कतार-सी दीखती है।

वर्षा हो चुकी है। ट्राम की पटरी से लगा हुआ पानी फैला है। और इस दशा में क्षैतिज तल में याने पटरी की आड़ी स्थिति में, एक प्रतिबिम्ब-रेखा दीख पड़ती है—यह ऊपर के केबुल को सँभालनेवाले तार का प्रतिबिम्ब है। यदि हम पटरी के सीधे खड़े हाशिये की ओर देखें तो इस प्रतिबिम्ब की शक्ल समान रूप से दोनों ओर मुड़ी हुई दीखती है (चित्र ११, a), जिससे यह साफ़ प्रगट होता है कि पानी की सतह पृष्ठ-तनाव के कारण वक्र हो जाती है। यदि पटरी के बायें हम खड़े हों तब प्रतिबिम्ब की वक्रता चित्र ११, b की भाँति होगी और यदि पटरी के दाहिने खड़े हों तब प्रतिबिम्ब चित्र ११, c की भाँति होगा। इस बात पर गौर करिए कि क्यों प्रतिबिम्ब ऐसी ही शक्ल अख्तियार करते हैं।

स्टीमर पर सवार होकर द्रव की वक्र सतह से बननेवाले प्रतिबिम्ब का अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि इस दशा में बराबर एक ही स्थिति से और एक ही दिशा से आप लहरों को देखते हैं जो साथ-साथ चल रही हैं। विशेषतया इस बात पर गौर करिए कि जब स्टीमर के अग्र भाग के प्रथम धक्के से पानी की सतह में उभार आता है तो प्रतिबिम्ब की शक्ल किस प्रकार बदलती है। प्रतिबिम्बों में प्रबल संकुचन पैदा होता है तथा वे सीधी अथवा उलटी बनती हैं जो इस बात पर निर्भर करता है कि आप सतह के उत्तल भाग को, या अवतल भाग को देख रहे हैं।
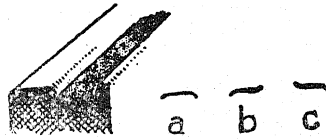
चित्र ११, a b c—**ट्राम की पटरीपर वर्षा द्वारा वक्र दर्पण का निर्माण।**

१३. खिड़की का साधारण काँच, तथा प्लेट-काँच

सड़क के मकानों की खिड़कियों के शीशे में बननेवाले प्रतिबिम्बों को देखकर आप तुरन्त जान सकते हैं कि वे प्लेट काँच के बने हैं या कि खिड़कीवाले काँच के। प्रथम दशा में परावर्त्तन के प्रतिबिम्बों की आकृति बिगड़ती नहीं है, किन्तु द्वितीय दशा में परावर्त्तन इतना अनियमित होता है कि काँच की सतह के उभार आदि साफ़ दीख जाते हैं। इस प्रकार आप अपने नगर के समृद्धिशाली लोगों के मुहल्ले तथा मध्यवर्गीय लोगों के मुहल्ले में अन्तर पायेंगे। समृद्धिशाली लोगों के मुहल्ले में प्लेट

कॉचवाले मकानो की कतार मे आप फौरन इक्के-दुक्के अपवाद स्वरूप मकान को पहचान जाते है कि इसकी साथ-साथ बनी खिडकियो के कॉच एक ही धरातल मे नही है क्योकि उनमे छत के प्रतिबिम्ब एक दूसरे के लिहाज से कुछ हटे हुए दीखते है, तथा उसके प्लेट-कॉच के हाशिये कुछ विकृत है ।

१४. पानी की हलकी तरगोवाली सतह पर अनियमित परावर्त्तन[1]

लैम्पो के प्रतिबिम्बित प्रकाश की लकीरे मुझे अनिवार्यत सन्ध्या के शान्त वातावरण की याद दिलाती है। समुद्र मे चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब देखता हूँ तो वह रोशनी की एक चौडी पट्टी-सी फेकता हुआ प्रतीत होता है। या फिर मुझे प्राचीन नगर ब्रुगेज के मकानो और बुर्जियो की याद आती है—शान्त नहर के पानी मे इनके प्रतिबिम्ब मे रोशनी का प्रत्येक धब्बा, प्रत्येक रग, एक खडी लकीर की शक्ल मे खिच जाता था तथा ये सभी लकीरे, चाहे छोटी या लम्बी, तरह-तरह की रोशनी और मायावी चमक के साथ कॅपती और थिरकती रहती।

चॉद या लैम्प जब निकट के पानी की ऐसी सतह से प्रतिबिम्बित होता है जिसमे हलकी हिलोरे उठ रही हो तो हम देखते है कि वास्तव मे प्रत्येक नन्ही तरग एक पृथक् प्रतिबिम्ब का निर्माण करती है। रोशनी मे पडनेवाली ये सभी तरगे मिलकर मोटे तौर पर एक आयताकार पट्टी की शक्ल का प्रतिबिम्ब बनाती है जिसका दीर्घ अक्ष उस ऊर्ध्व तल मे पडता है जो ऑख और प्रकाश-स्रोत से गुजरती है। यद्यपि लहरो का बनना पूर्णतया अनियमित रहता है तथा वे समान रूप से हर किसी दिशा मे बनती है, फिर भी इन लहरो द्वारा अकेले एक प्रकाश-सूत्र से प्रतिबिम्ब के रूप मे रोशनी का एक लम्बा फीता-सा प्राप्त होता है जो हमारी ऑख की सीध मे पडता है—इस मौलिक घटना का हमे समाधान ढूँढना है। पट्टी के उस छोर पर जो हमारी ओर पडता है, हम स्पष्ट देख सकते है कि पानी मे लहरो के बनने के अनुसार किस तरह रोशनी की पट्टी कभी लम्बी हो जाती है, कभी छोटी, जब कि दूसरे छोर पर जो हमसे दूर पडता है, रोशनी के धब्बे एक दूसरे के निकट खिचकर एक मध्यमान रूप धारण कर लेते है।

1 See in particular J Picard, Arch, Sc Phys Nat 21, 481, 1881, also G Galle, Ann d Phys, 49,255, 1840, A Wigand and E Everling, Phys, Zs, 14, 1156, 1913, E O Hulburt, J O S A 24,35, 1934, W Shoulejkin, Nat, 114, 498, 1924, K Stuchtey, Ann d Phys, 59, 33, 1919

'अत सही निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए इस प्रकार की पट्टी मे प्रकाश-दीप्ति के औसत वितरण पर विचार करना होगा और उसके लिए सभाविता के सिद्धान्त पर गणना करनी होगी। ठीक तौर पर इस तरह की गणना पहले कभी नही की गयी है। अत हम अपने लिए, समस्या को सरल बनाने के निमित्त, मान लेगे कि लहरो की सतह का झुकाव एक निश्चित कोण α से अधिक नही है, और तब इस दशा मे उनसे परावर्त्तित होकर बननेवाले रोशनी के धब्बे की स्थिति सीमाएँ ज्ञात करेगे। या दूसरे शब्दो मे, प्रश्न यह है कि यदि प्रत्येक स्थान पर हर दिशा मे कोण α पर झुकी हुई लहरे मौजूद हो तो हमे मालूम करना है कि प्रकाश से आलोकित होनेवाली इन तमाम लहरो की सतहो का बिन्दु क्या होगा ? इस रूप मे लेने पर भी प्रश्न काफी जटिल बना रह जाता है—

सबसे सरल दृष्टान्त ले कि निरीक्षक तथा प्रकाश-स्रोत दोनो पानी की सतह से समान ऊँचाई पर स्थित है, अर्थात् $h=h'$ (चित्र १२)।
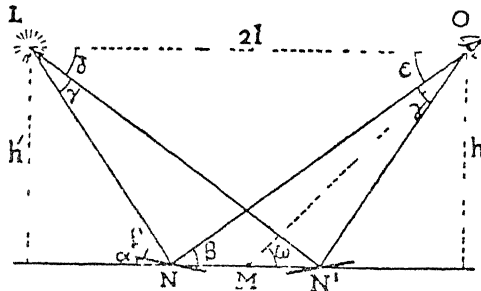
चित्र १२—**परावर्तित प्रकाशपथ के दीर्घ अक्ष की गणना।**

ठीक बीच के बिन्दु M पर एक छोटा दर्पण क्षैतिज तल मे रखे तो यह प्रकाश सूत्र की रोशनी प्रेक्षक O की आँख मे फेकेगा—इस स्थिति पर ही नियमित परावर्त्तन होता है। दर्पण यदि कोण α पर झुका हो तो इसे मध्य बिन्दु M से कुछ फासले पर रखना होगा ताकि यह प्रेक्षक तक रोशनी फेक सके। प्रश्न यह है कि यह दूरी कितनी होनी चाहिए।

प्रकाश-स्रोत और आँख से गुजरनेवाले ऊर्ध्व तल मे दर्पण कोणीय झुकाव के लिए इस प्रश्न का उत्तर सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। मान लीजिए दर्पण एक ओर झुकता है तो उसकी स्थिति N है और दूसरी ओर झुकता है तो स्थिति N' है, तब

समिति के कारण MN=MN′ होगा। अब निम्नलिखित कोणो पर ध्यान दीजिए —

$$\beta+\alpha=\gamma+\delta$$
$$\beta-\alpha=\epsilon=\delta$$

अत, $\gamma=\alpha+\beta-(\beta-\alpha)=2\alpha$

यह एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष है। **प्रतिबिम्ब की रोशनी के स्तम्भ के सबसे अधिक लम्बे अक्ष द्वारा आँख पर बननेवाला कोण लहरो के दो महत्तम झुकावो के दर्मियान बननेवाले कोण के बराबर है** (चित्र १३)।

अब आँख और प्रकाश स्रोत को मिलानेवाली रेखा के समकोण तल मे M पर रखे दर्पण को घुमाइए और मान लीजिए दर्पण के लिए दो स्थितियाँ P तथा P′ मिलती है जहाँ से अनुकूल परावर्त्तन होता है (चित्र १४)।
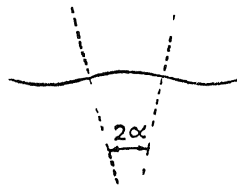
चित्र १३
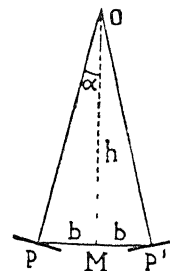
चित्र १४—**परावर्तित प्रकाशपथ के लघु अक्ष की गणना।**

स्पष्ट है कि $MP=MP'=h\tan\alpha$ अत रोशनी के स्तम्भ की चौडाई $2h\tan\alpha$ होगी और स्तम्भ का लघु अक्ष आँख पर कोण $\frac{PP'}{OM}=\frac{2h\tan\alpha}{\sqrt{l^2+h^2}}$ बनायेगा। (tangent=स्पर्शरेखा)

अत रोशनी के स्तम्भ के दोनो आभासी अक्षो का अनुपात, यदि रोशनी का स्तम्भ बहुत बडा न हो, $\frac{h\tan\alpha}{\alpha\sqrt{h^2+l^2}}$ या सन्निकटत $\frac{h}{\sqrt{h^2+l^2}}=\sin\omega$ होगा। अत पहाडी की चोटी से नीचे यदि पानी की ओर देख रहे हो तब रोशनी का स्तम्भ लम्बाई मे चौडाई से थोडा ही बडा दीखेगा क्योकि कोण ω का मान अधिक होने से $\sin\omega$ का मान सन्निकटत 1 के बराबर होगा। **पानी की सतह पर जितनी ही**

अधिक तिरछी दिशा मे देखेगे उतना ही अधिक लम्बा यह स्तम्भ दीखेगा । यदि हमारी निगाह पानी के तल को करीब-करीब छूती हुई हो, तब यह स्तम्भ बेहद सॅकरा दीखेगा ।

हमे प्रमुख दायरा[1] तथा गौण दायरे के दर्मियान का अन्तर सदैव ध्यान मे रखना चाहिए । प्रमुख दायरा वह वक्र आकृति है जो लहरवाले पानी के धरातल पर इस तरह खीची हुई मानी गयी है कि वह प्रकाशस्तम्भ की सीमा-रेखाएँ प्रगट कर सके, जब कि गौण दायरा दृष्टिरेखा के समकोण धरातल पर प्रमुख दायरे के प्रक्षेपण से प्राप्त होता है । प्रमुख दायरे के अक्षो की गणना आसानी से की जा सकती है, यद्यपि यह एक छ घात की वक्र आकृति है जो बिन्दु M के गिर्द समित होगी । अवश्य गौण दायरा थोडा असमित हो जाता है, अधिकतम चौडा भाग बिन्दु M की अपेक्षा हमारे निकट अधिक पडता है जब कि बिन्दु M पर ही हमने आडे अक्ष की लम्बाई ज्ञात की थी । यह असमिति उस वक्त विशेष रूप से प्रदर्शित होती है जब सतह के साथ दृष्टि-रेखा छोटे मान का कोण बनाती है ।

२ सामान्य दशा, जब $h \neq h'$ (चित्र १५) पहले की तरह ही हम इन दोनो निष्कर्षो को सिद्ध कर सकते है कि—

चित्र १५—**प्रकाश के धब्बे का प्रेक्षण, प्रकाश-स्रोत की स्थिति से भिन्न ऊँचाई के तल से।**

$$u+v'=2\alpha$$
$$u'+v=2\alpha$$
$$u+v+u'+v'=\gamma+\gamma'=4\alpha$$

और आगे गणना करने पर सिद्ध होता है कि रोशनी के धब्बे की सीमारेखा बहुत कुछ दीर्घ वृत्ताकार रहती है, किन्तु निष्कर्ष जटिल ही प्राप्त होते है । व्यवहार मे

1 Primary oval

h और h′ का अन्तर प्रकाश-स्तम्भ की लम्बाई-चौडाई के मान को ही प्रभावित करता है, इनकी निष्पत्ति से नही ।

अवश्य सन्निकटत

$$\frac{\gamma}{\gamma'}=\frac{h'}{h}$$

अत $$\gamma=4\alpha\frac{h'}{h+h'}$$

३ विशेष दशा, जब $h=\infty$ । यह दशा सूर्य, चन्द्रमा या अत्यधिक ऊँचाई पर स्थित लैम्प के लिए लागू होती है।

अब सूत्र के रूप इस प्रकार होगे—

$\gamma=4\alpha$ तथा $PP'=2h \tan 2\alpha$ (जैसा कि सिद्ध कर सकते है) । दायरे के अक्ष आँख पर लगभग 4α तथा $4\alpha \sin\omega$ के कोण बनाते है । प्रकाश-स्तम्भ की आभासी लम्बाई और चौडाई की निष्पत्ति $\sin\omega$ है जो ठीक उतनी ही है जितनी दशा १ मे, केवल इस बार सभी आयाम पहले की अपेक्षा दो गुने है ।
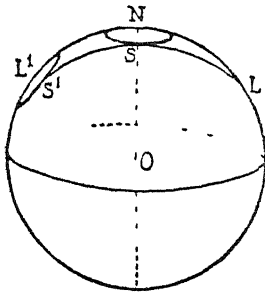
चित्र १६—**गोले की सहायता से यह दिखलाना कि स्तम्भ की शक्ल का प्रकाशपथ कैसे बनता है ।**

इन परावर्त्तनो मे प्रकाश-वितरण का एक सामान्य अन्दाज गणना के बिना ही, निम्नलिखित वितर्क से प्राप्त कर सकते है (चित्र १६) —

कल्पना कीजिए कि अत्यन्त छोटे पैमाने पर निरूपित परावर्तन के तल एक बडे गोले के केन्द्र के निकट स्थित है, पानी की स्थिर सतह पर खीचा गया अभिलम्ब, बिन्दु N तक पहुँचता है, अत नन्ही लहरो की झुकी हुई सतहो के अभिलम्ब एक दायरे के अन्दर होगे जिसकी बिन्दु N से कोणीय दूरी α होगी । अनन्त दूरी का प्रकाश-स्रोत गोले के बिन्दु L द्वारा प्रदर्शित है ।

अब यह ज्ञात करने के लिए कि अभिलम्ब OS वाली सतह किरणो को किस प्रकार परावर्त्तित करेगी, यह पर्याप्त होगा कि बृहत् वृत्त का चाप LS को खीचकर उसे बिन्दु S′ तक बढा ले, ताकि $SS'=SL$। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि तमाम छोटी लहरो से परावर्त्तित होनेवाली किरणे एक शकु बनाती है जिसका आधार अत्यन्त दीर्घ वृत्ताकार

है तथा यह दीर्घ वृत्त और भी अधिक चिपटा हो जाता है यदि पानी की सतह को हम और तिरछी दिशा से देखें। यह समझना आसान भी है कि क्यो प्रेक्षक की दृष्टि-रेखाएँ भी वैसी ही शक्ल अख्तियार करती है अर्थात् आँख से पानी पर पडनेवाले रोशनी के धब्बे के सीमा-बिन्दुओ तक खीची जानेवाली रेखाएँ भी शकु बनाती है।

व्यावहारिक रूप से प्रेक्षक को क्या दिखलाई पडेगा—इस दृष्टि से आइए अपनी गणना के निष्कर्षो का साराश प्राप्त करे—प्रथम, यदि हम माने कि पानी की सतह से हम उतनी ही ऊँचाई पर है जितनी ऊँचाई पर प्रकाश-स्रोत, तब प्रकाश-स्तम्भ के दीर्घ अक्ष से आँख पर बननेवाला कोण 2α के बराबर होगा जो लहरो के महत्तम झुकावोवाले दो तल के दर्मियान बनता है (चित्र १३)। इसी अनुपात मे, पानी की सतह पर जितनी अधिक तिरछी दिशा से हम देखते है, प्रकाशस्तम्भ का आडी दिशा का अक्ष उतना ही अधिक छोटा होगा।

द्वितीय, यदि पानी की सतह से प्रकाश-स्रोत की ऊँचाई हमारी आँख की अपेक्षा अधिक है तो प्रकाशस्तम्भ के सभी विस्तार अधिक लम्बे (कोणीय नाप मे) हो जाते है, और यदि प्रकाशस्रोत की ऊँचाई अनन्त के सन्निकट पहुँचे तो ये विस्तार भी पहले की अपेक्षा दो गुने मान के करीब पहुँचते है। किन्तु इस दशा मे भी दीर्घ अक्ष और लघु अक्ष के दर्मियान की निष्पत्ति करीब-करीब पहले-जैसी ही बनी रहती है।

चन्द्रमा से बननेवाले प्रकाश-स्तम्भ की तुलना ऐसे लैम्प के प्रकाश-स्तम्भ से करिए जिसका प्रतिबिम्ब लगभग उसी दिशा मे पड रहा हो। सामान्य तौर से प्रकाश के धब्बे प्रकाश-स्रोत से जितनी दूर होगे, वे उतने ही बडे होते है। वस्तुएँ, यदि पानी की सतह के अत्यन्त निकट है तो इनके प्रतिबिम्ब स्तम्भ सरीखे खिचे हुए, लम्बे नही, बल्कि करीब करीब एक बिन्दु-जैसे बनेगे। पानी की सतह के साथ विभिन्न मान के कोणवाली दिशाओ से देखकर इन धब्बो की तुलना करिए।

विभिन्न वेग की हवाओ के वक्र दिखलाई देनेवाले प्रकाश-स्तम्भ की लम्बाई द्वारा बननेवाले कोण 2α को भी नापिए।

ध्यान दीजिए कि वर्षा के समय प्रकाशस्तम्भ कितने बढिया तौर पर नियमित, लम्बे और सीधे खडे से बनते है क्योकि लहरे यद्यपि छोटी होती है, किन्तु उनका झुकाव तीव्र होता है।

अलग-अलग प्रत्येक तरग पर बननेवाले प्रतिबिम्बो की शक्लो का निरीक्षण भी महत्त्व रखता है। प्रत्येक तरग रोशनी का एक धब्बा बनाती है जो क्षैतिज दिशा मे फैला होता है। सूर्य की ऊँचाई जितनी कम होती जाती है उतना ही यह धब्बा

भी पतला होता जाता है और करीब-करीब एक पतली लकीर-सा बन जाता है। ये सभी छोटी लकीरे साथ मिलकर ऊर्ध्व स्तम्भ का निर्माण करती है। (चित्र १७, बायाँ)।

ये प्रतिबिम्ब चारो ओर से घिरे छल्ले की विलक्षण आकृति उस वक्त धारण करते है जब प्रकाशस्रोत ऊँचाई पर होता है तथा इसका विस्तार-क्षेत्र बडा होता है (जैसे निअन गैस नली के विज्ञापनवाले प्रकाश-स्रोत) (चित्र १७ दाहिना)।

चित्र १७—**किंचित् तरंगित होते हुए पानी पर प्रकाश स्तम्भ। ऊँचे प्रकाश-स्रोत से आने वाले प्रकाश का प्रतिबिम्बन।**

मान लीजिए, पानी की सतह जब झुक रही हो तो हम नीचे की ओर पानी की ऐसी सतह पर देख रहे है जो इतनी ढालुवाँ है कि प्रत्येक प्रकाश-स्रोत L को लहर के दो पृथक् बिन्दुओ पर प्रतिबिम्बित होते देख सकते है। उदाहरण के लिए लहर के सिरे के बिन्दु S_1 से और गर्त्त के बिन्दु S_2 से प्रतिबिम्बित हम देखते है जब कि दोनो बिन्दुओ पर स्थित स्पर्शी रेखाओ का झुकाव लगभग समान है। उन दोनो के दर्मियान मान लीजिए बिन्दु S' के निकट ढाल अधिक तेज है, तो यहाँ से हम नीचे के बिन्दु L' का प्रतिबिम्ब देखते है जो प्रकाश उत्पन्न नही कर रहा है।

अवश्य दोनो बिन्दु S_1 तथा S_2 लहर के एक ही पार्श्व पर है। यदि हम अपनी आँख बगल की ओर हटाते है तो हम दोनो प्रतिबिम्बो के एक दूसरे के निकट आते देखते हैं जो अन्त मे एक दूसरे मे आत्मसात् हो जाते है, अत एक वृत्त या कुडल-सा बन जाता है। (चित्र १७ क)

रोशनी के इन धब्बो के दृश्य स्वरूप की एक और भी विशिष्टता है—प्रत्येक धब्बा सदैव हमारी आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्व धरातल मे ही पडता है (अपवाद के लिए देखिए § १५)। चित्राकन के समय या रगीन चित्र बनाते समय सभी चीजो का प्रेक्षपण मै अपने सामने के ऊर्ध्व धरातल पर प्राप्त करता हूँ, इस कारण प्रकाश का प्रत्येक धब्बा अनिवार्य रूप से ऊर्ध्व दिशा मे खिच उठता है, चाहे यह धब्बा

दृश्य के केन्द्र-बिन्दु से इधर-उधर हटा ही क्यो न हो । क्लादे द्वारा निर्मित उफिजी के एक चित्र मे सूर्य चित्र-पटल के हाशिये के निकट दिखलाया गया है, फिर भी चित्रकार
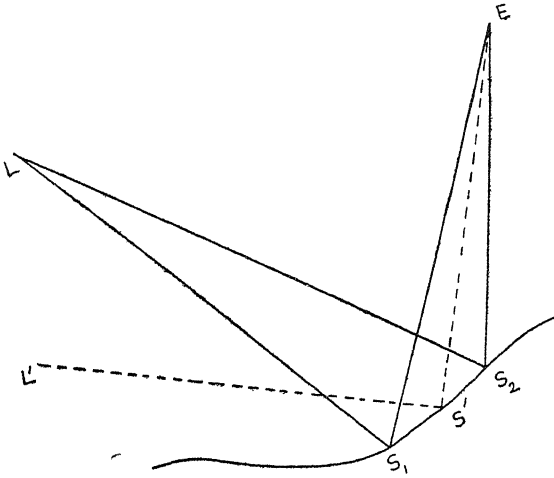
चित्र १७ क—**लहरो से बननेवाले प्रतिबिम्ब में छल्ले का निर्माण ।**

ने इसमे एक प्रकाशस्तम्भ दिखलाया है जो सूर्य से चित्र के आमुख के मध्य बिन्दु तक तिरछी दिशा मे आता है—यह गलत चित्रण है ।[1]

अपना केमरा समुद्र पर फोकस करिए जिस पर सूर्य चमक रहा हो और केमरे के पर्दे पर देखिए कि लहरो से परावर्तित होनेवाला प्रकाश किस प्रकार वितरित हो रहा है। इससे आप पता लगा सकते है कि लहरो का ढाल कैसा है और उनकी प्रमुख दिशा क्या है, तथा एक नजर मे पानी की सतह का समष्टि रूप से अनुदर्शन प्राप्त किया जा सकता है तथा फोटो की प्लेट पर इसे अङ्कित किया जा सकता है ।[2]

१५. नन्ही तरगो से आलोडित पानी की सॅकरी सतह से परावर्तन

इस दशा मे प्रकाश के धब्बे प्राय स्पष्ट तौर से असमिति का प्रदर्शन करते है। मिसाल के लिए नहर के पार दाहिनी ओर के लैम्प को देखे तो अब ये धब्बे ऑख और

1 Ruskin, Modern Painters I & II
2 W Shoulejkin, Loc cit

प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्व धरातल मे नही पडते बल्कि नहर की ओर, अर्थात् दाहिने झुके प्रतीत होते है (चित्र १८)।
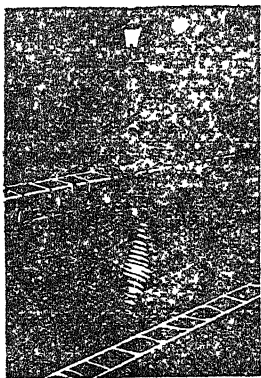
चित्र १८—**एक अद्भुत दृश्य; प्रतिबिम्ब, आँख और प्रकाश-स्रोत से गुजरनेवाले ऊर्ध्वतल मे नही पडता।**

यदि तिर्यक् दृष्टि से बायी ओर के लैम्प को देखे तो ये धब्बे फिर नहर की ओर अर्थात् बाये झुके दीखते है।

फिर भी हमारा सिद्धान्त गलत नही है, क्योकि यदि वर्षा हो रही हो और हवा न चल रही हो तब चाहे किसी दिशा से देखे, ये धब्बे पूर्णत ऊर्ध्व धरातल मे स्थित होते है। इनके तिरछे दीखने का कारण हवा का वेग है जो प्राय लहरो को नहर की दिशा मे बहाने की चेष्टा करती है, अत इस दशा मे आदर्श रूप से अनियमित तरग रूप को लेकर गणना का आरम्भ हम नही कर सकते।

निम्नलिखित प्रेक्षण इस बात को सिद्ध कर सकते हैं—

(क) चौडे पाट की नदी मे प्रकाशस्तम्भ के झुकाव की दिशा बहुत कम व्यवस्थित रहती है। इस दशा मे नदी के किनारे के समकोण लहरो की दिशा को कोई प्रमुखता नही प्राप्त होती।

(ख) पानी पर बर्फ की हलकी तह यदि जमी हो तब ऐसा प्रतीत होता है मानो बर्फ पर जगह-जगह नन्ही ढेरियाँ उठी है, और प्रकाशस्तम्भ स्पष्ट दिखलाई पडता है, किन्तु यह ऊर्ध्व दिशा मे ही स्थित होता है।

(ग) पानी की बौछार से भीगी ऐसफाल्ट की सडक पर सडक के लैम्प या मोटरकार या सायकिल के हेडलैम्प के प्रतिबिम्ब मे झुकाव उसी प्रकार के देखने को मिलते है जिस प्रकार के तेज हवा मे नहर के पानी पर। वास्तव मे सडक पर गुजरने वाली सवारियो के कारण ये अनियमितताएँ प्रगट होती है। (किस प्रकार ये उत्पन्न होती है, यह भी एक दिलचस्प विषय है)। यदि सडक के धरातल की हम जाँच करे तो हम देखते है कि इस पर वास्तव मे लहरे मौजूद है जिनकी शीर्षरेखाएँ सडक की आडी दिशा मे पडती है।

इस घटना का निर्माण करने के लिए कॉच का कोई टुकडा लीजिए और चिकनाई लगी उँगली से इस पर समानान्तर दिशाओ मे रगड की लकीरे डाल दीजिए। सामने मेज पर काँच को क्षैतिज रख दीजिए ओर उसमे किसी दूरस्थ लैम्प का प्रतिबिम्ब देखिए जो मेज की सतह से बहुत ऊँचा न हो। काच को पहले इस प्रकार अनुस्थापित करिए कि रगड की लकीरे परावर्त्तन-धरातल के समकोण पडे। प्रकाश का विस्तार इसी धरातल मे होगा और इसका प्रक्षेपण ऊर्ध्व तल मे पडेगा। अब यदि कॉच को उसी के धरातल मे कोण p के बराबर घुमाएँ तो प्रकाश का विस्तार g कोण घूम जायगा। यह दिखलाया जा सकता है कि $\tan g = \tan p \times \sin \omega$ जिसमे ω पुन दृष्टिकोण तथा क्षैतिज तल के दर्मियान का कोण है। उदाहरण के लिए यदि कॉच को $p=45°$ के कोण पर घुमाया जाय, तो प्रकाश का विस्तार उसी दिशा मे अपेक्षाकृत बहुत घेरे कोण पर घूमेगा। किन्तु कॉच को घुमाना जारी रखे तो प्रकाश का विस्तार उत्तरोत्तर अधिक तेजी से घूमेगा और अन्त मे यह रगड की लकीरो की दिशा मे आ जायगा जबकि $p=g=90°$ होता है। (चित्र १८ क, ख)
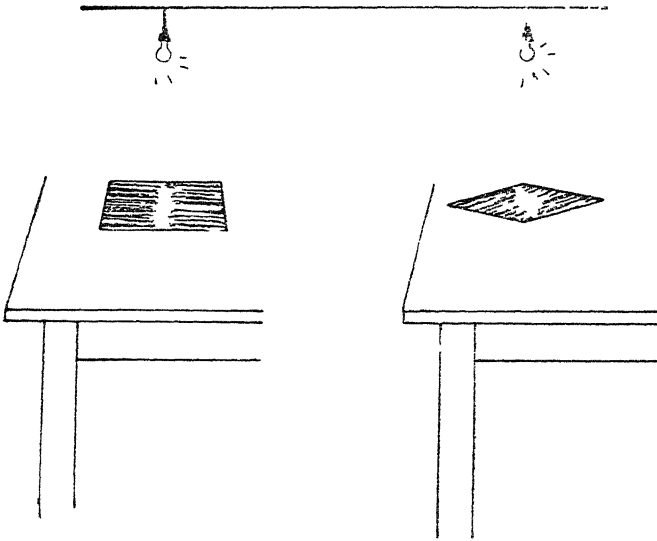
चित्र १८ क, ख—**तरगित धरातल द्वारा बननेवाले प्रतिबिम्ब असमित कब होते है।**

इस विषय की विस्तृत व्याख्या अभी तक की नही गयी है, किन्तु इसकी प्रमुख

विशेषताओ का कुछ अनुमान हम, कम से कम, अनन्त पर स्थित प्रकाशस्रोत के लिए, गोले पर उसका प्रक्षेप प्राप्त करके लगा सकते है (चित्र १९)। यदि परावर्त्तन धरातल के अभिलम्ब, बिन्दु N के गिर्द दिखायी गयी वक्र रेखा पर वितरित हो तो परावर्त्तित किरणे बिन्दु L′ के गिर्द दिखायी गयी वक्ररेखा के विभिन्न बिन्दुओ तक पहुँचेगी, परावर्त्तित प्रकाश-स्तम्भ का अक्ष अब LNL′ से गुजरने वाले धरातल मे नही पडेगा बल्कि यह बगल को हटा हुआ होगा।
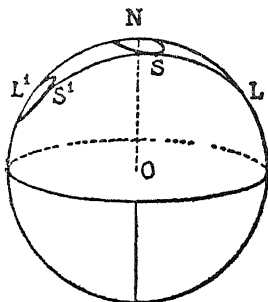
चित्र १९—**तरगें जब निश्चित दिशा में अवस्थित होती है तो प्रकाश के तिरछे धब्बे किस प्रकार बनते हैं।**

लहरदार सतह से होनेवाले परावर्त्तन का एक विशेष दृष्टान्त रात को उस समय देखा जा सकता है जबकि बडी दूकानो की खिडकियो के सामने लगे झिरीदार पर्दे से सडक का लैम्प प्रतिबिम्बित होता है। झिरियो पर प्रकाश का एक दायरा देखते है जो होता तो परिवलय की शक्ल का है, किन्तु हमारी आँख को वह एक वृत्त का भाग दीखता है। इसकी ज्यामिति समीक्षा अत्यन्त सरल है, बेलनाकार लहरदार सतह से परावर्त्तित होने वाली तमाम किरणे एक शकु बनाती हैं जिसका अक्ष लहर के शीर्ष के समानान्तर होता है।
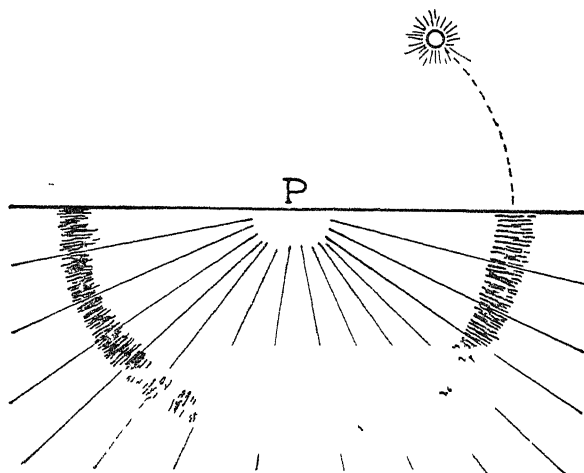
चित्र १९ क—**खिडकी की लहरदार झिरीवाले आवरण पर प्रतिबिम्ब परवलय शक्ल का क्यों दीखता है।**

तदनुसार आँख, जो समानान्तर लहरो वाली ऐसी समूची सतह का सर्वेक्षण करती है जिस पर दूरस्थ प्रकाश-स्रोत की रोशनी पड रही है, प्रकाश को सभी दिशाओ से आता हुआ देखेंगी। यह रोशनी परस्पर मिलकर एक शकु की सतह बनाती है, इसका अक्ष हमारी आँख से गुजरने वाली वह रेखा होती है जो तरग-शीर्षो के समानान्तर पडती है। इस प्रदीप्त वृत्तचाप को बढाये तो यह एक वृत्त बनायेगा जिसपर प्रकाशस्रोत L स्वय स्थित होगा (चित्र १९क)। प्रत्येक बिन्दु पर हम प्रकाश का धब्बा देखते है जो लहर के समकोण दिशा मे अवस्थित होता है (यदि दोनो ही प्रेक्षण दिशा के समकोण प्रक्षेपित किये जायें)। इस व्याख्या से लहरदार झिरी के पर्दो तथा विशेष रूप से अनुस्थापित पानी की लहरो, दोनो से होनेवाले प्रकाश-परावर्त्तन का एक ही साथ समाधान हो जाता है।

१६. तरगो से आलोडित पानी के विस्तृत धरातल से परावर्तन[1]

हलकी हिलोरो वाली समुद्रसतह से होने वाले परावर्त्तन मे एक विशेषता पायी जाती है जिसे हम परावर्त्तित प्रतिबिम्बो का क्षितिज के निकट सरक आना कह सकते
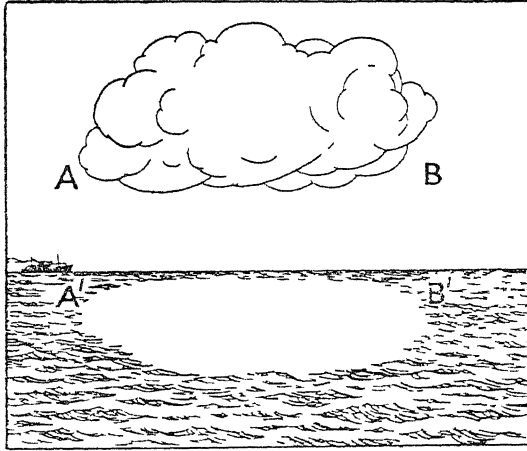
चित्र २०—**समुद्र मे प्रतिबिम्बन-बादल का प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर हट जाता है।**

1 E O Hulburt, J O S A, 24, 35, 1934

है।' (चित्र २०) बादल और नीले आकाश के दर्मियान की सीमारेखा A B का प्रतिबिम्ब A' B' क्षितिज के अधिक निकट है जबकि स्वय रेखा A B और क्षितिज के बीच की दूरी ज्यादा है। वास्तव मे क्षितिज के ऊपर की प्रथम 25° या 35° कोणीय ऊँचाई तक स्थित आकाश का प्रतिबिम्ब मुश्किल से ही दीखता है। इस दशा मे सभी प्रतिबिम्ब अनियमित परावर्त्तन द्वारा बनते है, फिर भी यह घटना अत्यन्त स्पष्ट दीखती है और इतनी प्रभावोत्पादक होती है कि समुद्र पर समस्त प्रकाश के वितरण मे उसका स्थान विशेष रूप से प्रमुख होता है। यही कारण है कि समुद्रतट के वृक्ष टीले आदि के प्रतिबिम्ब समुद्र के पानी मे कभी नही दिखलाई देते, उनकी ऊँचाई अपर्याप्त होती है। ऐसी परिस्थितियो मे जहाज के प्रतिबिम्ब भी नही ही दिखलाई पडते क्योकि उपर्युक्त प्रभाव के कारण प्रतिविम्ब मे जहाज के कारण बननेवाला काला धब्बा पिचक कर जहाज के पेंदे से ही लग जाता है।

लहरो मे सूर्य का प्रतिबिम्ब चकाचौध उत्पन्न करने वाले प्रकाश का अकेला एक ही धब्बा होता है। सूर्यास्त के समय यह प्रतिविम्ब थोडी बहुत तिकोनी शक्ल का हो जाता है, जिससे यह प्रदर्शित होता है कि प्रतिविम्ब क्षितिज के निकट सरक आता है (चित्र २१)।
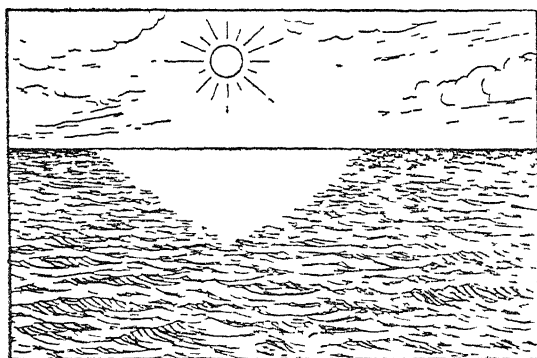
चित्र २१—समुद्र पर सूर्य का प्रकाश।

इन घटनाओ की आसानी से व्याख्या की जा सकती है, लम्बे फासले से लहरो का केवल वह पार्श्व हमे दीखता जिसका रुख हमारी ओर हो। इस कारण ऐसा प्रतीत

होता है मानो हम आकाश की चीजो का प्रतिबिम्ब तिरछे रखे दर्पण मे देख रहे हो (चित्र २२)।

इससे इस बात का भी समाधान हो जाता है कि प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर हटा हुआ क्यो बनता है। प्रतिबिम्ब मे आकाश के निचले 30° कोण के भाग के विलुप्त होने का अर्थ है कि लहरो का दोनो पार्श्व का औसत ढाल 15° है, (यदि समुद्र न तो बहुत शान्त है और न बहुत अधिक उद्वेलित।)।

चित्र २२—**प्रतिबिम्ब का स्थानान्तर। आपतन कोण की अपेक्षा परावर्तन कोण अधिक चिपटा है।**

इस घटना का उल्लेख § १४ मे दिये गये सैद्धान्तिक विवेचन मे क्यो नही किया गया? इसलिए कि हम उस दशा का विचार नही कर रहे थे जबकि $\omega < 2\alpha$, अर्थात् जब पानी की सतह पर अत्यन्त तिरछी दिशा से देखा जाता है। यह दशा, जिसके लिए उक्त गणना के फल लागू नही होते है, उस वक्त प्राप्त होती है जबकि पानी का धरातल बहुत अधिक फैला हो, और समुद्र के लिए तो यह शक्ति विशेष रूप से आवश्यक है। सतह जितनी अधिक शान्त होगी उतनी ही अधिक तिरछी दिशा मे हमे देखना पडेगा।
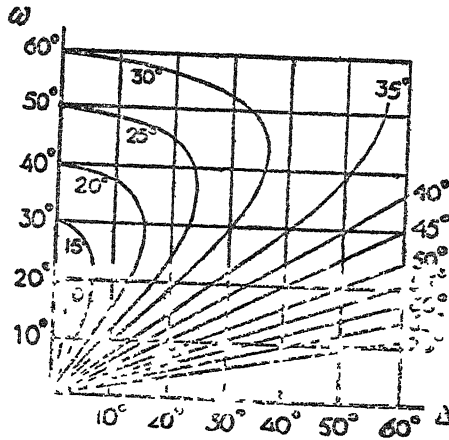
चित्र २३—ω **और △ के प्रेक्षित मान के प्रत्येक जोड़े के लिए एक बिन्दु मिलता है। इस बिन्दु की स्थिति प्रत्येक वक्र के लिहाज से आँकिए प्रत्येक वक्र α के एक निश्चित मान के लिए खीचा गया है। (ई० ओ० हलबंट, जर्नल आफ दी अप्टिकल सोसाइटी आफ अमेरिका पर आधारित)**

सूर्यकिरणो से प्रकाशित समुद्र-जल की सतह की ओर देखने पर सहज ही हम मालूम कर सकते है कि उपर्युक्त शर्त्त पूरी हो रही है या नही। शर्त्त पूरी होने की दशा मे प्रकाश-स्तम्भ क्षितिज को छू लेगा। अब इस दशा मे प्रकाशस्तम्भ की

लम्बाई नाप कर लहर के झुकाव का मान नही प्राप्त किया जा सकता। इसके लिए हमे दूसरा तरीका अपनाना पडेगा, लहरो की ढाल का कोण यदि बढ जाता है तो उसी हिसाब से क्षितिज का और अधिक चौडा भाग जगमगाहट की रोशनी से भर जाता है।

इस कोण $\triangle$ को नापिए जो क्षितिज पर स्थित धब्बे की चौडाई बतलाता है, और सूर्य की कोणीय ऊँचाई ω भी नापिए। और इनके मान से, चित्र २३ के ग्राफ पर लहरो की ढाल का कोण α मालूम करिए, अथवा स्पूनर के सूत्र की सहायता से जो सूर्य की 15° से कम की कोणीय ऊँचाई के लिए इस प्रकार सरल रूप मे व्यक्त किया गया है —

लहर की ढाल का कोण $\alpha = \frac{\triangle}{2\omega}$ रेडियन, (1 रेडियन$=57^{\circ}$) (देखिए प्लेट II)

अत्यन्त शान्त समुद्र पर सूर्योदय या सूर्यास्त के समय के सूर्य का प्रतिविम्ब एक पतली रेखा सा बनता है जो करीब करीब सूर्य के आग्नेय गोले से मिल जाता है और इस प्रकार Ω जैसी आकृति बन जाती है (चित्र २४)।

चित्र २४—**पूर्णतया शान्त समुद्र पर उगते हुए सूर्य के प्रतिबिम्ब को देखकर क्या आप को पृथ्वी की वक्रता का पता लग पाता है।**

कभी-कभी जब समुद्र अत्यधिक शान्त होता है तो चिपटे दीर्घवृत्त की शक्ल का प्रतिबिम्ब उस वक्त तक भी देखा जा सकता है जबकि क्षितिज से सूर्य की ऊचाई बस 1° रहती है, किन्तु प्राय तुरन्त बाद मे ही इस प्रतिविम्ब का उपर्युक्त त्रिभुजाकार शक्ल के प्रकाश के धब्बे मे परिणत होना दृष्टिगोचर होता है। ऐसी दशाओ मे पृथ्वी के धरातल की वक्रता का भी प्रभाव क्रियाशील होता है। यदि लहरे कतई मौजूद न हो तो हम कह सकते है कि पृथ्वी का गोलापन प्रत्यक्षत प्रेक्षणीय है। अब तक की अध्ययन की गयी अनुकूलतम दशा मे नापा गया क्षितिज की ओर प्रतिबिम्ब का हटाव पृथ्वीतल की वक्रता के हिसाब से प्राप्त किये गये मान का दो गुना ठहरता है।

१७. अत्यन्त हलके उद्वेलन की दृष्टि-गोचरता

पानी के अत्यन्त हलके उद्वेलन का अवलोकन तरग-शीर्ष की समानान्तर दिशा मे देखने के बजाय उस वक्त अधिक अच्छी तरह किया जा सकता है जब शीर्षरेखा की

समकोण दिशा मे उन्हे देखते है । अत यह देखने के लिए कि नहर पर हवा के कारण लहरे किस प्रकार बनती है, हमे नहर की समानान्तर दिशा मे देखना चाहिए। इससे यह बात भी समझ मे आती है कि क्यो जहाज के पीछे उठनेवाली शानदार तरगे पुल पर से स्पष्ट देखी जा सकती है जबकि किनारे पर से करीब करीब वे बिल्कुल ही दृष्टि-गोचर नही हो पाती है। इस घटना का समाधान उसी प्रकार करते है जिस प्रकार लैम्प के प्रतिबिम्ब मे प्रकाश धब्बे का स्तम्भ के रूप मे खिच जाने का। लहरो को समकोण दिशा से देखने पर एक तरह से हम प्रकाशस्तम्भ के दीर्घ अक्ष की दिशा मे अवलोकन करते है, और यदि लहरो की समानान्तर दिशा मे देखे तो हम प्रकाशस्तम्भ के लघु अक्ष की दिशा मे अवलोकन करते होते है। इसका अर्थ यह है कि लहर अपनी समकोण दिशा मे अपनी समानान्तर दिशा की अपेक्षा अधिक विचलन उत्पन्न करती है।

१८. गॅदले पानी पर प्रकाश के धब्बे

यद्यपि पानी की सतह दर्पण की तरह चिकनी सपाट होती है, फिर भी रात को प्राय. सडक के लैम्प के प्रतिबिम्ब के गिर्द प्रकाश के स्तम्भ दिखलाई पडते है। लहरो पर बनने वाले प्रकाश-स्तम्भ की भाँति इनमे जगमगाहट मौजूद नही होती, बल्कि ये पूर्णतया शान्त और स्थिर होते है। सर्वत्र जहाँ कही सतह पूर्णतया स्वच्छ नही होती, ऐसे प्रतिबिम्ब बनते है, प्रगट है कि पानी की सतह पर मौजूद धूल के नन्हे-नन्हे जर्रे सतह पर अनेक अनियमित उभार बनाते है जो प्रकाश किरणो के लिए नन्ही तरगो का काम करते है। फलस्वरूप अधिक तिरछी दिशा से देखने पर ये प्रकाश-स्तम्भ पतले दीखने चाहिए, और वस्तुत होता भी ऐसा ही है।

लगभग सीधी ऊर्ध्व दिशा से जब किरणे गिरती है तो प्रकाश के ये धब्बे मुश्किल से ही दिखलाई पडते है, किन्तु तिरछी किरणो के लिए ये बहुत ही स्पष्ट रूप से दृष्टि-गोचर होते है और इस प्रकार सतहपर धूलिकणो की मौजूदगी का ये स्पष्ट आभास देते है। इन दोनो दशाओ के परावर्त्तन मे प्रदीप्ति-अन्तर इतना अधिक है कि यह मानना पडता है कि इसका कोई विशेष कारण अवश्य होगा। धूल के ये जर्रे इतन छोटे होते है कि यह माना जा सकता है कि प्रकाश का परिक्षेपण करने मे ये समर्थ है। आगे हम देखेगे कि ऐसे जर्रो द्वारा किरणो की आपतन दिशा के आसपास परिक्षेपण प्रबलतम होता है (§ १७७)। अवश्य इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि क्यो, ज्यो-ज्यो अधिक तिरछी दिशा से देखते है त्यो परिक्षेपण और प्रकाश का समूचा धब्बा अधिक प्रकाशमान होते जाते है।

१९. तुषार पर प्रकाश के धब्बे

कभी-कभी तुषार की सतह नन्ही-नन्ही चिपटी चकरियो और सितारे की शक्ल के जर्रो की तह से ढकी होती है—ये चकरियाँ तथा सितारे करीब-करीब क्षैतिज तल मे ही होते है। क्षितिज के निकट स्थित सूर्य का प्रतिविम्ब यदि इस तुषार की सतह मे देखे तो एक खूबसूरत प्रकाश-स्तम्भ दिखलाई पडेगा जिसकी उत्पत्ति का कारण यह है कि तुषार की नन्ही चकरियाँ क्षैतिजतल से अनियमित रूप से इधर-उधर झुकी होती है। इस अवसर पर सूर्य को क्षितिज के निकट ही होना चाहिए, क्योकि तब प्रकाश-स्तम्भ चौडाई मे सिकुड जाता है, अत और अधिक स्पष्ट दीखने लगता है।

रात के समय जब सडक के लैम्पो मे रोशनी होती रहती है, तब प्रकाश के धब्बे और भी अधिक चित्ताकर्षक दीखते है—प्रत्येक लैम्प ताजे तुषार मे प्रतिबिम्बित होता है।

२०. सडक पर प्रकाश के धब्बे

सडक पर भी उसी किस्म के प्रकाश के स्तम्भ-सरीखे धब्बे बनते है जिस तरह हिलोर वाले पानी पर। ये धब्बे सर्वाधिक स्पष्ट उस वक्त दीखते है जब कि पानी बरस चुका हो और सारी सडक गीली हो जाने पर चमक रही हो। आधुनिक ऐसफाल्ट की सडक पर ये धब्बे अत्यन्त दीप्तिमान दीखते है, किन्तु ये पत्थर की रोडियो वाली सडक या पुरानी चाल की ककड वाली सडको पर भी दिखाई देते है। वर्षा के बिना भी, सडक से प्रकाश का परावर्त्तन इतनी अच्छी तरह होता है कि करीब-करीब हमेशा ही प्रतिबिम्ब मे प्रकाश के स्तम्भ प्रगट होते है बशर्त्ते पर्याप्त तिरछी दिशा से हम देखे (देखिए § १५)।

२१. वर्षा के समय परावर्तन

पानी बरसते समय रात को पानी के नाले मे सडक के लैम्प का प्रतिबिम्ब देखिए। लैम्प के प्रतिबिम्ब के चारो ओर जहाँ जहाँ बूँदे गिरती है, वहाँ ही प्रकाश की ढेर-सी चिनगारियाँ-सी उत्पन्न होती है और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिबिम्ब से किरण-रेखाएँ चारो ओर विकीर्ण हो रही है (चित्र २५)। फोरेल ने इसी तरह की घटना उस वक्त देखी थी जब उसने गहरे रग के काँच मे से शान्त पानी मे सूर्य के प्रतिबिम्ब का अवलोकन किया था जिसके गिर्द पानी मे यत्र-तत्र वबूले उठ रहे थे।

इस घटना का समझना आसान है। प्रत्येक बूँद से समकेन्द्रीय तरगो का समूह वनता है। और इनके पार्श्व से वनने वाले प्रतिबिम्ब सदैव ही तरग-समूह के केन्द्र और

प्रकाश-स्रोत के प्रतिबिम्ब को मिलाने वाली रेखा पर पड़ते हैं (चित्र २६)। चित्र से यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि पानी की सतह से जब लैम्प L तथा आँख E दोनों समान ऊँचाई पर स्थित होते हैं और बूँद दोनों से समान दूरी के बिन्दु D पर गिरती है, तब बिन्दु D_1 तथा D_2 दोनों ही रेखा M D पर पड़ते हैं; लैम्प का प्रतिबिम्ब M पर दीखता है। यदि तरंग का प्रसार बिन्दु D के गिर्द वृत्त की शक्ल में होता है तो परावर्त्तित
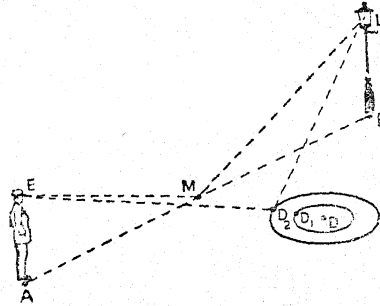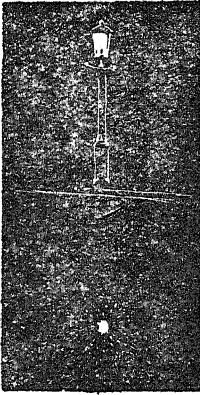
चित्र २५—वर्षा-जल के खित्ते सड़क लैंप के प्रतिबिम्ब के गिर्द चमकती हुई चिनगारियाँ विकीर्ण करते हैं।

चित्र २६—प्रतिबिम्ब के गिर्द चिनगारियाँ किस प्रकार बिखरती हैं।

प्रकाश रेखा D M पर कुछ दूर तक चलता है और इसकी रफ्तार इतनी तेज होती है कि जान पड़ता है कि प्रकाश की एक रेखा वहाँ बन रही है। चाहे बूँद ऊर्ध्व तल E M L में बिन्दु M के सामने गिरती हो या उसके पीछे; दोनो दशाओं में यह सिद्धान्त समान रूप से लागू होता है।

इस घटना का पुनरुत्पादन काँच की एक ऐसी प्लेट पर किया जा सकता है जिसमें लैम्प प्रतिबिम्बित हो रहा हो। इसके लिए एक शीशे के जार के ढक्कन को या पीतल की चकरी को जो खराद पर चढ़ायी गयी रही हो, प्लेट की सतह पर खिसकाना होगा—अभिप्राय यह है कि वस्तु की सतह पर वृत्ताकार उभरी हुई धारियाँ मौजूद होनी चाहिए।

इसके लिए सामान्य उपपत्ति हासिल करने का प्रयत्न कीजिए।

२२. वृक्षो की चोटी पर प्रकाश के वृत्त

रात के समय जब वृक्ष के ठीक पीछे सडक का लैम्प जल रहा हो, तो यत्र-तत्र टहनियो से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश देखा जा सकता है। प्रकाश के ये धब्बे वस्तुत. रोशनी की छोटी-बडी लकीरो-जैसे दीखते है जो प्रकाशसूत्र के गिर्द समकेन्द्रीय दायरो मे पडते है (प्लेट III)।

इस घटना के अवलोकन के लिए सबसे बढिया तरीका यह है कि यदि लैम्प वृक्ष के बिलकुल निकट जल रहा हो तो उसके तने की छाया मे खडे हो जायँ। किन्तु धूप मे भी ये वृत्त देखे जा सकते है, मिसाल के लिए वर्षा के बाद जबकि शाखाएँ भीग गयी हो, तो धूप के चमकने वाली टहनियाँ मटमैली पृष्ठभूमि पर थिरकती हुई आलोक-रेखाओ का सुन्दर-सा नमूना बनाती है। अवश्य आँख को चकाचौध से बचाने के लिए सूरज को छत या दीवार की आड मे पडना चाहिए। चमकते हुए तुपारकण भी अत्यन्त सुन्दर प्रभाव उत्पन्न करते है।

इस घटना का समाधान इस प्रकार करते है (चित्र २७)—
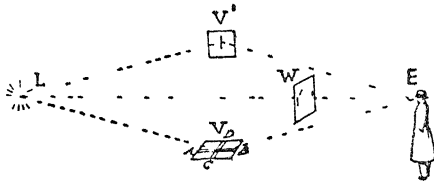
चित्र २७—**वृक्ष की चोटियो मे प्रकाशवृत्त किस प्रकार बनते है।**

एक छोटी सतह V पर ध्यान दीजिए जो लैम्प की रोशनी को हमारी आँख की दिशा मे परावर्त्तित करती है। इस धरातल मे पडने वाली सभी टहनियो को हम प्रकाश से चमकती हुई देखेगे, किन्तु अनुदर्शन के कारण A B की भाँति अवस्थित टहनियाँ बहुत ही छोटी दीखेगी जबकि C D दिशा की टहनियो की पूरी लम्बाई दिखलाई देगी। चूँकि दोनो ही दिशा मे टहनियो की सख्या लगभग एक-सी होती है अत परावर्त्तित प्रकाश मे मुख्यत धरातल E L V की समकोण दिशा मे ही स्थित रोशनी की लकीरे हमे दीखेगी। अन्य छोटी सतहो के लिए भी जैसे V' आदि जो ऊपर या हमारे बाये या दाहिने स्थित होगी, यही दशा लागू होती है, फलस्वरूप ऐसा प्रतीत होता है कि हम समकेन्द्रीय वृत्त की प्रकाश-रेखाएँ देख रहे है। हमारी दृष्टिरेखा और E L रेखा के दर्मियान का कोण जितना छोटा बनता है, दिशानुकूलन पर यह प्रभाव उतना ही अधिक बढ जाता है। फिर लैम्प की तरह

प्रकाश-स्रोत के निकट होने की अपेक्षा सूर्य की तरह प्रकाश-स्रोत जब अनन्त दूरी पर स्थित होता है तो इस दशा मे यह प्रभाव थोडा और बढ जाता है।

इस दशा की तुलना लहरो से उद्वेलित पानी की सतह पर दीखने वाले प्रकाश के धब्बो से कीजिए (चित्र २८)। एक तरह से हमे इस दशा मे कल्पना करना होगा कि टहनियाँ सर्वत्र चारो ओर स्थित न होकर केवल एक ही धरातल (पानी की सतह) मे स्थित है। इस सतह मे पडनेवाली केवल वे ही नन्ही लकीरे EL के गिर्द के समकेन्द्रीय वृत्तो के भाग बना पायेगी जो सबकी सब धरातल ESL के समकोण स्थित होगी। ये प्रकाश-रेखाएँ मिलकर समष्टि रूप से ESL धरातल मे प्रकाश-स्तम्भ का निर्माण करती है। यह क्रिया ठीक पानी की लहरो पर बनने वाले प्रतिबिम्बि की क्रिया के मानिन्द है।
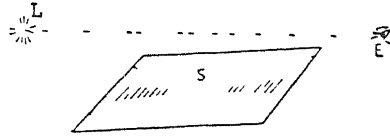
चित्र २८—**वृक्ष की चोटी पर बने प्रकाश वृत्त और तरगित पानी पर बने प्रकाश स्तम्भों की तुलना कीजिए।**

इसी प्रकार की घटना उस वक्त भी देखने को मिल सकती है जब डूबता हुआ सूर्य खडी फस्ल की बालो पर चमकता है या जब धुन्ध के मौसम मे सडक के लैम्प को मकडी के ऐसे जाले मे से देखते है जो ओस की नन्ही बूँदो के कारण चमक रहा हो। रेलगाडी की खिडकी के काँच पर पडी खरोच रेखाएँ भी इसी तरह के प्रभाव उत्पन्न करती है। (§१५९)। इन सभी दशाओ मे मुख्यत प्रकाश के आपतन धरातल[1] की समकोण दिशाओं मे पडने वाली नन्ही रेखाएँ ही चमकती है अत ये प्रकाश-स्रोत के गिर्द सम-केन्द्रीय वृत्तो का आभास कराती है।

1 Plane of incidence

अध्याय ३

प्रकाश का वर्त्तन

२३. हवा से पानी मे जाने वाले प्रकाश का वर्तन[1]

मल्लाह का बॉस, जिससे वह अपनी नाव को ठेलकर आगे बढाता है, ठीक उस ठौर से टूटकर मुडा हुआ जान पडता है जहाँ से वह पानी मे डूबा रहता है। ऐसा प्रतीत होने का कारण यह है कि जब किरणे हवा से पानी मे प्रवेश करती है या पानी से हवा मे, तो उनकी दिशा मुड जाती है। किन्तु यह ध्यान देने योग्य बात है कि डण्डे का यह मुडा हुआ भाग टूटी हुई किरण के प्रतिबिम्ब की स्थिति नही बतलाता क्योकि डण्डे का प्रतिबिम्ब, किरण की ठीक उलटी दिशा मे मुडता है। इन दोनो का परस्पर का सम्बन्ध चित्र २९ मे दिखाया गया है।
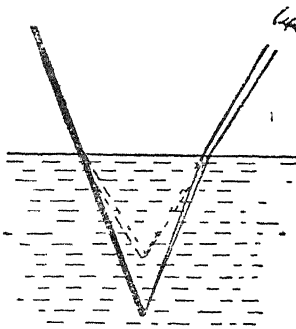
चित्र २९—प्रकाश-किरणो के वर्तन के कारण बॉस मुड़ा हुआ दीखता है।

पानी मे पडी किसी वस्तु की गहराई का अन्दाज अपनी ऑख से लगाकर उसे शीघ्रता से पकडने की कोशिश करिए। साधारणत. इस कोशिश मे आप सफल न होगे क्योकि वर्त्तन के कारण पानी के अन्दर की वस्तु अपनी स्थिति से ऊपर उठी हुई जान पडती है (चित्र २९)। आपने जो गहराई ऑकी थी वस्तु उससे नीचे होगी। किन्तु यह घटना इतनी सरल नही है कि केवल इतना कहने से इसका सही-सही समाधान हो जाय कि वर्त्तन वस्तु के बजाय उसका प्रतिबिम्ब एक ऊँचे उठे हुए धरातल पर उपस्थित करता है। उदाहरण के लिए जब स्वच्छ जल के नाले के किनारे आप

1 Refraction

सायकिल पर या पैदल जा रहे हो तो पानी के अन्दर के पौदो की स्थितियाँ अजीब तरह से बदलती है, उनके हटे हुए प्रतिबिम्ब मानो सरकते रहते है, जितनी ही अधिक तिरछी दिशा मे आप देखे, प्रतिबिम्ब उतना ही अधिक ऊपर को उठा हुआ जान पडता है। (प्लेट VII देखिए)।

स्वच्छ पानी के तालाब मे सतह पर उतराते हुए कमल के पत्तो की छाया तालाब के पेंदे मे विचित्र रूप से हाशिये पर कटी-फटी-सी दीखती है—मानो नारियल के पत्ते की छाया हो। इसका कारण यह है कि पत्ता हाशियो पर ऊपर की ओर कुछ मुडा होता है, अत पृष्ठतनाव की वजह से हाशिये से लगा हुआ पानी सतह से कुछ ऊपर उठ जाता है। इस प्रकार बने हुए नन्हे प्रिजमो मे से होकर सूरज की किरणे जब गुजरती है तो वे छाया वाले भाग मे अनियमित प्रकाश-रेखाओ के रूप मे बिखर जाती है।

स्वच्छ पानी के छिछले नाले मे, या नदी मे किनारे के निकट, पेंदे पर सूरज रोशनी की चमकीली लकीरे बनाता है। लहरो के शीर्ष लेन्स सरीखा काम करते है और ये किरणो को फोकस-रेखा पर समेट देते है—लहरो की हरकत के साथ-साथ यह रेखा भी धीरे-धीरे हिलती डुलती है (चित्र ३०[1] तथा प्लेट IVb)। इसी प्रकार की घटना परावर्त्तित प्रकाश मे हम देख चुके है (§८) और अब उसी के समकक्ष यह घटना हम वर्त्तन मे भी पाते है। किरणे जब तिरछे गिरती है तब इन प्रकाश-रेखाओ के हाशिये रगीन बनते है, सूरज की ओर का हाशिया नीले रग का होता है और दूर का ललछँवे रग का, क्योकि नील रग की किरण लाल रग की किरणो की अपेक्षा अधिक प्रबलता से वर्त्तित होती है। यह प्रकाश के विक्षेपण या रग के विस्तरण की घटना है।
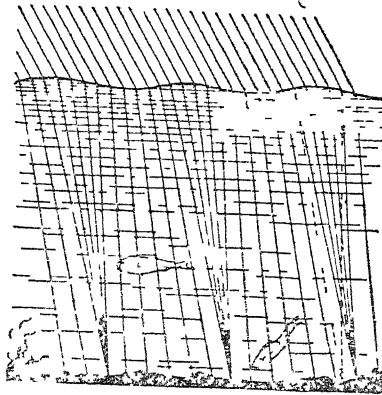
चित्र ३०—प्रकाश की किरणे पानी मे प्रविष्ट होनी है और तरगो द्वारा वर्तित हो कर प्रकाश-रेखाओ पर केन्द्रित हो जाती है। नीली किरणे (बिन्दु रेखाएँ) अधिक प्रबल वर्तन प्राप्त करती है।

१ ये घटनाएँ और भी अच्छी तरह देखी जा सकती है, यदि जल दूरबीन का उपयोग करें (§२९०)।

पारदर्शी गहरे जल मे सफेद पत्थर का टुकडा फेक दीजिए और कुछ फासले से इसे देखिए, यह ऊपर कुछ नीला और नीचे लाल रग का दीखेगा। यह घटना भी रगो के विस्तरण के कारण है।

२४ असमतल कॉच की पट्टिका मे से वर्तन

पुरानी चाल की रेलगाडी की खिडकी मे से देखने पर आप पायेगे कि खिडकी के शीशे के कुछ भागो मे से बाहर की वस्तुऍ पूर्णतया विकृत रूप मे दिखलाई पडती है। ऐसे शीशे म से होकर आने वाली सूर्य की किरणे यदि कागज पर गिरे तो इन भागो द्वारा कागज पर चमकीले प्रकाश की तथा गहरी छाया की धारियॉ बनती है। कागज को और दूर हटा कर रखिए तो ये धारियॉ काफी स्पष्ट प्रकाश-रेखाओ का रूप धारण कर लेती है।

प्रगट है कि कॉच के धरातल परस्पर समानान्तर नही है, बल्कि इसके कुछ भाग मोटे है और कुछ पतले, ये ही अनियमित लेन्स सरीखा काम करके किरणो को कही बिखरा देते है तो कही समेट देते है और इस प्रकार फोकस रेखाओ का मायावी नमूना बन जाता है (देखिए § २३)।

२५. प्लेट कॉच से परावर्तित दुहरे प्रतिबिम्ब

सडक के किनारे पर स्थित खिडकी मे दूर के लैम्प या चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को देखिए। दो प्रतिबिम्ब दिखलाई पडेगे, इनमे से एक प्रतिबिम्ब दूसरे के मुकाबले मे अनियमित तरीके पर इधर उधर हटा हुआ दीखेगा जो इस बात पर निर्भर करता है कि खिडकी के शीशे के किस भाग से परावर्त्तन हो रहा है। बहुत दिन नही हुए जब एक दार्शनिक ने कहा था कि इस घटना को 'कारण के बिना प्रभाव उत्पन्न होना' कह सकते है।[1] किन्तु भौतिकीज्ञ को तो इसके लिए कारण ढूँढना ही होगा।

हम देखते है कि कुछ दुकानो और आफिसो मे सजावट के लिए लगे बढिया पालिश वाले काले रग के कॉच की प्लेट के परावर्त्तन मे दुहरे प्रतिबिम्ब नही दीखते। अत यह स्पष्ट है कि एक प्रतिबिम्ब प्लेट की सामने वाली सतह से परावर्त्तन द्वारा बनता है और दूसरा प्रतिबिम्ब उन किरणो द्वारा बनता है जो कॉच के भीतर प्रवेश करके पीछे वाली सतह से परावर्त्तित होती है और कॉच मे से होकर हमारी ऑख तक पहुँचती है। किन्तु काले रग की प्लेट मे द्वितीय प्रतिबिम्ब बनाने वाली किरणे जज्ब हो जाती है।

1 E Barthel, Arch-for system philos 19, 355, 1913

वर्त्तन के कारण एक किरण अपनी दिशा से थोडी विचलित हो जाती है। (चित्र ३१)। क्या दुहरे प्रतिबिम्ब इसी कारण बनते है? नही, क्योकि यदि ऐसा होता तो (क) वे प्लेट के कुछ भागो पर अन्य भागो की अपेक्षा परस्पर इतने निकट नही दीखते, (ख) उनके बीच की दूरी प्लेट की मोटाई से अधिक न होती और तब इन्हे पृथक् दीखना कठिन हो जाता, (ग) किरण के आपतन कोण के बहुत बडे और बहुत छोटे मान के लिए प्रतिबिम्बो के बीच का हटाव शून्य हो जाना चाहिए (गणना से सहज ही देख सकते है कि अधिकतम हटाव करीब 50° के आपतन कोण पर प्राप्त होगा), जबकि वास्तविकता यह है कि लम्ब दिशा के परावर्त्तन मे भी दुहरे प्रतिबिम्ब दिखलाई देते है, (घ) अनन्त दूरी के प्रकाश-स्रोत के लिए, जैसे चन्द्रमा, दुहरे प्रतिबिम्ब के बीच की दूरी सदैव ही शून्य रहनी चाहिए।
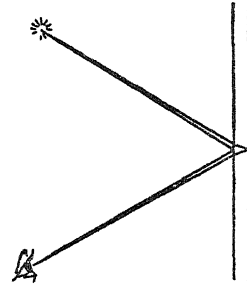
चित्र ३१—**पूर्णतया समानान्तर तल के प्लेट कॉच का बना खिड़की का कॉच दुहरे प्रतिबिम्ब का निर्माण करता है, किंतु वे एक दूसरे के अत्यन्त निकट स्थित होते है।**

निष्कर्ष यह प्राप्त हुआ कि **समानान्तर समतल सतह वाली कॉच की प्लेट से इस तरह के दुहरे प्रतिबिम्ब नही प्राप्त हो सकते। अवश्य प्लेट यदि वेज (टक) की शक्ल की हुई तो सतह के तनिक लहरदार होने के कारण दुहरे प्रतिबिम्ब इस पर बन सकते है।** किन्तु इस व्याख्या के पूर्णतया स्वीकार करने के पहले हमे इसका हिसाब लगाना चाहिए कि सामने और पीछे की सतहो के बीच कितना बडा कोण बनना चाहिए ताकि दुहरे प्रतिबिम्बो के बीच उतनी ही दूरी मौजूद हो जितनी वास्तव मे पायी गयी है, क्योकि ऐसी सम्भावना कम ही होती है कि अच्छे किस्म के प्लेटकाच की दोनो सतहे समानान्तर स्थिति से अधिक हटी हुई हो।

पहले मान लीजिए कि सतहे समानान्तर है और तब एक किरण पर ध्यान दीजिए—प्रथम सतह पर विभाजित होने के बाद भी दोनो किरणे परस्पर समानान्तर ही रहती है, परावर्त्तन के बाद वे एक दूसरे से केवल थोडी दूर हट जाती है। अब मानिए कि सतह AB समानान्तर स्थिति से छोटे कोण γ पर झुकी है (चित्र ३२)। इस दशा मे परावर्त्तित किरण I अपनी पूर्व स्थिति से कोण 2γ पर झुक जायगी। किरण II की मार्गदिशा प्राप्त करने के लिए हम कल्पना करते है कि CD एक दर्पण है जो सतह
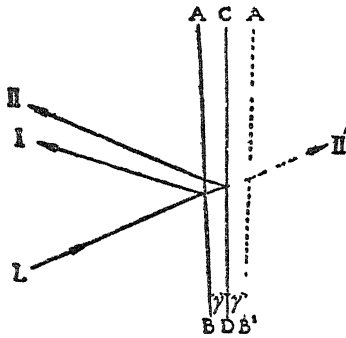
चित्र ३२—**दुहरे प्रतिबिम्ब ऐसे काँच मे किस प्रकार बनते है, जिसकी मोटाई सर्वत्र एक-सी नही होती।**

AB का परावर्तित प्रतिबिम्ब A'B' पर बनाता है और किरण II का प्रतिबिम्ब II' दिशा मे बनाता है। अब हम देखते है कि किरण L II' छोटे प्रिज्म ABB'A' से गुजरा है जिसके वर्तन कोर के अल्प कोण का मान 2γ है। ज्यामिति प्रकाश-विज्ञान से हम जानते है कि इस तरह का प्रिज्म किरण पथ मे $(n-1)\ 2\gamma$ का कोणीय विचलन पैदा करता है बशर्ते आपतन कोण का मान अधिक न हो। अत किरण I और II के बीच का कुल कोण $2\gamma+(n-1)\ 2\gamma=2n\gamma$ होगा। काँच का वर्तनाङ्क $n=1\ 52$ है अत विचाराधीन कोण का मान करीब 3γ होगा।
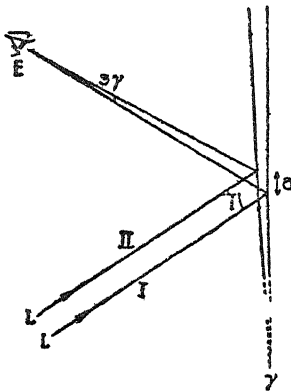
चित्र ३३—**दोनो परावर्तन प्रतिबिम्बो के बीच की कोणीय दूरी γ की सहायता से खिडकी के काँच के आमने-सामने की सतहो का झुकाव किस प्रकार ज्ञात करते है।**

इस निष्कर्ष के अनुसार चित्र ३३ मे दिखलाया गया है कि बहुत दूर के प्रकाशसूत्र L से आनेवाली करीब-करीब समानान्तर किरणे I और II परावर्तन के उपरान्त E पर स्थित प्रेक्षक की आँख मे परस्पर कोण 3γ के झुकाव पर प्रवेश करती है।[१]

अत हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि **यदि दोनो प्रतिबिम्बो के बीच की कोणीय दूरी का मान हम ज्ञात कर लें तो काँच की दोनों सतहो के दर्मियान का कोण इसका तृतीयाश होगा।**

उदाहरण के लिए इस कोण का मान इस प्रकार हासिल कर सकते है, काँच पर दोनो प्रतिबिम्बो के बीच की दूरी a मालूम करके

१ उपपत्ति की एक अन्य विधि के लिए देखिए §२६।

इसमे आँख और प्लेट के बीच की दूरी R से भाग दीजिए और फिर इसे Cos 1 से गुणा कर दीजिए ।

साधारण प्लेट-कॉच के लिए इस तरह से हासिल किये गये कोण के मान एक रेडियन[1] के कुछ सहस्राश या चाप के कुछ मिनट ही प्राप्त होते है। अर्थात् प्लेट पर करीब 5 इच आगे बढने पर मोटाई मे केवल $\frac{1}{100}$ इच का अन्तर आता है। यह अन्तर इतना कम है कि अत्यन्त सावधानी से नापे बिना इसका पता भी नही चल सकता। वास्तव मे जब इस तरह की नाप की गयी तो उपर्युक्त गणना सही पायी गयी।

क्या यह विलक्षण बात नही है कि बिना किसी अन्य साधन के, केवल चलते चलते कॉच के सूक्ष्म दोष की नाप-जोख हम कर सकते है ? और फिर अब हमने यह भी देख लिया कि दुहरे प्रतिबिम्ब की उत्पत्ति की हमारी व्याख्या वास्तव मे सही है। जब कभी किसी प्राकृतिक घटना का कारण मालूम करने मे हम असमर्थ रहते है तो इसके लिए हमे अपने अज्ञान को ही दोष देना चाहिए।

एक और अधिक व्यापक और अधिक सही सूत्र–दोनो प्रतिबिम्बो के बीच कोणीय दूरी$=2m\gamma\frac{R'}{R+R'}$ जब कि आँख और कॉच के बीच की दूरी R है तथा प्रकाश-सूत्र से कॉच तक दूरी R′ है। और 2m के मान निम्नलिखित है—

आपतन कोण	1=0°	20°	40°	60°	80°	90°
	2m=3·0	3 1	3 6	5·0	13 3	∞

बहु प्रतिबिम्बो के अध्ययन के लिए खिडकी मे लगने वाले साधारण कॉच का उपयोग नही किया जा सकता, क्योकि असमतल सतह के कारण यह प्रतिबिम्बो को अत्यन्त बुरी तरह विकृत कर देता है। जॉच की यह विधि इतनी सूक्ष्म है कि ऐसे कॉच पर ये प्रयोग नही किये जा सकते।

२६. वर्तित प्रकाश द्वारा प्लेट कॉच मे बनने वाले बहु प्रतिबिम्ब[2]

किसी भी सन्ध्या को ट्रामगाडी, रेलगाडी या मोटर बस की खिडकी के उत्तम श्रेणी के कॉच मे से दूर के लैम्प या चन्द्रमा को तिरछी दिशा से देखिए। आप कई प्रतिबिम्ब देखेगे जो एक दूसरे से करीब-करीब बराबर दूरी पर होगे। इनमे से पहला प्रतिबिम्ब बिलकुल स्पष्ट दीखेगा और बाद वाले प्रतिबिम्ब क्रमश अस्पष्ट होते जायँगे। खिडकी

1 For radian see §१ 2- H M Reese J O S A, 21, 282, 1931

से जितनी अधिक तिरछी दिशा से आप देखेंगे उतना ही अधिक फासला उनके दर्मियान दीखेगा तथा उनकी प्रकाश-दीप्ति का अन्तर भी उतना ही कम होता जायगा।

स्पष्ट है कि इस किस्म की घटना काँच के सामने की और पीछे वाली सतहो से बार-बार होनेवाले परावर्तन के कारण उत्पन्न होती है। वास्तव मे यह घटना परावर्तन वाले दुहरे प्रतिबिम्बो की उत्पत्ति से बहुत अधिक मिलती जुलती है, और उन्ही कारणो से हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि ऐसी प्लेट की आमने सामने की सतहे समानान्तर नही है। लेकिन इसके लिए एक और कारण भी है, काँच की समानान्तर प्लेट मे सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब अनिवार्य रूप से हमेशा उस सिरे पर पडता है जो निरीक्षक के निकटतम है—इससे कोई फर्क नही पडता कि हम काँच मे से E दिशा की ओर से देख रहे है या E′ दिशा से। किन्तु **प्रयोग से पता चलता है कि सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब निश्चित रूप से हमेशा एक ही ओर पडता है** (हमेशा या तो दाहिनी तरफ या हमेशा बायी तरफ), बशर्ते उस काँच की प्लेट के किसी एक ही निश्चित बिन्दु पर हम देखे (चित्र ३४)। लेकिन एक ही प्लेट मे कुछ भाग ऐसे मिलते है जिनमे सबसे अधिक चटकीला प्रतिबिम्ब दाहिनी ओर पडता है तो अन्य भागो मे उसकी स्थिति बाये होती है, पहली दशा मे प्लेट के उस भाग की शक्ल एक वेज (स्फान) जैसी होती है जिसकी अधिकतम मोटाई हमारी आँख की ओर पडती है और दूसरी दशा मे वेज की अधिकतम मोटाई आँख की विपरीत ओर पडती है।
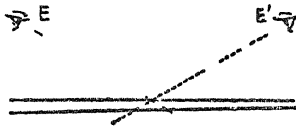
चित्र ३४—**बहु प्रतिबिम्बो का सबसे अधिक दीप्तिमान् प्रतिबिम्ब सदैव उस ओर पड़ता है, जिधर प्रेक्षक स्थित होता है।**

आइए § २५ मे बतायी गयी विधि से कुछ थोडे भिन्न तरीके से कोणीय दूरी की गणना करे। चित्र ३५ मे हम देखते है कि किरणे L_1, L_2, L_3 पीछे की सतह पर क्रमश कोण $r+\gamma, r+3\gamma, r+5\gamma$ पर गिरती है। अत. इनके निर्गमन के कोण यदि क्रमश $\alpha_1, \alpha_2, \alpha_3$ हो, तब

चित्र ३५—**वर्तित प्रकाश में बहु प्रतिबिम्ब।**

$$\sin \alpha_1 = n \sin (r+\gamma)$$

या चूँकि कोण γ छोटा ही है
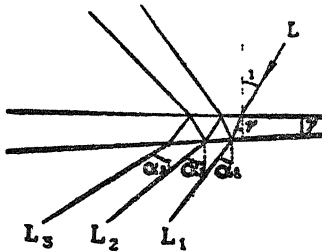
$\therefore \quad \sin \alpha_1 = n \sin r + \gamma n \cos r$

इसी प्रकार $\quad \sin \alpha_2 = n \sin r + 3\gamma n \cos r$

घटाने पर $\quad \sin \alpha_2 - \sin \alpha_1 = 2\gamma n \cos r$

इन किरणो के लिए α का मान थोडा-थोडा करके ही बढता है अत $\sin \alpha_2 - \sin \alpha_1$ को हम $\sin \alpha$ के अवकल (डिफरेन्शियल) के बराबर मान सकते है, अर्थात्

$$\sin \alpha_2 - \sin \alpha_1 = \delta (\sin \alpha)$$
$$= \cos \alpha, \delta\alpha$$
$$= \cos \alpha (\alpha_2 - \alpha_1)$$
$$\therefore \quad \alpha_2 - \alpha_1 = \frac{2n \cos r}{\cos \alpha} \gamma$$

चित्र ३२ का उपयोग करने पर बार-बार के परावर्तनो से बनने वाले प्रतिबिम्बो के लिए भी इसी प्रकार की उपपत्ति लागू की जा सकती है। क्रमश बनने वाले प्रतिबिम्बो के बीच की दूरी बिलकुल वही रहती है, चाहे वे परावर्तित प्रकाश मे देखे जा रहे है या वर्त्तित प्रकाश मे, ऊपर के सूत्र मे γ के गुणक के मान वास्तव मे वे ही है जो § २५ मे 2m के लिए दिये गये है।

२६ a मोटरकार के वायु अवरोधक कॉच (विन्डस्क्रीन) मे परावर्तन तथा वर्तन

वायु-अवरोधक कॉच को प्रोछने वाला ब्रुश सामने के कॉच पर समकेन्द्रीय वृत्तो का निर्माण करता है और आप देखते है कि अस्त होते हुए सूर्य या सडक के लैम्प की रोशनी किस प्रकार पानी की पतली परत की दायरेनुमा लहरदार सतह मे वर्तित होती है। प्रकाश का एक सुन्दर धब्बा सूर्य की दिशा मे खिचा हुआ दिखाई देता है, यह वास्तव मे एक वक्र रेखा का भाग होता है, किन्तु उस थोडी-सी दूरी तक जिसका हम सर्वेक्षण करते रहते है, यह लगभग सीधा ही दीखता है (चित्र ३५ क)। सिद्धान्त व्यवहारत वही है जो हमने खिडकी के झिरीदार परदे या वृत्ताकार तरङ्गिकाओ के लिए अभी दिया है, महत्त्व इस बात का नही है कि किरणो का विचलन परावर्तन द्वारा होता है या वर्तन द्वारा, बल्कि सारभूत बात यह है कि ये किरणे आपतन तल मे ही रहती है।

फिर भी यहाँ हम एक अत्यन्त विशिष्ट और रोचक ब्योरा दे रहे है। यदि आप बारी-बारी से अपनी दाहिनी और बायी आँखे बन्द करे तो आप देखेगे कि रोशनी का

फैला हुआ धब्बा एक आँख के लिए दूसरी की अपेक्षा थोडा भिन्न होता है—अवश्य ही यह इस कारण होता है कि ये प्रतिबिम्बन सदैव ही धारियो के केन्द्र से सूर्य की
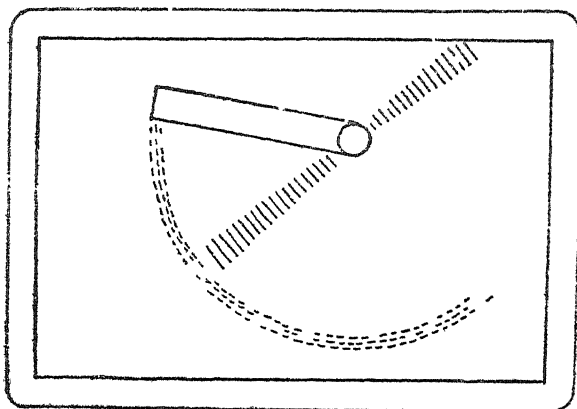
चित्र ३५ क—**मोटरकार के विण्डस्क्रीन द्वारा वर्तित प्रतिबिम्ब।**

ओर जाते है और आप की बायी आँख सूर्य को दाहिनी आँख की अपेक्षा खिडकी के काँच के एक भिन्न बिन्दु पर देखती है। अब यदि आप दोनो आँखो से देखे तो ये दोनो प्रतिबिम्ब परस्पर मिलकर एक त्रि-विमितीय प्रतिबिम्ब बनाते है, आप रोशनी के धब्बे को केन्द्र से बहुत दूर पीछे स्थित सूर्य की ओर फैला हुआ देखते है, और केन्द्र की दूसरी ओर भी इसे आप देखते है जो काँच से आप की ओर आता हुआ जान पडता है। यह एक अद्भुत उदाहरण है जिसे 'पिण्डदर्शन' का नाम दिया गया है, इसकी चर्चा हम फिर करेगे।

२७. पानी की बूँदे लेन्स के रूप मे

रेलगाडी की खिडकी पर पडी वर्षा की बूँदे ठीक एक शक्तिशाली लेन्स की भाँति अत्यन्त नन्हे प्रतिबिम्ब बनाती है, इतना अवश्य है कि ये प्रतिबिम्ब विकृत ही बनते है क्योकि वर्षा की बूँद की आकृति एक आदर्श लेन्स की शक्ल से जरा भी नही मिलती हे। ये प्रतिबिम्ब ऊपर से नीचे उलटे बनते है, और यद्यपि बाहर के दृश्य रेलगाडी की विपरीत दिशा मे गति करते जान पडते है, किन्तु उनके प्रतिबिम्ब उसी दिशा मे चलते दिखाई देते है जिस दिशा मे रेलगाडी जा रही है।

खम्भे का प्रतिबिम्ब ऊपरी सिरे पर पेदे की अपेक्षा अधिक मोटा होता है। इसका कारण यह है कि लेन्स की फोकस लम्बाई जितनी छोटी होती है, अर्थात् लेन्स

के पार्श्व की वक्रता जितनी अधिक होती है, उतना ही छोटा प्रतिबिम्ब बनता है, अब खिडकी की बूँद का ऊपरी भाग निचले भाग की अपेक्षा अधिक चिपटा होता है, अत उससे बनने वाला बिम्ब भी बडे आकार का होता है (चित्र ३५ ख)।

चित्र ३५ ख—**खिडकी के कॉच पर से ढुलकनेवाली पानी की बूँद द्वारा वर्तन से बिम्ब का निर्माण।**

कॉच की खिडकियो पर बूँदे इकट्ठी होती है तो कुछ बडी बूँदे नन्ही धार की रूप मे नीचे लटक जाती है, इन बेलनाकार लेन्सो मे आप वर्त्तन का अध्ययन बखूबी कर सकते है। उनमे दीखने वाले प्रतिबिम्बो मे दाहना बायाँ उलट जाता है, व्योरे की सभी चीजे उलटी दिशा मे हरकत करती नजर आती है और इसी प्रकार बाहर के दृश्य मे भी उत्क्रमण हो जाता है।

२८ ओस की बूँदो और तुषार के क्रिस्टल कणो मे प्रकाश की रगबिरगी जगमगाहट

प्रात की ओस मे रगबिरगे रत्नो का प्रकाश भला किसने नही देखा होगा? ध्यान दीजिए कि लॉन की छोटी घास पर ओस की बूँदे कितनी तेज जगमगाहट के साथ अनवरत रूप से चमकती है और हिलती हुई घास की लम्बी पत्तियो पर सितारो की भॉति किस प्रकार वे प्रकाश मे लुपझुप झिलमिलाती रहती है।

आइए, घास की पत्ती पर पडी ओस का और अधिक ध्यानपूर्वक निरीक्षण करे। बूँद को उठाइए नही, छूइए भी नही! नन्ही गोल बूँदे पत्ती को भिगाती नही है, बूँदे पत्ती के बिलकुल निकट अवश्य है, किन्तु अधिकाश जगहो पर बूँद और पत्ती के दर्मियान अभी भी हवा की परत मौजूद है। ओसवाली पत्ती का भूरा स्वरूप ओस की सभी नन्ही बूँदो के भीतर और बाहर से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश के कारण है, बहुत-सी किरणे तो घास की पत्ती को स्पर्श भी नही कर पाती है (देखिए §१६८)। बडे आकार की चिपटी बूँदो को यदि अधिक तिरछी दिशा से देखे तो वे चॉदी की सतह की तरह चमकती हुई दिखलाई देती है क्योकि इस दशा मे पीछे वाली सतह से किरणो का पूर्ण परावर्त्तन होता है। किसी एक बडे आकार की बूँद को चुन लीजिए और एक ऑख से इसे देखिए। ज्यो ही आपतित किरणो के साथ काफी बडे मान के कोण बनाने वाली

दिशा से देखते है, त्योही रग प्रगट होते है। पहले नीला रग दीखता है, फिर हरा और तब विशेष रूप से स्पष्ट दीखते है पीले, नारगी, और लाल रग। अवश्य यह उसी प्रकार की घटना है जैसी एक बडे पैमाने पर किसी भी इन्द्रधनुष मे हम देखते है (§११९)।

इसी प्रकार के जगमगाते रग पाले के क्रिस्टल कणो मे और ताजा गिरे हुए तुषार मे दिखलाई पडते है।

§१२९ और §१५४ की तुलना करिए।

'प्रोफेसर क्लिफ्टन से आप निवेदन करिए कि वे आपको समझाएँ कि क्यो पानी की बूँद यद्यपि हरी पत्ती के रग को हलका बनाती है या नीले फूल को भूरे रग का प्रगट करती है और इस कारण घास या डॉक की पत्ती पर यह बूँद धुँधले प्रकाश की दीखती है, फिर भी यह रगो मे विशेष रूप से चटकीलेपन का समावेश करती है यहाँ तक कि कार्नेशन या जगली गुलाब के वास्तविक रग का पता आपको उस वक्त तक नही लग पाता है जबतक कि उस पर ओस की बूँदे न पडी हो।'

रस्किन 'दी आर्ट एण्ड प्लेजर्स आव इग्लैण्ड'

देवदार के बन मे अभी हाल मे एक विशिष्ट सुन्दर घटना का अवलोकन किया गया। प्रेक्षक सूर्य की ओर चल रहा था जो क्षितिज से लगभग 15° की ऊँचाई पर था। उसने धरती को नन्हे परिपूर्ण क्रिस्टलो से ढका पाया और उनमे से प्रत्येक एक तारा की तरह जगमगा रहा था। **इनमे से एक भी श्वेत रग का नही था!** इनमे वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) के सभी रग मौजूद थे। पजो के बल खडे होने पर रगो के शेड नीले की ओर खिसक जाते है और जरा झुकने पर लाल वर्ण की ओर। इन सुन्दर रगो का समाधान किया जा सकता है क्योकि ये क्रिस्टल सूर्य के समूचे मडलक द्वारा प्रशाशित नही होते है वल्कि वृक्ष की टहनियो के बीच के नन्हे सूराखो के रास्ते ही इन पर प्रकाश गिरता है। सामान्य परिस्थितियो मे सूर्य मडलक के एक भाग से (क्रिस्टल मे से होते हुए) हमारी आँख मे लाल रग का प्रकाश पहुँचता है और अन्य भाग से हरा या नीला प्रकाश, और ये रग एक दूसरे के साथ मिलकर प्रकाश उपस्थित करते है। किन्तु इस दशा मे आपतित किरण शलाका अत्यन्त पतली थी और प्रत्येक क्रिस्टल केवल एक ही रग वर्त्तित कर सका। रगो के विस्थापन की बात भी समझ मे आती है क्योकि आँख को ऊपर उठाने पर हम उन किरणो को ग्रहण करते है जिनका वर्त्तन अधिक प्रबल हुआ है।

अध्याय ४

वायु-मण्डल में प्रकाश-किरणों की वक्रता

२९ धरती के निकट किरणों की वक्रता

आकाशीय पिण्ड अपनी वास्तविक ऊँचाई के मुकाबले मे क्षितिज से थोडी अधिक ऊँचाई पर स्थित मालूम पडते है, और ज्यो-ज्यो वे क्षितिज के निकट आते है त्यो-त्यो उनका यह स्थानान्तर बढता जाता है। यही कारण है कि क्षितिज पर सूर्य तथा चन्द्रमा चिपटी शक्ल के दीखते है। सूर्यास्त के समय सूर्य के गोले का निचला सिरा औसत रूप से अपनी वास्तविक स्थिति से ३५ मिनट के कोण पर ऊपर उठा हुआ प्रतीत होता है किन्तु ऊपरी सिरा जो क्षितिज से अधिक ऊँचाई पर है, केवल २९ मिनट ऊपर उठता है। अत गोले मे ६ डिग्री के कोण का चिपटापन उत्पन्न होता है जो सूर्य के व्यास का $\frac{1}{5}$ भाग है।

यह घटना जिसमे सीधे ही प्रेक्षण से पता चलता है कि किस प्रकार क्षितिज की ओर आने पर आभासी स्थानान्तर बढता है, केवल वायुमण्डल के निचले स्तरो की हवा के घनत्व मे वृद्धि होने का परिणाम है। घनत्व के बढने के साथ ही हवा का वर्त्तनाङ्क भी बढता है अत प्रकाश का वेग घटता है। फलस्वरूप किसी नक्षत्र (सितारा) से उत्सर्जित होनेवाली प्रकाश-तरङ्गे जब हमारे वायुमण्डल मे प्रवेश करती है तो पृथ्वी-तल के निकट की ओर के भाग अपेक्षाकृत कम वेग से चलते है अत वे धरती की ओर क्रमश झुकती जाती है। इस कारण तरङ्गाग्र की गमनदिशा प्रगट करने वाली किरणे भी झुक जाती है। और दूरस्थ वस्तुएँ उठी हुई प्रतीत होती है (चित्र ३६)।

धरती के निकट की किरणो का झुकाव, वायुमण्डल मे ताप (टेम्परेचर) के वितरण क्रम के बदलते रहने के कारण दिन प्रतिदिन घटता बढता रहता है। अत्यन्त दिलचस्प बात होगी यदि कई दिनो तक सूर्य के उदय और अस्त होने का समय हम अङ्कित कर ले और फिर उसकी हम पञ्चाग और सारणी मे दिये गये समय से तुलना करे। समय की नाप मे कम से कम एक सेकण्ड तक शुद्धता अवश्य प्राप्त करनी चाहिए, और रेडियो सकेत की सहायता से ऐसा कर सकना सम्भव भी है। इस तरह की तुलना मे

एक या दो मिनट के अन्तर के मिलने की आशा की जा सकती है। समुद्र तट पर रहने वाला कोई भी व्यक्ति बहुत अच्छी तरह यह प्रयोग कर सकता है क्योकि वहाँ सूर्यास्त
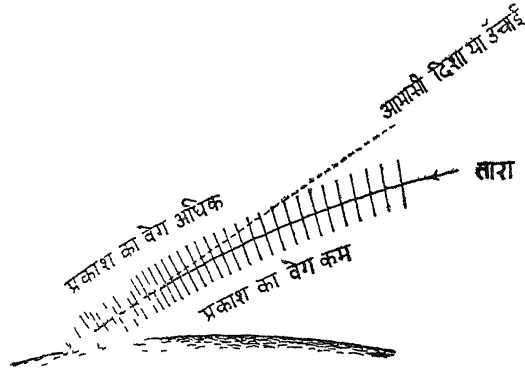
चित्र ३६—पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण की वक्रता के कारण आकाशीय पिण्ड वास्तव से अधिक ऊँचाई पर स्थित जान पड़ते है।

का प्रेक्षण साफ और खुले क्षितिज के ऊपर किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रयोग के साथ क्षितिज की ऊँचाई, सूर्य-मडलक की आकृति तथा हरी किरणो के निरीक्षण का भी समावेश किया जा सकता है, देखिए § ३०, ३५, ३६।

३० परावर्त्तन के बिना ही किरणो की असामान्य वक्रता

इस बात पर ध्यान दीजिए कि समुद्रतट से देखने पर दूर की लहरे क्षितिज के सामने उभरी हुई जान पडती है जबकि उसी तरह की निकट की लहरे क्षितिज-रेखा को छू नही पाती है, यद्यपि समान ऊँचाई के शीर्षो को मिलाने वाली रेखा समतल होनी चाहिए और इसीलिए इसे भी क्षितिज से मिल जाना चाहिए। इस घटना का अध्ययन तूफान के वक्त समुद्र-यात्रा मे भी कर सकते है—बशर्त्ते प्रेक्षण निचले डेक से करे। तो आप पायेगे कि निकट की लहरे क्षितिज तक पहुँच नही पा रही है, और फिर इनकी तुलना दूर वाली लहरो से भी करिए। स्पष्ट है इस प्रेक्षण का समाधान केवल पृथ्वी की वक्रता द्वारा ही किया जा सकता है, यहाँ पृथ्वी की वक्रता एक वास्तविक तथ्य के रूप मे ठीक आँखो के सामने देखी जा सकती है (चित्र ३७)। किन्तु पृथ्वी के निकट किरणो मे उत्पन्न होनेवाली वक्रता के कारण ऊपर वर्णन की गयी घटना मे अन्तर

आ जाता है। किसी-किसी दिन तो यह प्रभाव बहुत ही अधिक स्पष्ट होता है—लगता है कि क्षितिज बिलकुल निकट आ गया है और किश्तियाँ सामान्य दिनो की अपेक्षा अधिक दूरी पर दीखती है तथा वे बडी भी प्रतीत होती है, मानो धरती की वक्रता बढ गयी हो। अन्य दिनो, शान्त समुद्र एक बडी अवतल तश्तरी के मानिन्द प्रतीत

पृथ्वी चिपटी—किरण मे कुछ भी वक्रता नही।

पृथ्वी में वक्रता—किरण मे कुछ भी वक्रता नही।

पृथ्वी मे वक्रता—किरण मे वक्रता मौजूद।
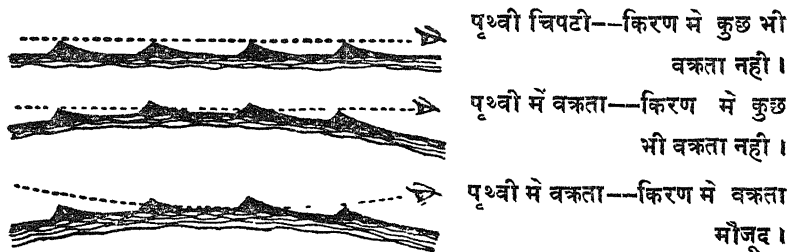
चित्र ३७—**क्षितिज रेखा के समक्ष लहरो का प्रेक्षण।**

होता है। अनेक वस्तुएँ जो सामान्यत दृष्टिक्षेत्र से बाहर पडती है, अब दृष्टि-गोचर हो जाती है, और वे निकट भी जान पडती है तथा जितनी बडी उन्हे दीखना चाहिए उससे छोटी ही वे दीखती हैं। दूर के जहाज जो प्रेक्षक की आँख के लिए क्षितिज पर या उससे परे होने चाहिए थे, अभी भी पानी के गड्ढे मे उतराते हुए से दीखते रहते है। वे ऐसे दीखते है मानो ऊर्ध्व दिशा मे वे थोडा बहुत पिचक गये हो—हमारी आँख की स्थिति वास्तव मे जहाज के पेटे के ऊपरी हाशिये से नीचे रहती है, तब भी क्षितिज-रेखा पेटे के ऊपर से गुजरती हुई जान पडती है। क्षितिज असामान्यत दूर हटा दीखता है।

इन दोनो लाक्षणिक दशाओ को हम क्रमश पानी की 'उत्तल सतह' तथा 'अवतल सतह' कह सकते है (चित्र ३८)। पहली दशा उस वक्त उत्पन्न होती है जब वायुमण्डल मे नीचे से ऊपर की ओर घनत्व असामान्यत धीरे-धीरे घटता है या उस वक्त भी जब कि पेदे के वायुस्तरो मे ऊपर की ओर घनत्व बढता है और द्वितीय दशा उस वक्त उत्पन्न होती है जब नीचे से ऊपर की ओर घनत्व असामान्य तेजी के साथ घटता है। इस तरह की असगतियाँ ताप के असाधारण वितरण-क्रम के परिणाम है। यदि हवा की अपेक्षा समुद्र अधिक गर्म है तो नीचे के वायुस्तर ऊपर के स्तरो के मुकाबले मे अधिक गर्म हो जाते है। अत प्रकाश के लिए ये अधिक विरल हो जाते है और इसलिए इनका वर्त्तनाङ्क घट जाता है, फलस्वरूप प्रकाशकिरणे धरती से दूर की दिशा मे मुड जाती है। यदि हवा के मुकाबले समुद्र अधिक ठण्डा

हो, तो किरणे उलटी दिशा मे मुडती है। ऐसे दिनो वाञ्छनीय होगा कि विभिन्न ऊँचाइयो पर हवा का ताप यह देखने के लिए नापा जाय कि उससे इस प्रेक्षण का समाधान होता है या नही।

चित्र ३८—**दूरस्थ वस्तुओ का विलुप्त होना; पानी की सतह उत्तल प्रतीत होती है (दोनो ही चित्रो मे किरण की वक्रता अत्यधिक दिखलायी गयी है।) (नीचे) दूरस्थ वस्तुएँ, जो सामान्यतः अदृश्य रहती है, अब दीख जाती है; पानी की सतह अवतल जान पडती है।**

प्रकाश की इन दोनो दशाओ की पहचान का एक और लक्षण है—यह है क्षितिज की आभासी ऊँचाई। बिना किसी यत्र की सहायता के, इस ऊँचाई को नापने के लिए समुद्र के ठीक किनारे निर्देशन का एक स्थिर-बिन्दु A निश्चित करिए और फिर किसी लट्ठे या पेड के तने पर चलायमान निर्देशन बिन्दु B लीजिए जो तट से एकाध सौ गज की दूरी पर भूमि की ओर हो (चित्र ३९)। बिन्दु B हमारा प्रेक्षणस्थल है, यही पर आँख इतनी ऊँचाई पर रखते है कि क्षितिज को जानेवाली रेखा ठीक बिन्दु A से
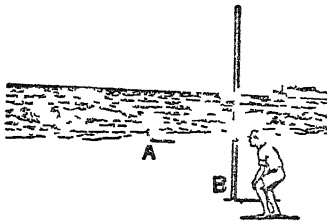
चित्र ३९—**पृथ्वी के निकट किरण की वक्रता की तब्दीली नापना।**

गुजरे। यदि समुद्र का पानी हवा से अधिक ठण्डा हुआ तो क्षितिज इस रेखा से ऊपर उठा हुआ प्रतीत होगा और B की स्थिति नीची हो जायगी, और यदि पानी हवा की अपेक्षा अधिक गर्म है तो क्षितिज नीचा दीखेगा, और B की स्थिति ऊँची चली जाती है। कभी-कभी यह अन्तर ६ मिनट या ९ मिनट तक भी ऊपर या नीचे की दिशा मे प्राप्त होता है, विशेषतया उस वक्त जब कि हवा न चल रही हो। यदि दूरी AB=१०० गज हो तो ये अन्तर क्रमश ७ और ११ इच की ऊँचाई प्रगट करेगे। दूरबीन का उपयोग करने पर प्रेक्षण की इस विधि मे और अधिक सूक्ष्मता लायी जा सकती है।

कुछ बहुत ही विलक्षण दशाओ मे किरणो की वक्रता असामान्यरूप से प्रबल होती है और तब प्रकाश सम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण घटना प्राप्त होती है। किसी-किसी दिन सभी चीजे असाधारण रूप से साफ और स्पष्ट नजर आती है और ऐसे ही दिन कोई दूरस्थ कस्बा, या समुद्र का प्रकाशस्तम्भ, अचानक ही दीखने लग जाता है जब कि साधारण परिस्थितियो मे उसे देख सकना असम्भव ही रहता है, क्योकि वह क्षितिज के नीचे स्थित होता है। अक्सर तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वह आश्चर्य-जनक रूप से हमारे निकट आ गया हो। दो बार इसी तरह की घटना ब्रिटिश चैनेल पर देखी गयी थी। एक बार ब्रिटिश तट के नगर हेस्टिंग्स से नगी आँखो द्वारा ही सामने का सारा फ्रेंच समुद्रतट देखा जा सका था जब कि साधारण परिस्थितियो मे बढिया से बढिया दूरबीन की सहायता से भी उसे नही देखा जा सकता। एक अन्य अवसर पर रैम्सगेट से देखने पर डोवर का समूचा किला उस पहाडी के पीछे से दिखलाई पडा जो आमतौर पर किले के अधिकाश को अपनी आड मे छिपाये रखती है।

फिर इसके प्रतिकूल ऐसे भी दृष्टान्त है जब कि दूर की चीजे जो आम तौर पर क्षितिज से ऊपर निकली रहती है, गायब हो जाती है, मानो वे क्षितिज से नीचे डूब गयी हो। ये दशाएँ भी निकटता का विशेष आभास देती है।

इस तरह के प्रेक्षण के साथ-साथ समुद्र की सतह और हवा के ताप को भी सदैव नापना चाहिए।

३१. छोटे पैमाने पर मरीचिका (प्लेट V)

मरुभूमि की सुविख्यात मरीचिका एक छोटे पैमाने पर आसानी से देखी जा सकती है। एक लम्बी सपाट दीवार या पत्थर का बारजा चुनिए जो दक्षिण रुख हो और सूर्य की रोशनी उस पर पड रही हो--इसकी लम्बाई कम से कम १० गज़ होनी चाहिए। दीवार से सिर टिकाकर तिरछी दिशा मे उसे देखिए और किसी व्यक्ति

को, जहाँ तक हो सके अपने से दूर उस दीवार के निकट खडा करिए जो हाथ मे कोई चमकदार चीज, जैसे धूप मे चमकती हुई साधारण चाभी, लिये हो। चाभी को वह धीरे-धीरे दीवार के निकट ले आता है, ज्योही चाभी दीवार के निकट, चन्द इचो की दूरी पर आती है, त्योही उसका प्रतिबिम्ब विशेष रूप से विकृत हो जाता है और दीवार से परावर्त्तित प्रतिबिम्ब चाभी की ओर खिसकता हुआ जान पडता है। अक्सर चाभी पकडे हुए पूरा हाथ भी प्रतिबिम्बित होता हुआ देखा जा सकता है। एक बार जब सही तरीकेपर इस घटना का प्रेक्षण कर लिया गया हो तब दूर की प्रत्येक ऐसी वस्तु के लिए भी प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है जो दीवार के सहारे तिरछी दिशा मे दृष्टि डालने पर दिखाई देती हो। दीवार की लम्बाई के कम होने पर भी इस प्रतिबिम्ब को देख सकते है बशर्ते आँख को दीवार के एकदम निकट रखे—ऐसा करने के लिए दीवार के गोशे मे इतनी जगह होनी चाहिए कि प्रेक्षक भीतर खडा हो सके।

यदि एक बहुत ही लम्बी दीवार खूब गर्म हो जाय तो कभी-कभी प्रथम प्रतिबिम्ब के साथ-साथ द्वितीय प्रतिबिम्ब भी दिखलाई पडता है जो उलटा नही, बल्कि वस्तु के लिहाज से सीधा ही बनता है। यह उस सामान्य नियम के अनुकूल ही है जो यह बतलाता है कि मरीचिका के बननेवाले बहुप्रतिबिम्ब क्रमवत् एक के बाद दूसरे सीधे और उलटे अवश्य होते है (प्लेट Vb)।

परावर्त्तन इसलिए होता है कि गर्म हुई सतह के निकट ही हवा अधिक गर्म होकर अधिक विरल हो जाती है, अत इसका वर्त्तनाङ्क घट जाता है। इस कारण प्रकाश की किरणे मुडती जाती है यहाँ तक कि वे सतह के समानान्तर हो जाती है, तदुपरान्त वे सतह से बाहर की ओर फैल जाती है (चित्र ४०)।

चित्र ४०—धूप से प्रकाशित दीवार पर मरीचिका (ऊर्ध्व दिशा की दूरियाँ चित्र की स्पष्टता के लिए अत्यधिक बढाकर दिखायी गयी है।)

कभी-कभी इसे 'पूर्ण परावर्त्तन' भी कहते है, किन्तु यह नाम गलत है, क्योकि स्तरो के बीच किरणो का झुकाव सर्वत्र आहिस्ते-आहिस्ते होता है। बल्कि यह स्मरण रखना चाहिए कि किरणो का मुडना करीब-करीब पूरे का पूरा गर्म हुई वस्तु के एकदम निकट घटित होता है। सम्भवत दीवार के सहारे उसके अत्यन्त निकट ही वायु का एक स्तर इच के कुछ हिस्से भर मोटा मौजूद

होता है जिसका ताप लगभग दीवार के ताप के बराबर ही है, इसके आगे ताप पहले तो तेजी से गिरता है, फिर अधिक शनै -शनै ।

यह उचित होगा कि दीवार और उसके निकट के वायुस्तरो का ताप नाप कर यह दिखाएँ कि किरणो की प्रेक्षित वक्रता की परिमाणत व्याख्या नापे गये ताप के आधार पर किस प्रकार कर सकते है।

छोटे पैमाने की इसी तरह की मरीचिका कुछ अवसरो पर स्टीमर की गर्म चिमनी के सहारे देखी गयी थी। चन्द्रमा, बृहस्पति तथा उगते हुए सूर्य इस प्रकार प्रतिबिम्बित होते थे मानो चाँदी की कलईवाले दर्पण मे वे देखे जा रहे हो, इसके प्रतिकूल जहाज के मस्तूल पर यह प्रभाव प्रगट नही होता। किन्तु मेरे विचार मे आधुनिक जहाजो की चिमनियाँ इतनी गर्म नही हो पाती है कि वे इस घटना को उपस्थित कर सके।

धूप मे कुछ देर तक खडी रहनेवाली मोटरकार की छत पर देखने से दूर की वस्तुओ के प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से विकृत दिखलाई पडते है वशर्त्ते उस गर्म छत की सतह के सहारे बिल्कुल निकट से देखे।

यदि धूप मे पडी ऐसी तख्ती को देखे जो २० इच से ज्यादा लम्बी न हो तो दूर की प्रत्येक वस्तु को आप इस रूप मे देख सकेगे मानो वह तख्ती द्वारा आकृष्ट होकर लम्बाई की दिशा मे खिच उठी हो।

३२. गर्म सतहो पर बडे पैमाने की मरीचिकाएँ (गौण प्रतिबिम्ब) (प्लेट Va)[1]

मरीचिका की उत्पत्ति के लिए एक चिपटी सतह, तथा लम्बे फासले से प्रेक्षण का किया जाना कम से कम उतने ही आवश्यक है जितना भूमि का अत्यधिक गर्म होना। इसी लिए हालैण्ड सरीखा सपाट भूमि का देश इस प्रकार की घटना के प्रेक्षण के लिए विशेष रूप से उपयुक्त ठहरता है, वहाँ वायु मे वननेवाले प्रतिबिम्ब अक्सर उतने ही स्पष्ट होते है जितने सहारा के तप्त रेगिस्तान मे। अक्सर ये मरीचिकाएँ झुकने पर ही देखी जा सकती है, द्विनेत्री दूरबीन का उपयोग करने पर और क्षितिज पर बार-बार इधर-उधर निहारने पर, यह अचरज की बात है कि ये मरीचिकाएँ बहुत अधिक स्पष्ट दिखलाई पडती है और ये बार-बार दीखती है।

1 See Pernter-Exner, loc cit R Meyer, Met Zs, 52, 405, 1935, W E Schiele, Veroff-Geophysik Inst Leipzig, 7, 101, 1935

अब हम ऐसी तीन परिस्थितियो का वर्णन करेगे जब कि यह घटना असाधारण स्पष्टता तथा बहुलता के साथ उत्पन्न होती है।

सर्वप्रथम, यह घटना **ऐसफाल्ट की सपाट सडक** के ऊपर किसी भी धूपवाले दिन देखी जा सकती है। सतह के ऊपर प्रथम आधे इच मे थर्मामीटर के ताप मे २०° से लेकर ३०° तक की गिरावट होती है, इसके आगे प्रति इच के लिए ताप का ह्रास एकाध डिग्री ही रह जाता है।[1] मेरा निज का अनुभव यह है कि आधुनिक कक्रीट की सीधी सडको के ऊपर बननेवाली मरीचिका और भी स्पष्ट निखरती है। यह सच है कि कक्रीट की सडक सूर्य की विकिरण-ऊष्मा का उतना शोषण नही करती जितना ऐसफाल्ट की सडक, किन्तु इस दशा मे कक्रीट-सडक की सतह से ऊष्मा का पुनरुत्सर्जन भी तो कम ही होता है। धूपवाले दिन इस किस्म की सडक पर पानी फैला हुआ जान पडता है और यदि झुककर देखे तो यह और भी स्पष्ट तथा अधिक दूर तक फैला हुआ दीखता है, और दूर की चमकीली तथा रगीन वस्तुएँ उसमे प्रतिबिम्बित होती हुई जान पडती है। जिसे हम पानी समझते है वह फासले पर प्रतिबिम्बित होनेवाले स्वच्छ आकाश के सिवाय और कुछ नही है। यह महत्त्व की बात है कि व्यस्त यातायात के बावजूद भी, जब कि उसकी वजह से कागज, पत्तियाँ और धूल आदि ऊपर को फिकती रहती है, इस प्रतिबिम्बन मे किसी तरह का व्याघात नही होने पाता। ठीक-ठीक प्रेक्षण कीजिए कि किस कोण पर मरीचिका दृष्टिगोचर होती है और पृष्ठ ६० पर समझाये गये सूत्र की सहायता से भूमि का स्पर्श करनेवाली वायु के ताप की गणना कीजिए।

द्वितीयत **सपाट प्रदेशो के घास के चौडे मैदानो** मे मरीचिका का उत्पन्न होना एक सामान्य घटना है और कम से कम वसन्त और ग्रीष्म ऋतु मे जब कि मौसम साफ रहता है और अधिक हवाएँ भी नही चलती, मरीचिका इन मैदानो का एक विशेष लाक्षणिक गुण माना जा सकता है। क्षितिज के सहारे एक धवल रग की पट्टी-सी दीखती है जिसके ऊपर दूर की मीनारे और पेड की चोटियाँ उतराती हुई जान पडती है मानो बिना किसी आधार के वे टिकी हो। झुकने पर आपको निकट की भूमि के दृश्य विकृत रूप मे दिखलाई देते है जिसमे पानी के बडे-बडे पल्वलो मे मकान और स्वच्छ आकाश पृष्ठभूमि मे प्रतिबिम्बित होते रहते है। सूर्य की दिशा मे यह प्रभाव विशेष रूप से स्पष्ट दिखलाई पडता है।

1 H Futi, Geophys mag 4, 387, 1931 L A Ramdas & S L. Malurkar, Nat 129, 6, 1932

दोपहर के करीब, किरणो का झुकाव अक्सर इतना अधिक होता है कि यदि आप खडे भी रहे तो एसा प्रतीत होता है मानो हर तरफ पानी के पल्वल मौजूद है। और कुछ थोडा झुकने पर आप देखेगे कि पानी के ये पल्वल किस तरह सिकुड जाते है या फिर दो-चार गज ऊँचे चढने पर ये किस तरह और भी फैल जाते है। ध्यान दीजिए कि प्रतिबिम्ब की दिशा से आँख को तनिक ऊपर ले जाने पर ये ऊर्ध्व दिशा मे किस तरह खिच उठते तथा विकृत हो जाते है, यदि आँख को बहुत नीची स्थिति मे रखे तो दूर की वस्तुओ के पेदे अब दृष्टि से ओझल हो जाते है और ये वस्तुएँ हवा मे लटकी हुई प्रतीत होती है। सूर्य से हटी हुई दिशा मे ये जलाशय कम चमकदार प्रतीत होते है, और इसलिए आसानी से उन पर ध्यान नही जाता, किन्तु दूर की वस्तुओ के प्रतिबिम्ब और उनकी विकृति अब और भी अच्छी तरह देखी जा सकती है।

यह दिलचस्प बात होगी कि निचले वायु-स्तरो मे कुछ के ताप अकित किये जायँ जैसे ४०, २०, १०, ४ और ० इच की ऊँचाइयो पर। सुबह को, यदि धूप निकली हो, तो सबसे ऊँचा ताप धरती के बिलकुल निकट पाया जायगा, यदि ४० इच और ० इच पर नापे गये ताप का अन्तर ३° हो तो इसका अर्थ है कि परावर्त्तन नगण्य है। यदि यह अन्तर बढकर ५° हो जाता है तो परावर्त्तन औसत दर्जे का है और अन्तर ८° हो तो परावर्त्तन की घटना विशेष प्रबल दिखाई देगी। अधिकतम अन्तर वसन्त ऋतु मे ठण्डी रातो के बाद के धूपवाले दिन मे मिलता है।

बुश ने जिसन इस घटना का सबसे पहले विस्तृत और वैज्ञानिक अध्ययन किया था, ब्रेमेन नगर के निकट घास के एक बडे मैदान मे (सन् १७७९मे) दूर के शहर की मरीचिका का स्पष्ट प्रेक्षण किया था। सर्वाधिक सुन्दर और सर्वाङ्गपूर्ण मरीचिका तो समुद्रतट पर, बालुकामय, कडी और समतल भूमि के पार दिखलाई पडती है, विशेषतया जब मौसम गर्म हो ओर हवा न बहती हो।[१] जमीन पर यदि हम लेट जायँ ताकि यथासम्भव आँख रेत की सतह के निकट हो तो हमे परावर्त्तित प्रतिबिम्ब स्पष्ट नही दीखेगा। किन्तु अगर हम अपना सिर थोडा ऊपर उठाएँ तो अचानक ही ऐसा प्रतीत होता है मानो हम चारो ओर से किसी झील द्वारा घिर गये है और ३० से ३५ गज के फासले की चीजे भी जो केवल ५ से लेकर, १० इच तक ऊँची हो, उसमे प्रतिबिम्बित

१. डच उत्तरी सागर द्वीप के समुद्रतट ५ मील लम्बे मैदान मे अलौकिक सौन्दर्य की मरीचिकाएँ बनती है।

L G, Vedy Met Mag, 63, 249, 1928

होती देखी जा सकती है। हम किसी स्पष्ट और चमकीली वस्तु H को चुन लेते है और अपनी आँख किसी निश्चित बिन्दु W पर रखते है जो धरती से उतनी ही ऊँचाई पर हो जितनी सामने की वस्तु। वस्तु के लिए कोई टहनी या लकडी का डण्डा चुन सकते है।

अब हम प्रयोग द्वारा उस प्रकाश-किरण का पथ ज्ञात करते है जिसके द्वारा मरीचिका-प्रतिविम्ब हमे दिखलाई देता है। किसी ज्ञात दूरी के बिन्दु C पर एक आदमी ऊँचाई नापने का डण्डा सीधा खडा करता है और एक छोटे-से हत्थे को नीचे से ऊपर खिसकाकर उसे डण्डे के बिन्दु B पर रखता है ताकि विचाराधीन प्रतिविम्ब उसकी आड मे ओझल हो जाय, फिर हत्थे को खिसका कर वह उसे ऐसी स्थिति मे रखता है कि स्वय वस्तु का शीर्ष उसके पीछे छिप जाय। वस्तु के शीर्ष H से आँख तक सीधे आनेवाली प्रकाश-किरण HW को हम सीधी रेखा मान सकते है, अत मुड कर आनेवाली किरण HAW के प्रत्येक बिन्दु की ऊँचाई हम ज्ञात कर सकते है, फलस्वरूप बिन्दु-बिन्दु निर्धारित करके स्वय इस किरण-पथ को भी हम निश्चित कर सकते है। इस प्रकार पता चलता है कि रेत की सतह के निकट किरण का लगभग अकस्मात् परावर्त्तन हो जाता है। यदि यह ठीक है तब हम आशा कर सकते है कि निष्पत्ति $\frac{h}{AW} = \frac{h'}{BW}$ का मान स्थिर होगा और यह रेत की सतह तथा अधिक लम्बे पथवाली किरण के बीच बननेवाले कोण के बराबर होगा। यथार्थ मे होता भी ऐसा ही है। इस प्रकार बननेवाले कोण के मान १° तक प्राप्त होते है। इस कोण के मान से और विभिन्न ताप पर हवा के वर्त्तनाङ्क से (जो हमे ज्ञात है'), सूत्र द्वारा हम भूमि के एकदम निकट की हवा के ताप और आँख की ऊँचाई पर की हवा के ताप का अन्तर डिग्री सेण्टीग्रेड मे मालूम कर लेते है, सूत्र इस प्रकार है, ताप अन्तर $\triangle$ t (सेण्टीग्रेड मे) $= \frac{273}{29\ 10^{-5}}\ \frac{1}{2}\left(\frac{h}{AW}\right)^2$ व्यवहार मे यह अन्तर 10° से लेकर 65°F तक मिल सकता है।

उपर्युक्त उदाहरण मे मरीचिका की उत्पत्ति-क्रिया अत्यन्त सरल है। ज्यो ही मै भूमि पर एक खास सीमा से आगे किसी बिन्दु पर अपनी दृष्टि डालता हूँ, तो दृष्टि रेखा की किरण गर्म स्तरो पर पर्याप्त झुके हुए कोण पर आपतित होती है, अत इसका अकस्मात् विचलन हो जाता है। प्रभाव बहुत कुछ ऐसा ही होता है मानो उस बिन्दु की भूमि पर कोई दर्पण रखा हो। इस प्रकार दूर की वस्तुएँ दो टुकडे मे विभाजित

हो जाती है—ऊपर का भाग तो अकेला ही दीखता है, किन्तु पेदेवाले भाग के साथ उसका उलटा प्रतिबिम्ब भी दिखलाई पडता है (चित्र ४२ क)।
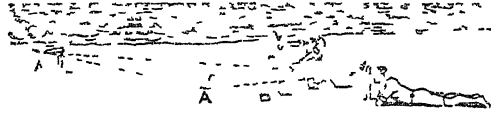
चित्र ४१—मरीचिका उत्पन्न करनेवाली किरण के पथ को कैसे मालूम करते है। (सभी क्षैतिज दूरियाँ अत्यधिक छोटी करके दिखायी गयी है।)

लम्बे फासले पर बननेवाली मरीचिका पर पृथ्वी की वक्रता तथा किरणो की सामान्य वक्रता का बहुत अधिक प्रभाव पडता है। दूरस्थ चीजो के पैर पृथ्वी की वक्रता के कारण, एक खास ओझल रेखा के नीचे अदृश्य रहते है। इस ओझल रेखा और इससे कुछ ऊपर स्थित सीमा-रेखा के दर्मियान वस्तु का वह भाग मिलता है जो प्रतिबिम्बित होते हुए दीखता है और इसका प्रतिबिम्ब प्राय ऊर्ध्व दिशा मे सकुचित हुआ रहता है। अन्त मे, सीमा-रेखा से ऊपर वे वस्तुएँ दिखलाई पडती है जो प्रतिबिम्बित नही हो पाती है (चित्र ४२ ख)।
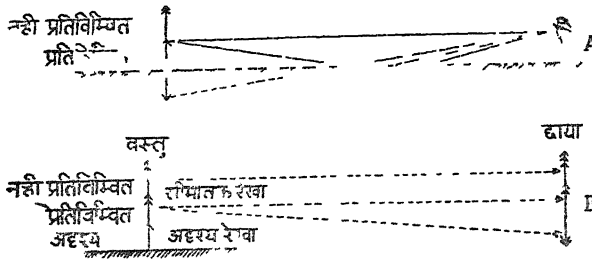
चित्र ४२—मरीचिका वस्तु के केवल एक भाग को ही प्रदर्शित करती है। A थोडी दूर पर। B लबी दूर पर।

पृथ्वी की सतह के निकट, ताप की तीव्र वृद्धि के बजाय हम ताप के वितरण की अनेक अपेक्षाकृत अधिक पेचीदा स्थितियो की कल्पना कर सकते है जिनमे प्रत्येक के लिए प्रकाश-सम्बन्धी अपने परिणाम अलग-अलग किस्म के होगे। समुद्रतट के ऊपर बननेवाली अत्यन्त स्पष्ट मरीचिका के लिए उपर्युक्त विधि से प्रायोगिक जाँच करके

ओझल रेखा तथा सीमारेखा की स्थितियाँ ज्ञात कर सकते हैं और फिर उनसे ताप-वितरण क्रम भी मालूम कर सकते हैं। इस निष्कर्ष के साथ स्तरो के सीधे नापे गये ताप की तुलना की जा सकती है। किन्तु समुद्रतट के बिलकुल सपाट न होने की सभावना के कारण इस तरह की जाँच का कार्य अत्यन्त कठिन हो जाता है।

प्रत्येक समुद्र-यात्रा मे बहुत-सी मरीचिकाएँ दिखलाई पडती है, जिनका समाधान पूर्ववर्णित व्याख्या के अनुसार किया जा सकता है (चित्र ४३, ४४)। यदि घटना

चित्र ४३—विभिन्न दूरियो से ऐसे द्वीप का अवलोकन किया जा रहा है जहाँ मरीचिका मौजूद है।

का विकास अपूर्ण रहा, जैसा कि प्राय होता है, तो (उलटा) प्रतिबिम्ब इतना पिचक जाता है कि यह बस एक छोटी-सी आडी रेखा की शक्ल का दीखता है और स्वय वस्तु के पेदे के साथ यह मिल-सा जाता है। और अब केवल प्रतिबिम्बित आकाश की रोशनी की चमकती हुई झिरी पर ही ध्यान आकृष्ट होता है—यह भी पिचकी होती है किन्तु स्वभावत इस बात को हम भाँप नही पाते। इसलिये बहुत दूर की वस्तुएँ क्षितिज से कुछ ऊपर मानो उतराती हुई सी प्रतीत होती हैं।

प्रकाश की यह घटना, जो आशिक विकास पायी हुई मरीचिका के अतिरिक्त और कुछ नही है, लगभग प्रतिदिन ही समुद्र पर दिखलाई देती है, विशेषतया उस दशा मे जब कि हम दूरबीन का उपयोग करते हैं। यदि द्वीप के विभिन्न भाग हमसे विभिन्न दूरियो पर हो तो अधिकतम दूरीवाले भाग ओझल रेखा और सीमारेखा को अपेक्षाकृत अधिक ऊँचाइयो पर स्पर्श करते हैं और चित्र ४४ D मे दिखलायी गयी दशा प्राप्त होती है।

ओझल रेखा और आभासी क्षितिज के दर्मियान की ऊँचाई नाप कर मरीचिका की 'तीव्रता' को अङ्को मे सरलता से प्रगट कर सकते हैं। नाप की क्रिया परिशिष्ट §२३५ मे दी गयी किसी एक विधि से पूरी की जा सकती है। इस के लिए चाप के कुछेक मिनट के कोणो की नाप करनी होती है।

एक और घटना मिलती है जो इस तरह का प्रभाव उत्पन्न करती है कि कभी-कभी धोखे से इसे ही उपर्युक्त घटना समझा जा सकता है—यह है लहरो के फेन से पानी

की नन्ही-नन्ही बूँदो की तह का निर्माण। ये बूँदे समुद्र की हवा मे उतराती रहती हैं और दूर की चीजो के निचले भागो को धुन्ध के हलके स्तर से ढँक लेती है।
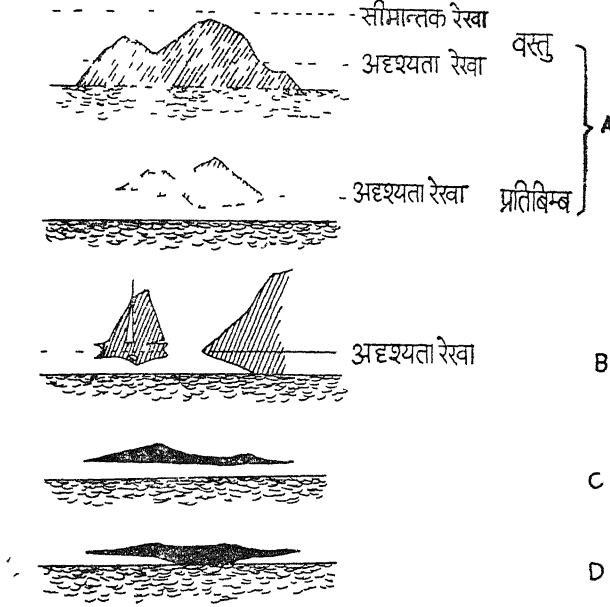
चित्र ४४—समुद्री यात्रा के दौरान मे मरीचिका का प्रेक्षण।

मरीचिकाएँ, विकृत रूप मे और परावर्तित प्रतिबिम्ब के साथ निम्नलिखित परिस्थितियो मे भी देखी गयी हैं—नदी, तालाब मे नहाते समय जब कि हवा के मुकाबले पानी अधिक गर्म हो, बडी झीलो पर, वायुमण्डल की अनुकूल परिस्थितियो मे, रेलवे लाइन पर जब कि झुकने पर दूर का इजिन अत्यन्त विकृत शक्ल का दीखता है, समतल रेतीले भूमिखण्ड पर या समतल जुती हुई भूमि पर, टीलो के ढाल पर बशर्ते हम ढाल के समानान्तर देखे, और शहर की पत्थर जडी हुई सडक पर, विशेषतया उस दशा मे जब सडक की उठान के सहारे निकट से कोई देख रहा हो।

३३ ठण्डे पानी के ऊपर मरीचिका (विशिष्ट मरीचिका या अस्पष्ट दर्शन)

जिस प्रकार तप्त भूमि के ऊपर-नीचे की ओर प्रतिबिम्बन होता है, ठीक उसी प्रकार ऊपर की ओर प्रतिबिम्बन मुख्यत समुद्र के ऊपर देखा जा सकता है, किन्तु बहुत ही कम अवसरो पर। ऐसा उस वक्त होता है जब हवा की अपेक्षा समुद्र बहुत

अधिक ठण्डा रहता है जिससे निम्नतम वायुस्तरो का ताप, समुद्र के ऊपर ऊँचाई के साथ बहुत तेजी से बढता है, ताप के इस ढग के वितरण को ऋतु-वैज्ञानिक 'ताप के उत्क्रमण' (इनवर्शन ऑफ टेम्परेचर) के नाम से पुकारते है (देखिए चित्र ४५)।
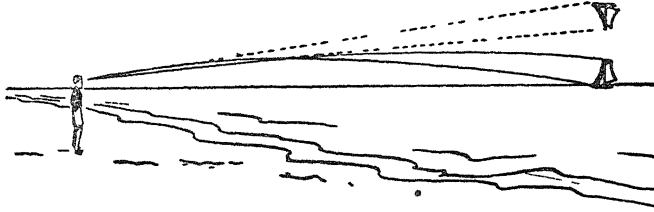
चित्र ४५—**उच्चतर श्रेणी की मरीचिका, एक असाधारण घटना।**

कतिपय शानदार 'विशिष्ट' मरीचिकाओ के उत्तम श्रेणी के प्रेक्षण इङ्गलैण्ड के दक्षिणी समुद्रतट से ब्रिटिश चैनेल के पार दूरबीन द्वारा प्राप्त किये गये थे—ये प्रेक्षण कभी तो अत्यन्त गर्म दिन के बाद की सन्ध्या को लिये गये और कभी उस वक्त जब कि कुहरा बस हट ही रहा था। 'विशिष्ट' या उच्चतर श्रेणी की मरीचिकाएँ एकदम भिन्न परिस्थितियो मे भी दिखाई देती है जैसे बसन्त ऋतु मे बाल्टिक सागर पर बर्फ के गलने के तुरन्त बाद।

इस प्रकार की मरीचिकाएँ बर्फ जमी हुई सतह पर देखी जा सकती है जब कि अचानक वर्फ गलना शुरू करती है और इस कारण बर्फ के निकट की हवा ऊपर की हवा के मुकावले मे अधिक ठण्डी हो जाती है। किन्तु इसे देख सकने के लिए प्रेक्षक को झुकना पडेगा और उसे बर्फ जमी हुई सतह के सहारे उसके निकट से देखना होगा।

कभी-कभी किरणो के ऊपर की ओर मुडने से बहु प्रतिबिम्ब बनते है क्योकि इस दशा मे उनके विकास मे किसी तरह की बाधा नही पडती (जैसा कि किरणो के नीचे झुकने पर पृथ्वी की वक्रता के कारण बाधा पडती है)। और ये अद्भुत प्रतिबिम्ब उलटे भी बनते है तथा सीधे भी, क्षण-क्षण पर इनका स्वरूप बदलता रहता है तथा वस्तु की दूरी या वायुमण्डल के तापवितरण के अनुसार ही ये परिवर्त्तन घटित होते है।

३४ हवाई किले

कुछ अत्यन्त ही विशिष्ट दशाओ मे पूर्णतया विश्वसनीय प्रेक्षको द्वारा विचित्र मरीचिकाएँ देखी गयी है। इनका कहना है कि इन मरीचिकाओ मे भूमि के दृश्य-

मय कस्बे, मीनारों और मुंडेरों के, क्षितिज के ऊपर उठे हुए दीखते हैं जिनका स्वरूप बदलता रहता है, लगता है जैसे ढह रहे हों; बहुत कुछ परीलोक के दृश्य (फ़ाता मोर्गाना) सरीखे जान पड़ते हैं और गहरे आह्लाद की ये अनुभूति देते हैं, जी चाहता है कि निरन्तर इन्हें देखते ही रहें। आश्चर्य नहीं कि इसी कारण इन प्रेक्षणों की, जो स्वयं इतने सुन्दर हैं, काव्य और ग्राम्य गीतों में इतनी प्रशंसा की गयी है।

फ़ोरेल ने इस घटना को अपेक्षाकृत सरल रूप में कई बार झील के ऊपर देखा था और करीब ५० वर्ष के अध्ययन के उपरान्त इसका विस्तृत वर्णन उसने किया। पानी का एक शान्त धरातल, लगभग १० से लेकर २० मील तक चौड़ा, इसके लिए आवश्यक है और आँख को पानी से लगभग २ गज़ से लेकर ४½ गज़ तक की ऊँचाई पर स्थित होना चाहिए—आँख की ऊँचाई का प्रश्न विशेष महत्त्वपूर्ण है, अतः सही ऊँचाई प्रयोग द्वारा ही निश्चित करनी चाहिए। धूपवाले दिन, तीसरे पहर जब हवा के मुकाबले पानी अधिक गर्म था, फोरेल ने सामने के समुद्रतट पर मरीचिका की चार अवस्थाएँ एक के बाद दूसरी शनैः-शनैः विकसित होती हुई देखीं, जिनमें से प्रत्येक अवस्था एक ही स्थान पर दस-बीस मिनट से अधिक देर तक नहीं रह पाती थी।

a

b

c

d
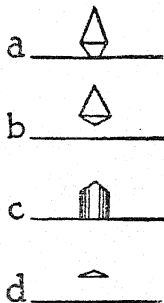
चित्र ४६—गर्म और ठंडे जल के ऊपर के वर्तन के अवस्थान्तर के फल स्वरूप किस प्रकार फाता मोर्गाना (मिथ्या प्रकाश) का निर्माण होता है।

ये चार अवस्थाएँ इस प्रकार थीं—(क) गर्म पानी के ऊपर, मरीचिका में प्रतिबिम्ब वस्तु के नीचे; (ख) ठण्डे पानी के ऊपर, विलक्षण मरीचिका जिसमें वस्तु तो अपनी सामान्य शक्ल की दीखती है किन्तु नीचे का उसका प्रतिबिम्ब बेहद पिचक जाता है (सम्भवतः अस्थायी, झिलमिलाती, परिवर्तनशील शक्ल का); (ग) हवाई किले, इस दशा में दूर की तट रेखा १०° से २०° तक की कोणीय दूरी में विकृत हो जाती है और ऊर्ध्व दिशा में आयताकार धारियों के रूप में खिच उठती है (बिम्ब का धारीदार क्षेत्र); और (घ) ठण्डे पानी के ऊपर किरणों का सामान्य झुकाव; इस दशा में प्रतिबिम्ब तो नहीं दिखलाई देता, किन्तु स्वयं वस्तु ऊर्ध्व दिशा में बहुत अधिक संकुचित दीखती है।

अवस्था (a) और (b) के ऊपरी क्षितिज तथा (d) के निचले क्षितिज की सीमाओ के अन्दर धारीदार क्षेत्र का निर्माण होता है (चित्र ४७)। अवस्था (a) का वर्त्तन (रीफ्रेक्शन) जब धीरे-धीरे अवस्था (d) मे परिवर्त्तित होता है तो फल-स्वरूप हवाई किले का प्रतिबिम्ब हवा मे ऊपर उठ जाता है। यह सिद्धान्त कि इस तरह के सक्रमण क्षेत्र मे औसत ऊँचाई के वायु-स्तर मे ही हवा का घनत्व सबसे अधिक होता है, सही जान पडता है। इस दशा के लिए किरणो का मार्ग चित्र ४७ मे दिखलाया गया है, और जैसा कि इस चित्र से प्रगट होता है, प्रकाश सूत्र L का हरएक बिन्दु ऊर्ध्व दिशा मे रेखा AB की सीध मे खिच उठता है।
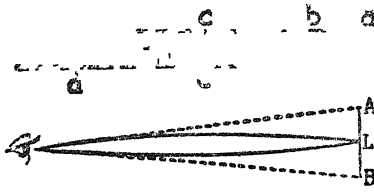
चित्र ४७—फाता मोर्गाना किस प्रकार उत्पन्न होता है।

सम्भवत हम जानना चाहेगे कि क्या स्वय हमारे देश (हालैण्ड) मे भी लाक्षणिक 'फाता मोर्गाना' की घटना देख सकने की सम्भावना हो सकती है। हालैण्ड के उत्तरी समुद्रतट पर इस तरह की कम से कम एक शानदार घटना के देखे जाने का पता है। इस अद्वितीय अवसर पर फोरेल द्वारा वर्णित करीव-करीब सभी लाक्षणिक विशिष्टताएँ प्रेक्षक द्वारा देखी जा सकी थी। प्रेक्षक लिखता है 'गर्मी के मौसम की सन्ध्या के चार बजकर बीस मिनट पर जब जान्दवूर्ट के समुद्रतट पर मै पहुँचा तो क्षितिज की असमानता ने तुरन्त ही मेरा ध्यान आकृष्ट कर लिया। उत्तर-पश्चिम तथा पश्चिम मे, दक्षिण-पश्चिम की अपेक्षा क्षितिज काफी ऊँचा था, कुछ जगहो पर दो क्षितिज दृष्टिगोचर हो रहे थे, एक के ऊपर दूसरा, दोनो ही एक ओर, पश्चिम और उत्तर के ऊँचे सिरे पर मिले हुए थे, और दूसरी ओर, दक्षिण-पश्चिम के निचले सिरे पर वे मिले हुए थे। उनके बीच का अन्तर करीब-करीब सर्वत्र एक-सा था, लगभग ७ मिनट का कोणीय अन्तर (ऑख से भुजा की लम्बाई के फासले पर करीब ०८ इच)। इन दोनो तलो के दर्मियान की वस्तुएँ विचित्र तरह से विकृत हो गयी थी, अत तरह-तरह के मायावी शक्ल के प्रतिबिम्ब बन गये थे। (देखिए चित्र ४८)।
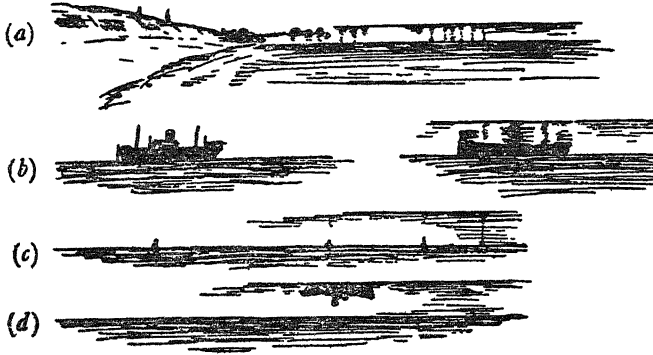
चित्र ४८—हवाई किले (जान्डबूर्त, नेदरलेड मे प्रेक्षित)

(a) नूर्डविज्क, काटविज्क, शेवेविजेन नगर, धारीदार क्षेत्र मे बस खजूर-वृक्षो के वन-सरीखे दीखते है ।

(b) बन्दरगाह से बाहर जानेवाला स्टीमर, कोई प्रतिबिम्ब नही (बाये); फाता मोर्गाना के क्षेत्र मे (दाहिने) ।

(c) छोटी समुद्री किश्तियाँ ।

(d) स्टीमर क्षितिज के पीछे स्वयं अदृश्य; केवल फाता मोर्गाना में दृष्टिगोचर उलटा प्रतिबिम्ब ऊपरी क्षितिज से लटका हुआ है ।

(From J Pinkhof, Hemel en Dampkring, 31, 252, 1939 Block lent by the Royal Nether-lands Meteorological Institute)

३५ उदय और अस्त होते समय सूर्य और चन्द्रमा का विरूपण[1] (प्लेट VI)

जब सूर्य आकाश मे कम ऊँचाई पर होता है तो प्राय अत्यधिक विचित्र विरूपण देखने को मिलते है । दृष्टिगोचर होनेवाले वृत्तखण्ड के कोने घिस गये से जान पडते है या ऐसा प्रतीत होता है मानो चकरी दो भागो मे काटकर जोड दी गयी है, या फिर सूर्य की चकरी के नीचे प्रकाश की पट्टी-सी दीखती है जो सूर्य के डूबने के साथ और ऊपर की ओर चढती है । अन्य दशाओ मे सूर्य ठीक क्षितिज के नीचे अस्त न होकर उससे कुछ मिनटो की कोणीय ऊँचाई पर ही ओझल हो जाता है । आकृति के ये

1 A L Cotton, Contrib Lick Obs 1, 1895, P A S P, 45, 270, 1933 etc

विरूपण प्रात की अपेक्षा सन्ध्या को अधिक परिवर्त्तनशील होते जान पडते है और ऐसा ऋतुसम्बन्धी कारणो की वजह से होता है (देखिए § १९३) ।

खुले आकाशवाले दिन जब हवा न चलती हो, इन प्रतिबिम्बो के बनने के दौरान मे भिन्न घनत्ववाले वायुस्तरो मे फेर-बदल कम होता है, अत सूर्य के हाशिये के विरूपण वायुमण्डल की स्थिर दशा बतलाते है और ये अच्छे मौसम के चिह्न समझे जा सकते है । यदि सूर्य की चमक बहुत अधिक हो तो अच्छा होगा कि चाँदी की कलईवाला कागज या फिर साधारण कागज जिसमे नन्हा-सा एक सूराख बना हो, आँख के सामने रख ले या फिर गहरे रग का काँच आँख के सामने रखे । द्विनेत्री दूरबीन का उपयोग आवश्यक नही है, यद्यपि इसके उपयोग से प्रेक्षण की सुविधा जरूर हो जाती है । इस दशा मे कालिख लगा हुआ काँच या सुई के बराबर छिद्रवाला पर्दा ठीक आँख के सामने रखा जा सकता है (दूरबीन के वाहरी लेन्स के सामने नही) ।

इन घटनाओ की सबसे अधिक दिलचस्प अवस्थाएँ प्राय सूर्यास्त के १० मिनट पहले आरम्भ होती है (या सूर्योदय के १० मिनट बाद तक बनी रहती है)। साथ ही सूर्य की चकरी के रगो के विभिन्न शेड पर भी ध्यान दीजिए, क्षितिज के सबसे निकट वाले हाशिये का रग गहरा लाल होता है जो ऊपर की ओर क्रमश नारङ्गी और पीले रग मे बदल जाता है । यह भी देखिए कि चकरी पर कभी-कभी दृष्टिगोचर होनेवाले सूर्य के बडे आकार के धब्बे नन्ही लकीरो की शक्ल मे खिच उठते है ।[1]

इनका फोटो लेना दिलचस्प होगा, यद्यपि यह थोडा कठिन काम है । साधारण केमरे से उतारा गया सूर्य का फोटो अत्यन्त छोटा ही आता है । केवल ऐसी दूरबीन से, जिसकी फोकस लम्बाई कम से कम ३० इच हो और जिसका मुँह १ से ४ इच तक चौडा हो, सन्तोषप्रद फोटो लिया जा सकता है—इस दशा मे एक सेकण्ड से कम ही समय तक प्रकाशदर्शन[2] देना आवश्यक होता है, और इतने कम समय के लिए यह आवश्यक नही होता कि दूरबीन को सूर्य की प्रत्यक्ष गति के अनुसार घुमाने का समायोजन करे । इसके लिए पैन्क्रोमेटिक फोटो प्लेट काम मे लाइए और इसके सम्बन्ध मे आवश्यक जानकारी भी प्लेट-सम्बन्धी साहित्य पढकर हासिल कर लीजिए ।

प्रकाश के ये विरूपण अन्य किसी कारण से नही, बल्कि साधारण मरीचिका की वजह से उत्पन्न होते है, यहाँ हमे पुन ऊपर की ओर बननेवाली मरीचिका और

1 Havings, Hemel en Dampkring 19,161, 1922
2 Exposure

नीचे की ओर की मरीचिका के बीच के अन्तर पर गौर करना होगा। इस सम्बन्ध मे हम वास्तविक तथ्य के निकट पहुँच जाते है यदि हम यह मान ले कि सूर्य मे आने वाली किरण जब ऐसे वायुस्तर पर पडती है जहाँ घनत्व बदलता है तो इसकी दिशा अचानक मुड जाती है (वेगेनर के मतानुसार)।

दशा क (चित्र ४९)–जैसा चित्र ४९ मे दिखलाया गया है, वायु का एक पतला स्तर PR भूमि के स्पर्श मे स्थित है। अत हमे सूर्य तो दिशा OS की सीध मे दीखता है और साथ ही साथ उसका परावर्त्तित प्रतिविम्ब भी उसके नीचे OP दिशा मे दिखलाई देता है और क्षितिज OR इन दोनो के दर्मियान स्थित होता है। सूर्यास्त
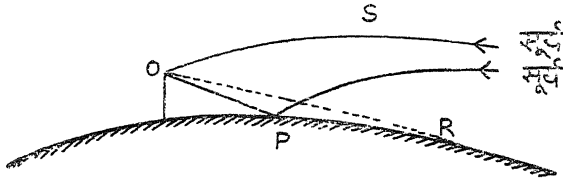
चित्र ४९––दशा A के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति सूर्यास्त के समय।

के समय सूर्य का एक चिपटा प्रतिरूप आभासी क्षितिज OP से ऊपर की ओर ठीक उस वक्त निकलता हुआ दीखता है जब सूर्य डूबता है—अत वास्तविक सूर्य और यह प्रतिरूप, दोनो उस जगह एक दूसरे से मिल जाते है जहाँ हमारा सूर्य डूबने वाला होता है। तत्पश्चात् ये दोनो बिम्ब या चकरियाँ एक दूसरे के ऊपर चढती चलती जाती है और तब गुब्बारे आदि की शक्ल प्राप्त होती है।

दशा ख (चित्र ५०)—इस बार हम कल्पना करते है कि धरती के निकट की हवा ठण्डी है, जब कि अधिक गर्म वायुस्तर ABCD इसके ऊपर है (उत्क्रमण)।[1] विन्दु M पृथ्वी के गोले का केन्द्र है, जिसके गिर्द दो वृत्तचाप खीचे गये है, एक चाप समुद्र की सतह प्रगट करता है और दूसरा चाप उस वायुस्तर को प्रगट करता है जहाँ घनत्व अचानक बदल गया है। अब कल्पना कीजिए O पर खडा प्रेक्षक इस तरह देखता है कि उसकी दृष्टिरेखा उत्तरोत्तर क्षितिज के निकट आती जा रही है, OA दिशा मे उसकी दृष्टिरेखा सूर्य की चकरी के ऊपरी हाशिये को स्पर्श करती है, OB दिशा मे उसे चकरी का तनिक नीचे का भाग दिखलाई देता है, किन्तु इस बार उसकी

1 Inversion

दृष्टिरेखा घनत्व परिवर्त्तन वाले स्तर के साथ अधिक झुकी हुई है, तथा क्षैतिज दिशा OC की सीध मे जानेवाली दृष्टिरेखा उस स्तर पर गिरने पर इतना बडा कोण बनाती है कि दृष्टिकिरण अधिक झुक जाने के कारण आगे नही जा पाती, बल्कि वापस पृथ्वी पर ही लौट जाती है । यदि प्रेक्षक धरती की सतह से कुछ ऊँचाई पर खडा होता है, तब वह नीचे की ओर अपनी दृष्टि परिवर्त्तनवाले स्तर पर अपेक्षाकृत छोटे कोण की दिशा मे डाल सकता है, जैसे दिशा OD मे देखने पर उसकी दृष्टिरेखा परिवर्त्तन-स्तर पर इतना छोटा आपतन कोण बनायेगी कि किरण उस स्तर के पार निकल जायगी। अत क्षैतिज दिशा के दोनो ओर बिन्दुपथ द्वारा दिखाये गये कोण के दर्मियान वायु-मण्डल के बाहर की कोई भी किरण
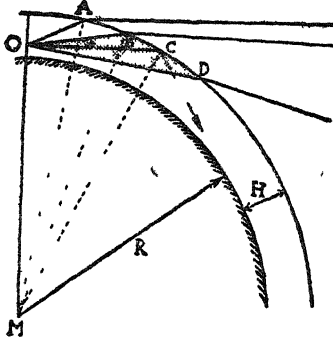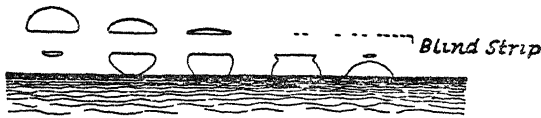
चित्र ५० क

चित्र ५० ख--**दशा ख के अनुसार मरीचिका द्वारा उत्पन्न विकृति का सूर्यास्त ।**

प्रेक्षक तक नही पहुँच पाती, फलस्वरूप उसे एक अन्धी पट्टी दीखती है जिसकी ऊर्ध्व चौडाई 2h होगी। यह निम्नलिखित प्रमेय से प्राप्त एक परिणाम है।

O से खीचे गये तमाम जीवाओं[1] मे क्षैतिज जीवा OS ही ऐसी जीवा है जो वृत्त के साथ न्यूनतम कोण बनाती है । उपपत्ति—त्रिभुज MOB मे $\frac{\sin \widehat{OBM}}{OM} = \frac{\sin \widehat{MOB}}{MB}$ है,

1. Chords

अत. $\sin \widehat{OBM} = \frac{R}{R+H} \sin (90^\circ + h) = \frac{R}{R+H} \cos h$

इससे यह स्पष्ट है कि $\widehat{OBM}$ अपना महत्तम मान उस वक्त प्राप्त करता है जब $h=0$ हो। अन्त मे पूर्ण परावर्त्तन की दशा मे $\sin \widehat{OBM} = \frac{1}{n}$ जिसमे n एक स्तर का दूसरे वायुस्तर के मुकाबले मे वर्तनाङ्क है। अब $\frac{H}{R}$ के लिये ϵ लिखे और n-1 के लिए δ तथा $\cos h$ के स्थान पर उसका निकटतम मान $1-\frac{1}{2}h^2$ ले तब h के लिए हम यह फल प्राप्त करते है —

$$h = \pm \frac{\sqrt{2(\delta - \epsilon}}{n}$$

सन्निकटत $h = +\sqrt{2(\delta - \epsilon}$ क्योकि n तो करीब-करीब 1 के ही बराबर रहता है।

अत हम देखते है कि अन्धी पट्टी का विस्तार जितना क्षितिज के ऊपर है उतना ही नीचे भी (दुहरे चिह्न $\pm$ के कारण)। H यदि 55 गज हो तब $\epsilon = 78 \times 10^{-7}$ और यदि इस दशा के लिए $\delta = 100 \times 10^{-7}$ ले, तब $h = \pm 0{\cdot}021$ रेडियन$= \pm 7$ मिनट, अत अन्धी पट्टी की कोणीय ऊर्ध्व चौडाई 14 मिनट होगी।

दरअसल इस व्याख्या मे हमे किरणो की सामान्य पार्थिव वक्रता का भी विचार करना चाहिए था, किन्तु इस स्थान पर हम इस घटना की केवल प्रमुख विशिष्टताओ पर ही ध्यान दे रहे है।

अब यह स्पष्ट है कि वायुमण्डल की इस सरचना के अनुसार सूर्य वास्तविक क्षितिज तक पहुॅचने के पहले ही अस्त हो जाता है, यानी उसी क्षण जब कि वह अन्धी पट्टी मे प्रवेश करता है। यदि प्रेक्षक पहाडी की चोटी या जहाज के डेक पर खडा हो तो सभवत वह अन्धी पट्टी के नीचे की ओर से निकलती हुई सूर्य चकरी का निचला हाशिया देख सकेगा। अवश्य प्रतिविम्ब विकृत शक्ल के दीखते है अर्थात् अन्धी पट्टी के ऊपर तो प्रतिबिम्ब पिचका हुआ होगा और पट्टी के नीचे वह खिचा हुआ दीखेगा।

कुछ दशाओ मे सूर्य के प्रतिबिम्ब मे छोटी-छोटी कई सीढियाॅ-सी कटी दिखलाई पडती है—ये सहज ही इस बात की द्योतक है कि आकाश मे घनत्व परिवर्तनवाले

एक से अधिक स्तर मौजूद है (चित्र ५१)। कभी-कभी सोपानो के बीच की एकाध कटान[1] दोनो ओर से इतनी गहरी हो जाती है कि एसा प्रतीत होता है मानो सूर्य के ऊपरी भाग से एक टुकडा कटकर एक क्षण के लिए हवा मे उतराता रह गया हो और फिर वह सिकुड कर हरी किरणो की शानदार छटा की घटना प्रदर्शित करते हुए विलुप्त हो जाय। इसके बाद दूसरा टुकडा इसी तरह अलग हो सकता है और फिर तीसरा, चौथा आदि (चित्र ५८)।

चित्र ५१—**सूर्य की विकृति, जब वायु के विभिन्न घनत्व वाले कई स्तर मौजूद हो।**

इस पुस्तक के प्रथम सस्करण मे मैने दो उदाहरण प्रस्तुत किये थे जिनमे बहु-अर्द्धचन्द्र का विवरण दिया गया है जो विशेष रूप से सुस्पष्ट, सुडौल और एक दूसरे पर आरोपित थे (चित्र ५२)। ये घटनाऍ असाधारण रूप से प्रबल वर्त्तन के कारण उत्पन्न हुई बतलायी गयी है, किन्तु प्रतिबिम्बो के बीच की दूरी इतनी अधिक थी कि इस व्याख्या मे मै कठिनता से ही विश्वास कर सका था और मन मे सन्देह उठा कि कही प्रेक्षको की ऑखो मे ही तो कोई नुक्स नही था।

चित्र ५२—**चन्द्रमा के बहु नवचन्द्रक** (From Onweders en Optische Verschijnselen in Nederland and Meteorologische Zeitschrift)

लेकिन मै गलती पर था। प्रकृति की सम्भावनाऍ सदैव ही हमारे अनुमान से कही अधिक सम्पन्न होती है। क्योकि देखिए न, अभी हाल मे एक प्रेक्षक ने सूर्य के सात प्रतिबिम्ब देखे जो सुस्पष्ट और नीलापन लिये हुए थे, ये सभी सूर्य के निकट थे जो समुद्र के क्षितिज से १०° की ऊँचाई पर नारङ्गी वर्ण का था*। और **इस बार इस घटना का फ़ोटो भी लिया गया** है। प्रतिबिम्बो के सुस्पष्ट बने रहने के दौरान प्रबल वर्त्तन का होना अत्यन्त आश्चर्यजनक है।

1 Notch * Richord, meterologie 4, 301, 1953

३६ हरी किरण [1]

स्काटलैण्ड की एक प्राचीन किवदन्ती के अनुसार जिस व्यक्ति ने 'हरी किरण' देख रखी है वह फिर कभी भी भावुकता के मामले मे गलती नही करेगा। 'आइल आव मैन' द्वीप मे इसे 'जीवित आलोक' के नाम से पुकारते है।

हरी किरण की घटना, लोगो का अभी तक जैसा ख्याल था उसकी अपेक्षा कही अधिक बहुलता से देखी जा सकती है। भारत से हालैण्ड आते समय की एक समुद्र-यात्रा मे मैने दस से भी अधिक बार इस घटना का अवलोकन किया था। निस्सन्देह इसके देखने के लिए सबसे बढिया ठौर समुद्र है, अवलोकन जहाज के डेक से कर सकते है या समुद्रतट से। वैसे भूमि पर भी यह घटना देखी जा सकती है बशर्ते क्षितिज पर्याप्त दूरी पर हो। कभी-कभी यह घटना उस वक्त भी उत्पन्न होती है जब सुस्पष्ट बादलो की पेटी की ओट मे सूर्य छिपने जा रहा हो। ऐसा जान पडता है पहाडो और बादलो के ऊपर की यह घटना दृष्टिगोचर होती है बशर्ते क्षितिज से इनकी ऊँचाई करीब ३° से अधिक न हो। एकाध अवसर पर हरी किरण आश्चर्य-जनक रूप से कम फासले पर देखी गयी है। रिक्को ने बतलाया है कि किस प्रकार एक बार जब वे काफी निकट की एक चट्टान के साये के हाशिये मे खडे थे, तो सिर को केवल एक ओर या फिर दूसरी ओर तनिक हटाकर वे इच्छानुसार बार-बार 'हरी किरण' देख सके थे।[2] व्हिटनेल तथा निज्लैण्ड ने इस घटना का अवलोकन एक दीवार के सिरे पर किया था जो ३३० गज की दूरी पर थी। किन्तु ये सभी अपवाद के दृष्टान्त है।

जिन लोगो ने इस घटना का प्रेक्षण किया है वे सभी इस बात से सहमत है कि 'हरी किरण' सबसे अधिक स्पष्ट ऐसी शाम को दीख पडती है जब सूर्य अस्त होने के क्षण तक तेज रोशनी से चमकता रहता है, इसके प्रतिकूल सूर्य जब अत्यन्त रक्त-वर्ण का होता है तो 'हरी किरण' करीब-करीब अदृष्टिगोचर ही रहती है।

द्विनेत्री दूरबीन[3] प्रेक्षण मे आम तौर से सहायक होती है और दूरबीन यन्त्र तो

1 Mulder, The 'green ray' or 'green flash' (The Hague 1922) Feenstra Kuiper De Groene Straal (Diss, Utract 1926)

इस घटना के व्यापक अध्ययन सहित आधुनिक निबन्धो की एक सूची, तथा आश्चर्यजनक रगीन फोटोग्राफ वैठिकन वेधशाला द्वारा प्रकाशित किये गये है।

D T K O Connell, The Gren Flash(Amsterdom-New York 1958)

2 Mem Spettr Ital 31, 36, 1902 3 Fieldglasses क्षेत्र दूरेक्षिका।

और भी अधिक सहायक होते है। किन्तु इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि यन्त्र द्वारा सीधे ही सूरज की ओर न देखे सिवाय अस्त होने के ठीक पूर्व के अन्तिम क्षणो मे, वरना आँख मे चकाचौध से क्षति पहुँच सकती है। फिर नगी आँखो से भी सूर्य-चकरी के अन्तिम खण्ड का अवलोकन करने मे बहुत जल्दी नही करनी चाहिए, बल्कि सूर्य की ओर तो अपनी पीठ ही उस वक्त तक रखिए जब तक अन्य कोई व्यक्ति आपको बतलाता नही है कि प्रेक्षण का ठीक अवसर अब हो गया।

यह घटना है अत्यन्त परिवर्त्तनशील और बस कुछ ही सेकण्ड तक यह बनी रहती है। एक बार एक टीले के ढाल के ऊपर जिसकी ऊँचाई ६ गज थी, दौडने पर मै 'हरी किरण' २० सेकण्ड तक देख सका था, मेरी रफ्तार के कम होने पर यह अपेक्षाकृत अधिक आसमानी रग की हो जाती और रफ्तार के बढने पर यह अधिक धवल हो जाती। कुछ अवसरो पर बारी-बारी से जहाज के विभिन्न डेको से भी इसे देख सकना सम्भव हो सकता है। जहाज की हरकत के कारण, निज्लैण्ड ने इस घटना को क्रम से एक के बाद एक, कई बार देखा था। एक बहुत ही खास मौके पर जब कि किरणो की वक्रता असामान्य रूप से अधिक थी, यह १० सेकण्ड तक तथा और भी ज्यादा देर तक देखी जा सकी थी। पुर्तगाल के गैगो कान्तिन्हो ने तो एक बार समुद्र के दूरस्थ प्रकाशगृह की रोशनी मे काफी देर तक इस घटना का प्रेक्षण किया था।

बायर्ड के दक्षिण ध्रुव-अभियान के दौरान मे जब कि ध्रुव प्रदेशीय लम्बी रात्रि के उपरान्त पहली बार उगनेवाला सूर्य ठीक क्षितिज के सहारे हरकत कर रहा था, 'हरी किरण' का अवलोकन ३५ मिनट तक किया गया था।

'हरी किरण' की घटना निम्नलिखित तीन रूप धारण कर सकती है—(क) **हरे रग का हाशिया**, (चित्र ५३) जो दरअसल सदैव ही सूर्यबिम्ब के ऊपरी सिरे पर पहचाना जा सकता है। यह हरा हाशिया ज्यो-ज्यो क्षितिज के नजदीक पहुँचता है त्यो-त्यो यह अधिक चौडा होता जाता है, साथ ही साथ इसके निचले भाग का रग लाल हो जाता है। (ख) **हरा वृत्त-खण्ड** डूबते हुए सूर्य-चकरी के आखिरी वृत्तखण्ड के दोनो छोर का रग हरा हो जाता है और यह हरा रग धीरे-धीरे वृत्तखण्ड के केन्द्र की ओर बढता जाता है। यह हरा वृत्तखण्ड अक्सर नगी आँखो को भी एकाध सेकण्ड तक दिखलाई देता है और द्विनेत्री

चित्र ५३—**हरा वृत्तखण्ड।**

दूरबीन से ३, ४ सेकण्ड तक कभी-कभी यह देखा जा सकता है।
(ग) **स्वयं हरी किरण;** यह घटना जो नंगी आँखों को भी दिखाई देती है, बहुत ही दुर्लभ अवसरों पर प्रगट होती है। यह हरी किरण ठीक उस क्षण जब सूर्य क्षितिज के नीचे छिप रहा हो, लौ की भाँति ऊपर फिकती हुई दिखाई देती है (चित्र ५४)
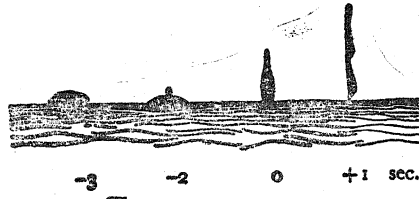
चित्र ५४—**यथार्थ हरी किरण; सूर्य के अस्त होने के क्षण से समय की गणना की गयी है। (डी० पो० लागाइज के अनुसार)**

इन तीनों ही शक्लों में इसका रंग अधिकतर नीलम सरीखा ही होता है और पीला तो बिरले ही मौकों पर। कभी-कभी यह नीले रंग की होती है या बैंगनी भी। एक बार चन्द सेकण्ड के दौरान में, जब तक कि घटना का अस्तित्व रहा, इसका रंग हरे से नीला और फिर बैंगनी में बदलता हुआ देखा गया था।

अब हरी किरण की व्याख्या में किसी तरह के सन्देह की गुंजाइश बाकी नहीं रह जाती है। आकाश में नीचे स्थित होने के कारण सूर्य की श्वेतकिरणों को वायु-मण्डल में लम्बा फासला तय करना होता है। पीले और नारङ्गी रंग के प्रकाश का अधिकतर भाग जलवाष्प द्वारा जज्ब हो जाता है क्योंकि जलवाष्प के लिए वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) की अवशोषण पट्टियाँ प्रकाश के इन्हीं रंगों के प्रदेश में स्थित होती हैं। सूर्य के प्रकाश का बैंगनी भाग परिक्षेपण के कारण अत्यधिक क्षीण हो जाता है (देखिए § १७२)।
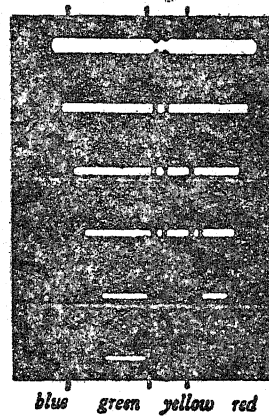
चित्र ५५—**नीला हरा पीला लाल अस्त होते हुए सूर्य का स्पैक्ट्रम प्रेक्षण; एन० डिज्कवेल द्वारा।**

(Hemel en Dampkring. 34, 261, 1936.)

अत अब शेष रहते है लाल और हरे-नीले रग-जैसा कि प्रत्यक्ष प्रेक्षण से देखा जा सकता है।[1] (चित्र ५५)

फिर वायुमण्डल ऊपर की अपेक्षा नीचे अधिक घना होता है, अत वायुमण्डल से गुजर कर आनेवाली प्रकाश-किरणे मुड जाती है (§२९) ओर किरणो का यह झुकाव लाल रोशनी के लिए थोडा कम, तथा अधिक वर्त्तनीय[2] नीली-हरी किरणो के लिए कुछ अधिक होता है। इस कारण सूर्य की दो चकरियाँ हमे दिखलाई पडती है जो एक दूसरे को आशिक रूप से ढकती है, नीले-हरे रगवाली चकरी कुछ ऊपर रहती है और लाल रग की चकरी थोडी नीचे हटी रहती है। यही वजह है नीचे का हाशिया लाल रग का दीखता है और ऊपर का हरे रग का (चित्र ५६)। अब यह बात समझ

चित्र ५६—हरी किरण कैसे उत्पन्न होती है।

मे आ सकती है कि क्यो जब सूर्य आकाश मे नीचे स्थित होता है तो वृत्तखण्ड के छोर हरे रग के दीखते है और क्यो सूर्य का श्वेत रगवाला भाग क्षितिज के पीछे आहिस्ते-आहिस्ते छिपता है जब कि शेष बचे हुए समस्त वृत्तखण्ड पर हरा रग छा जाता है। लेकिन कई परिस्थितियो मे क्षितिज के निकट वर्त्तन असामान्य रूप से प्रबल होता है, फलस्वरूप हरा वृत्तखण्ड विशेष रूप से स्पष्ट अधिक देर तक दिखाई देता रहता है। मरीचिका के उत्पन्न होने की दशा मे यह एक लपट की तरह हरी किरण के रूप मे भी ऊपर को खिच आ सकता है।

इस धारणा की पुष्टि हो सकती है यदि हम पाये कि जब हवा की अपेक्षा समुद्र अधिक गर्म हो तब हरा वृत्तखण्ड (सेगमेण्ट) तथा हरी किरण अनुपस्थित हो क्योकि

१ अत्यन्त प्रबल परिक्षेपण मे हरा-नीला भी विलुप्त हो जाता है, यही कारण है अस्त होते समय सूर्य यदि गहरे लाल रग का हुआ तो हरी किरण अदृश्य रहती है।

हरी किरण के वर्णक्रम (स्पेक्ट्रम) का फोटा टी, एस, जैकबसेन द्वारा लिया गया है (Journal R Astron Soc Canada 46, 93, 1952, Sky and Telescope, 12, 233,1953

2 Refrangible

उस दशा मे घनत्व मे ह्रास तथा किरण का झुकाव दोनो ही विशेष रूप से कम होगे। दरअसल आभास मिलता है कि बात ऐसी ही है।[1] (चित्र ५७)

कहा जाता है कि हरा वृत्तखण्ड उस वक्त विशेष रूप से अच्छी तरह देखा जा सकता है जब नीचे मरीचिका के लक्षण मौजूद हो, अर्थात् जब निचला किनारा (जीवा) बिलकुल सीधा न होकर दोनो कोनो पर ऊपर की ओर मुडा हो।[2]

चित्र ५७—अन्तिम वृत्त-खण्ड के छोर के सिरे ऊपर को मुडे होते है। हरी किरण के उत्पन्न होने की सम्भावना है!

वायुस्तरो की घनत्व पृथक्ता के कारण जब सूर्य की चकरी पर बगल मे कटान मौजूद होती है, तो हम देख सकते है कि किस तरह सिरे से एक टुकडा जब तब पृथक् होकर हरी ज्योति की शक्ल मे विलुप्त हो जाता है—एक अत्यन्त चमत्कारपूर्ण दृश्य! (चित्र ५८, देखिए चित्र ५१, §३५)। एक और तथ्य पर विचार करिए जो असामान्य वर्त्तन के अत्यधिक प्रभाव का जबर्दस्त समर्थन करता है, दो अवसरो पर स्टीमर के एक डेक से हरी किरण देखी जा सकी थी किन्तु दूसरे डेक से नही, इसका अर्थ है कि घटना इस बात पर निर्भर करती है कि प्रेक्षक किस ऊँचाई पर खडा था।[3] फिर वर्णक्रम मे वास्तविक हरी किरण की नाप करने पर पता चलता है कि हरा प्रकाश एक क्षण पूर्व के सूर्य-वर्णक्रम के हरे प्रकाश की तुलना मे निश्चित रूप से अधिक प्रबल होता है। यह तर्कसगत केवल तभी हो सकता है जब असामान्य वर्त्तन होता हो। किन्तु इसके प्रतिकूल 'नेचर' के अनुसार कुछ सिद्धहस्त इस बात पर जोर देते है कि किरणो की साधारण पार्थिव वक्रता ही 'हरी किरण' उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त रूप से समर्थ है।[4]

चित्र ५८—किस प्रकार अस्त होते हुए सूर्य के ऊपरी सिरे के पृथक् होने पर हरी किरण उत्पन्न होती है।

1 R W Wood, Nat, 121, 501, 1928   2 Nat 111, 13, 1923

३ इस प्रेक्षण को दुहराना उचित होगा और अच्छा होगा यदि वही प्रेक्षक बारी-बारी से दोनों डेकों पर खडा होकर प्रेक्षण करे।

4 Proc R Soc 126, 311, 1930

अत हरी किरण के सम्बन्ध मे प्रमुख समस्या जो हमे अभी हल करनी है, वह इस प्रकार है **वर्त्तन कितना प्रबल होना चाहिए कि इस घटना की एक निश्चित प्रतीति उत्पन्न हो सके ?** इसे हल करने के लिए यह पर्य्याप्त होगा कि कोई व्यक्ति समुद्रतट पर कई दिनो तक इस बात को अङ्कित करे कि ठीक किस वक्त सूर्य अस्त होना है और साथ ही साथ वह हरी किरण की घटना का भी प्रेक्षण करे। प्रेक्षण से प्राप्त समय और गणना से मालूम किये गये समय का अन्तर इस बात का अच्छा सूचक है कि किरण की वक्रता सामान्य से कितनी अधिक विचलित हुई है।

यह ख्याल किया जाता था कि रक्त वर्ण के डूबते हुए सूर्य के अवशिष्ट भाग का पूरक रगो मे उत्तर-बिम्ब[1] चक्षुपटल पर बन जाता है जो सम्भवत हरी किरण की घटना का आभास कराता है (§८८)। इस धारणा का पर्य्याप्त रूप से खण्डन इस बात से होता है कि जिस समय सूर्य उदय होता है उस समय भी हरी किरण देखी जा सकती है यद्यपि इस दशा मे यह जानना कठिन ही होता है कि प्रगट होनेवाली रोशनी के लिए ठीक किस ठौर देखा जाय। इसके लिए या तो क्षितिज के सबसे अधिक प्रकाशित भाग की ओर देखना होगा या फिर उष कालीन किरण या हेडिन्जरब्रश (§१९१,§१८२) की तलाश करनी होगी। एक और दलील यह है कि हरी किरण केवल तभी देखी जा सकती है जब क्षितिज काफी अधिक दूरी पर हो, यद्यपि नेत्र-रेटिना पर बननेवाला उत्तर-बिम्ब इस बात से किसी भी तरह प्रभावित न होगा किन्तु स्पष्ट है कि किरण की वक्रता की दृष्टि से यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। काफी दिक्कत उठाकर आटोक्रोम प्लेट पर हरी किरण का फोटो सफलतापूर्वक उतारा गया है।

कुछेक अवसरो पर चन्द्रमा और शुक्र के लिए भी 'हरी किरण' का प्रेक्षण किया गया है और एक अवसर पर वृहस्पति के लिए भी। एक प्रेक्षक ने बतलाया है कि किस तरह उसने शुक्र के प्रतिबिम्ब को इस ग्रह की ओर उठते हुए देखा और जिस क्षण ये दोनो एक दूसरे से मिले, प्रतिबिम्ब का रग अचानक हलके लाल से हरे रग मे तब्दील हो गया।

३७ हरी तरङ्ग

सुमात्रा के समुद्रतट से यह देखा गया था कि दूर क्षितिज पर धवल शीर्षवाली लहरे हरी प्रतीत होती थी, अवश्य ही ऐसा छोटी लहरो के लिए ही था, अधिक ऊँची

1 After-image

लहरे हमेशा की तरह धवल रग की ही दीखती थी। समुद्र का रग धूसर था और क्षितिज स्पष्ट रूप से पानी मे डूबता हुआ दीख रहा था।

यह घटना हरी किरण की मानिन्द जान पडती है, इस दशा मे छोटी लहरो का चमकने वाला धवल सिरा अस्त होते हुए सूर्य के अन्तिम हाशिये जैसा प्रभाव उत्पन्न करता है।

३८ लाल किरण[1]

हरी किरण की व्याख्या से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि 'लाल किरण' भी हमे मिलनी चाहिए। उदाहरण के लिए जब क्षितिज पर छाये घने बादलो की पेटी की स्पष्ट ओट के पीछे सूर्य चला जाता है और इसका निचला हाशिया ओट के नीचे से झाँकता हुआ दीखता है, तब निचले भाग से लाल किरण हमे दीख पडनी चाहिए। कई अवसरो पर यह लाल किरण देखी गयी है किन्तु ऐसे अवसर बहुत कम ही आते है और जान पडता है कि यह घटना हरी किरण के मुकाबले मे और भी कम देर तक रहती है।

३३० गज के फासले पर स्थित एक दीवार के सूराख मे से हरी किरण का अवलोकन करने के दौरान मे ह्विटनेल उसी मौके पर लाल किरण को भी देखने मे समर्थ हुआ था।

३९. पार्थिव प्रकाश-स्रोत की झिलमिलाहट

यह घटना जिसे 'झिलमिलाहट[2]' या 'टिमटिमाना' कहते है सबसे अधिक स्पष्ट रूप मे सडक की सतह के लिए एसफाल्ट पिघलानेवाली भट्टी के ऊपर देखी जा सकती है। दूर की वस्तुएँ काँपती हुई जान पडती है मानो उनकी सतह पर लहरे बन रही हो, यहाँ तक कि उन्हे पहचान पाना कठिन हो जाता है, और ऐसा लगता है कि स्वय हवा भी पारदर्शी नही रही। फिर रेलगाडी के इजन के ब्वायलर या धूप मे तपी हुई लोहे की चद्दरवाली छत के ऊपर से देखने पर दूर की प्रत्येक वस्तु काँपती हुई नजर आती है। डठलो वाला खेत या रेतीला मैदान भी धूप मे तप जाने पर यह प्रभाव उत्पन्न करने मे समर्थ होता है।

1. Nat,, 94, 61, 1914, सूर्यास्त के क्षण बडे आकार के सूर्य-धब्बों के विलुप्त होते समय (चश्मे सहित) किये गये लालकिरणो के प्रेक्षण के अत्यन्त रोचक विवरण के लिए देखिए W M Lindley J B A A, 47, 298, 1937,

2 Scintillation

झिलमिलाहट की घटना सबसे अधिक स्पष्ट रूप मे चटकीली और रोशनी मे चमकती हुई चीजो द्वारा उत्पन्न होती है, जैसे श्वेत छालवाले बर्च पेड के तने, सफेद रग के खम्भे, धवल रग के बालू के खित्ते, वाटिका-ग्लोब, या धूप मे चमकती हुई दूर की खिडकियाँ। गर्मी के दिनो मे या वसन्त मे ठण्ड वाले दिन, रेल की पटरियाँ फासले पर झिलमिलाती नजर आती है, वे सीधी भी नही मालूम पडती बल्कि टेढी-मेढी, मुडी हुई प्रतीत होती है। अगर भूमि के निकट सिर रखे तो झिलमिलाना और भी अधिक वढ जाता है और हवा मे उतराती हुई वायु-धारियाँ सी दिखलाई पडती है। ये 'लहरे' समुद्र की लहरो से ऊँची हो सकती है। जिस वक्त धूप निकली हो, चश्मा लगाकर दूर की चीजो को वास्तव मे स्पष्ट देखा नही जा सकता। (इसकी जॉच विशेषतया सूर्य की उलटी दिशा मे देखकर करिए)। जाडे के दिनो मे अभ्यस्त आखे दूरस्थ वस्तुओ के झिलमिलाते प्रतिबिम्व के कम्पन के प्रेक्षण द्वारा मकानो की छत से ऊपर उठने वाली गर्म वायु को देख सकती है (ओडीमान्स)।

'क्योकि हवा, जिसमे से होकर हम नक्षत्रो को देखते है, शाश्वत कम्पन की अवस्था मे है, जैसा कि **ऊँची मीनारो की छाया की कम्पित गति** और अचल सितारो की टिमटिमाहट से देखा जा सकता है।' (न्यूटन्स 'आप्टिक्स' चतुर्थ सस्करण पृष्ठ ११०) हमारे पाठको मे से भला किसने इसका अवलोकन किया है?

इन सभी घटनाओ का समाधान गर्म वायु की धारा मे से गुजरनेवाली प्रकाश-किरण की वक्रता द्वारा किया जा सकता है—वायु की यह धारा तप्त भूमि से नन्हे फौआरो की भाति ऊपर उठती है। दो गज से कम ही की ऊँचाई पर ये धाराएँ ठण्डी हवा से इस कद्र मिलजुल चुकी होती है कि उसमे दीखनेवाली धारियाँ छोटी पड जाती है। सूर्य से प्रकाशित सफेद रग की सपाट दीवार पर खिडकी की चौखट के ऊपर उठती हुई वायु की धारियाँ नाचती-सी अक्सर देखी जा सकती है—और हलके धुएँ की भाँति ये बारीक छाया भी डालती है। वायु की ये धारियाँ प्रकाशकिरणो की समानान्तरता मे व्याघात उत्पन्न कर देती है, अत कुछ जगहो पर प्रकाश सिमट कर एकत्र हो जाता है तो कुछ जगहो पर प्रकाश की न्यूनता हो जाती है। यह प्रभाव उसी तरह का है जैसा कि तरगो से आन्दोलित पानी की सतह या खिडकी के असम तल कॉच द्वारा अपेक्षाकृत अधिक प्रबल मात्रा मे उत्पन्न होता है (§२३, २४)।

स्पप्ट है कि असमान रूप से गर्म हुए वायु-स्तरो मे से जितनी ही अधिक दूरी तक देखेगे, झिलमिलाहट उतनी ही अधिक प्रबल होगी। रात को कई मील के फासले पर स्थित रोशनी झिलमिलाती रहती है और जब निकट आते है तो उसका झिलमिलाना

कम हो जाता है यहाँ तक कि अन्त मे, अधिक निकट आने पर, झिलमिलाना खत्म हो जाता है। सडक पर खडी मोटर सूर्य के प्रकाश को तेज चकाचौध के साथ प्रतिबिम्बित करती है जो ५०० गज के फासले पर बहुत अधिक झिलमिलाहट उत्पन्न करता है, २०० गज की दूरी पर रोशनी पहले की अपेक्षा अधिक स्थिर रहती है और जब मै और भी अधिक नजदीक पहुँचता हूँ तो झिलमिलाहट पूर्णतया विलुप्त हो जाती है।

यह देखा गया है कि प्रकाश-पथ का वह भाग जो आँखो के निकटतम है, झिलमिलाहट उत्पन्न करने मे सबसे अधिक योग देता है। इसी तरह चश्मा सबसे अधिक कारामद आँख के बिल्कुल नजदीक रखने पर होता है। यदि चश्मे को छपे हुए पृष्ठ पर जिसे आप पढ रहे है, रखे तो आप देखेगे कि वह अक्षरो का आकार तनिक भी नही बदल पाता, किन्तु उसे आँख की ओर लाने पर अक्षर बडे या छोटे हो जाते है और चश्मे के लेन्स आँख के जितने ही निकट होगे—अक्षरो के आकार की तब्दीली भी उतनी ही अधिक होगी। इसी प्रकार झिलमिलाहट का अधिकाश प्रेक्षक के निकट वाली वायु के ताप-परिवर्त्तनो के कारण उत्पन्न होता है। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि थोडी देर के लिए यदि घने बादल के कारण सूर्य का विकिरण प्रकाश रुक जाता है ताकि प्रेक्षक के सन्निकट क्षेत्र मे किरणपथ साये मे पड जाय तो लगभग तुरन्त ही झिलमिलाहट समाप्त हो जाती है और इसके प्रतिकूल बादल के हट जाने पर झिलमिलाहट पुन लौट आती है। प्रगट है कि सूर्य से आने वाले विकिरण मे होनेवाली तब्दीली के अनुसार ही धरती की सतह का ताप भी अत्यन्त शीघ्रता से बदलता है।

एक ही स्थान से 'झिलमिलाहट' का बार-बार प्रेक्षण करके आसानी से यह ज्ञात कर सकते है कि विभिन्न ऋतु-दशाओ मे यह किस तरह बदलती है। आसमान मे जब बादल छाये रहते है तो झिलमिलाहट सदैव ही कम स्पष्ट होती है (ऐसे व्यापक बादल कि करीब-करीब समूचा ही प्रकाश-मार्ग छाये मे रहे)। सूर्योदय के पहले झिलमिलाहट नगण्य सी ही रहती है, सूर्य के उदय होने के थोडी देर बाद ही यह पर्य्याप्त प्रबल हो जाती है और दोपहर के करीब यह प्रभाव अधिकतम हो जाता है। फिर चार या पाँच बजे तक झिलमिलाहट हलकी पड जाती है। किन्तु किसी-किसी दिन इसका विकासक्रम बिलकुल ही भिन्न होता है।

झिलमिलाहट, न केवल रेत, मिट्टी, या मकानो के ऊपर बल्कि पानी की सतह पर, बर्फ के ऊपर और जगल मे झाडियो के ऊपर भी देखी जा सकती है—इससे पता चलता है कि ये सभी चीजे विकिरण उष्मा से इस प्रकार प्रभावित हो सकती है कि इनका ताप

वायु के ताप से बहुत अधिक भिन्न हो जाय। समुद्रतट के नगरो मे दूर की सडको के सहारे लगे हुए लैम्पो की कतार बन्दरगाह मे प्रवेश करते हुए जहाज से देखने पर सुन्दर दृश्य उपस्थित करती है—जहाज जब ब्रिटिश चैनेल या मेसिना जलडमरूमध्य से गुजरता है तब भी यह दृश्य देखा जा सकता है।

धरती के प्रकाश-स्रोतो की झिलमिलाहट मे कभी-कभी रग भी दीख जाते है लेकिन ऐसा तभी होता है जब प्रकाश-स्रोत बहुत अधिक दूरी पर हो। एक अपवादस्वरूप अवसर पर लैम्पो के प्रकाश मे रग की तब्दीलियाँ स्पष्ट देखी गयी थी यद्यपि इन लैम्पो का फासला ३ मील से अधिक न था।

४०. सितारो की झिलमिलाहट[१]

इस बात पर ध्यान दीजिए कि लुब्धक[२] या अन्य कोई चमकीला तारा क्षितिज के निकट स्थित होन पर किस तरह टिमटिमाता है। दूरबीन से अवलोकन करने पर इनकी स्थिति मे हलका परिवर्त्तन होता दिखाई देता है। नगी आँखो से निहारने पर आप इनकी दीप्ति मे परिवर्त्तन होते देखेगे और रगो का परिवर्त्तन भी।

कहने की आवश्यकता नही कि लुपझुप की यह घटना स्वय सितारे पर नही घटती है, बल्कि इसका भी समाधान उसी प्रकार किया जाता है जिस प्रकार धरती के प्रकाश-स्रोतो की झिलमिलाहट के लिए (§३९)।

ये स्थिति-परिवर्त्तन, गर्म और ठण्डी वायु की धारियो मे से गुजरनेवाली प्रकाश-किरणो की वक्रता के कारण उत्पन्न होते है। गर्म और सर्द वायु की धारियाँ हमेशा ही वायुमण्डल मे मौजूद रहती है, विशेषतया उस जगह जहाँ ठण्डे वायुस्तर के ऊपर से गर्म वायुस्तर गुजरता है और इस कारण वायु लहरे तथा भँवरे वहाँ उठती है (चित्र ५९)। दीप्ति मे परिवर्त्तन इस बात से उत्पन्न होते है कि अनियमित रूप से विचलित होनेवाली किरणे धरती की सतह के किसी स्थान पर तो इकट्ठी होकर घनी हो जाती

१ विशद व्याख्या के लिए देखिए Pernter-Exner in the Handbuch der Geophyic viii Quarterly Journal 80, 241, 1954 हाल मे शरीर वैज्ञानिक हार्ट्रिज ने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि झिलमिलाहट शरीरगत प्रभाव है, जो हमारे रेटिना की कणिकामय सरचना के कारण घटित होता है। इस धारणा की सम्पुष्टि नही हो सकती किन्तु हार्ट्रिज के दिलचस्प प्रयोग इस बात का सकेत देते है कि इस घटना मे शरीरगत प्रभाव के अवयव मौजूद हो सकते है, विवेचन के लिए देखिए Nature 164, 165, 1950

2 Sirius

है और कही पर उनका वितरण हलका हो जाता है। यदि इसे उत्पन्न करने वाला निरन्तर परिवर्त्तनशील सस्थान समूचा ही हवा के बहाव के साथ हरकत करता है तो कभी तो प्रेक्षक अपने को अधिक प्रकाश वाले भाग मे खडा पाता है, कभी कम प्रकाश वाले भाग मे। रग की तब्दीलियाँ किरणो के सामान्य पार्थिव-वक्रता के हलके विक्षेपण के कारण उत्पन्न होती है, फलस्वरूप सितारे से आनेवाली किरणे अपने रग के अनुसार वायुमण्डल मे थोडे भिन्न मार्गो पर चलती है। क्षितिज पर १०° की ऊँचाई पर स्थित सितारे के लिए गणना के अनुसार १$\frac{१}{४}$ मील की ऊँचाई पर लाल और बैंगनी रग की किरणो के बीच की दूरी ११ इच मिलती है और ३ मील की ऊँचाई पर यह दूरी २३ इच हो जाती है। वायु की स्तरधारियाँ औसत तौर पर काफी छोटी होती है अत
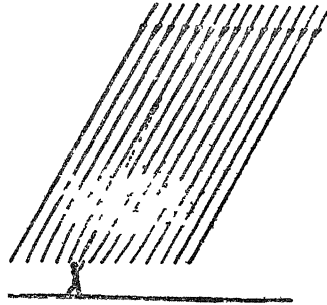
चित्र ५९—**वायुमडल की विषमता किस प्रकार तारे की प्रकाश किरणो मे झुकाव पैदा करके टिमटिमाहट उत्पन्न करती है। प्रेक्षक यहाँ तारे को ऊपर उठा हुआ और अधिक चमकीला देखता है।**

प्राय ऐसा हो सकता है कि बैंगनी किरण तो उसमे से गुजरती है और इसलिए अपने मार्ग से विचलित हो जाती है जबकि लाल किरण बिना विचलन प्राप्त किये ही आगे चली आती है (चित्र ६०)। अत झिलमिलाहट के फलस्वरूप सितारे की रोशनी की चमक के बढने-घटने के क्षण विभिन्न रगो के लिए विभिन्न होते है।
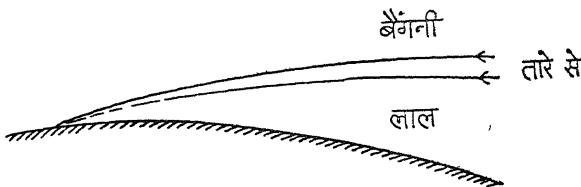
चित्र ६०—**तारे की टिमटिमाहट मे किस प्रकार रंग प्रदर्शित होते है।**

हाल मे इस बात की सम्भावना प्रतीत हुई है कि झिलमिलाहट उत्पन्न करने मे प्रकाश का विवर्त्तन भी भाग लेता है विशेषतया अत्यधिक ऊँचाई पर अवस्थित छोटे

आकार की धारियो के लिए। प्रकाश का वितरण अकेले ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियमो द्वारा नही निर्धारित होता बल्कि प्रकाश की तरग-प्रकृति के कारण उसमे थोडा परिवर्त्तन हो जाता है।[1]

ऊर्ध्व बिन्दु (जेनिथ) के निकट झिलमिलाहट सबसे कम होती है, इस स्थिति मे, जब वायुमण्डल शान्त हो तो चमकीले तारे की टिमटिमाहट केवल जब तब भी देखी जा सकती है। सितारे क्षितिज के जितने ही निकट होगे उतना ही अधिक वे टिम-टिमायेगे—इसका सीधा-सा कारण यह है कि इस दशा मे हम हवा की अधिक मोटी तह मे से इन्हे देख रहे है और इस कारण प्रकाश बहुत-सी वायुधारियो मे से गुजरता है (चित्र ६३)। ऐसा प्रतीत होता है कि ५०° से अधिक ऊँचाई पर रग की तब्दीलियाँ कभी नही होती, किन्तु ३५° के नीचे ही उनका बाहुल्य होता है। सर्वाधिक सुन्दर झिलमिलाहट चमकीले तारे लुब्धक की होती है जो जाडे की ऋतु मे आकाश मे थोडी ऊँचाई पर ही दीखता है।

झिलमिलाहट इतनी तेजी के साथ होती है कि हम देख नही पाते कि वास्तव मे होता क्या है। किन्तु निकट दृष्टिदोष के लिए चश्मा पहनने वाला कोई भी व्यक्ति झिलमिलाहट का बढिया अध्ययन कर सकता है। इसके लिए चश्मे (अवतल लेन्स वाले) को हाथ मे लेकर आँख के सामने उसे लेन्स के धरातल मे ही इधर-उधर डुलाना होगा। ऐसा करने से सितारे का बिम्ब एक छोटी लकीर की शक्ल मे खिच उठता है। और भी अच्छा होगा यदि चश्मे के लेन्स को वृत्त मार्ग मे घुमाएँ, थोडे अभ्यास के उपरान्त बिना झटका दिये आसानी से ऐसा किया जा सकता है (करीब तीन या चार घेरा प्रति सेकण्ड)। दृष्टि निर्बन्धता के प्रभाव के फलस्वरूप (§८०) चमक और रग की वे सारी तब्दीलियाँ घेरे की परिधि पर चारो ओर वितरित देखी जा सकती है जो सितारे के अवलोकन मे क्रमात् प्रगट होती है—तेज झिलमिलाहट की दशा मे यह एक शानदार नजारा होता है। कभी-कभी रोशनी की इस पट्टी मे दीप्तिहीन धब्बे भी मिलते है जिससे यह प्रगट होता है कि ऐसे भी क्षण मोजूद होते है जब कि सितारे से हमे रोशनी करीब-करीब नही के बराबर मिलती है। इस बात का अन्दाज लगाकर कि परिधि पर कितने विभिन्न रग दिखाई देते है, गणना की जा सकती है कि प्रति-सेकण्ड रग की तब्दीली कितनी बार हो रही है। प्रेक्षण की यह विधि इस सिद्धान्त पर आधारित है कि चश्मे का कॉच केवल लेन्स सरीखा ही नही काम करता, बल्कि एक पतले प्रिज्म सरीखा भी, बशर्त्ते लेन्स के केन्द्रीय भाग मे से हम न देखे।

1 C G Little Monthly Not R Astron Soc III 289, 1951

इस झिलमिलाहट की घटना के विश्लेषण के लिए अन्य तरीके भी लभ्य है[1] — (क) स्वस्थ दृष्टि वाला व्यक्ति उपर्युक्त रीति से हलकी अवतल सतह वाला कोई भी लेन्स इस्तेमाल कर सकता है, किन्तु उसे अपनी आँख का सविधान इस तरह साधना पडेगा मानो सितारा अपेक्षाकृत अधिक निकट है। (ख) नाट्य-दूरबीन द्वारा देखे और उसे धीरे-धीरे ठकठकाते रहे। (ग) जेबी दर्पण मे सितारे का प्रतिबिम्ब देखे और साथ ही दर्पण को थोडे-थोडे कोण पर घुमाते जायें। (घ) केवल अपनी दृष्टि को सितारे पर एक ओर से दूसरी ओर हरकत करने दे (कार्य अभ्यास के उपरान्त ही ऐसा किया जा सकता है, (देखिए §८२)।

प्रेक्षण की एक सरल विधि लभ्य है जिससे वायु की धारियो की लम्बाई-चौडाई का सीधे ही अन्दाज लगा सकते है।[2] तेज प्रकाश से झिलमिलाते हुए सितारे को इस तरह देखिए कि आपकी आँखो की दृष्टिरेखाएँ सामने की ओर थोडी मिलती हुई हो—अर्थात् सामने पाच या छ फुट की दूरी पर स्थित किसी वस्तु पर जो करीब-करीब सितारे की सीध मे हो, अपनी आँखो को फोकस करिए। अब आप सितारे के एक नही, दो प्रतिबिम्ब देखेगे और ये दोनो प्रतिबिम्ब एक साथ नही, बल्कि बारी-बारी से झिलमिलाते है क्योकि दोनो आँखो के दर्मियान का फासला इतना अधिक है कि वायु की धारी जब तक एक आँख के सामने से गुजरती है तब तक वह दूसरी आँख के सामने अपना प्रभाव नही डाल पाती। अत अधिकाश धारियाँ आँखो के बीच के अन्तर ३ इच से कम ही चौडी होती है।

अत्यन्त सुन्दर झिलमिलाहट **कृत्तिका**[3] तारा समूह की होती है जिसमे तारे एक दूसरे के इतने निकट होते है कि समष्टिरूप से उनकी टिमटिमाहट के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रेक्षण करके हम सामने से गुजरने वाली पृथक्-पृथक् वायुधारियो की पहचान कर सकते है।

४१. सितारे की झिलमिलाहट कैसे नापी जा सकती है ?

१ किसी घटना को नापने का तरीका यदि न मालूम हो, तो विषय-प्रवेश के लिए हमेशा ही हम किसी अविहित गुणात्मक पैमाने को मान कर नाप का प्रारम्भ कर सकते है। जैसे झिलमिलाहट-रहित सितारे के लिए मै अङ्क ० लेता हूँ और क्षितिज के निकट की सबसे अधिक झिलमिलाहट को, जो मैने अभी तक देखी है, १० से व्यक्त करता हूँ,

1 Phil Mag 13, 301 1857

2 R. W. Wood, Physical Optics (1905)   3 Pleiades

और इनके दर्मियान की चमक की पहचान मै बीच की अन्य सख्याओ द्वारा करता हूँ। ध्यान देने की बात है कि इस तरह के प्रारम्भिक पैमाने प्राकृतिक विज्ञान के राभी विभागो के अध्ययन के लिए कितने उपयोगी साबित हुए है। आशा के प्रतिकूल अत्यन्त शीघ्र ही हम पैमाने की प्रत्येक सख्या के तात्पर्य से अभ्यस्त हो जाते है और बहुत जल्दी ही वह समय आ जाता है जब कि इस गुणात्मक पैमाने को मात्रात्मक पैमाने मे तब्दील करना हम जान लेते है।

२ वायु के उद्वेलन के लिए एक और सरल मापदण्ड है क्षितिज के ऊपर की वह ऊँचाई जहाँ रग विलुप्त हो जाते है या फिर वह ऊँचाई जहा झिलमिलाहट करीब-करीब अदृष्टिगोचर सी हो जाती है।

३ चश्मे के लेन्स के घुमाने से प्राप्त की गयी रोशनी की तब्दीली की प्रति सेकण्ड सख्या भी झिलमिलाहट की किस्म की नाप के लिए मोटे तौर पर मापदण्ड का काम करती है।

४२. सितारो की झिलमिलाहट सबसे अधिक प्रबल कब होती है[1] ?

प्रवल झिलमिलाहट वास्तव मे यही सिद्ध करती है कि वायुमण्डल सर्वत्र समागी नही है और विभिन्न घनत्ववाले वायुस्तर आपस मे मिले-जुले है। चूँकि असमागी वायुमण्डल के साथ-साथ आमतौर पर विशेष प्रकार की ऋतु-दशाएँ भी विद्यमान रहती है, अत प्रकाश्य रूप से ऐसा प्रतीत होता है कि झिलमिलाहट एक खास किस्म के मौसम के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है।

सामान्यत बैरोमीटर के निम्न दाब, निम्न कोटि के ताप, प्रवल आर्द्रता तथा समदाब रेखा की तीव्र वक्रता और ऊँचाई के साथ दाब के अत्यधिक परिवर्त्तन के साथ झिलमिलाहट बढती है। हवा के सामान्य बहाव के समय, झिलमिलाहट, उस वक्त की अपेक्षा अधिक प्रबल होती है जब कि हवा का बहाव या तो कम हो या बहुत अधिक तेज। स्पष्ट है कि वायुमण्डल की स्थिर दशा या उसकी गति अनेक पेचीदी बातो पर निर्भर है, अत वर्त्तमान समय तक सितारो की झिलमलाहट के अवलोकन का उपयोग ऋतुसम्बन्धी पूर्वानुमान प्राप्त करने के निमित्त नही किया जा सका है।

यह दिलचस्प बात है कि बादलो के निकट झिलमिलाहट अधिक प्रबल हो जाती है जो यह सिद्ध करती है कि विभिन्न तापवाले वायुस्तर वहाँ मौजूद है।

1 Dufour, Phil Mag 19, 216, 1860 Biquourdan, C R, 160, 579 ff 1915

यह भी कहा जाता है कि सन्ध्या के झुटपुटे मे झिलमिलाहट बढ जाती है—इसका कारण या तो आँखो का शरीरजन्य, प्रकाशसम्बन्धी विभ्रम है या कि उस घडी के वायु-मण्डल की विशेष अवस्था का यह परिणाम है। यहाँ तक कहा जाता है कि उत्तरीय प्रकाश झिलमिलाहट को प्रोत्साहन देता है, किन्तु इस बात का ख्याल करते हुए कि वायुमण्डल मे उत्तरीय प्रकाश प्राय बहुत ऊँचाई (६० मील) पर उत्पन्न होते है, इस कथन का समझ मे आना मुश्किल ही जान पडता है।

उत्तर के आकाश मे झिलमिलाहट सबसे अधिक प्रबल होती है—इसका समाधान कुछ अन्य पेचीदा सिद्धान्तो के आधार पर किया जा सकता है।

यह प्रश्न एक पहेली ही बना रह जाता है कि रक्तिम वर्ण के तारे क्यो श्वेत तारो की अपेक्षा कम झिलमिलाते हुए प्रतीत होते है।

४३. ग्रहो की झिलमिलाहट

नक्षत्रो की अपेक्षा ग्रहो की झिलमिलाहट बहुत कम होती है। यह कुछ अजीब-सा लगता है क्योकि अन्य बातो मे नगी आँखो को वे बिलकुल नक्षत्रो के मानिन्द दीखते है। इस अन्तर का कारण यह है कि अत्यधिक दूरी के कारण सबसे बडी दूरबीन मे भी नक्षत्र एक बिन्दु सरीखे ही (अधिक से अधिक कोणीय आकार ० ०५ सेकण्ड) दीखते है जब कि ग्रहो के लिए व्यास स्पष्ट दिखलाई पडता है—करीब १० सेकण्ड से लेकर ६८ सेकण्ड तक (शुक्र के लिए) तथा ३१ सेकण्ड से लेकर ५१ सेकण्ड तक (वृहस्पति के लिए)। अत ग्रहो की दशा मे वायुमण्डल मे ऊँचाई पर स्थित एक नन्हे से चपटे क्षेत्र AB मे से होकर शकु के आकार मे किरणे गुजरेगी और इनमे से कुछ किरणे हमारी आँख मे प्रवेश करेगी। वायु की धारी, जैसा कि हमे पता है, प्रकाश-किरण मे बस कुछेक सेकण्ड के कोण का ही विचलन पैदा करती है, अत इस कारण आँख मे प्रवेश करनेवाली किरण के अलग हट जाने पर शकु की अन्य किरणे आँख मे प्रवेश करने लग जाती है और बिम्ब की चमक मे कोई फर्क नही आने पाता। चमक मे अन्तर केवल तब हम देख पायेगे जब किरणो का समूह जो पहले आँखो के ठीक सामने मिलता था, अब आँख मे ही प्रवेश करने लगे। किन्तु चमक की यह तब्दीली हलकी ही होगी क्योकि वायु की बहुत-सी धारियो मे से कुछ तो किरणो को आँख की ओर विचलित करती है तो कुछ उन्हे आँख से दूर विचलित कर देती है। उदाहरणस्वरूप वृहस्पति के लिए क्षितिज से ३०° की कोणीय स्थिति पर २२०० गज की ऊँचाई पर आँख से उस ग्रह तक जानेवाली शकु के आकार की किरणशलाका के आधार का व्यास २७ से लेकर ४० इच तक होगा।

अब सहज ही यह बात समझ मे आती है कि ग्रह की झिलमिलाहट उस वक्त दीखने लग जायगी जब उसकी प्रकाश-किरणो की मार्ग-दिशा का विचलन-मान, ग्रह के आभासी व्यास की कोटि का हो जाय।

यही कारण है कि शुक्र और बुध जो अक्सर काफी सॅकरी, नाखूनी शक्ल के दीखते है, कभी-कभी बोधगम्य तरीके पर झिलमिलाते है और इसी कारण क्षितिज के अत्यन्त निकट स्थित होने पर शुक्र मे रग की तब्दीलियाँ भी नजर आती है। जब वायुमडल मे उद्वेलन बहुत ही अधिक प्रबल होते है तथा ग्रह आकाश मे नीचे ही स्थित होते है तो लगभग अनिवार्य रूप से चमक मे थोडा बहुत अन्तर अवश्य दिखलाई पडता है।

इस प्रकार झिलमिलाहट हमे एक ऐसा साधन प्रदान करती है जिसकी सहायता से हम नन्हे प्रकाश-स्रोतो के आकार का अन्दाज लगा सकते है जिन्हे कोरी आँखो से देखने पर उनकी चकरीनुमा शक्ल का भान भी नही हो पाता है। कहा तो यहाँ तक गया है कि इस तरीके से हम अचल सितारो के भी व्यास का तखमीना लगा सकते है, किन्तु सप्रति तो ऐसी आशा करना अतिशयोक्ति ही जान पडती है।

४४. छाया की पेटियाँ[1]

अत सितारो की झिलमिलाहट, वायु के इस महासागर के घनत्व की अनियमित तब्दीलियो के कारण उत्पन्न होती है,जिसके पेंदे पर हम धरती के निवासी चलते-फिरते और जीवनयापन करते है। वस्तुत यह उसी तरह की घटना है जैसी कि हलकी लहरो वाले पानी द्वारा सूर्यकिरणो का किसी ठौर घनीकरण और किसी स्थान पर विरलीकरण का होना (§२३)। मछलियो को सूर्य उसी तरह टिमटिमाता हुआ दीखता है जिस तरह हम लोगो को सितारे (चित्र ३०), अन्तर केवल इतना ही होता है कि पानी की परत की **मोटाई** की तब्दीली के बजाय इस दशा मे वायुस्तरो के **घनत्व** की तब्दीली होती है। वायु-घनत्व की तब्दीली का असर अपेक्षाकृत इतना कम होता है कि इस दशा मे केवल अत्यन्त नुकीले बिन्दु सरीखे प्रकाश-स्रोत को ही हम झिलमिलाते हुए देख पाते है।

जिस प्रकार स्वच्छ जल मे प्रकाश के एकत्रीकरण का प्रदर्शन किया गया है ठीक उसी प्रकार वायु की घनत्वधारियो को भी सीधे ही दृष्टिगोचर कराया जा सकता है।

रात के समय, एक बहुत ही अँधेरे कमरे के अन्दर, जिसमे केवल एक छोटी-सी खिडकी खुली हो ताकि शुक्र का प्रकाश भीतर आ सके, सपाट दीवार या सफेद दफ्ती

1 Cl Rozet C R 142, 913, 1906, 146, 325, 1906

के ˜ ˆ - ˜ ˆ पर बादल सरीखा एक धुँधलापन गुजरता हुआ देखा जा सकता है। ये 'छाया पेटिकाएँ' है। शुक्र ग्रह जब क्षितिज के सन्निकट स्थित होता है केवल तभी ये स्पष्ट देखी जा सकती है। झिलमिलाते समय हर बार जब इसकी चमक थोडी-सी बढती है तो पर्दे पर एक चटकीली पेटिका गुजरती हुई दिखलाई देती है। इसके प्रतिकूल हर बार जब चमक मे कमी होती है तो अन्धकार की पेटी दीखती है (देखिए चित्र ५९)। पहले का प्रेक्षण चेतना सम्बन्धी ज्ञान की जो अनुभूति कराता है, इस बार का प्रेक्षण उसे ही वस्तुत ज्ञान के रूप मे प्रदर्शित करता है। वायु की इन धारियो की गति की कोई निश्चित दिशा नही होती, हवा के जिन स्तरो मे इनका निर्माण होता है वहाँ की वायु के तत्कालीन बहाव की दिशा के अनुसार ये भी हरकत करती है।

इसी प्रकार वृहस्पति, मङ्गल, लुब्धक, आर्द्रा, प्रमाश, ब्रह्महृदय, अभिजित्, और स्वाती भी इस ढग के प्रेक्षण के लिए उपयुक्त ठहरते है, यद्यपि इनकी रोशनी के अपेक्षाकृत हलकी होने के कारण प्रेक्षण करने मे कठिनाई हो सकती है। वायुधारियाँ अधिक अच्छी तरह उस समय देखी जा सकती है जब बहुत दूर, करीब १५ मील के फासले की सर्चलाइट से रोशनी आपके निकट किसी दीवार पर गिरती हो।[1]

सूर्य के पूर्ण ग्रहण के अवसर पर ठीक सर्वग्रास के पहले या तुरन्त ही बाद सफेद दीवार या पर्दे पर अत्यन्त मार्के की 'छाया पेटियाँ' देखी जा सकती है। ये किसी विशाल पर्दे की सिलवटो का भान कराती है। ये भी वायुधारियाँ ही है जो सूर्य के पूर्णतया ओझल होने के ठीक पहले उसके नाखूनी हाशिय की लकीर के मानिन्द प्रकाश-स्रोत की रोशनी मे दृष्टिगोचर होती है। इस कारण बिन्दु सरीखे प्रकाश-स्रोत के मुकावले मे यह घटना अधिक पेचीदा होती है, क्योंकि, इस दशा मे प्रत्येक बिन्दु खिचकर एक चाप की शक्ल धारण कर लेता है (§१, §३), और बादल सरीखी धुँधली धारियाँ ऐसी लकीरो की बनी जान पडती है जो सभी सूर्य के नाखूनी हाशिये (सबसे अधिक प्रकाशित भाग) के समानान्तर होती है। हवा के बहाव से पेटिकाओ मे भी हरकत होती है किन्तु हमे पेटिका की आडी दिशा की हरकत ही दिखलाई पडती है। कभी-कभी यह घटना केवल कुछ सेकण्डो तक ही रहती है, अक्सर एक मिनट तक या इससे कुछ अधिक देर तक। पेटियो के बीच की दूरी से वायु-धारियो की औसत मोटाई का अन्दाज लग सकता है—अधिकतर यह मोटाई ४ से १६ इच तक मिलती है।

किन्तु यह आवश्यक नही कि छायापेटिका को देख सकने के लिए सूर्य के पूर्णग्रहण की प्रतीक्षा की जाय जो बहुत कम और लम्बे कालान्तर पर ही लगते है। ऊपर बतायी

1 Nat 37, 224, 1888

गयी विधि से हम सूर्योदय (या सूर्यास्त) के समय उन थोडे से लमहो मे प्रेक्षण कर सकते है जब कि क्षितिज से ऊपर सूर्य का एक सँकरा-सा ही वृत्तखण्ड निकला रहता है। और तब पेटिकाएँ क्षैतिज दिशा मे स्थित होती है और ये हवा के बहाव की दिशा के अनुसार ऊपर, नीचे हरकत करती है। हवा के वेग के अनुसार इनकी हरकत का वेग प्रति सेकण्ड १ से ८ गज तक होता है और इनके बीच का अन्तर १ से ४ इच तक होता है। साधारणत ये तीन, चार सेकण्ड से अधिक देर तक दिखलाई नही देती, क्योकि शीघ्र ही सूर्यचकरी का दृष्टिगोचर होनेवाला वृत्तखण्ड बहुत अधिक चौडा हो जाता है।

अध्याय ५

प्रकाशतीव्रता तथा द्युति की नाप

४५. तारे ज्ञात दीप्ति वाले प्रकाशस्रोत के रूप मे

तारे एक ऐसा स्वाभाविक श्रेणीक्रम बनाते है जिसमे हर मान की दीप्तिवाले प्रकाशस्रोत पाये जाते है। फोटोमीटर की सहायता से इनकी दीप्ति अत्यधिक यथार्थता के साथ नापी गयी है, और दीप्तिमात्रा के अनुसार एक मापक्रम पर इनका वर्गीकरण किया गया है। दीप्तिमात्रा का मापक्रम तारे के वास्तविक आकार से कोई सम्बन्ध नही रखता, केवल इनकी द्युति या दीप्तितीव्रता यह प्रदर्शित करता है।

m=दीप्तिमात्रा श्रेणी-सूचक सख्या	1=प्रकाशतीव्रता (स्वतत्र रूप से माने गये पैमाने पर)	m	1
—1	251	0	100
0	100	0 1	91
1	39 8	0 2	83
2	15 8	0 3	76
3	6 31	0 4	69
4	2 51	0 5	63
5	1 00	0 6	58
6	0 40	0 7	53
7	0 16	0 8	48
		0 9	44

किसी भी श्रेणी-सूचक सख्या का पूर्वगामी श्रेणी-सख्या वाले तारे से 2 51 गुना मन्द प्रकाश देता है। इन सबमे हम पाते है कि $1=10^{-0\ 4m}$ केवल स्थिराक इस सूत्र मे नही दिया गया है। चित्र ६१ मे सप्तर्षि मण्डल के पडोस के उन तारो की दीप्तिमात्रा श्रेणीसूचक सख्याएँ दी गयी है जो पूरे वर्ष भर दिखलाई देते रहते है। चित्र ६२ मे जाडे मे दीखने वाले मृगशिरा तारा-समूह के लिए श्रेणीसूचक सख्याएँ दी

चित्र ६१

गयी है। पृष्ठ ९४ पर कुछ चमकीले और सुपरिचित तारो की श्रेणीसूचक सख्याएँ अङ्कित है*—

*—गगन-मण्डल के तारे पहचान और नामकरण के लिए समूहो मे बाँट दिये गये हैं। जैसे सप्तर्षिमण्डल, मृगशिरा, गरुड आदि। पाश्चात्य ज्योतिष-पद्धति के अनुसार प्रत्येक तारासमूह के सदस्य तारे को इस तारासमूह के नाम के साथ यूनानी अक्षर α, β, γ, δ आदि जोडकर इगित करते है। पृ० ९४ की सारणी मे विभिन्न तारासमूहो के सदस्य तारे के प्रचलित भारतीय नाम के सामने उनके नाम ज्योतिष-पद्धति के अनुसार भी दिये गये है।

कुछ यूनानी अक्षरों के उच्चारण इस प्रकार है—

α ऐल्फा	ϵ एप्साइलान	ξ जाई
β बीटा	η ईटा	π पाइ
γ गामा	θ थीटा	ϕ फाइ
δ डेल्टा	μ म्यू	ω ओमेगा

2,0
5,0
3,2
4,4
3,2
3,1
4,3
5,0
5,0
5,2
5,5
2,2
4,6
4,9
4,6
3,4
2,0
4,4
1,00
4,0
3,2
4,9
5,2
5,0
2,0
5,4
3,6
4,7
3,8
5,0
0,6
4,1
5,3
2,4
4,2
3,5
5,2
2,2
5,2
3,9
2,9
5,5
3,1
4,6
1,3
3,9
4,7
4,5
4,1
2,1
3,7
1,9
2,6

चित्र ६२

लुब्धक	=α श्वान —1 3		श्रवण	=α गरुड	1 1
अभिजित्	=α वीणा	0 3	रोहिणी	=α वृष	1 1
ब्रह्म हृदय	=α रथी	0 3	पुनर्वसु	=β मिथुन	1 3
स्वाती	=α भूतेश	0 2	मघा	=α सिंह	1 6
प्रमाश	=α श्वानिका	0 6	कस्तूरी	=α मिथुन	1 7

अन्य तारो के लिए नक्षत्रो के मानचित्र का निरीक्षण करना चाहिए। अधिकाश लोग रात के स्वच्छ आकाश मे और नगरो की रोशनी से बाहर कम-से-कम छठी श्रेणी तक के तारे का प्रेक्षण कर सकते है।

४६ वायुमण्डल के कारण प्रकाश का ओझल होना

साधारणत, क्षितिज के निकट बहुत कम तारे दिखाई देते है क्योकि हवा मे से गुजरने के दौरान मे किरणे वायु मे अवशोपित हो जाती है। लगभग क्षैतिज दिशा मे चलनेवाली ये किरणे तिरछी गिरने वाली किरणो की अपेक्षा अधिक लम्बा रास्ता तय करती है अत अवशोपण के कारण इनकी चमक मे अधिक ह्रास होता है।

अब यदि सम्भव हुआ तो चमक का ह्रास, तारो के मानचित्र और उनकी द्युति श्रेणीसूचक सख्या की सहायता से हम मालूम करेगे, यद्यपि तथ्य तो यह है कि इसके लिए § ४५ की स्वय हमारी मारणी ही, जब मृगशिरा आकाश मे नीचे स्थित हो और सप्तर्षि मण्डल ऊँचाई पर हों, पर्याप्त होगी।

h	$\triangle$	Z	Sec Z
90°	0	0°	1
45°	0 09	45°	1 41
30°	0 23	60°	2.00
20°	0 45	70°	2 92
10°	0 98	80°	5 73
5°	1 67	85°	11 4
2°	3 10	88°	—

इस सारणी मे दी गयी द्युति-श्रेणीसूचक सख्याएँ उस वक्त के लिए है जब कि तारे आकाश मे ऊँचाई पर स्थित होते है। क्षितिज के निकट ही किसी सितारे को लेते है और ऊर्ध्व बिन्दु के आसपास के किसी तारे के साथ उसकी दीप्ति की तुलना

करते है (४५° से अधिक ऊँचाई के तारो की दीप्ति मे ह्रास लगभग नगण्य ही होता है)। यथासम्भव ऐसा तारा ढूँढते है जिसकी चमक A की चमक के ठीक बराबर हो या फिर ऐसे दो तारे प्राप्त करते है जिनके दर्मियान A की चमक पडती हो। अब A की आभासी द्युतिसूचक सख्या तथा सारणी मे दी गयी इसकी वास्तविक द्युतिसूचक सख्या का अन्तर मालूम करते है तथा इसे △ द्वारा व्यक्त करते है, साथ ही तारा A की ऊँचाई भी नाप ली जाती है (§२३५)।

विभिन्न तारो के निमित्त उनकी क्षितिज से नापी गयी विभिन्न ऊँचाइयो h के लिए (१०° की ऊँचाई प्रारम्भिक तखमीने के लिए काफी होगी) यह क्रिया पूरी करने पर जो हमे सारणी मिलेगी वह बहुत कुछ ऊपर दी गयी सारणी के समान होगी।

सारणी के द्वितीय स्तम्भ मे दी गयी सख्याएँ वायुमण्डल द्वारा उत्पन्न द्युतिह्रास प्रगट करती है। ये सख्याएँ ससार के इस भाग के लिए द्युतिह्रास का औसत मान पूर्णतया खुले आकाश के लिए बतलाती है, ये मान विभिन्न स्थानो के लिए बदलते रहते है और विभिन्न रातो के लिए तो ये और भी अधिक बदल जाते है।

सारणी मे ऊर्ध्व बिन्दु से नापी गयी कोणीय दूरी, Z=90°-h तथा Sec Z भी दिये गये है। Sec Z वायुमण्डल मे से होकर जानेवाले किरणपथ की लम्बाई का समानुपाती होता है (चित्र ६३)।

चित्र ६३—**प्रकाश की किरण जितनी अधिक तिरछी होगी, वायुमडल मे से उसका पथ उतना ही अधिक लबा होगा।**

अब ग्राफ कागज पर △ के मान को Sec Z के मान के साथ प्लाट करिए। आपको बहुत से बिन्दु मिलेगे जो एक सीधी रेखा के आस-पास पडते है, जो यथासम्भव उन सब बिन्दुओ के निकट से गुजरती हुई खीची गयी है (चित्र ६४)। अत इस ग्राफरेखा से हम पता लगा सकते है कि वायुमण्डल मे गुजरने वाले प्रकाश-पथ की लम्बाई बढने पर तारे की द्युति मे कितने द्युतिसूचक अक का ह्रास होता है।

इस रेखाचित्र की असाधारण रूप से रोचक एक विशिष्टता यह है कि रेखा को बढाकर हम मालूम कर सकते है कि यदि धरती को घेरनेवाले वायुमण्डल से ऊपर, अर्थात् स्ट्रैटोस्फियर से भी ऊपर, हम उठ सकते तो तारा कितनी अधिक द्युति से चमकता हुआ प्रतीत होता। इस दशा मे ऊर्ध्व बिन्दु के निकट स्थित तारे की चमक मे २ अक

द्युति की वृद्धि होगी जिसका अर्थ है कि दीप्ति ८३ से बढकर १०० हो जायगी (देखिए §१७२)।
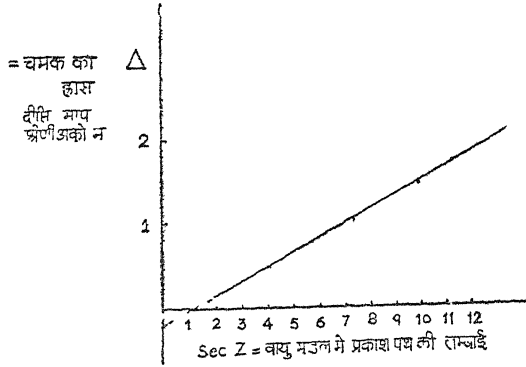
चित्र ६४—ऊर्ध्व बिन्दु से विभिन्न दूरियो पर तारे की चमक का ह्रास, दीप्तिमाप श्रेणी अको में।

४७ तारे की तुलना एक मोमबत्ती से

नगर से बाहर रात के समय एक खुले मैदान को हम चुनते है और वहाँ एक मोमबत्ती की प्रकाशतीव्रता की तुलना एक चमकीले तारे से करते है, जैसे ब्रह्महृदय (αरथी)। कितने आश्चर्य्य की बात है कि मोमबत्ती से इतनी अधिक दूरी पर हमे खडा होना पडता है ताकि उसकी चमक घटकर उस तारे की चमक के बराबर हो जाय। यह दूरी करीब १००० गज या ९०० मीटर मिलती है। अत ब्रह्महृदय की प्रकाशतीव्रता का मान $\frac{1}{900^2} = \frac{1}{810000}$ 'लक्स' या 'मीटरकैन्डल' प्राप्त होता है।

इस काम के लिए पाकेट लैम्प भी इस्तेमाल किया जा सकता है, लेकिन इस दशा मे दूरी और भी अधिक बढानी होगी। लैम्प को मकान की छत पर लगाइए या फिर किसी ऊँची मीनार की खिडकी के बाहर उसे रखिए।

रँग के फर्क पर भी गौर कीजिए।

४८. सडक के दो लैम्पो की परस्पर तुलना

सन्ध्या के टहलने मे हम अक्सर देखते है कि जब कभी हम सडक के दो लैम्पो के दर्मियान होते है तो हमे दो छायाएँ मिलती है। किसी एक लैम्प के जितने निकट हम

आते है, उन दोनो मे से एक छाया उतनी ही अधिक गाढी हो जाती है। जिन समय दोनो छायाएँ समान रूप से गाढी होती है उस वक्त वहाँ पर दोनो लैम्पो का प्रकाश समान रूप से तीव्र होता है, अत उनकी दूरियो a तथा b से यह निष्कर्ष निकला कि उनकी दीप्ति की निष्पत्ति $\frac{A}{B}=\frac{a^2}{b^2}$।

तप्त मैन्टल वाले लैम्प और विजली के लैम्प द्वारा वनने वाली छाया के रग मे अद्भुत अन्तर दीखता है।

४९ चन्द्रमा की तुलना सड़क के लैम्प से

एक वार फिर इन प्रकाश-स्रोतो से बननेवाली दो छायाएँ प्राप्त करिए। चन्द्रमा के सामने की छाया कुछ-कुछ लालछवे रग की होगी तथा लैम्पवाली छाया गहरा नीला रग लिये हुए होगी (देखिए § ९६)। हम लैम्प से दूर हटने है तो चन्द्रमा से वचने वाली छाया तो उतनी ही गाढी रहती है किन्तु लैम्पवाली छाया हलकी होती जाती है। मान लीजिए कि लैम्प से २० मीटर की दूरी पर दोनो छायाएँ समान रूप से गाढी दीखती है। सडक का विजली का लैम्प जो बहुत तेज रोशनी का न होकर साधारण किस्म का होता है, मेरे अन्दाज से ५० कैन्डल शक्ति का होना चाहिए, अत २० मीटर की दूरी पर प्रदीप्ति-तीव्रता होगी $\frac{50}{20^2}=0\ 13$ लक्स।

अत पूर्णिमा के चाँद के प्रकाश की प्रदीप्तितीव्रता भी इतनी ही होगी, प्रयोग पूर्णिमा की रात मे किया गया था।

प्रयोग शुक्लपक्ष या कृष्णपक्ष की अष्टमी को दुहराइए। इस वार प्रकाश की प्रदीप्ति पहले के आधे से बहुत कम होगी क्योकि चन्द्रमा की सतह का वहुत-सा भाग चन्द्रमा के पहाडो की तिरछी छाया के कारण ढक जाता है (देखिए § १६८)

प्रदीप्तितीव्रता के सही मान इस प्रकार है—पूर्णिमा के चाँद के लिए ० २० लक्स और शुक्लपक्ष या कृष्णपक्ष की अष्टमी के लिए ० ०२ लक्स।

५०. चन्द्र-विम्व-द्युति

हर्शल जव दक्षिण अफ्रीका की यात्रा पर रवाना हुआ था और केपटाउन पर उसका जहाज पहुँचा तो उस वक्त करीव-करीव पूर्णचन्द्र को उसने टेवुल पर्वत के ऊपर उगते हुए देखा, अस्त होते हुए सूर्य से उस समय पर्वत पर रोशनी पड रही थी। उसे ऐसा लगा कि चन्द्रमा पर्वत की चट्टानो के मुकाबले मे कम चमकीला था, और इससे उसने यह निष्कर्ष निकाला कि चन्द्रमा की सतह मटमैले रग की चट्टानो की वनी होगी।

स्वय अपने आसपास के वातावरण मे भी इस तरह का प्रेक्षण हम प्राप्त कर सकते है, इसके लिए सन्ध्या को लगभग ६ बजे उगनेवाले पूर्णचन्द्र की तुलना किसी सफेद दीवार से करनी होगी जिसपर अस्त होते हुए सूर्य का प्रकाश पड रहा हो। सूर्य और चन्द्रमा के बीच की दूरी तथा सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी मोटे तौर पर एक-सी ही है। यदि चन्द्रमा और दीवार एक ही तरह के पदार्थ से बनी हो तो हमारी आँख से उनकी दूरियो मे चाहे कितना भी अधिक अन्तर क्यो न हो, उनकी चमक समान होगी (चिरप्रतिष्ठित दीप्तिमापन सिद्धान्त के अनुप्रयोग का एक बढिया उदाहरण)। प्रेक्षण से प्राप्त प्रदीप्ति-अन्तर अवश्य इस कारण होगा कि चन्द्रमा का धरातल गहरे रग की चट्टानो (ज्वालामुखी की राख ?) से बना है।

पूर्णतया सही प्रेक्षण प्राप्त करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा दोनो को क्षितिज से समान ऊँचाई पर होना चाहिए ताकि वायुमण्डल के कारण उनकी प्रकाशतीव्रता मे ह्रास दोनो के लिए समान हो।

५१. मैदानी दृश्यो की प्रदीप्ति के लिए कुछ अनुपात

सूर्य की द्युति=३००,००० ×नीले आकाश की द्युति। सफेद बादल की द्युति=१० × नीले आकाश की द्युति। सामान्य धूप वाले दिन जब आकाश नीले रग का होता है, प्रकाश का ८० प्रतिशत तो सीधे सूर्य से आता है और २० प्रतिशत आकाश से।

सूर्यास्त के उपरान्त स्वच्छ आकाश मे एक क्षैतिज सतह पर प्रदीप्ति*

सूर्य की ऊचाई	0°	−1°	−2°	−3°	−4°	−5°	−6°	−8°	−11°	−17°
प्रदीप्ति	400	250	115	40	14	4	1	0 1	0 01	0 001 लक्स

आँखे हर तीव्रता की प्रदीप्ति के लिए अपने को इतनी अच्छी तरह और इतनी शीघ्रता से समानुयोजित कर लेती है कि पर्याप्त रूप से हम कभी भी अनुभव नही कर पाते कि हमारे आसपास की प्रदीप्ति-निष्पत्तियाँ कितनी अधिक है! आइए, ऊँचाई पर स्थित सूर्य से प्रकाशित मैदानी दृश्य की तुलना चन्द्रमा द्वारा प्रकाशित मैदान से करे।

[प्रदीप्ति तीव्रता की इकाई=10^{-6} लैम्बर्ट]

सूर्य का मडलक	4000,000	लाख	चन्द्रमा का मडलक	900,000
विशुद्ध श्वेत वस्तु	70	लाख	विशुद्ध श्वेत वस्तु	15
मटमैली काली वस्तु	1 4	लाख	मटमैली काली वस्तु	0 3

* Reesinck Physica **11**, 61, 1944 Siedentopf and Holl Reichsber Phys, **1**, 32, 1944

इससे पता चलता है कि एक ही मैदानी दृश्य मे अधिकतम प्रदीप्ति अनुपात ५० १ से ऊँचा नही है, फिर भी निरपेक्ष मान के लिहाज से प्रदीप्ति का यह अन्तर बहुत अधिक होता है। सूर्य के प्रकाश मे मटमैली काली वस्तु चॉदनी के प्रकाश मे रखे सफेद कागज की अपेक्षा १०००० गुनी अधिक चमकीली होती है। साये मे रखी चीजे कदाचित् धूप मे रखी चीजो की अपेक्षा १० गुनी कम चमकीली होती है। प्रवेश-द्वार के अन्दर या झाडियो के बीच की खुली जगहे आदि सबसे अधिक अँधेरी होती है जो कभी-कभी आस-पास के धूपवाले भूमिदृश्य के मुकाबले मे अद्भुत विपर्यास उपस्थित करती है—चमक १ लक्स से अधिक नही होती।

भूमिदृश्य मे प्रदीप्ति या चमक की निष्पत्ति का अनुमान हम विभिन्न वस्तुओ की परावर्त्तन-क्षमता की तुलना करके लगा सकते है ताजे हिम के लिए ८०-८५%, पुराने हिम के लिए ४०%तक, घास के लिए १०-३३%, सूखी भूमि के लिए १४%, गीली भूमि के लिए ८–९%, नदी, खाडी के लिए ७%,गहरे महासागर के लिए ३%और ताल-तलैया के लिए २%से अधिक नही। वायुयान से नीचे देखने पर बीच के वायु-स्तरो द्वारा होनेवाले परिक्षेपण के कारण एक हलके आवरण जैसा प्रभाव पडता है, अत इन अङ्को मे थोडा परिवर्त्तन करना पडता है। बादल ८०%तक परावर्त्तन करते है।

५२ परावर्तन-शक्ति

क्या पानी मे तारो को प्रतिविम्बित होते आपने कभी देखा है? नगरो मे ऐसा अवसर मुश्किल से मिलता है, और देहात मे केवल कभी-कभी—पानी के नाले या झील मे जब कि हवा मे हरकत न हो. अँधेरी रात मे ये प्रतिबिम्ब विशेष स्पष्ट दिखलाई देते है। ऊर्ध्वबिन्दु के निकट के प्रथम श्रेणी के तारे हलका प्रतिबिम्ब बनाते है जिनकी चमक लगभग पाँचवी श्रेणी के तारे के बराबर होती है। दीप्तिमात्रा की श्रेणी मे अक ४ का अन्तर करीब -करीब प्रकाश-तीव्रता के निष्पत्ति-मान ४० के बरावर होता है, अत लम्बवत् गिरनेवाली किरणो के प्रकाश के केवल २ ५ प्रतिशत भाग को ही पानी परावर्त्तित करता है। आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित तारो का प्रतिबिम्बन अपेक्षाकृत बढिया होता है।

परावर्त्तन-शक्ति और वर्त्तनाङ्क का पारस्परिक सम्बन्ध फ्रेनेल के सूत्र द्वारा प्राप्त होता है। लम्बवत् गिरनेवाली किरणो के लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{परावर्त्तन शक्ति} = \left(\frac{n-1}{n+1}\right)^2$$

निम्नलिखित तालिका मे विभिन्न आपतन कोणो[1] के लिए कॉच और पानी की परावर्त्तन-शक्ति के मान दिये गये है ।

आपतन कोण	परावर्त्तन-शक्ति	
	पानी की	कॉच की (n=1 52)
0°	0 020	0 043
10°	0 020	0 043
20°	0 021	0 043
30°	0 022	0 043
40°	0 024	0 049
50°	0 034	0 061
60°	0 060	0 091
70°	0 135	0 175
75°	0 220	0 257
80°	0 350	0 388
85°	0 580	0 615
90°	1 000	1 000

अब हम समझ सकते है कि क्यो नगरो मे हम कभी भी तारो को प्रतिबिम्बित होते हुए नही देख सकते, आकाश मे पर्य्याप्त अँधेरा नही रहता है, तृतीय द्युति श्रेणी के [illegible] ही दृष्टिगोचर हो पाते हैं, और फिर पानी की सतह पर बहुत अधिक रोशनी पडती रहती है। परावर्त्तन मे तो केवल ग्रह ही दृष्टिगोचर हो पाते है, सो भी केवल उसी वक्त जब कि वे प्रथम श्रेणी के तारो की अपेक्षा कही अधिक चमकीले होते है।

दिन मे प्रतिविम्बित नीले आकाश, मकान और वृक्ष आदि की प्रदीप्तियॉ २ प्रतिशत मे कही अधिक जान पडती है। कुछ चित्रो मे वस्तु और उसके प्रतिबिम्ब की प्रदीप्ति मे मुश्किल से ही अन्तर देखने को मिलता है। यह ऑखो की प्रकाश सम्बन्धी प्रवञ्चना का परिणाम है। इसकी व्याख्या अशत इस प्रकार है, अधिकतर पानी की सतह को हम ऐसी दिशा से देखते है जो क्षैतिज दिशा के अत्यन्त निकट होती है (चित्र १५६) और अशत यह कि मानसिक परिस्थितियो के कारण ऐसा होता है।

1 Angles of incidence

ठीक नीचे दीखने वाली पानी की सतह पर होनेवाले परावर्त्तन की तुलना पाकेट-दर्पण या साधारण कॉच के टुकडे के परावर्त्तन से कीजिए। भिन्न परावर्त्तन कोणो के लिए भी प्रदीप्तियो की तुलना करिए।

इस तरह का अन्धविश्वास प्रचलित है कि गहरे पानी मे तारे कभी भी नही प्रतिबिम्बित होते। निस्सन्देह इसके लिए कोई भी आधार नही है।

कॉच के पर्दे की प्रत्येक सतह से ० ०४३ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित होता है, अत दोनो सतहो से कुल ० ०८६ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित होगा। कॉच के बने छोटे कमरो मे जैसे टेलीफोनकक्ष आदि, जिसमे बीच मे लटकनेवाले बिजली के वल्ब से रोशनी की गयी हो, आमने-सामने की खिडकियो के कॉच मे प्रतिविम्बो की पुनरावृत्ति देखी जा सकती है, साधारण दूधिया कॉच के बल्ब के लिए प्रत्येक दीवार पर चार प्रतिबिम्ब तक दृष्टिगोचर हो सकते है। पहला प्रतिविम्ब एक परावर्त्तन से, दूसरा किरणो के तीन बार के परावर्त्तन से, तीसरा पॉच बार के परावर्त्तन से और चौथा सात बार के परावर्त्तन से बनता है। चौथे प्रतिविम्ब की दीप्ति आरम्भ के आपतित प्रकाश-दीप्ति से $(0\text{-}086)^7$ गुना कम होती है अर्थात् एक करोडवे भाग से भी कम। यह सीधी-सादी गणना इस बात का अत्युत्तम उदाहरण है कि हमारी ऑख द्वारा अनुभूत होनेवाली प्रकाश-दीप्ति का परास कितना विशाल है!

५३ तार की जाली मे से प्रकाश का गमन

मकानो की छत पर लगे विज्ञापन प्रदर्शित करने वाले प्रकाशस्रोत प्राय धातु के ढॉचे पर तार की जाली मे फिट किये गये होते है।
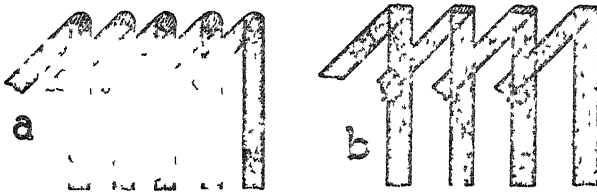
चित्र ६५—तार की जाली से रुकनेवाले प्रकाश का प्रेक्षण दो दिशाओ से—

(a) जब तार वृक्षाकार अनुच्छेद के है।

(b) जब जाली के तार चिपटी पत्ती के बने है।

दूर से देखने पर जाली के तार अलग-अलग नही जान पडते बल्कि जाली समान रूप से प्रकाशित भूरे रग के काँच की सतह सी दिखाई पडती है। यह दिलचस्प बात होगी यदि जाली को उत्तरोत्तर तिरछी दिशा से देखे, तब आकाश की पृष्ठभूमि पर इसकी प्रदीप्ति क्रमश कम होती जाती है। इससे सिद्ध होता है जाली के तार बेलनाकार शक्ल के है क्योकि यदि चिपटे फीते की शक्ल के ये होते तो हर दिशा से देखने पर जाली एक सी ही प्रदीप्ति की दीखती (चित्र ६५)।

५४ वनो की अपारदर्शिता का गुण

जगल की एक सँकरी पट्टी के आरपार वृक्षो के तनो के बीच से पीछे का प्रकाशित आकाश हम देख सकते है। यह ज्ञात करने के लिए कि प्रकाश का कितना भाग जगल मे से होकर बिना बाधा के गुजर सकता है, कोई न कोई सूत्र हम अवश्य प्राप्त कर सकते है। मान लीजिए कि वन मे वृक्षो का वितरण आकस्मिक ही है, अर्थात् प्रति वर्ग गज वृक्षो की सख्या N है, और आँख की ऊँचाई पर वृक्ष के तने का व्यास D है।
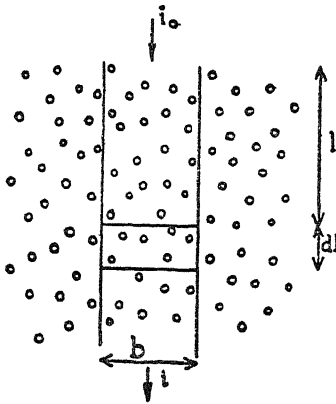
चित्र ६६—**वन के वृक्षो के तनों के बीच से दीख सकने वाले प्रकाश की गणना कैसे कर सकते हैं।**

प्रकाश-किरणो की एक शलाका पर विचार करिए जिसकी चौडाई b है। बन के भीतर यह दूरी l तय कर चुकी है (चित्र ६६)। मान लीजिए कि बन मे प्रवेश करने के पहले इसकी दीप्ति 1_0 थी और अब दीप्ति 1 है। इसके आगे किरणे जब क्षुद्र दूरी dl बन के अन्दर और तय करती है तो इसकी क्षुद्र प्रकाशमात्रा d1 का ह्रास हो जाता है, अत

$$\frac{d1}{1} = -\frac{NDbdl}{b} = -dlND$$

अनुकलन करने पर,

$$1 = 1_0 e^{-NDL} = 1_0\, 10^{-0\ 43NDL}$$

अत आपतित किरणो की दिशा मे वन जितनी अधिक दूर तक फैला हुआ होगा, उसमे से गुजरनेवाली प्रकाशमात्रा उतनी ही कम होती जायगी, ठीक उसी प्रकार

जैसे गहरे रग के द्रव मे से गुजरने वाला प्रकाश द्रव के स्तर की मोटाई बढने के साथ घटता जाता है। देवदार के बन के लिए मान लीजिए, प्रति वर्ग गज वृक्ष सख्या N=1 तथा तने का व्यास D=0 10 गज, तब मोटे तौर पर हमे निम्नलिखित प्राप्त होते है—

l=10 गज	$\frac{1}{1_0}$=0 37
l=25 गज	=0 10
l=50 गज	=0 01
l=70 गज	=0 001

अपारदर्शिता की वृद्धि की दर अद्भुत रूप से तीव्र है। क्षितिज के उस प्रकाश को देखकर जो अभी तक पेडो की आड मे नही आ सका है, हम वन की चौडाई का अन्दाज लगा सकते है ।

बीच (beech) वृक्ष के वन के लिए ND का क्या मान होगा ? और देवदार के नये पौदो, तथा पूर्ण विकास पाये हुए देवदार वृक्षो के लिए क्या मान होगा ?

५५ दो कठघरो के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन (प्लेट VII,a)

जब कभी एक कठघरे के खम्भो के दर्मियान दूसरे कठघरे के खम्भे दिखलाई पडते है तो हमे रोशनी और अन्धकार की चौडी पट्टियाँ दृष्टिगोचर होती है जो हमारे चलने के साथ-साथ ही चलती हुई जान पडती है। इसका कारण यह है कि एक कठघरे के खम्भो के बीच की प्रत्यक्ष दूरी दूसरे कठघरे के खम्भो की पारस्परिक दूरी से कुछ भिन्न होती है—या तो इसलिए कि एक कठघरे के खम्भो के बीच का अन्तर दूसरे के खम्भो की दर्मियानी दूरी से भिन्न है या इसलिए कि आँख से एक कठघरे की दूरी दूसरे की दूरी से भिन्न हो सकती है। कुछ दिशाओ से देखने पर एक कठघरे के खम्भे दूसरे के खम्भो की सीध मे पडते है और कुछ अन्य दिशाओ से देखने पर एक कठघरे की खुली जगहे दूसरे के खम्भो द्वारा पूरी-पूरी भर जाती है, अत औसत प्रदीप्ति मे अन्तर दीखता है । हम कह सकते है कि खम्भे कभी सामञ्जस्य की दशा मे आते है, और कभी असामञ्जस्य की दशा मे।

एक बार इस तरह के क्रमिक प्रकाशदर्शन का निरीक्षण कर लेने के उपरान्त यत्र-तत्र हर कही यह घटना हमे देखने को मिलती रहती है। प्रत्येक पुल जिसके दोनो ओर रेलिग की मुडेर लगी होती है, दूर से देखने पर प्रदीप्ति मे चढाव-उतार प्रदर्शित करता है। प्रकाश का यह क्रमिक चढाव-उतार उस वक्त भी मिलता है जब रेलिग के खम्भो

के दर्मियान उन्ही की छाया को हम देखते है । इस दशा मे खम्भो के बीच तथा छाया चिह्नो के बीच के अन्तर तो समान होते है, किन्तु आँख से खम्भे तथा छाया की दूरियाँ भिन्न होती है ।
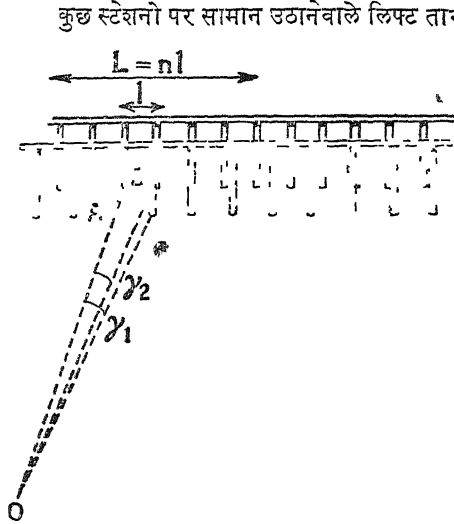
कुछ स्टेशनो पर सामान उठानेवाले लिफ्ट तार की जाली के घेरे के अन्दर स्थित होते है । हमारी ओर की जाली और सामने की दूसरी ओर जाली मिलकर एक तरह का म्वारे (moire) सा प्रस्तुत करती है, जैसा तार की एक जाली को दूसरी जाली पर रखने पर प्राप्त होता है या एक कघे को दूसरे कघे पर रखने पर, जबकि दोनो के दाँतो के बीच के अन्तर असमान हो ।

चित्र ६७–**दो रेलिगो के दर्मियान क्रमिक प्रकाश-दर्शन ।**

आइए, चित्र ६७ के सरल उदाहरण की विस्तृत व्याख्या करे जिसमे समान अन्तर पर लगे खम्भो की दो पक्तियाँ देखी जा रही है जो आँख से क्रमश $x_1=OA$ तथा $x_2=OB$ दूरी पर स्थित है । मानो दो क्रमागत खम्भो के बीच का फासला l है जो आँख पर क्रमश कोण $\gamma_1=\frac{l}{x_1}$ तथा $\gamma_2=\frac{l}{x_2}$ बनाता है । एक क्रमिक प्रकाशदर्शन मे n खम्भे पडेगे जबकि $n=\frac{\gamma_1}{\gamma_1-\gamma_2}=\frac{x_2}{x_2-x_1}$, अर्थात् हमारी दूरी बढने पर यह सख्या भी बढती है । इसके प्रतिकूल एक क्रमिक प्रकाश-दर्शन द्वारा कोणीय दूरी θ हमारी आख के लिए उतनी ही बनी रहती है क्योकि $\theta=n\gamma_2=\frac{l}{x_2-x_1}$ एक क्रमिक प्रकाशदर्शन की सही लम्बाई $L=nl=\frac{lx_2}{x_2-x_1}$ हम खम्भो की पक्ति के समानान्तर चलकर मालूम कर सकते है, क्रमिक प्रकाशदर्शन भी उसी रफ्तार से चलेगा जिस रफ्तार से हम चलते है । अब वह दूरी नापिए जिसे तय कर लेने पर आप प्रकाशदर्शन

को ठीक उसी स्थिति मे देखते है जिस स्थिति मे वह पहले था। यही दूरी उस क्रमिक प्रकाशदर्शन की लम्बाई होगी। उपर्युक्त विभिन्न सूत्रो की सत्यता की जॉच कीजिए। या फिर n, θ और L ज्ञात करके x_2, x_2-x_1, तथा l के मान सूत्र से प्राप्त कर सकते है। इस प्रकार विना किसी अन्य साधन के दूर से ही रेलिग के लिए इन सभी राशियो को हासिल कर लेना सम्भव हो जाता है।

यदि दोनो रेलिग के खम्भो के दर्मियानी फासले एक दूसरे से भिन्न हो तो हमारी आँख के हरकत करने पर क्रमिक प्रकाशदर्शन अद्‌भुत तरीके से चलते नजर आते है।

यदि प्रकाश स्रोत s (चित्र 68) के हम सामने है तो क्रमिक प्रकाशदर्शन उसी तरफ चलते है जिधर हम जा रहे है और यदि हम प्रकाश स्रोत के पीछे है, तो ये उल्टी
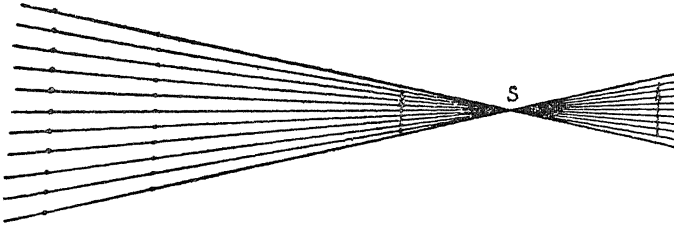
चित्र ६८—दो रेलिग व्यवस्थाओ के दर्मियान क्रमदर्शन, जिनके आवर्त भिन्न है।

ओर जाते हुए प्रतीत होते है। दूसरे शब्दो मे ये हमारी दिशा मे चलते है यदि $\gamma_1 < \gamma_2$ तथा उल्टी दिशा मे चलते है जब $\gamma_1 > \gamma_2$। फिर प्रकाशसूत्र के जितने निकट हम जायँगे उतनी ही तेजी से ये चलते हुए नजर आयेगे।

सीधे खडे खम्भो वाली वाड की छाया समतल भूमि पर पडती है तो इस दशा मे क्रमिक प्रकाशदर्शन कुछ भिन्न किस्म के नजर आते है। सिरे पर ये पेदे की अपेक्षा
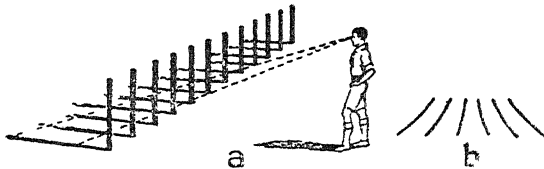
चित्र ६९—रेलिगो और उनकी छाया के दर्मियान क्रमिक प्रकाश दर्शन
(a) प्रेक्षण के समय की परिस्थिति (b) क्रमदर्शन तरंग का स्वरूप।

अधिक निकट होते है और थोडी-बहुत वक्रता भी इनमे देखी जा सकती है। किन्तु यह उपर्युक्त व्याख्या के अनुकूल ही है क्योकि परस्पर व्यतिकरण करनेवाले दोनो ढाँचो की दूरी मे सबसे अधिक अन्तर सिरो पर ही होता है। अत बगल के छडो के बीच की कोणीय दूरियाँ जो आँखो को दीखती है, एक दूसरे से बहुत अधिक भिन्न हो जाती है, फलस्वरूप क्रमिक प्रकाशदर्शन इस दशा मे एक दूसरे के बहुत निकट होगे। पेंदे पर ठीक इसका उलटा होता है।

५६. फोटोग्राफी द्वारा दीप्तिमापन[1]

फोटोग्राफी की हर दुकान पर बिक्री के लिए 'डे-लाइट पेपर' मौजूद रहते है जो धूप मे तेजी के साथ लालछँवे भूरे रग मे तब्दील हो जाते है। मोटे तौर पर कागज को एक खास रग धारण करने मे जो समय लगता है वह उस पर पडनेवाली प्रकाश-तीव्रता के उत्क्रम अनुपात मे होता है (बुन्सन और रोस्को का नियम)। अत यदि एक ही किस्म का 'डेलाइट पेपर' हमेशा इस्तेमाल करे और सामान्य लालछवे भूरे रग के कागज के एक टुकडे को तुलना के लिए 'रग का प्रामाणिक शेड' मान ले, तब कही पर भी, केवल यह मालूम करके कि सुग्राही कागज को रग के उस प्रामाणिक शेड को प्राप्त करने मे कितना समय लगता है, प्रकाश की तीव्रता आसानी से ज्ञात कर सकते है। प्रामाणिक कागज को रोशनी मे जहाँ तक सम्भव हो बहुत कम ही रखना चाहिए वरना इसका रग उड जायगा।

प्रामाणिक शेड का चुनाव अत्यधिक सावधानी के साथ करना चाहिए। 'डेलाइट पेपर' की एक पतली पट्टी लेकर एक सिरे से दूसरे सिरे तक उसे कई खण्डो मे धूप मे खोलते जाते है। क्रम से पहले खण्ड को १० सेकण्ड तक, दूसरे को २०, तीसरे को ४०, चौथे को ८०, पाँचवे को १६० , छठे को ३२० और सातवे को ६४० सेकण्ड तक खुला रखकर ढकते चले जाते है। मन्द प्रकाश मे कागज की जाँच करने पर हम देखते है कि प्रथम और अन्तिम खण्ड के रग मे उभार कम है किन्तु बीचवाले खण्ड के रग सबसे अधिक स्पष्ट उभरे है। अब किसी पुस्तक का कवर या पोस्टर का कागज इस तरह का चुनिए कि इसका रग पूर्णतया हमवार हो और 'डेलाइट पेपर' के बीचवाले किसी खण्ड के रग से बिलकुल ठीक-ठीक मेल खाता हो। तुलना करते समय रग के शेड यदि पूर्णतया मेल न खाते हो तो आपको उनकी चमक पर अधिक ध्यान देना होगा और इसके लिए आपको चाहिए कि अधमुँदी आँख से दोनो सतहो को देखे। स्मरण रखिए कि 'डेलाइट

1 J Wiesner, Der Lichtgenuss der Pflanzen (Leipzig, 1907)

पेपर' को मसाले मे न तो धोना है और न हाइपो मे डुबाकर उसे स्थायी ही बनाना है, वास्तव मे कागज की यह पट्टी एक बार इस्तेमाल कर लिए जाने पर बाद के लिए रखी भी नही जा सकती।

इसी तरीके से वीजनर ने विभिन्न पौदो के विकास के लिए आवश्यक 'प्रकाश के जलवायु' के सिलसिले मे अनेक परीक्षण किये थे। इस तरीके से भले ही केवल मोटे तौर पर ही तखमीना लग पाता हो, किन्तु विभिन्न परिस्थितियो मे और तरह-तरह के स्थानो पर प्रदीप्ति के मान निकालने की यह एक अत्युत्तम विधि है जिसके बारे मे हमे पहले कुछ भी अन्दाज न था।

सूर्य की विभिन्न ऊँचाइयो के लिए एक क्षैतिज तल की प्रदीप्ति का अध्ययन कीजिए।

जिस समय सूर्य चमक रहा हो, किसी क्षैतिज तल पर आने वाले प्रकाश की तुलना करिए, (क) जब किसी परदे की छाया उस पर पड रही हो,, (ख) जब परदा हटा लिया गया है, इस रीति से सीधे सूर्य से आनेवाले प्रकाश की तुलना नीले आकाश से आनेवाले प्रकाश के साथ करिए।

क्षैतिज तल मे रखे कागज की ऊपरी और नीचे वाली सतह की प्रदीप्ति की तुलना करिए। इसके लिए पानी के ऊपर अनुपात ६, बजरी के ऊपर १२ और घास पर २५ मिलता है।

समान आकार की नलियाँ लीजिए, उनके पेदे पर फोटोग्राफी का कागज लगाकर नली को विभिन्न कोणो पर तिरछी करके खडी करिए और इस प्रकार नीले आकाश की दीप्ति की तुलना विभिन्न दिशाओ के लिए करिए। आम तौर पर सूर्य की दिशा से १०° के कोण बनाने वाली दिशा मे आकाश की रोशनी न्यूनतम होती है (देखिए § १७६)

वन के अन्दर की रोशनी की तुलना बाहर से करिए ('बाहर' का अभिप्राय है वन के हाशिये से कम-से-कम ७ गज दूर)।

बीच वृक्ष के वन के भीतर प्रदीप्ति की तुलना करिए—

(क) एप्रिल महीने के मध्य मे, (ख) जब नयी कोपले फूट रही हो और (ग) जून महीने के शुरू मे। एक निरीक्षण मे वन के बाहर की प्रदीप्ति की तुलना मे भीतर की प्रदीप्ति क्रमश १/२१, १/३०, तथा १/६४ मिली थी।

प्रदीप्ति-तीव्रता उन स्थानो की नापिए जहाँ निम्नलिखित पौदे उगते है—

बडे केल्ले (Plantago major)	१
इवी (Hedera helix)	१ से ० २२ जब इसमे फूल लगते हो १ से ० ०२ ठूँठी टहनियो के समय
हीदर (Calluna vulgaris)	१ से ० १०
ब्रेकेन (Pteridum aquilinum)	अत्यन्त कम, लगभग ० ०२

घने वन के अन्दर पेडो के झुरमुट के नीचे प्रकाश की तीव्रता नापिए—यह रोशनी की न्यूनतम मात्रा है जिसमे टहनियो का विकास पाना सम्भव हो सकता है। इक्के-दुक्के वृक्ष के तले प्रकाश की तीव्रता निम्नलिखित प्राप्त हुई है—लार्च, ० २०, बर्च, ० ११, चीड, १०, सरो, ० ०३, बीच, ० ०१, (वृक्ष के बाहर की प्रकाश-तीव्रता के भिन्नाश मे प्रदर्शित)।

अध्याय ६

आँख[1]

प्रकृति के अध्ययन मे अनिवार्यत मानव इन्द्रियो का अध्ययन भी सम्मिलित करना चाहिए। भूमि के दृश्यो का यथार्थ प्रेक्षण कर पाने के लिए सर्वप्रथम हमे उस यत्र—मानव नेत्र—से भलीभाँति परिचित होना चाहिए जिसे हम इस कार्य के लिए निरन्तर काम मे लाते है। इस बात की पहचान कर सकना अत्यन्त शिक्षाप्रद है कि प्रकृति वास्तव मे क्या प्रदर्शित करती है और हमारी दृष्टिइन्द्रिय उसमे अपनी ओर से क्या योग देती है या उसमे से हटाकर वह क्या निकाल देती है। आँख की विशेषताओ का अध्ययन करने के लिए घर से बाहर के वातावरण से अधिक अनुकूल अन्य कोई वातावरण नही मिल सकता, विशेषतया जबकि प्रकृति ने हमे ऐसे ही वातावरण के लिए समानुयोजित (adapted) किया है।

५७ पानी के अन्दर देखना

क्या आपने कभी पानी के अन्दर आँखो को खुली रखने का प्रयत्न किया है? बस, थोडी सी हिम्मत चाहिए, फिर तो ऐसा करना काफी आसान हो जाता है। किन्तु अब तैरनेवाले तालाब मे भी, जहाँ पानी अत्यन्त स्वच्छ रहता है, प्रत्येक वस्तु जिसे हम देखते है असाधारण रूप से अस्पष्ट और धुधली नजर आती है। क्योकि हवा मे तो आँख की बाहरी सतह, कोर्निया ही किरणो को एकत्र करके रेटिना पर बिम्ब का निर्माण करती है, आँख के स्फटिक लेन्स का सहयोग इस क्रिया मे थोडा ही होता है। किन्तु पानी के अन्दर कोर्निया की यह क्रिया बहुत कुछ इस कारण रद्द हो जाती है कि आँख के भीतरवाले द्रव और बाहर के पानी के वर्त्तनाङ्क लगभग एक दूसरे के बराबर होते है, अत किरणे कोर्निया को घेरनवाली सतह पर बिना मुडे ही सीधी भीतर

१ इसे और अगले तीन अध्यायों को पढते समय वाञ्छनीय होगा कि हेल्महोल्ट्ज की सुविख्यात कृति Physiologische Optik (द्वितीय या अच्छा होगा कि तृतीय सस्करण) हम देखें।

चली जाती है (चित्र ७०)। इस बात की जाँच करने का यह एक बढिया तरीका है कि यदि अकेले नेत्र के स्फटिक लेन्स द्वारा ही बिम्ब का निर्माण होता तो यह क्रिया कितनी अपूर्ण होती। इस दशा मे आँखो मे दूर दृष्टि का दोप इतनी बुरी तरह बढ जाता है कि आँख को फोकस करने के सभी प्रयत्न एक तरह से व्यर्थ ठहरते है, अत प्रकाश-सूत्र को चाहे किसी भी दूरी पर क्यो न रखे, हर हालत मे यह धुधला ही दीखता है।
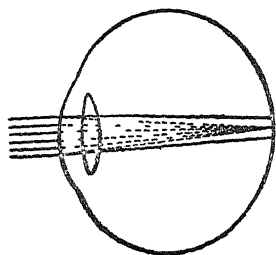
चित्र ७०—जब पानी के अदर देखते है तो आँखो मे बिम्ब का निर्माण नही होता है।

मोटी रेखाएँ—पानी के अंदर देखते समय प्रकाश-किरणों का पथ।

बिन्दु रेखाएँ—वायु मे देखते समय प्रकाश-किरणे।

चीजो को पहचान सकने का एकमात्र तरीका यह रह जाता है कि उन्हे आँख के इतने निकट रखे कि वे आँख पर काफी बडा कोण वनाये, अवश्य इस दशा मे अनिवार्य रूप से मौजूद बिम्ब का धुधलापन उतनी वाधा नही पहुँचाता।

स्वच्छ पानी के अन्दर फार्दिग का सिक्का करीब एक हाथ की दूरी (२५ इञ्च) पर दीखने लगता है, तथा लोहे का पतला तार तो किसी भी फासले पर नही दिखलाई देता। इसके प्रतिकूल कोई भी तैरता हुआ व्यक्ति १० गज के फासले पर भी दिखाई दे जाता है, क्योकि इतने बडे आकार की वस्तु ध्यान आकृष्ट कर ही लेती है। मोटे तौर पर v लम्बाई की वस्तु अधिक से अधिक $30v$ की दूरी पर से देखी जा सकती है, तथा इसकी शक्ल $5v$ के फासले से पहचानी जा सकती है, किन्तु वास्तविक अर्थो मे इसे ठीक-ठीक देख सकना तभी सम्भव है जब इसकी दूरी इसके आकार के लगभग बराबर हो जाय।

पानी के अन्दर निगाह को बाहर की तरह की औसत दृष्टिक्षमता प्रदान करने के लिए हमें बहुत ही अधिक शक्तिवाले चश्मे की आवश्यकता पडेगी। लेकिन दुर्भाग्य-वश काँच के चश्मे पानी के अन्दर हवा की तुलना मे केवल एक चौथाई ही प्रभाव उत्पन्न कर पाते है। और भी बुरी बात तो यह है कि इतनी अधिक शक्ति के लेन्स आँख के निकट चन्द मिलीमीटरो की दूरी पर रखे जाने पर अपना पूरा प्रभाव उत्पन्न नही कर पाते है। इन सब वातो को ध्यान मे रखते हुए यह आवश्यक होगा कि शक्ति

१०० का लेन्स इस्तेमाल करें अर्थात् इसका फोकस अन्तर $\frac{1}{4}$ इंच हो ! सूती कपड़े के धागे की जाँच के लिए काम में आनेवाले गणकयंत्र का लेन्स उपयुक्त होगा।

इस बात पर ध्यान दीजिए कि पानी के अन्दर कोरी आँखों से देखें या फिर लेन्स वाले चश्मे लगाकर, दोनों ही दशाओं में दूरी का अन्दाज लगाना समानरूप से कठिन होता है। वस्तुएँ अस्पष्ट तथा भूतप्रेतों-जैसी दीखती हैं।

पानी के अन्दर डूबी हुई स्थिति से ऊपर की ओर भी देखना चाहिए। बाहर से आनेवाली प्रकाश-किरणें पानी के अन्दर प्रवेश करते समय ऊर्ध्व दिशा से अधिक से अधिक ४५° का कोण बनाती हैं अतः आपके सिर के ऊपर प्रकाश का एक बड़ा वृत्त दीखेगा; और यदि आप तिरछी दिशा में देखें तो आँख से चलनेवाली किरणों का पानी की सतह पर पूर्ण परावर्त्तन होगा और आपको केवल धुंधली रोशनी से प्रकाशित पेंदे की भूमि का ही प्रतिबिम्ब दिखलाई पड़ेगा (चित्र ७१)। मछलियों को हमारी दुनिया बस इसी तरह की दीखती है !
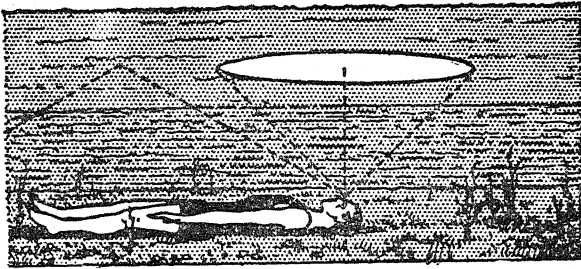
चित्र ७१—**एक क्षण के लिए दृश्य को हम उसी प्रकार देखते हैं, जिस प्रकार मछलियाँ !**

पानी के भीतर से दिखाई देनेवाले दृश्य का अत्युत्तम आभास प्राप्त करने का एक तरीका यह है कि पानी में सीधे खड़े हो जाइए और इस बात की विशेष सावधानी बरतिए कि पानी में हिलोरें न उठने पायें। अब पानी के अन्दर एक दर्पण को तिरछी स्थिति में रखिए। आप देखेंगे कि किस प्रकार पानी के बाहर की सभी चीजें ऊर्ध्व दिशा में दबी हुई जान पड़ती हैं और क्षितिज के जितने ही अधिक निकट होती हैं उतनी ही अधिक वे दबी हुई जान पड़ती हैं, तथा प्रत्येक वस्तु में सुन्दर रंगीन हाशिया नजर आता है।

५८. नेत्र के आन्तरिक भाग कैसे दृष्टिगोचर हो सकते है ?

एक अभ्यस्त निरीक्षक स्वय अपनी आँख का पीतविन्दु (रेटिना का केन्द्रीय, सबसे अधिक सुग्राहक स्थल) देख सकता है, जो एक ऐसे अविक गहरे रग के छल्ले से घिरा होता है जिसमे रक्त-वाहिनियाँ मौजूद नही होती है।[१] सन्ध्या को, बाहर कुछ समय व्यतीत कर लेने के वाद, बादलविहीन, खुले विस्तृत आकाश को ठीक उस वक्त देखिए, जव प्रथम तारे प्रगट हो रहे हो। अपनी आँखे कुछ सेकण्डो के लिए वन्द रखिए और फिर आकाश की ओर मुँह करते हुए उन्हे फुर्ती के साथ खोलिए। सबसे पहले, अन्धकार दृष्टिक्षेत्र की परिधि पर विलुप्त होगा और फिर तेजी के साथ यह केन्द्र की ओर सिकुडेगा जहाँ पीतबिन्दु, गहरे रग के हाशिये सहित दिखाई भर दे जाता है और कभी-कभी एक लमहे के लिए इससे चमक भी फूट निकलती है।

यदि एक ऊँचे कटघरे के वगल मे आप चले और उस पर तेज सूर्य की रोशनी पड रही हो, तो सूर्य की रोशनी प्रति सेकण्ड कई बार आपकी आँखो मे चमक के रूप मे पहुँचेगी। यदि आप ठीक सामने की ओर देखते रहे और सूर्य की ओर दृष्टि न डाले तो आप यह देखकर आश्चर्यचकित होगे कि प्रत्येक चमक के साथ काली पृष्ठभूमि पर चमकीले अनियमित धब्बो, जालीदार नमूनो और हाशिये की लकीरो की अस्पष्ट शक्ले प्रगट होती है।[२] सम्भव है कि ये रेटिना के कपितय भाग हो जो इस असामान्य तरीके की प्रकाश-व्यवस्था मे दिखाई पड जाते है।

५८ क रात्रि की निकट-दृष्टि

सन्ध्या के धुँधलके मे अक्सर चलने-फिरने वाले व्यक्ति ने देखा होगा कि प्रकाश ज्यो-ज्यो कम होता जाता है त्यो-त्यो उसकी आँख अधिक निकट दृष्टा होती जाती है। आप अपनी आँखो की सविधान शक्ति की तबदीली आसानी से नाप सकते है। मान लीजिए कि सामान्य परिस्थितियो मे कदाचित् चश्मे की सहायता से दूर की वस्तुओ को बहुत ही स्पप्ट आप देख सकते है जबकि आँखे पूर्ण रूप से विश्रान्त होती है। अब यदि सन्ध्या के धुँधलके मे आप केवल १ मीटर दूरी की वस्तुएँ देख सकते है तो आपकी निकट दृष्टि १ डायप्टरी की है, यदि २ मीटर तक देख सकते है तो निकट दृष्टि $\frac{1}{2}$ डायप्टरी

१ हेल्महोल्ट्ज कृत Physiologische Optik

२ यह प्रेक्षण सम्भवत पर्किन्जे की धूप-छाँह आकृति से मेल खाता है (हेल्महोल्ट्ज Physiologische Optik)।

की होगी। औसत प्रेक्षक के लिए रात्रि की निकट दृष्टि 0 6 D की होती है, किन्तु अनेक दशाओ मे यह 2D तक पहुँच जाती है।

इस घटना की व्याख्या भिन्न-भिन्न प्रकार से की गयी है—

(१) प्रदीप्ति जब घटती है तो आँख की पुतली फैल जाती है और नेत्र-लेन्स के हाशिये वाले भाग प्रतिबिम्ब-निर्माण मे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेते है और केन्द्रीय भागो की अपेक्षा ये अधिक मात्रा मे निकट-दृष्टि उत्पन्न करते है। दूसरे शब्दो मे घटना का कारण नेत्र का गोलीय विपथन है।

(२) दिन के समय हमारी आँखे पीली किरणो के लिए सबसे अधिक सवेदी होती है जबकि सन्ध्या के धुधलके मे महत्तम सवेदिता हरे-नीले प्रकाश की ओर हट आती है (§७६)। किन्तु आँख किसी भी साधारण लेन्स की भाँति पीली किरणो की अपेक्षा हरी-नीली किरणो का अधिक मात्रा मे वर्त्तन करती है अत हरे-नीले प्रकाश के लिए हमारी निकट दृष्टि करीब 0 5 D अधिक होती है। अत रात्रि की निकट दृष्टि आँख के वर्णविपथन दोप के कारण होती है। उन दशाओ के लिए जिसमे एक या दो डायप्टरी तक की निकट दृष्टि के लिए कारण ज्ञात करना है, हमे किसी अन्य व्याख्या की तलाश करनी होगी।

५८ ख. अन्धविन्दु

नेत्र-रेटिना के बारे मे एक और महत्त्वपूर्ण बात उसका 'अन्धबिन्दु' है जहाँ चाक्षुष-शिरा नेत्र मे प्रविष्ट होती है—इस बिन्दु पर प्रकाश-सवेदी कोष नही पाये जाते। यह स्थल पीतबिन्दु से नाक की ओर लगभग १५° की दूरी पर स्थित होता है। अत दृष्टिरेखा से १५° की दिशा मे बायी ओर हटी हुई वस्तु हमारी बायी आख के लिए अदृष्टिगोचर हो जायगी और उतनी ही दाहिनी ओर हटी हुई वस्तु दायी आँख के लिए अदृष्टिगोचर हो जायगी। तारो का अवलोकन करते समय यह बात भलीभाँति देखी जा सकती है।

उस वक्त तक प्रतीक्षा करिए जब तक कि सप्तर्षि मण्डल के तारे δ तथा η एक-सी ही ऊँचाई पर न आ जायें। भारत मे ऐसा जनवरी-फरवरी की सन्ध्या को होगा। यदि दाहिनी आँख की दृष्टि आप मन्द रोशनी के नक्षत्र δ पर गडाएँ तो आप देखेंगे कि चमकीला तारा η विलुप्त हो जाता है! (देखिए चित्र ६१, 3 6 तथा 2 2 श्रेणी सख्या के तारे) इसके लिए आवश्यक हो सकता है कि आप को अपना सिर थोडा दाहिने या बाये झुकाना पडे। अन्य उदाहरण आसानी से मिल सकते है, जैसे सप्तर्षि

मण्डल के नक्षत्र α तथा ϵ, मृगशिरा के β तथा γ, तथा अभिजित और γ कालिय (ड्रैकोनिस) आदि।

सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह है कि सामान्यत दृष्टिक्षेत्र के इस 'छिद्र' का हमे भान भी नही होता, कारण यह है कि हमारी आँखे एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर फुदकती रहती है और फिर हमारे पास दो आँखे होती है।

५९ आँख द्वारा बनने वाले अपूर्ण बिम्ब

तारे हमे पूर्ण बिन्दु सरीखे नही दिखाई देते, बल्कि टेढी-मेढी अनियमित शक्ल के ये दीखते है, अक्सर एक प्रकाशबिन्दु की भाँति जिससे किरणे चारो ओर निकल रही हो। आम तौर पर तारे को प्रदर्शित करने के लिए प्रकाबिन्दु से पाँच किरणे निकलती हुई दिखायी जाती है, जो वास्तविकता के अनुकूल नही है। इस प्रयोग के लिए सबसे चमकीला तारा चुनिए, जैसे लुब्धक या और भी अच्छा होगा यदि शुक्र या वृहस्पति ग्रह को ले क्योकि इनके बिम्ब की चकरी इतनी छोटी होती है कि उसे हम बिन्दु मान सकते है और फिर इनकी द्युति सबसे अधिक चमकीले तारे से भी अधिक होती है।

सिर एकतरफ हटाइए, पहले दाहिनी ओर, फिर बायी ओर, अब इसी के अनुसार बिम्ब भी एक ओर, फिर दूसरी ओर खिच उठता है। यह प्रभाव विभिन्न व्यक्तियो के लिए विभिन्न मात्रा मे उत्पन्न होता है तथा उसकी प्रत्येक आँख के लिए भी यह भिन्न होता है। लेकिन एक आँख को हाथ से बन्द करके आप दूसरी आँख से यदि विभिन्न तारो को देखे तो आप को सदैव एक सी ही शक्ल दिखाई देगी।

इससे यह सिद्ध होता है कि स्वय तारे टेढी-मेढी शक्ल के नही है बल्कि यह तो हमारी आँखो का दोष है जो बिन्दु को ठीक बिन्दु के रूप मे निरूपित नही कर पाती।

किरणे उस वक्त और भी लम्बी और बेतरतीब हो जाती है जबकि आँख के गिर्द वातावरण अन्धकारमय हो, और इस कारण आँख की पुतली फैली हुई हो। पर्य्याप्त प्रकाश के वातावरण मे, जब कि पुतली सिकुड कर एक छोटे सूराख की शक्ल अख्तियार कर लेती है, ये किरणे लम्बाई मे छोटी हो जाती है। वास्तव मे गुल्स्ट्रैण्ड ने यह सिद्ध किया है कि आँख का स्फटिक लेन्स उन शिराओ के कारण जिनसे यह जुडा होता है, हाशिये पर ही आम तौर पर विकृत हो जाता है, अत प्रकाशकिरणे जब हाशिये वाले भाग मे से गुजरती है तो बिम्ब की स्पष्टता कम हो जाती है।

कागज का तख्ता लेकर उसमे १ मिलीमीटर व्यास का सूराख करिए, और तख्ते को आँख की पुतली के सामने रखिए। थोडी तलाश करने पर लुब्धक तारा या कोई ग्रह

अवश्य आप को आकाश मे मिल जायगा। कागज के पीछे से उसे देखने पर आप पायेगे कि प्रतिबिम्ब पूर्णतया गोल है। अब सूराख को पुतली के हाशिये की तरफ हटाइए तो विम्ब का प्रकाशविन्दु अनियमित रूप से विकृत हो जाता है। अपने प्रयोग मे मैंने पाया कि प्रकाशविन्दु पुतली की त्रिज्या की दिशा मे एक लकीर की शक्ल मे खिच उठता है।

अनेक व्यक्तियो को हँसिया के आकार वाले चन्द्रमा की कोरे दुहरी तिहरी दिखाई देती है। प्रतिविम्ब मे अस्पप्टता के ये दोष मुख्यत कोर्निया की सतह की क्षुद्र विकृतियो के कारण उत्पन्न होते है। इसी प्रकार के आकृति-दोष निकट दृप्टि वाले व्यक्ति को भी चश्मा उतार देने पर दिखाई देते है (चित्र ७२), दूर का प्रत्यक लैम्प प्रकाश की चकरी जैसा दीखता है जिसमे दीप्ति का वितरण अत्यन्त ही असम होता है। यदि पानी बरस रहा हो तो आपको रह रह कर नन्ही प्रकाश चकरी पर अचानक एक छोटा गोल गोल धब्बा दीख जायगा, कारण यह है कि कोर्निया की सतह का कुछ भाग पानी की बूँद से ढक जाता है (चित्र ७३)। आप देखेगे कि पूरे १० सेकण्ड तक यह धब्बा अपनी शक्ल बनाये रख सकता है बशर्ते इतनी देर तक आप बिना पलक झपकाये देखते रह सके !

चित्र ७२—**निकट दृष्टि वाले व्यक्ति को बिना चश्मे के, तारा या दूर का लेम्प इस प्रकार दीखता है।**
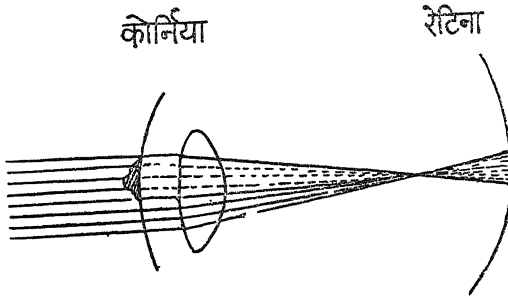
चित्र ७३—**निकट-दृष्टि वाली आँख बिना चश्मे के दूर के लैंप को छोटे अनियमित मंडलको के रूप में देखती है। कोर्निया पर स्थित वर्षा की बूँद एक काले धब्बे की शक्ल मे निरूपित होती है।**

बहुत दूर की मोटरकार-लैम्प की चकाचौंध उत्पन्न करने वाली रोशनी जब आँखो पर पडती है तो उस तीव्र प्रकाशबिन्दु के गिर्द, समूचा दृष्टिक्षेत्र धुधले प्रकाश से भर जाता है जिसमे धारियाँ सी पडी होती है या कभी-कभी त्रिज्याओ की दिशा मे धारियाँ प्रगट होती है । विम्ब की यह सरचना, आँख की आकृति के अनेक दोषो के कारण होने वाले विवर्त्तन या वर्त्तन से उत्पन्न होती है । लम्बी सकरी नली की शक्ल के सोडियम लैम्प भी प्रकाश-स्रोत के गिर्द धुँधले प्रकाश की चमक देते है, किन्तु इस चमक मे बारीक रेखाएँ दीखती है जो प्रकाश-स्रोत के ठीक समानान्तर स्थित होती है, क्योकि विवर्त्तन उत्पन्न करने वाली प्रत्येक कणिका बिन्दु के बजाय प्रकाशरेखा का निर्माण करती है ।

६०. किरणो के समूह जो तेज चमक वाले प्रकाश-स्रोत से विसर्जित होते जान पडते है

दूर के लैम्प से अक्सर लम्बी सीधी किरणे हमारी आँखो की ओर आती हुई जान पडती है, विशेषतया उस वक्त जबकि हम उन्हे अधखुली आँखो से देखते है । प्रत्येक पत्रक के हाशिये के किनारे पर अश्रु द्रव एक नन्हे लवचन्द्रक[1] का निर्माण करता है जिससे प्रकाश की किरणो का वर्त्तन हो जाता है ।[2] चित्र ७४ a मे दिखलाया गया है ऊपर की पलक से किरणे इस प्रकार से वर्त्तित होती है कि वे नीचे की ओर से आती हुई प्रतीत होती है, अत प्रकाश-स्रोत मे नीचे की ओर पूँछ सी लगी दीखती है । इसी प्रकार नीचे की पलक के कारण प्रकाश-स्रोत मे ऊपर की ओर पूँछ बन जाती है । इन पूँछो के निर्माण की क्रिया इस प्रकार भलीभाँति समझी जा सकती है, एक पलक को दबाकर बन्द कर लीजिए और दूसरी को धीरे-धीरे बन्द करिए, या आँख को अधखुली रख कर सिर को ऊपर-नीचे डुलाइए । किरणे ठीक उस क्षण प्रगट होती है जब पलक पुतली को ढकना शुरू करती है । निकट-दृष्टि वाले प्रेक्षक को यह घटना आसानी से दीख जाती है क्योकि प्रकाश-स्रोत जो उसे एक फैली हुई चकरी की शक्ल का दीखता है, आशिक रूप से उस क्षण छिप जाता है ।

ये किरणे पूर्णतया समानान्तर नही होती, एक आँख तक पहुँचने वाली किरणे भी पूर्णतया समानान्तर नही होती । सामने स्थित प्रकाश-स्रोत को देखिए और फिर अपने सिर को दाहिनी ओर थोडा घुमा लीजिए और तब अपनी आँख इस तरह वापस

1 Meniscus 2 H Meyer, Pogg Ann, 89, 429, 1853

घुमाइए कि प्रकाश-स्रोत आप को पुन दीख जाय। किरणे अब तिरछी दीखेगी (चित्र ७४, b)। प्रगटत इसका कारण यह है कि पलक के हाशिये जो इस वक्त पुतली के सामने है, अब क्षैतिज नही रहे और किरणो का प्रत्येक समूह, उसे उत्पन्न करने वाली पलक के हाशिये के समकोण ही पडता है, प्रेक्षण मे प्राप्त दिशा ठीक इस व्याख्या के अनुसार ही मिलती है। अब यह बात समझी जा सकती है कि क्यो जब हम सीधे सामने की ओर देखते है तो किरणे समानान्तर नही होती है, क्योकि केवल पुतली की चौडाई के विस्तार मे भी पलक की वक्रता का बोध हमे हो जाता है। अपनी उँगली पुतली के दाहिने छोर के सामने रखिए तो समूह की बाये तरफ की किरणे विलुप्त हो जाती है, ठीक जैसा कि उन्हे करना चाहिए था।

लम्बी पूँछ सरीखी किरणो के अलावा (चित्र ७४,c) अत्यन्त चमकीली, कुछ छोटी किरणे भी दीखती है जो पलको के किनारे से होनेवाले परावर्त्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होती है (चित्र ७४, d)। प्रयोग द्वारा इस बात का इतमीनान करिए कि इस
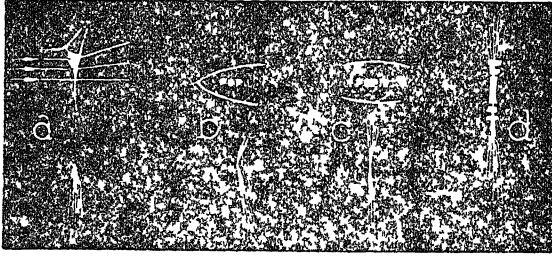
चित्र ७४, a–d—**दूरस्थ लैंप के गिर्द प्रकाशकिरणे किस प्रकार उत्पन्न होती है।**

बार ऊपर की ओर की नन्ही पूँछ ऊपरी पलक द्वारा उत्पन्न होती है तथा नीचे की पूँछ नीचेवाली पलक द्वारा। साधारणतया इन परावर्त्तित किरणो मे विवर्त्तन के आडे नमूने प्रगट होते है।

६१. चश्मे के काँच से उत्पन्न प्रकाशीय घटनाएँ

चश्मे के मामूले लेन्स मे से तिरछी दिशा मे देखने पर रेखाएँ विकृत हो जाती है। लेन्स जब अवतल होते है तो हमे 'बैरल-विकृति' मिलती है और उत्तल लेन्स द्वारा

'पिनकुशन' विकृति पैदा होती है (चित्र ७५)। भूमि के दृश्य मे जब यह मालूम करना हो कि दिखाई देने वाली रेखा पूर्णतया सीधी है, या ऊर्ध्वतल मे है तो प्रतिबिम्ब की यह विकृति विशेष रूप से परीशानी उत्पन्न करती है। दृष्टिक्षेत्र के हाशियो पर प्रतिबिम्ब की अबिन्दुकता[1] इतने अधिक परिमाण मे उत्पन्न होती है कि बिम्ब की हर किस्म की बारीकियाँ मिट-सी जाती है। प्रतिबिम्ब के निर्माण के ये दोष लेन्स के अधिक अवतल या अधिक उत्तल होने के अनुसार विशेष अधिक मात्रा मे उभरते है। नवचन्द्राकार लेन्सो के लिए ये दोष अपेक्षाकृत हलकी मात्रा मे प्रगट होते है।
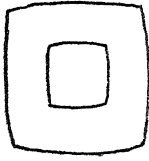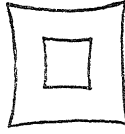
चित्र ७५—**चश्मे के लेन्स द्वारा बिम्बो का निर्माण।**

सन्ध्या होने पर प्रज्वलित लैम्प को चश्मे मे से देखे तो लैम्प के आस-पास ही एक प्रकाश-चकरी उतराती हुई-सी दीख पडती है। यह विशेष स्पष्ट नही होती, किन्तु इसे यदि घूर कर देखते रहे तो आँख की सविधान क्षमता[2] अपने आप बदल जाती है और
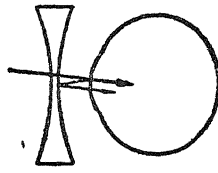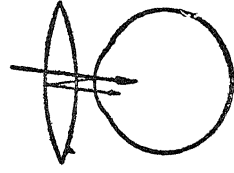
चित्र ७६—**चश्मे से देखने पर दुहरे प्रतिबिम्ब किस प्रकार बनते है।**

I कम शक्ति का लेन्स।

II अवतल लेन्स, जिनकी लेन्स शक्ति—५ से अधिक है।

III उत्तल लेन्स, जिनकी शक्ति +३ से अधिक है।

चकरी या तो हमे बडी होती हुई दिखाई पडती है या फिर आकार मे घटती हुई। आँखो से चश्मा उतार कर यदि उसे आँख से कुछ फासले पर रखे तो यह चकरी एक प्रकाश

1 Astigmatism 2 Accomodation

बिन्दु की शक्ल की दीखने लगती है जो स्पष्टत स्वय उस लैम्प का अत्यन्त छोटे आकार का प्रतिबिम्ब है। यदि तीन लैम्पो के एक समूह को देखे तो पता चलेगा कि प्रतिबिम्ब सीधा बनता है। यह निम्नलिखित से स्पष्ट है--प्रकाश की चकरी लेन्स की सतहो या आँख की कोर्निया की सतहो पर होने वाले दो बार के परावर्तन के फलस्वरूप निर्मित होती है। वास्तव मे तीन चकरियाँ नजर आनी चाहिए, किन्तु ये तभी दिखाई दे सकती है जबकि ये बहुत अधिक अस्पष्ट न हो। व्यवहार मे, दिये गये चश्मे के लिए केवल एक ही प्रकार का दुहरा परावर्तन घटित होता है (चित्र ७६)।

बिना फ्रेम वाले चश्मे के लेन्स जिनके हाशिये सम बना लिये गये हो कभी-कभी किनारो पर सँकरा वर्णक्रम प्रदर्शित करते है (चित्र ७७) जो दूर के लैम्प के प्रकाश के कारण उत्पन्न होते है। चश्मे के लेन्स पर वर्षा की बूँद के प्रभाव के लिए देखिए §११८।
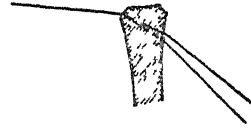
चित्र ७७—**चश्मे के लेन्स द्वारा स्पैक्ट्रम किस प्रकार बनता है।**

६२. दृष्टि की सूक्ष्मता

सामान्य आखो के लिए सप्तर्षि-मण्डल के तारे वशिष्ठ और अरुन्धती को, जो लगभग १२′ के कोणीय अन्तर पर है, पहचानने मे तनिक भी कठिनाई नही होती (चित्र ६१, ७८ क)। अब प्रश्न यह है दृष्टि की यह सूक्ष्मता और अधिक कितनी
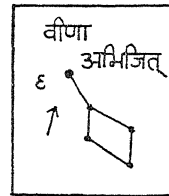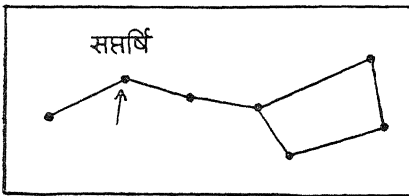
चित्र ७८ क—**दूर-दूर स्थित कुछ युग्म तारे।**

बारीकी तक हमे ले जा सकती है? तीक्ष्ण निगाह वाले व्यक्ति इससे आधी कोणीय दूरी पर स्थित दो बिन्दुओ को अलग-अलग पहचान सकते है जैसी कि युग्म नक्षत्र अल्फा कैप्रिकार्नि (मकर तारा समूह) के दोनो तारे के बीच की दूरी है, यह कोणीय दूरी ६′ है तथा तारो के श्रेणी सूचक अक क्रमश ३ ८ तथा ४ ५ है।

विरले ही व्यक्ति ४′ या ३′ मिनट के कोणीय अन्तर वाले दो बिन्दुओ को एक दूसरे से पृथक् देख सकते है।
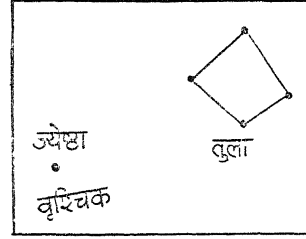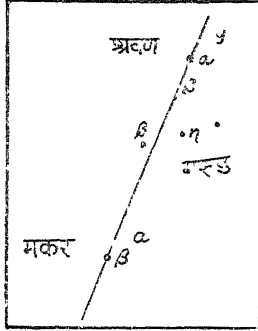
चित्र ७८ ख—**कुछ अन्य युग्म तारे।**

अल्फा लिब्रा (तुला) के सदस्य नक्षत्रो का कोणीय अन्तर ४′ है तथा उनके श्रेणी सूचक अक क्रमश २ ८ तथा ५ ३ है।

ε लीरा (वीणा) के सदस्य नक्षत्रो का कोणीय अन्तर ३′ तथा श्रेणी-सूचक अक क्रमश ५ ३, तथा ६ ३ है।

विशेष निपुण प्रेक्षक, जिनकी सख्या बहुत कम ही है, खुले आकाश मे जब कि वायुमण्डल शान्त रहता है, आश्चर्यजनक रूप से अधिक सूक्ष्म बारीकियो को देख सकने मे समर्थ होते है। इनमे से एक का दावा है कि नगी आँखो से वह तुला राशि के अल्फा तारे को एक युग्म तारे के रूप मे देख पाता है (दोनो तारो का कोणीय अन्तर ४′)। ऐसे प्रेक्षक के लिए शनि स्पष्ट रूप से चिपटा दीखता है तथा शुक्र उपयुक्त अवसरो पर नव-चन्द्राकार दीखता है बशर्ते वह कालिख लगे कॉच मे से उसे देखे या सही परिमाण की पारदर्शिता वाले धुएँ के बादल मे से। वह बृहस्पति के दो उपग्रहो को भी देखने मे समर्थ होता है, यद्यपि केवल शाम के झुटपुटे के ही वक्त, जबकि प्रथम और द्वितीय श्रेणी के तारे प्रगट होना आरम्भ करते है।

सन्ध्या के झुटपुटे की वेला अन्य प्रेक्षणो के लिए भी उत्तम ठहरती है। उदाहरण के लिए उस क्षण चन्द्रमा के धरातल की विशेषताएँ रात की बनिस्बत बहुत अधिक स्पष्ट दिखलाई पडती है, क्योकि तब आँखो को उतनी चकाचौध का सामना नही करना पडता है।

अवश्य यह एक दिलचस्प प्रयत्न होगा कि अमावस्या के बाद यथासम्भव शीघ्राति-शीघ्र पतले नाखूनी शक्ल के चन्द्रमा का अवलोकन करे। कुछ प्रेक्षको ने तो अमावस्या के बाद केवल ११ घण्टो के अन्दर-अन्दर चन्द्रमा को देख लिया है। अवश्य इसके लिए यह अत्यन्त जरूरी है कि हमे पता हो कि चन्द्रमा के अवलोकन के लिए हमे देखना किधर है। हमारे अपने देश (हालैण्ड) मे इस अवसर पर सूर्य्य को क्षितिज मे कम से कम ८° नीचे अवश्य होना चाहिए। आँख की परिमित विभेदनशक्ति से यह समझा जा सकता है कि दूर हटती हुई वस्तु का दृश्य रूप उत्तरोत्तर बदलता क्यो जाता है। ५० मीटर की दूरी पर वृक्ष की पत्तियो की शक्ल अब पहचानी नही जा सकती, यद्यपि आकाश की पृष्ठभूमि पर विपर्यास के कारण ये स्पष्ट अवश्य उभरती है, वृक्ष की चोटी का हाशिया धुँधला दीखता है। किन्तु १० किलोमीटर की दूरी पर जगल की ऊपरी सीमा-रेखा उतनी ही तीक्ष्ण दीखती है जितनी एक पथरीली पहाडी की सीमा-रेखा। वायुमण्डल के कारण उत्पन्न धुँधलेपन के कारण विपर्यास कुछ मन्द पड जाता है, किन्तु सीमारेखा स्पष्ट बनी रहती है।

फासले से एक व्यक्ति आप की ओर चला आ रहा है। पहले उसका चेहरा आप को एक 'सफेद धब्बे' की शक्ल का दीखता है यद्यपि चेहरे के मन्द प्रकाशवाले पृथक ब्योरे अभी तक दृष्टिगोचर नही हो पाते है। तदुपरान्त आप आँखे और मुँह को पहचान पाते है किन्तु न होठ न भौहे आप देख पाते है, यद्यपि आप को आभास मिल जाता है कि चेहरे पर तीन मन्दप्रकाश के धब्बो के अतिरिक्त और कुछ भी मौजूद है। क्षण भर बाद ही आप पहचानने लग जाते है कि यह व्यक्ति शक्ल मे आप के मित्र से मिलता-जुलता है—और फिर आप को निश्चित रूप से इतमीनान हो जाता है कि यह आप का मित्र ही है।

अत दूर की वस्तु के प्रतिबिम्ब तथा निकट की वस्तु के प्रतिबिम्ब एक घटाये गये पैमाने पर दोनो अनन्य रूप नही होते। दूरस्थ वस्तु के प्रतिबिम्ब मे एक विशिष्ट और रोचक ढग की तब्दीली आ जाती है। बिम्ब मे सर्वत्र ऐसे ब्योरे मौजूद रहते है जिन्हे आँख देख पा सकने मे बस असमर्थ भर रह जाती है, किन्तु उनका अनुमान लगा लेती है और जो उस वस्तु की सरचना बतलाते है।

६३. दृष्टिक्षेत्र के केन्द्रीय, तथा परिधिवाले भागो की सुग्राहिता

न्यूनतम प्रकाश वाले कौन से तारे ऐसे है जो आप की दृष्टि की पकड मे आ पाते है ? सप्तर्षि-मण्डल की वर्ग आकृति को देखिए और फिर हमारे चित्र ६१ से उसकी तुलना करिए। अधिकाश लोग छठी दीप्ति श्रेणी तक के सितारे देख पाते है और कुछ

लोग सातवी श्रेणी तक के तारे भी देख सकते है । ये सभी प्रेक्षण शहर से बाहर खुले आकाश मे किये जाने चाहिए ।

अब हम यह मालूम करने का प्रयत्न करेगे कि यदि हम तारो की ओर बिलकुल सीधे, दृष्टि जमा कर देखे तो उनमे से कौन-से तारे दृष्टिगोचर बने रह जाते है । तारे पर से निगाह को इधर-उधर बहकने न देकर दृष्टि को ठीक उस पर सीधे ही जमाये रखने के लिए कुछ थोडी इच्छा-शक्ति की जरूरत होती है। आप को यह देख कर आश्चर्य्य होगा कि मन्द प्रकाश का प्रत्येक तारा ज्योही उसे आप ध्यान से घूरते है, विलुप्त हो जाता है और वहाँ से नजर के जरा-सा इधर-उधर हटते ही वह तारा पुन प्रगट हो जाता है । व्यक्तिगत रूप से मेरी आँखो के लिए तो चतुर्थ श्रेणी के तारे भी इस प्रयोग मे विलुप्त हो जाते है जबकि तृतीय श्रेणी तक के तारे दीखते रहते है, (देखिए चित्र ६१, ६२) ।

अत पीत बिन्दु के लिए, तथा उसके गिर्द के रेटिना के लिए प्रकाश-अनुभूति की न्यूनतम सीमाओ मे करीब-करीब ३ दीप्तिश्रेणी इकाइयो का अन्तर है, जिसका अर्थ है कि इन सीमाओ के लिए प्रकाश-तीव्रताओ की निष्पत्ति १६ होगी । प्रकाशिक सुग्राहिता का यह अन्तर इस कारण उत्पन्न होता है कि पीत बिन्दु का केन्द्रीय भाग लगभग पूरे का पूरा, नन्हे शुकओ के आकार की क्षुद्र कोषिकाओ से बना होता है जबकि हाशिये के निकट की रेटिना की सतह नन्हे दण्डाकार कोपो से बनी होती है जोकि अपेक्षाकृत बहुत अधिक सूक्ष्मग्राही होते है । अनुभव-प्राप्त प्रेक्षक भी इस प्रभाव की मात्रा देखकर आश्चर्य्यचकित रह जाता है—क्योकि वास्तव मे हम इस बात के अत्यन्त अभ्यस्त हो गये है कि नक्षत्र का अवलोकन और अच्छी तरह करने के लिए हम अनजाने ही अपनी दृष्टि को उसके इधर-उधर बहक जाने देते है ।[१]

भलीभाँति प्रकाशित कमरे मे कुछ देर ठहरने के उपरान्त जब बाहर रात के अधेरे मे हम जाते है तो हलकी प्रदीप्ति के स्तर के प्रति अपने को समुपयोजित करने मे आँख को कुछ देर लगती है । पहले पुतलियाँ फैलती है, एक मिनट उपरान्त यह क्रिया समाप्त हो जाती है और अब इसके बाद से हम तृतीय तथा चतुर्थ कोटि के तारे देखने लग जाते है बशर्त्ते हम उन पर आँख गडाये रखे—यह सीमा अब और आगे नही बढ पाती किन्तु अप्रत्यक्ष दृष्टिक्षेत्र मे धीरे-धीरे और अधिक मन्द प्रकाश वाले तारे दृष्टिगोचर

१ एडगर ऐलन पो ने लिखा है कि 'यदि दृष्टि गडा कर देखते रहे तो शुक्रग्रह तक दृष्टि से ओझल हो जाता है' (The Murders is the Rue Morque), किन्तु यह सत्य नही हो सकता।

होने लग जाते है और आध घण्टे उपरान्त इस अनुभूति की सीमा आन पहुँचती है। प्रकाश्यत शकु अन्धकार के प्रति अपना समुपयोजन कर लेते है। *

इस बात का पता लगाना महत्त्वपूर्ण होगा कि तडके सुबह को किसी तारे या ग्रह (जैसे शुक्र) को कब तक देखा जा सकता है। आकाश का प्रकाश ज्यो-ज्यो बढता है त्यो-त्यो उस प्रकाश-बिन्दु को पहचान पाना और कठिन होता जाता है—एक अद्भुत बात यह होती है कि अकसर वह तारा दृष्टि से ओझल हो जाता है केवल इस कारण कि हम सही दिशा मे देख ही नही रहे है, यद्यपि पुन दृष्टि की पकड मे आ जाने पर वह स्पष्ट रूप से दिखलाई देने लग जाता है। नीले आकाश मे चहचहाती हुई नन्ही चिडिया लवा को देखने के प्रयत्न मे भी इसी तरह का अनुभव होता है।

यदि प्रेक्षण सावधानीपूर्वक किया जाय तो शुक्र का अवलोकन पूरी तरह दिन निकल आने तक किया जा सकता है और फिर सारे दिन इसे हम देखते रह सकते हैं। कभी-कभी वृहस्पति के लिए भी ऐसा ही किया जा सकता है किन्तु इसमे कठिनाई अपेक्षाकृत बहुत अधिक है—बिरले ही मौको पर क्षितिज से ऊपर सूर्य के १०° की ऊँचाई तक पहुँचने के समय तक वृहस्पति को देखते रहना सम्भव हो सका है। मङ्गल को उस वक्त देख सकते है जब सूर्य क्षितिज के निकट ही हो।

ये प्रेक्षण विशेषतया उस वक्त किये जाने चाहिए जब ग्रह चन्द्रमा के निकट हो, विस्तृत नीले आकाश मे तब चन्द्रमा की स्थिति की सहायता से धुँधले प्रकाशबिन्दु वाले उस ग्रह को अनन्त आकाश मे सहज ही ढूढा जा सकता है। क्या ये प्रेक्षण तारो के प्रयोग से प्राप्त उस निष्कर्ष के खिलाफ नही जाते जिसके अनुसार हमने देखा कि नेत्र के पीत बिन्दु की दृष्टि-सुग्राहिता अपेक्षाकृत कम है? ऐसा कदापि नही है, क्योकि दण्डाकार कोष केवल अत्यन्त धुधले प्रकाश मे ही क्रियाशील होते है तथा दिन के प्रकाश मे ये निष्क्रिय बने रहते है। दिन के समय पीत बिन्दु वाला नन्हा-सा भाग अत्यन्त सुग्राही होता है, जबकि रात्रि मे आँख की पुतली के हाशिये वाले भाग सुग्राही बन जाते है।

६४ फेश्नर का प्रयोग

किसी दिन जबकि आकाश पर धुँधले, हलके किस्म के बादल छाये हो, हम अपने प्रयोग के लिए एक ऐसा बादल चुनते है जो आकाश की पृष्ठभूमि पर बस दीख भर

* G Pat foort, Annals d' Optique Oculaire 2,39, 1953. विस्तारित क्षेत्रों की दृष्टि-अनुभूति की क्रियाविधि भिन्न होती है।

रहा हो। कालिख लगी हुई कॉच की प्लेट या समरूप से धुँधली पड गयी हुई फोटाग्राफी की प्लेट, अपनी ऑखो के सामने रखिए, आप देखेगे कि वही छोटा बादल अब भी अलग से पहचाना जा सकता है।

इस प्रयोग से फेश्नर ने यह निष्कर्ष निकाला कि ऑख दो प्रदीप्तियो की पृथक्-पृथक् पहचान कर सकती है यदि उनका अनुपात (प्रदीप्ति का अन्तर नही) एक निश्चित तथा स्थिर मान का हो (एक प्रदीप्ति दूसरी से लगभग ५ प्रतिशत ऊची हो)।

अत्यन्त गहरे काले रग का कॉच लेकर इस प्रयोग को दुहराइए। इस बार बादल नही दीखेगा और प्रकाश के सभी हलके शेड नजर से गायब हो जाते है। इससे पता चलता है कि प्रदीप्ति का वह भिन्नाश जो केवल दिखाई भर देता था, पूणतया स्थिर नही है।

फेश्नर के प्रयोग से मिलता-जुलता दृष्टान्त है तारो का दिन के समय विलुप्त होना। प्रदीप्ति के विचार से तारा की और उसके आसपास की चमक का अन्तर तो सदैव एक सा ही रहता है किन्तु उनका अनुपात दिन के समय रात की अपेक्षा बहुत अधिक भिन्न होता है। नियमानुसार हम कह सकते है कि नेत्रो की दृष्टि-अनुभूति मुख्यत प्रदीप्ति-अनुपात द्वारा निर्धारित होती है। दृष्टि-इन्द्रिय की यह विशिष्टता हमारे दैनिक जीवन के लिए अत्यधिक महत्त्व रखती है। इसी की बदौलत प्रकाश की विभिन्न दशाओ मे भी आस-पास की चीजो को उनकी सुनिश्चित शक्ल मे पहचाना जा सकता है।

६५ चन्द्रमा के प्रकाश मे भूमि के दृश्य

यदि फेश्नर का नियम पूर्णरूप से लागू होता समझा जाय और यह मान ले कि आँखे केवल प्रकाश-तीव्रता की निष्पत्तियो की ही अनुभूति कर पाती है तो चॉदनी मे दीखने वाले भूमि के दृश्य सूर्य के प्रकाश मे दीखने वाले दृश्य से किसी भी माने मे भिन्न न होने चाहिए क्योकि चॉदनी मे यद्यपि सर्वत्र प्रकाश-तीव्रता हजारो गुनी कम होती है, फिर भी सभी वस्तुएँ करीब-करीब उसी शक्ल और उसी स्थिति के प्रकाश-स्रोत द्वारा ठीक दिन के ही तौर-तरीके से प्रकाशित हो रही होती है।

इससे स्पष्ट है कि जब प्रदीप्ति अत्यन्त क्षीण होती है तो अब इस दशा मे फेश्नर का नियम लागू नही हो पाता। चन्द्रमा के प्रकाश मे भूमि के दृश्य का अवलोकन करिए और विशेष रूप से इस बात पर ध्यान दीजिए कि दिन की तुलना मे प्रदीप्ति का वितरण कितना भिन्न है! मुख्य विशेषता यह है कि वे सभी भाग, जिन पर चन्द्रमा की रोशनी

पूरी तरह नही पड रही है, करीब-करीब समान रूप से अन्धकार मे होते है, जबकि दिन के प्रकाश मे ऐसे भागो पर विभिन्न कोटि की प्रदीप्तियाँ देखी जा सकती है। इससे यह बात समझ मे आती है कि दिन के प्रकाश मे भूमि के दृश्य का फोटो उतारते समय यदि प्लेट पर प्रकाशदर्शन कम समय तक ही देकर उस निगेटिव से फोटोप्रिन्ट गाढा छाप का तैय्यार करे, तो प्रतीत होता है मानो दृश्य का फोटो चाँदनी रात मे उतारा गया हो। इसी प्रकार रात्रि के दृश्य उपस्थित करने के लिए, चित्रकार दृश्य की लगभग सभी वस्तुओ को समान रूप के गाढे शेड मे दिखलाते है अत शेड के विपर्यास मे अन्तर हलका होने के कारण अनजाने ही हमे ऐसा प्रतीत होता है कि दृश्य पर अत्यन्त हलका प्रकाश पड रहा है।

६६ सूर्य के तेज प्रकाश मे भूमि के दृश्य

गर्मी मे दिन की प्रदीप्ति, मिसाल के लिए, समुद्र तट पर इतनी प्रबल होती है कि हमारी आँखे करीब-करीब चकाचौध खा जाती है। यहाँ भी औसत प्रकाश की तुलना मे प्रदीप्ति निष्पत्तियाँ हलकी जान पडती है—धूप के देदीप्यमान प्रकाश मे सभी वस्तुएँ समान रूप से चकाचौध उत्पन्न करती हुई प्रतीत होती है। चित्रकार इस प्रभाव का समावेश अपने चित्रो मे अक्सर करते है (देखिए §६५)।

६७ प्रेक्षण-गम्य होने के लिए प्रदीप्ति-अनुपात का अल्पतम मान

काँच की खिडकियाँ सूर्य की रोशनी को परावर्त्तित करके सडक की पटरी पर प्रकाश के धब्बे डालती है (§८)। यदि उसी पटरी पर धूप भी पड रही हो तब प्रकाश के ये धब्बे मुश्किल से दीख पडते है, पटरी की सतह पूरी तरह समतल नही होती है। किन्तु खिडकी को हिलाने पर या जब हमारे हिलने-डुलने पर छाया उस पर से एक फिल्म की तरह गुजरती है, तो प्रकाश का यह धब्बा तुरन्त ही दीख जाता है (क्या यह एक दिलचस्प मनोवैज्ञानिक विशिष्टता नही है? निश्चय ही हमारे नेत्रो मे कुछ विशेष प्रकार की क्षमता मौजूद है जिसके कारण मन्द प्रकाश वाली घटना गत होते ही ये उसे भाप लेती है।) काँच की प्लेट अपनी प्रत्येक सतह से ४ प्रतिशत प्रकाश परावर्त्तित करती है, अर्थात् कुल मिलाकर ८ प्रतिशत, यदि किरणो का आयतन तिरछी दिशा से होता है तो परावर्त्तन कुछ थोडा और बढ जाता है (§५२)। अत प्रदीप्ति मे १० प्रतिशत की वृद्धि ही वह अल्पतम सीमा है जो विना किसी विशेष साधन के, सामान्य परिस्थितियो में, हमारी आँखो द्वारा पहचानी जा सकती है।

सूर्य से प्रकाशित दीवार के सामने यदि पानी का छोटा नाला हो, तो हम उम्मीद करते हैं कि पानी से परावर्त्तित होनेवाले सूर्य-प्रकाश का धब्बा दीवार पर दिखलाई देगा। अब यद्यपि हवा से जब पानी उद्वेलित होता है तो प्रकाश की धारियाँ तो दीवार पर हरकत करती हुई दिखाई देती हैं (§8)। किन्तु स्वय प्रकाश का धब्बा, जबतक दीवार की सतह एकदम चिकनी सपाट न हो, मुश्किल से ही दीख पडता है। अत- प्रदीप्ति मे ३ प्रतिशत की वृद्धि का प्रेक्षण कर सकना केवल अत्यन्त अनुकूल परिस्थितियो मे ही सम्भव है (§८७)।

किसी शाम को दो लम्पो के दर्मियान, एक के इतने निकट खडे होइए कि वहाँ दूसरे लैम्प के कारण बनने वाली छाया बस विलुप्त भर हो जाय। दोनो लैम्पो से अपनी दूरी नाप कर आप उनसे प्राप्त होने वाले प्रकाश की प्रदीप्ति-अनुपात का मान मालूम कर सकते है और इस प्रकार यह भी मालूम कर सकते है कि प्रदीप्ति मे प्रतिशत अन्तर कम-से-कम कितना होना चाहिए कि उनसे बनने वाली छाया की बस पृथक् पहचान भर की जा सके (§४८)।

६८ हलके आवरण का प्रभाव

दिन मे हम घूमने निकलते है—तो मलमल का पतला-सा लगभग पारदर्शी पर्दा, घरो के अन्दर क्या हो रहा है, इसे देखने से हमे रोक देता है। ऐसा कैसे हो जाता है? झीने आवरण वाला पर्दा बाहर की तेज रोशनी से प्रकाशित होता है, और यदि कमरे के अन्दर की चीजो की प्रदीप्ति इसकी अल्पाश ही है, तो पर्दे की एकसमान प्रदीप्ति मे अपनी ओर से ये इतनी अल्प मात्रा की वृद्धि कर पाती है कि हमारी आँख को उसकी अनुभूति नही हो पाती है—अर्थात् यहाँ फेश्नर के नियम के लागू होने का एक दृष्टान्त हमे प्राप्त होता है (§६४)।

रात को जबकि कमरे के अन्दर रोशनी होती रहती है, आप पर्दे मे से भीतर बखूबी देख सकते है। पर्दे की हमारी ओर की सतह करीब-करीव अँधेरे मे ही रहती है और इस कारण वह कमरे के अन्दर की विभिन्न प्रदीप्ति वाली चीजो पर अपनी ओर से अत्यन्त क्षीण प्रकाश ही डाल पाती है।

कमरे के अन्दर से बाहर की ओर देखने वाले व्यक्तियो के लिए दोनो ही दशाओ मे ठीक उलटा असर होता है। इसी तरह की घटना उस वक्त होती है जब चाँदनी रात मे स्पष्ट दीखने वाला वायुयान, सर्चलाइट की रोशनी फेकते ही अदृश्य हो जाता है। हमारी आँख और वायुयान के दर्मियान की वायु तेज चकाचौध उत्पन्न करने वाली

रोशनी से प्रकाशित होती है, तो उसके पीछे स्थित वायुयान पर प्रदीप्ति का विपर्यास हलका होने के कारण वह आँखो के लिए अदृश्य बन जाता है।

६८ क गिर्जाघर की रगीन काँच की खिडकियाँ

गेटे ने लिखा है—'धब्बेदार रगीन काँच से मढी हुई गिर्जाघर की खिडकियाँ गिर्जे के अन्दर से आश्चर्यजनक रूप से मनोहर और जगमगाते रगो से परिपूर्ण दीखती है, किन्तु बाहर से देखने पर उनके रगो की शोभा एकदम गायब हो जाती है। खिडकी के काँच, मुख्यत , पर्दे की भाँति प्रकाश का परिक्षेपण करते है, इनमे नन्हे कण, धूल के जर्रे तथा हवा के बबूले भरे रहते है। दिन के तेज प्रकाश का अधिकाश परिक्षेपित हो कर बाहर ही वापस आ जाता है, अत- खिडकियाँ सामान्य भूरे रग की दीखती है, इसकी तुलना मे भीतर से आने वाली रगीन, किन्तु फीके प्रकाश की किरणे मुश्किल से ही आँखो को प्रभावित कर पाती है।

६९ सान्ध्य आलोक मे तारो की दृष्टिगोचरता

दिन के तेज प्रकाश मे तारो का 'बुझना' यथार्थ मे 'आवरण प्रभाव' ही है। इसके प्रतिकूल हम देख सकते है कि किस प्रकार प्रत्येक सन्ध्या को पहले सबसे अधिक चमक वाले तारे प्रगट होते है, फिर बाद मे हलकी रोशनी वाले, और अन्त मे रात्रि का अँधेरा आकाश असख्य तारो के प्रकाश से जगमगाने लगता है। इस क्रमिक परिवर्तन का अध्ययन दिलचस्प होता है। तारो की द्युति की श्रेणी-सूचक सख्या का हमे पता रहता ही है और इस सख्या से उनकी प्रकाश-तीव्रता का मान हम ज्ञात कर सकते है (§४५), इसके प्रतिकूल हम जानते है कि ज्यो-ज्यो सूर्य क्षितिज के नीचे डूबता जाता है त्यो-त्यो आकाश की दीप्ति किसी प्रकार घटती जाती है (§५१)। चन्द्रमा-विहीन स्वच्छ आकाश मे जबकि धुन्ध बिलकुल न हो, मिसाल के तौर पर आकाशीय ध्रुव के गिर्द का क्षेत्र चुन लीजिए। और उन तारो की तलाश कीजिए जो दिन छिपने के साथ ही सबसे पहले प्रगट होते है। पहले तो **सशयात्मक अवस्था** मिलती है—किसी तारे को हमने देखा किन्तु निगाह के जरा हट जाने पर पुन उस नन्हे प्रकाश-बिन्दु को हम देख नही पाते है। कदाचित् पाँच मिनट बाद वही तारा इतना स्पष्ट दीखने लगता है कि उसके बारे मे किसी तरह का सदेह बाकी नही रह जाता—बस यह समय, तथा तारे का नाम हम अङ्कित कर लेते है।

ऐसा करना उतना आसान नही है जितना हम समझते है। कई सन्ध्या के प्रेक्षण के उपरान्त ही इस क्षेत्र के तारो से हम इतना परिचित हो पाते है कि उन्हे देखते ही हम

पहचान ले। इस तरह के प्रेक्षण तडके सुबह को अपेक्षाकृत अधिक आसान पडते है, जबकि नक्षत्र-मानचित्र की मदद से पहले ही पहचान लिये गये तारे धीरे-धीरे विलुप्त होते जाते है।

इस तरह से अङ्कित किये गये समय से हम क्षितिज के नीचे सूर्य की स्थिति प्राप्त करते है और तब आकाश की दीप्ति। अवश्य हम पाते है कि तुरन्त के दृष्टिगोचर होने वाले तारे की द्युति s का मान उस वक्त अधिक होता है जबकि पृष्ठभूमि के आकाश की दीप्ति b का मान अधिक होता है, किन्तु ये दोनो पूर्णतया एक दूसरे के समानुपाती नही है, प्रकाश प्रदीप्ति के घटने पर अनुपात $\frac{s}{b}$ बढ जाता है। यह उस निष्कर्ष के अनुरूप है जो रात्रि के समय के लिए भूमि-दृश्य के बारे मे बतलाया गया है (§६५)। s और b के दर्मियान ग्राफ खीचने पर हम सामान्यत पाते है कि s का मान $b^{0\ 50}$ या कदाचित् $b^{0\ 65}$ का समानुपाती है।

पूर्णिमा की रात को स्वच्छ आकाश मे तारो की दृष्टिगोचरता की न्यूनतम सीमा सामान्यत द्युति-सूचक श्रेणी मे दो अङ्क ऊपर चढ जाती है, स्वय चन्द्रमा के गिर्द एक बहुत अधिक चमकीला प्रभामण्डल (आरिएल) मौजूद होता है।
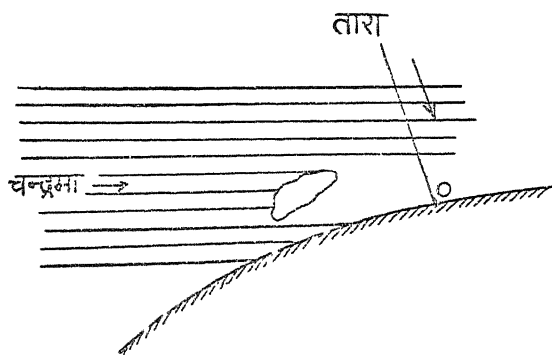
चित्र ७९—चन्द्रमा के सामने बादल का आ जाना O पर स्थित प्रेक्षक के लिए पर्याप्त नही होता कि वह तारा देख सके।

अतिशय सुन्दर और पूर्ण शशि के चारो ओर,
तारक-दल अपनी आभा को छिपा लेते है,
जब कि वह अपनी रुपहली ज्योति फैलाता है,
दूर, सुदूर व्याप्त, वसुधरा के ऊपर।—सैफो।

एक वार एक वालक के ख्याल मे आया कि चन्द्रमा के सामने की वादल की ओट तारो को पुन दृष्टिगोचर वना सकने के लिए काफी होगी। किन्तु ऐसा होना क्यो नही है? (चित्र ७९)।

दीख भर जाने वाले तारो का प्रेक्षण करके हम एक वक्र रेखा का निर्माण कर सकते है जो चन्द्रमा के निकट आकाश की ज्योति का वितरण क्रम प्रदर्शित करेगी।

६९ a दिन मे तारो की दृष्टिगोचरता

दिन मे तो आकाश मे और भी अधिक प्रकाश मौजूद रहता है और तारे पूर्ण रूपसे अदृश्य रहते है। फिर हमारी आँख भी दिन के विशद प्रकाश के अनुकूल अपने को समानुयोजित कर चुकी होती है, अत इस समय वह सहस्रो गुना कम सुग्राही होती है।

अरस्तू के समय के एक मार्के के विवरण मे उल्लेख किया गया है कि गहरे कुएँ, खान के भीतर या चौडी चिमनी के अन्दर से देखने पर वायु सामान्य की अपेक्षा कम प्रकाशित दीखती है, और तब अपेक्षाकृत अधिक चमकीले तारो का देख सकना भी सम्भव होता है। बाद के अनेक लेखको ने भी इस घटना का जिक्र किया है यद्यपि इसके लिए ये अधिकाश अपनी स्मरणशक्ति या दूसरो से सुनी-सुनायी कहानियो पर ही आश्रित रहे है।

सम्प्रति एक भी ऐसी जगह नही है जहाँ से सामान्यत इस घटना का अवलोकन तथा निरीक्षण किया जा सके, यद्यपि यह सुझाव दिया गया है कि इसके लिए १२ गज ऊँचा और २० इच व्याम वाला एक खोखला बेलन लेकर प्रयोग करना चाहिए। जो कुछ भी प्रभाव पड सकता है वह केवल इतना कि इस दशा मे इर्द-गिर्द से आनेवाले प्रकाश द्वारा आँखो को चकाचौध कम लगेगी। किन्तु इससे तो कुछ विशेप अन्तर नही पडता क्योकि सीधे निरीक्षण किया जाने वाला दृष्टिक्षेत्र तो पूर्ववत् प्रकाशित ही रहता है, और प्रयोग मे यही बात निर्णयात्मक है।

इससे भी और अधिक असङ्गत यह कथन है कि तारे दिन के समय, पर्वतो की छाया मे स्थित झील के प्रतिबिम्व मे देखे जा सकते है। इस घटना के 'प्रेक्षको' ने यह तो देखा कि प्रतिबिम्व मे आकाश की रोशनी कितनी कम थी, किन्तु इस वात को वे भूल गये कि परावर्त्तन के कारण ठीक उसी अनुपात मे तारो की चमक भी कम हो जाती है।

७० उद्दीपन

ऐसा प्रतीत होता है कि अस्त होनेवाला सूर्य क्षितिज रेखा पर कटान-सी उत्पन्न करता है (चित्र ८०)। द्वितीया, तृतीया का चन्द्रमा जव उदय होता है तो चन्द्रमा

के बिम्ब का शेष भाग धूमिल भूरी रोशनी से कुछ-कुछ प्रकाशित दीखता है और हमारा ध्यान इस बात पर आकृष्ट हो जाता है कि नाखूनी चन्द्रमा का बाहरी हाशिया,
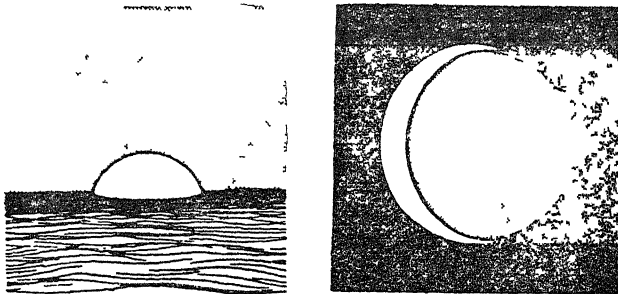
चित्र ८०—**उद्दीपन के दृष्टान्त सूर्य, जब वह अस्त होता है तथा चन्द्रमा का नव चन्द्रक।**

धूमिल रोशनी वाले भाग के बाहरी हाशिये की अपेक्षा एक बडे वृत्त का हिस्सा जान पडता है (चित्र ८०)। टाइको ब्राहे के तखमीने के अनुसार दोनो के लिए व्यासो का अनुपात ६ ५ होता है।

फिर गहरे रग के वस्त्र मे हम सफेद वस्त्र की अपेक्षा अधिक छरहरे दीखते है।

लिनार्दो दा विन्ची ने इस घटना के बारे मे एक स्थान पर लिखा है। इस घटना का अवलोकन वृक्ष की खाली टहनियो मे से सूर्य को देखने पर किया जा सकता है। सूर्य के सामने पडनेवाली ये सभी टहनियाँ इतनी पतली होती है कि इस दशा मे वे अदृश्य सी हो जाती हैं, ठीक ऐसा ही उस वक्त होता है जब हम आँख और सूर्य के दर्मियान भाले को रखते है। एक बार मैने एक स्त्री को देखा जो काले वस्त्र पहने थी और उसके सिर पर सफेद शाल था। सिर पर रखे शाल की चौडाई काले वस्त्र से ढके कन्धो की चौडाई की दोगुनी प्रतीत हो रही थी। किले की मुडेर पर कटी झिरी की चौडाई ठीक उतनी ही होती है जितनी बगल के ठोस भाग की, किन्तु झिरी स्पष्ट रूप से ठोस भाग की अपेक्षा अधिक चौडी जान पडती है।

अक्सर टेलिग्राफ के दो तार, एक विशेष दिशा से देखने पर एक दूसरे को अत्यन्त छोटे कोण पर काटते हुए दिखाई देते है, (चित्र ८१, a)। इसके बारे मे अद्भुत बात यह है कि आकाश की पृष्ठभूमि के समक्ष देखने पर उस स्थान के गिर्द का तीव्र

प्रकाश दाहिने-बायें के गहरे रग की, तार की दुहरी लाइन के विपर्यास मे इतना प्रखर हो उठता है कि कटान बिन्दु दृष्टि से ओझल हो जाता है। अवश्य इसके कारण तार जब थोडे-बहुत भी हिलते है तो श्वेत वर्ण का यह रिक्त स्थल तार की लम्बाई के सहारे इधर-उधर खिसकता रहता है (चित्र ८१, b)।

इसके प्रतिकूल उस वक्त दृश्य का रूप बिलकुल भिन्न होता है, जब पृष्ठभूमि गहरे रग की समानान्तर धारियो की बनी होती है। जैसे पृष्ठभूमि मे सीढियाँ, खपरैल की छत या ईटो की इमारत मौजूद हो, तो इस दशा मे जहाँ कही तार इन धारियो को काटता हुआ दीखता है, वही पर तार अजीब तरह से फूला हुआ और टूटा-सा प्रतीत होता है। यही प्रभाव उस वक्त भी उत्पन्न होता है जब तार को किसी मकान की छत के हाशिये के समक्ष देखे (चित्र ८१, d)—सक्षेप मे, जब कभी ठोस वस्तु का सीधा किनारा तिरछी दिशा मे समानान्तर धारियो को काटता है, तभी यह प्रभाव उत्पन्न होता है।

चित्र ८१—**टेलीग्राफ के तार उद्दीपन के दृष्टान्त उत्पन्न करते हुए।**

इन तमाम विरूपणो का मूल कारण इस तथ्य मे निहित है कि आँख के अन्दर वर्त्तन तथा अपूर्ण पुनर्निर्माण के कारण प्रतिबिम्बो का रूपान्तर हो जाता है। दो सलग्न धरातलो के दर्मियान की सीमारेखा अपने मस्तिष्क मे हम उस ठौर बनाते है जहाँ प्रकाश की चमक सबसे अधिक तेजी से बदलती है, और प्रतिबिम्ब यदि विवर्त्तन के कारण अस्पष्ट बनता हो, तो यह सीमारेखा आदर्श ज्यामिति-रेखा से भिन्न प्राप्त होती है। अत गहरे रग के क्षेत्र पर चमकीले प्रकाश के क्षेत्र का अवलोकन करने पर इसकी सीमारेखा नियमित रूप से तनिक बाहर की ओर हट जाती है। इस प्रकार के स्थानान्तर को 'उद्दीपन' कहते है जिसके कतिपय दृष्टान्त अभी दिये गये है।

७१ चकाचौध

आँख मे प्रवेश करनेवाले प्रकाश की तीव्रता जब बहुत अधिक होती है तो 'चकाचौध' उत्पन्न होती है। चकाचौध से दो बातो का बोध होता है—(क) दृष्टिक्षेत्र मे

तेज प्रकाश-स्रोत का प्रगट होना जिसके कारण दृष्टिक्षेत्र के शेष भागो मे वस्तुएँ स्पष्ट रूप मे प्रेक्षणीय नही हो पाती है, तथा (ख) आँख मे पीडा या सिर मे चक्कर आने की अनुभूति।

प्रथम दशा का उदाहरण हमे मिलता है जब सामने से आती हुई मोटरकार की हेडलाइट का प्रकाश हमारी आँखो मे पडता है। इस परिस्थिति मे सडक के किनारे के वृक्षो को हम देख नही पाते है और उनमे करीब-करीब हम टकरा-से जाते है। सामने के दृश्य का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने पर हम पाते है कि प्रत्येक वस्तु प्रकाश के धुन्ध से ढक जाती है, जो रात मे दीखने वाले वृक्षो तथा अन्य वस्तुओ की धुँधली शक्ल के मुकाबले मे कई गुना अधिक चमक वाला होता है। यह व्यापक धुन्ध, आँख के वर्त्तन-कारी माध्यम द्वारा आपाती किरणो के परिक्षेपण से उत्पन्न होता है—यह माध्यम पर्य्याप्त रूप से दानेदार तथा विषमागी होता है ताकि प्रकाश का यह परिक्षेपण कर सके। ऐसा भी जान पडता है कि चकाचौध उत्पन्न करने वाला प्रकाश न केवल पुतली से होकर नेत्र मे प्रवेश करता है, बल्कि इसका कुछ अश सीधे स्केलेरोटिक मे से होकर भी भीतर प्रवेश कर जाता है। फिर प्रकाशित भाग के इर्द-गिर्द रेटिना की सुग्राहिता बहुत कम हो जाती है, अत चकाचौध वाले प्रकाशस्रोत से 10° या इससे अधिक मान के कोण पर सुग्राहिता के घटने का प्रभाव परिक्षेपण जनित धुन्ध की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है।

चकाचौध से उत्पन्न होनेवाली द्वितीय अनुभूति हम उस वक्त स्पष्ट महसूस करते है जब दिन के समय हम आकाश को निहारते है। हमे किसी मकान के साये मे खडा होना चाहिए ताकि सीधे सूर्य की ओर हमे न देखना पडे। ज्यो-ज्यो हमारी दृष्टि इस आकाशीय पिण्ड के नजदीक आती है त्यो-त्यो इसके प्रकाश की प्रचण्ड द्युति अधिक असहनीय होती जाती है, और यदि आकाश मे बादल मौजूद हुए तब तो इस चमक को आँखे कठिनाई से ही सह पाती है। यह देखकर आश्चर्य होता है कि चकाचौध के पीडाजन्य प्रभाव की अनुभूति के प्रति एक व्यक्ति दूसरे के मुकाबले मे कितना अधिक सवेदनशील होता है।

अध्याय ७

वर्ण (रंग)

सभी सजीव पदार्थ रंग के प्रति सचेष्ट होते हैं—

गेटे, थियरी आव कलर्स।

७२. रंगों का मिश्रण

रेलगाड़ी के कम्पार्टमेण्ट के अन्दर से बाहर का दृश्य खिड़की में से जब हम देखते हैं तो रेलगाड़ी की दूसरी ओर के दृश्य का भी हलका प्रतिबिम्ब हमें साथ ही साथ दिखलाई पड़ता है। दोनों ही दृश्यों के प्रतिबिम्ब एक दूसरे के ऊपर पड़ते हैं, अतः ऐसी दशा में हम रंगों के मिश्रण का अध्ययन कर सकते हैं। नीले आकाश का परावर्त्तन हरे खेत के प्रतिबिम्ब को हरे-नीले रंग का कर देता है और मिश्रण के फलस्वरूप रंग हलका और अपेक्षाकृत कम संपृक्त बन जाता है—रंगों के मिश्रण में यह विशिष्टता सदैव ही पायी जाती है।

चित्र ८२—दुकान की खिड़कियों से देखने पर रंगों का संमिश्रण।

आजकल दुकानों की खिड़कियों में काँच प्रायः फ्रेम के बिना ही लगाये जाते हैं, अतः स्थिति O से काँच में से होकर खिड़की की भीतरी देहली A देखी जा सकती है और साथ

ही साथ प्रतिबिम्ब द्वारा बाहरी देहली B भी उसी सीध मे दिखलाई पडती है (चित्र ८२)। यदि खिडकी की देहली के भाग A और B के रग एक दूसरे से भिन्न हो तो हमे रगो के सम्मिश्रण का एक बढिया दृष्टान्त प्राप्त होता है। इस दशा मे आँख की स्थिति यदि ऊँची होती है तो मिश्रण का रग A के रग से अधिक मेल खाता है, और आँख की स्थिति यदि नीची हुई तो मिश्रण से प्राप्त रग B के रग से अधिक मेल खाता है—इससे यह भी सिद्ध होता है कि कॉच का पर्दा बडे आयतन कोण वाली किरणो मे अधिक प्रकाश परावर्त्तित करता है।

प्रकृति द्वारा रगो का मिश्रण एक और तरीके से भी होता है। दूर से देखने पर घास के मैदान के फूलो के रग मिलकर एकदिल शेड उपस्थित करते है, अत हरी घास पर खिले डैन्डीलियन के फूल पीले और हरे वर्ण का मिश्रित रग उत्पन्न कर सकते है। सेव और नासपाती के वृक्षो की कलियाँ समष्टि रूप से गॅदला सफेद (जी हाँ गदला सफेद ही) रग उत्पन्न करती है—जो श्वेत और गुलाबी रग की कलियो, हरी पत्तियो, नासपाती के वृक्ष के सुर्ख परागाशय और सेव के पेड के पीले परागाशय आदि के रगो के परस्पर मिलने से बनता है। रगो के इस मिश्रण का भौतिकीय विवेचन इस प्रकार है—हमारी ऑख प्रत्येक प्रकाश-बिन्दु का विसरणयुक्त प्रतिबिम्ब बनाती है (§५९) अत विभिन्न रगो के स्थल एक दूसरे के ऊपर पडते है। बिन्दुचित्रण[1] की शैली के लिए चित्रकार इस मानसिक प्रभाव का उपयोग प्राय करते है।

७३. प्रतिबिम्ब और रगो की क्रीड़ा

चित्रकला पर लिखते हुए लिनार्दो दा विन्ची कहता है—'अत चित्रकारो! अपने मानव आकृति के चित्रण मे दिखलाइए कि वस्त्र-परिधान के रग का प्रतिबिम्बन सन्निकट की त्वचा के शेड को किस तरह प्रभावित करता है। आप गौर वर्ण के शरीर का चित्रण करना चाहते है जिसके गिर्द केवल वायु है। गौर या सफेद वर्ण स्वय कोई रग नही होता, बल्कि आसपास के रग को ही आशिक रूप से ग्रहण करके यह अपना रग बदलता है। यदि श्वेत वस्त्र-परिधान मे किसी महिला को खुले मैदान मे आप देखे, तो सूर्य के रुख उसके शरीर की चमक इतनी अधिक होगी कि करीब-करीब सूर्य के समान ही उससे ऑखो को चकाचौध लगेगी। किन्तु उसके शरीर का वह पार्श्व जो आकाश की रोशनी से प्रकाशित है, कुछ-कुछ नीले शेड की झलक लिये हुए होगा। यदि वह महिला,

1 Pointillism (विशुद्ध रगो के पृथक् बिन्दुओं द्वारा इस शैली के चित्र तैयार किये जाते हैं। विभिन्न रगों के रजकों को परस्पर मिलाते नहीं है जैसा कि सामान्य शैली मे किया जाता है।)

मैदान में, धूप से प्रकाशित घास और सूर्य के दर्मियान खडी हो तो उसके गाउन के परत और मोड जो घास के रुख पर पडते है, हरी घास से परावर्त्तित रग प्रदर्शित करेगे।

७४. कलिल[1] दशा मे धातुओ का रग—बैगनी रग के खिडकी के कॉच

कतिपय पुराने मकानो की खिडकियो के कॉच के रग सुन्दर बैगनी शेड के होते है। कई बरसो तक सूर्य के प्रकाश के खिडकी पर गिरते रहने के कारण कॉच यह बेगनी शेड धारण कर लेता है। आधुनिक समय मे कॉच पर क्वार्ट्ज-पारे के लैम्प के प्रचण्ड प्रकाश को डाल कर रग के समावेश की यही क्रिया अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक पूरी की जा सकती है। कॉच मे मौजूद मैनगनीज की अत्यल्प मात्रा कलिल विलयन का रूप धारण कर लेती है जिसके कारण विशेष शेड का रग उत्पन्न होता है, रग का यह शेड न केवल धातु के प्रकाशीय गुणो पर निर्भर करता है, बल्कि उसके कणो के आकार पर भी। यदि उस कॉच को आप गरम करे तो यह बैंगनी रग उड जाता है।

फैरेडे एक स्थान पर लिखते है कि उनके जमाने मे कॉच का रग बैगनी रग मे परिवर्त्तित हो जाता था जबकि उस पर धूप केवल ६ महीने तक ही पड चुकी हो[2]!

७५. विसर्ग लैप[3] का रंग—गैस मे प्रकाश का अवशोषण

विज्ञापन के रग-बिरगे विद्युत् दीप जो रात्रि मे हमारे नगरो को परीलोक मे परिवर्त्तित कर देते है, कॉच की नली के बने होते है जिनके अन्दर अल्प दाब पर गैस भरी होती है। और इनके अन्दर से विद्युत्-विसर्जन होता रहता है। नली मे निअन गैस भरने से सुर्ख रग का प्रकाश मिलता है,पारे की वाष्प भरने से नीले या हरे रग का प्रकाश मिलता है—नीले रग के लिए नली का कॉंच नीले रग का लेते है और हरे रग के लिए कॉच हरे रग का लेते है। ऐसा करने से पारे के वाष्प के प्रकाश के अन्य रग कमजोर पड जाते हैं। पीले रग की नली मे हीलियन भरने से पीला प्रकाश मिलता है।

नीले रग के प्रकाश वाली सीधी विसर्गनली मे एक अद्भुत बात देखने को मिलती है। नली के एक दम निकट खडे होकर उसकी लम्बाई की दिशा मे देखिए तो आप उसके रग मे फर्क पायेगे, इस दशा मे यह नीले-बैगनी रग की दीखती है जबकि आडी दिशा से देखने पर इसके प्रकाश मे नीले-हरे रग की मात्रा अधिक रहती है। इसका कारण यह है कि नली के अन्दर से आनेवाले पारे के प्रकाश मे मुख्यत तीन विकिरण मौजूद होते है, बैगनी, नीला और हरा, जिसमे प्रथम रग का प्रकाश हलका होता है।

1 Collidol 2. Exp-Res in Chem Phy p, 142 3 Discharge lamp

यह सम्मिलित विकिरण जब गैस की पतली तह को पार करके बाहर निकलता है तो प्रकाश हमारी आँख को नीले-हरे रग का प्रतीत होता है। किन्तु लम्बाई की दिशा मे देखने पर दूर के सिरे से आँख तक आनेवाले प्रकाश को वाष्प के अन्दर एक लम्बी दूरी तय करनी पडती है, तो वाष्प मे नीले रग की अपेक्षा हरे रग के प्रकाश का अधिक अवशोषण होता है, अत नली के प्रकाश के अवयव रगो के अनुपात मे बिलकुल अन्तर आ जाता है, तदनुसार रग की आभा भी बदल जाती है।

पारे की हरी, नीली और बैंगनी उत्सर्जन रेखाएँ मिलकर तीन रेखाओ का एक समुदाय बनाती है जो स्तर ^3P और ^3S के दर्मियान इलेक्ट्रानो के आदान-प्रदान से उत्पन्न होती है (चित्र ८३)। इलेक्ट्रान जब $^3P_2$ तथा $^3P_0$ के भास-स्थायी[1] स्तर
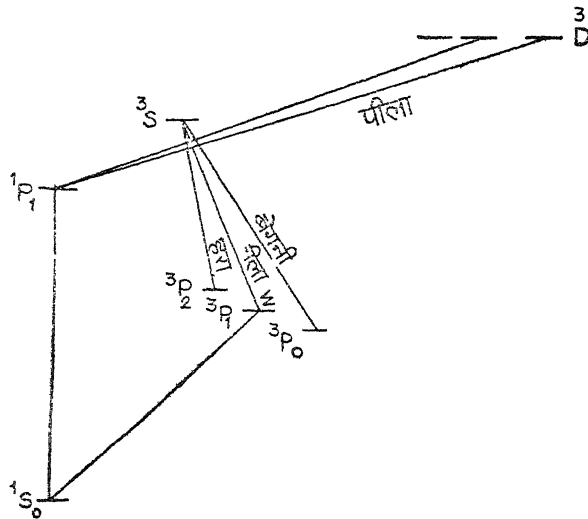
चित्र ८३—**पारे के परमाणु मे इलेक्ट्रान का स्थानान्तरण मुख्यत. जिसके कारण पारे के दृष्टिगोचर होनेवाले स्पैक्ट्रम की उत्पत्ति होती है।**

पर गिरते है तो क्रमश हरी और बैंगनी रेखाएँ उत्पन्न होती है—ये स्तर ऐसे है कि इन पर से इलेक्ट्रान निम्न ऊर्जा वाले स्तरो पर आसानी से नही कूद पाते है, अत. इन स्तरो पर उपस्थित इलेक्ट्रान वाले परमाणुओ की सख्या सदैव ही असाधारण रूप से अधिक होती है, और इसीलिए अवशोपण भी इन्ही रगो का अत्यधिक होता है।

1. Metastable

इसी कारण से हरी नली को जब लम्बाई की दिशा मे देखते है, तो प्रकाश मे पीले-पन का पुट बढ जाता है। यहाँ भी दो विकिरण विशेषरूप से प्रबल रहते हैं—पारे की हरी और पीली रेखाएँ। हमारे निरीक्षण से एक बार फिर इस बात का समर्थन होता है कि इन दोनो प्रकाशो मे से हरे रग का अवशोषण अधिक मात्रा मे होता है।

७६. पर्किन्ज प्रभाव[1], शकु और दंड

लिनार्दो दा विन्ची ने इस बात का पता लगाया था कि हलकी छाया मे हरे और नीले रग अनिवार्यत अधिक चटक प्रतीत होते है और प्रकाशित भागो मे पीले, लाल तथा सफेद रग चटकीले दीखते है।

हाशिये पर खिले हुए जीरैनियम[2] के अगारे सदृश चटकीले लाल रग के फूल और उनकी पृष्ठभूमि की गहरे हरे रग की पत्तियो के विपर्यास पर ध्यान दीजिए। गोधूलि की वेला मे और उसके कुछ देर बाद यह विपर्यास उलट-सा जाता है, अब पत्तियो के मुकाबले मे फूलो का रग अधकार लिये हुए दीखता है। कदाचित् आप आश्चर्य्य करे, कि 'क्या सुर्ख रग के चटकीलेपन की तुलना हरे रग के चटकीलेपन से की जा सकती है, किन्तु इनके चटकीलेपन मे अन्तर इतना तीव्र दीखता है कि इस प्रश्न के बारे मे सदेह की कोई गुजाइश बाकी नहीं रह जाती।

किसी चित्रशाला मे नीले और सुर्ख रग के दो चित्र आप को मिल सकते है जो दिन के प्रकाश मे समान रूप से चटकीले दीखेगे। आप पायेगे कि सन्ध्या के झुटपुटे मे इन दोनो मे नीले रग का चित्र अपेक्षाकृत बहुत अधिक चटकीला प्रतीत होता है, इतना अधिक कि लगता है मानो उसमे से प्रकाश की किरणे विकिरित हो रही हो!

ये 'पर्किन्ज प्रभाव' के दृष्टान्त है। इसका कारण यह है कि सामान्य प्रकाश मे हमारी आखे रेटिना के उन कोषो की सहायता से अवलोकन करती है जिन्हे 'शकु' कहते है, किन्तु बहुत हलकी रोशनी मे उन कोषो की सहायता से आँखे देखती है जिन्हे 'दण्ड' कहते है। शकु की सुग्राहिता पीत वर्ण के लिए सबसे अधिक होती है और दण्ड की सुग्राहिता हरे-नीले प्रकाश के लिए सर्वाधिक होती है—इससे इस बात का समाधान हो जाता है कि विभिन्न रगो के चटकीलेपन का अनुपात, प्रकाश की चमक की तीव्रता के बदलने पर, क्यो उलट जाता है।

1 Purkinje Effect 2 Geraniums

दण्ड केवल प्रकाश की अनुभूति करा पाते है, रग की नही। चन्द्रमा का प्रकाश इतना मन्द होता है कि व्यावहारिक रूप मे केवल दण्ड ही कार्यशील हो पाते है, अत इस दशा मे भू-दृश्य के रगो की पहचान नही हो पाती, एक तरह से हम रगो के लिए अन्धे बन जाते है। रग के प्रति यह अन्धापन, अधेरी रात मे और भी अधिक परिपूर्ण बन जाता है (§६३)।

७७ अत्यन्त तेज रोशनी के प्रकाश-स्रोत का रग श्वेत-सा दीखता है

अपने शहरो मे प्राय हम देख सकते है कि सन्ध्या को किस तरह विभिन्न प्रकाश-सूत्र नहर के पानी मे प्रतिविम्बित होकर प्रकाशस्तम्भ के रूप मे प्रगट होते है (§१४)। यह आश्चर्य्य की बात है कि इस दशा मे कितनी आसानी से उनके रगो का अन्तर पहचाना जा सकता है, जैसे प्रदीप्त गैस के लैम्प और साधारण बिजली के लैम्प के रगो का अन्तर, जबकि स्वय ये प्रकाश-स्रोत लगभग समान रूप के श्वेत रग के ही दीखते है। इसी प्रकार उनके रगो का अन्तर उस वक्त अधिक स्पष्ट हो उठता है जब उन्हे हम कुहरे मे से या खिडकी के धुँधले काँच मे से देखते है। और आँखो के एक विचित्र गुण के कारण जब इनके रग उस वक्त बहुत कुछ श्वेत वर्ण सरीखे दीखने लग जाते है जब इनका प्रकाश एक अत्यन्त ही चमकीले विन्दु पर केन्द्रित हो।

७८ रगीन काँच मे से भू-दृश्य को देखने पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव

गेटे अपनी कृति फार्बेनलेहर[1] मे लिखता है--'पीत वर्ण से आँखे प्रफुल्लित होती है, हृदय आह्लादित होता है तथा आत्मा प्रसन्न होती है और तुरन्त हम राहत का अनुभव करते है।' पीले रग के काँच मे से बाहर का दृश्य देखने पर कितने ही व्यक्तियो के मनमे हँसने की इच्छा होती है। नीला वर्ण सभी चीजो पर मातम की छाया डालता है। भलीभाँति प्रकाशित भू-दृश्य को सुर्ख रग एक भयानक दृश्य मे तबदील कर देता है—'कयामत के दिन सारे आसमान और धरती पर यही रग छा जायगा।' हरा रग अत्यन्त अस्वाभाविक लगता है,सम्भवत इसलिए कि आकाश हरे रग का बहुत कम ही दीखता है। वागन कोनिंग ने भू-दृश्य के रगो को दो श्रेणियो मे विभाजित करने का प्रयत्न किया था,एक जो प्रसन्नता की अनुभूति देते है, दूसरे जो एक तरह की 'मनहूसियत' लाते है। उसके अनुसार लाल, पीला, नारङ्गी रग तथा पीत-हरे वर्ण प्रथम श्रेणी मे आते है और नीला-हरा, नीला तथा बैगनी द्वितीय श्रेणी मे।

1 Farbenlehre

भू-दृश्य के रगो के मनोवैज्ञानिक प्रभाव के लिए देखिए वागन कोर्निश की 'सीनरी एण्ड द सेन्स आव साइट'[१] (केम्ब्रिज १९३५)।

सजावट तथा प्रतीको के रगो के मनोवैज्ञानिक प्रभाव का अध्ययन अनेक लेखको ने किया है, यद्यपि खुले प्रदेश मे ऐसा कम ही किया गया है।

७९ सिर को नीचे करके रगो का प्रेक्षण करना

भू-दृश्य के रगो मे अधिक जीवनतत्त्व, उनकी समृद्धिशालिता को परिवर्द्धित रूप मे देखने के लिए चित्रकारो ने एक पुराना गुर अपनाया है—वह यह कि दृश्य की ओर पीठ करके खडे हो जाइए, पैरो को फैला दीजिए, और तब नीचे को इतना झुकिए कि टॉगो के बीच से पीछे का दृश्य दीख सके। रगो के गाढेपन और चटकीलेपन की अनुभूति की वृद्धि, ऐसा ख्याल किया जाता है, इस बात से सम्बद्ध है कि सिर मे इस दशा मे रुधिर का प्रवाह बढ जाता है।

वागन कोर्निश का कहना है कि बगल के सहारे लेटने पर भी यही प्रभाव उत्पन्न होगा। इसके लिए वह कारण यह बतलाता है कि ऊर्ध्व दिशा की दूरी ऑकने मे जो अतिशयोक्ति साधारणतया हमे मिलती है (§११०) इस दशा मे दूर हो जाती है, फलस्वरूप रगो का उतार-चढाव तीव्रतर दीखता है। प्रश्न यह है कि सिर को झुकाने पर जो विशेष प्रबल प्रभाव उत्पन्न होता है, क्या उसके लिए भी यही व्याख्या लागू होती है?

1. Vaughan Cornish Scenery and the Sense of Sight (Cambridge 1935)

अध्याय ८

उत्तर-बिम्ब[1] तथा विपर्यास[2] की घटनाएँ

८० प्रकाश की अनुभूति की अवधि

हम रेलगाडी मे बैठे है और हमारी उलटी दिशा मे दूसरी रेलगाडी तेजी से निकल जाती है। कुछ क्षणो के लिए सामने की रेलगाडी की खिडकियो मे से बाहर का दृश्य हमे स्पष्ट दिखलाई पडता है, इसमे झिलमिलाहट करीब-करीब बिलकुल ही नही होती, हाँ, दृश्य उतना चटकीला नही होता।

या फिर प्लैटफार्म पर खडे होने पर सामने से गुजरती हुई रेलगाडी की खिडकियो मे से उस पार के दृश्य बखूबी हम देख पाते है या खिडकी के कॉच मे से प्रतिबिम्बित होने वाले दृश्य हम देख सकते है। दोनो ही दशाओ मे यदि हम सामने की ओर दृष्टि जमाये रखे तो प्रतिबिम्ब हमे बिना किसी झिलमिलाहट के दिखाई पडेगे।

यह मालूम करने के लिए कि प्रकाश और अन्धकार को एक के बाद दूसरे किस रफ्तार से सामने आना चाहिए ताकि झिलमिलाहट न उत्पन्न हो, आइए ऊँची छडो वाले एक लम्बे बाडे के समानान्तर चले। अपने कदम की रफ्तार इतनी रखिए कि बाडे की ओर एक ही दिशा मे बराबर घूर कर देखते रहने पर दृश्य एक समान प्रकाश का प्रतीत हो।

चलने की न्यूनतम रफ्तार जबकि दृश्य की झिलमिलाहट गायब हो जाय, दो बातो पर निर्भर करती है, 'प्रकाश' और 'अन्धकार' के बीच प्रकाशमात्रा के अनुपात पर, तथा प्रदीपन-काल तथा अन्धकार-काल की अवधि के अनुपात पर भी। दर असल बात यह है कि आँख पर प्रकाश का प्रभाव रोशनी के हटने पर तुरन्त ही खत्म नही हो जाता, बल्कि यह धीरे-धीरे घटता है। इसीलिए सिनेमा के अन्दर आँखो मे प्रकाश के प्रभाव का लगातार घटना-बढना अवश्य एक जटिल क्रिया-विधि होती है।

एक सुविख्यात दृष्टान्त है तुषार के टुकडो का गिरना। लिनार्दो-दा-विन्ची का

1 After-image 2 Contrast

ध्यान इस बात पर आकृष्ट हुआ था कि 'नजदीक के तुषार के टुकडे तेजी से गिरते हुए प्रतीत होते है जब कि कुछ फासले पर के ये टुकडे धीरे-धीरे गिरते हुए जान पडते है, और निकट वाले टुकडे ऐसे जान पडते है माना वे सफेद धागे की लच्छियो के रूप मे लटक रहे हो जबकि दूर वाले तुषार कण लटकते हुए प्रतीत नही होते।'

वर्षा की बूँदे जो कि तुषार कणो की अपेक्षा बहुत अधिक तेजी से नीचे गिरती है, नीचे की ओर सदैव ही पतली रेखा की शक्ल मे खिच उठी-सी दीखती है।

८१ रेलिग (या कटघरा) का प्रभाव[1]

रेलिग लगे हुए कटघरे मे से देखने पर तेजी से घूमते हुए पहिये की तीलियाँ आश्चर्य्य-जनक नमूना प्रदर्शित करती है। विचित्र बात तो यह है कि यह नमूना पूर्णतया समित ही बनता है, अत इसे देखकर पता नही लगा सकते कि पहिये के घूमने की दिशा क्या है (चित्र ८४)। यद्यपि पहिये मे आगे की ओर तेज हरकत होती है और वृत्ताकार गति भी इसमे मौजूद होती है, किन्तु यह नमूना तो करीब-करीब स्थिर ही बना रहता है। स्टेशन पर रेलगाडी की रफ्तार जब धीमी होने लगती है तो उस वक्त सामने के रेलिंग मे से इजिन के बडे पहियो का अवलोकन करने पर यह घटना अपने सर्वांगपूर्ण रूप मे दिखलाई देती है। यह प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त उभरता है जब पहिये की रिम पर प्रकाश अधिक हो, तीलियो पर अपेक्षाकृत मन्द प्रकाश हो, तथा कटघरे की छडो के दर्मियान के खुले भाग सँकरे हो। यदि पहिया केवल घूम रहा है, किन्तु आगे को लुढक नही रहा है तब रेलिग मे से देखने पर यह नमूना नही दिखलाई देता है—इसके प्रगट होने के लिए तो परिभ्रमण गति तथा आगे बढने की रैखिक गति, दोनो का सयोजन आवश्यक है।
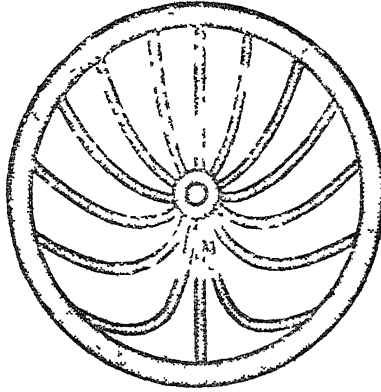
चित्र ८४—रेलिंग या कठघरे की घटना रेलिंग के लम्बे कटघरे में से देखने पर घूमता हुआ पहिया।

1. P M Roget, Philos Trans, 115, 131, 1825

इस प्रभाव की व्याख्या करने के लिए हम प्रारम्भ इस बात से करते है कि निरीक्षक पहिये पर ही आँख बराबर गडाये रहता है अत जो कुछ भी वह देखता है उसका सम्बन्ध वह पहिये से ही जोडता है। इस प्रयोग मे इस शर्त को पूरा होना है और ऊपर दिये गये उदाहरण मे प्रकाश आदि का क्रम इसी शर्त के अनुसार है। अत कल्पना कीजिए कि पहिया एक स्थिर धुरी O के गिर्द घूम रहा है और रेलिंग के खुले भाग एक समान गति से इसके सामने से गुजर रहे है (चित्र ८५ क)।
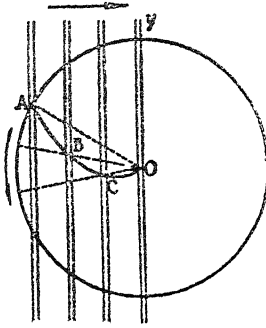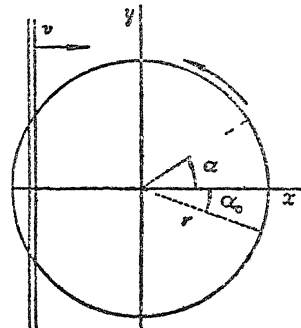
चित्र ८५—क चित्र ८५—ख

मान लीजिए,आरम्भ की स्थिति मे रेलिंग का एक खास खुला भाग पहिये के किसी विशेष तीली को बिन्दु A पर काटता है, तो इस तीली का एक हिस्सा इस खुले भाग मे से A पर दिखलाई पडेगा। कुछ क्षणो बाद यह तीली स्थिति OB पर होगी और रेलिंग का खुला भाग भी दाहिने खिसक आया होगा ताकि उस तीली को यह बिन्दु B पर काटे। कुछ और देर बाद कटान बिन्दु C पर पहुँचेगा। इस प्रकार बिन्दु-बिन्दु करके पूरी वक्ररेखा ABCO का निर्माण हो जायगा। अत नमूने की प्रत्येक वक्ररेखा उन बिन्दुओ के पथ से निर्धारित होती है जिनपर एक खास खुले प्रदेश और एक खास तीली के कटान बिन्दु को हम बहुत ही थोडे समय के लिए देख पाते है। आँख मे बननेवाले प्रतिबिम्ब के प्रति दृष्टि-निर्बन्धता[1] के गुण के कारण, ऐसा प्रतीत होता है मानो समूची वक्र रेखा को एक साथ ही देख रहे हो, बशर्ते पहिया काफी तेज रफ्तार से घूम रहा हो।

बाद मे आने वाली प्रत्येक तीली उसी खुले प्रदेश में से अपनी बारी पर दृष्टिगोचर होकर उसी जाति की वक्ररेखा का निर्माण करेगी, किन्तु इनकी परामितियाँ[2] भिन्न

1. Persistence of vision 2 Panameter

होगी—इसका अर्थ यह है कि एक सर्वांगपूर्ण नमूना वन जायगा। यदि बाद मे आनेवाला रेलिग का खुला प्रदेश, पूर्वगामी खुले प्रदेश की स्थिति पर आने मे उतना ही समय लेता है जितना समय एक तीली की स्थिति पर आने के लिए बादवाली तीली लेती है, तब स्पष्ट है कि वक्ररेखाओ का वही समुदाय बार-बार बनेगा और समूचा नमूना स्थिर बना रहेगा। किन्तु रेलिग के दर्मियान की दूरियाँ यदि थोडी भिन्न हो, तो प्रत्येक तीली खुले प्रदेश पर निर्दिष्ट समय से बस कुछ पहले (या कुछ देर बाद) पहुँचेगी। इस दशा मे प्रत्येक वक्ररेखा उसी जाति की अन्य वक्ररेखा मे परिणत हो जायगी, विशिष्टता यह होगी कि इसकी परामिति भिन्न होगी। तब हमे ऐसा नमूना दीखेगा जो धीरे-धीरे अपना स्वरूप, पहिये के घूमने की दिशा मे, या उसकी उलटी दिशा मे बदलेगा। किन्तु स्वरूप के इस परिवर्त्तन मे नमूने की पूरी आकृति नही घूमती है, क्योकि यह नमूना तो ऊर्ध्वरेखा के गिर्द बराबर समित ही बना रहता है। अन्त में इस बात की भी सम्भावना हो सकती है कि रेलिग के दर्मियान के खुले प्रदेश बहुत ही अधिक चौडे और वहुत ही सँकरे हो। मिसाल के लिए रेलिग के खुले प्रदेश की चौडाई यदि तीलियो के बीच की चौडाई की आधी हुई तो तीलियो की सख्या की दो गुनी वक्ररेखाएँ हम नमूने मे देखेगे, और यदि खुले प्रदेशो की चौडाई एक-सी हुई तो यह नमूना भी स्थिर रहेगा।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सामान्यत धीरे-धीरे अपना स्वरूप बदलने-वाले नमूने ही अकसर बनेगे। वास्तविकता तो यह है कि पूरी रेलिग की लम्बाई इतनी कम होती है कि समूची घटना एक सेकण्ड या उससे भी कम समय मे समाप्त हो जाती है, अत नमूने के परिवर्त्तन को महसूस करने का मौका मुश्किल से मिल पाता है। व्यक्तिगत रूप से मैने इस घटना का कई बार अवलोकन किया है।

इन वक्ररेखाओ के सेट के लिए समीकरण आसानी से प्राप्त किये जा सकते है। चित्र ८५ ख की भाँति नियामक अक्ष चुनिए, तथा रेलिग के खुले प्रदेश का वेग v मान लीजिए। यदि प्रारम्भिक स्थिति मे सदिश त्रिज्या[1] (अर्थात् तीली) का झुकाव x अक्ष के साथ कोण α_0 के बराबर है और समय t के उपरान्त इसका झुकाव x अक्ष के साथ α हो, तब t क्षण पर तीली और खुले प्रदेश के कटानबिन्दु के नियामक[2] निम्नलिखित होगे —

$$x = vt \text{ तथा } y = x \tan\alpha$$

1 Radius vector 2 Co-ordinates of the point of intersection

साथ ही भ्रमणगति तथा रैखिक गति के पारस्परिक सम्बन्ध से हमे निम्नलिखित मिलते है, (तीली की लम्बाई r है) —

$$\frac{vt}{r} = \alpha - \alpha_0 \text{ या } x = r(\alpha - \alpha_0)$$

ऊपर के दोनो समीकरणो से α को हटाने पर वाञ्छित वक्रसमूह का समीकरण इस प्रकार मिलता है —

$$y = x \tan\left(\frac{x}{r} + \alpha_0\right)$$

जैसा कि इस समीकरण से प्रगट है, जब α_0 और x के चिह्न एक साथ ही बदलते है तो y का मान एक-सा बना रहता है, अर्थात् नमूने की आकृति y अक्ष के गिर्द समित बनी रहती है।

चलती हुई गाडी के बडे पहिये मे से सामने के दूसरे पहिये को देखने पर और भी अधिक जटिल किस्म के नमूने बनते है। दृष्टिरेखा थोडी भी जब दाहिने या बाये हटती है ताकि दोनो पहिये एक-दूसरे को पूर्णतया ढक नही पाते है तो अत्यन्त ही विचित्र किस्म की वक्र आकृतियाँ दिखलाई पडती है। फैरेडे का ध्यान भी इन पर आकृष्ट हुआ था, इन्हे देखकर उसे चुम्बकीय बल रेखाओ का स्मरण हो आया था। ये उन बिन्दुओ द्वारा निर्मित पथरेखाएँ है, जहाँ दोनो पहियो की तीलियाँ एक दूसरे को काटती है।

८२. झिलमिलाते प्रकाश-स्रोत

हमारे बडे नगरो मे रात को अनुपम दृश्य उपस्थित करने वाले विज्ञापन दीपो मे नारङ्गी प्रकाशवाले निअनलैम्प हमारा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करते है। ये ५० प्रतिसेकण्ड आवृत्ति वाली प्रत्यावर्त्ती विद्युतधारा द्वारा परिचालित होते हैं। इसका अर्थ है कि लैम्प की चमक प्रतिसेकण्ड १०० बार घटती-बढती है क्योकि धारा की दिशा के एक बार के प्रत्यावर्त्तन मे चमक दो बार महत्तम मान प्राप्त करती है। प्रकाश की चमक का घटना-बढना इतनी तीव्र गति से होता है कि सामान्यत हमे इस घट-बढ का आभास नही होने पाता।

किन्तु यदि आप किसी चमकदार वस्तु को नियनलैम्प के प्रकाश मे इधर से उधर हरकत दिलाएँ तो इस तरह बनने वाला ज्योति-पथ एक लहरदार प्रदीप्त सतह-जैसा दीखेगा। उस वस्तु को जितनी अधिक तेज रफ्तार से हरकत दिलायेगे उतनी ही अधिक दूर-दूर ये लहरे बनेगी। लहरो की सख्या से प्रत्यावर्त्ती विद्युत्धारा की आवृत्ति का हिसाव लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि एक चमकीली कैची को दायरे मे

घुमाएँ ताकि वृत्त का घेरा प्रति सेकण्ड चार बार बनता है और इससे बननेवाले ज्योति-पथ मे १२ तरग-श्रृग दिखाई देते है तो धारा की प्रबलता के परिवर्त्तन की आवृत्ति १२×४=४८ होगी और स्वय प्रत्यावर्त्ती धारा की आवृत्ति २४ प्रति सेकण्ड।

तेजी से दोलन करते हुए दर्पण मे प्रकाश-स्रोत को परावर्तित कराकर भी यह प्रयोग किया जा सकता है या कॉच के टुकडे द्वारा, जैसे आपके चश्मे का कॉच, या आँख के सामने अपने चश्मे के एक लेन्स को आप एक छोटे दायरे मे घुमा सकते है (देखिए § ४०)। फिर अन्त मे,प्रकाश की झिलमिलाहट केवल नगी आँखोसे भी देखी जा सकती है—दृष्टि को पहले नियन लैम्प के निकट किसी बिन्दु पर जमाइए और तब एकदम अचानक, निगाह की दिशा बदल दीजिए। इस दशा मे रेटिना पर प्रकाशस्रोत का प्रतिबिम्ब हरकत करता है और प्रकाशद्युति की प्रत्येक वृद्धि की अनुभूति पृथक्-पृथक् होती है। दृष्टिरेखा की दिशा को अकस्मात् बदल सकना, जबकि प्रकाशस्रोत से ध्यान हटने न पाये, अत्यन्त दुस्तर कार्य है—प्रेक्षक कभी इस प्रयत्न मे सफल हो पाता है, कभी नही।

फिलामेण्ट वाले ऐसे विद्युत लैम्पो की भी परीक्षा कीजिए जिनमे प्रत्यावर्त्ती धारा बह रही हो। ऐसे लैम्प के प्रकाश मे चॉदी की कलई वाली पेन्सिल को इधर से उधर घुमाएँ तो लहरे स्पष्ट रूप से दीखेगी। जिससे यह सिद्ध होता है कि धारा की प्रबलता के प्रत्येक चढाव पर फिलामेण्ट का ताप और उससे निकलने वाली रोशनी थोडी बढती है, और उनके दर्मियान ये घट जाती है (चित्र ८६)। जब लैम्प मे सरल धारा भेजी जाती है तो लहरे कत्तई नही दिखलाई पडती है।
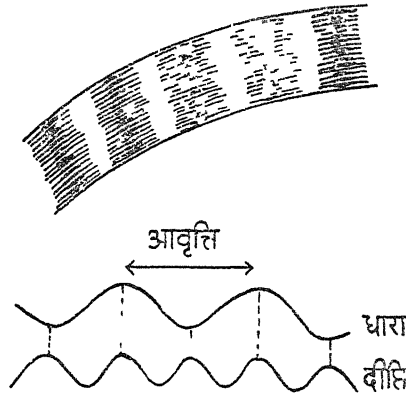
चित्र ८६—**विद्युत लैंप के प्रकाश की तीव्र गति की झिलमिलाहट को दृष्टिगोचर कराना।**

कभी-कभी रात मे जब रेलगाड़ी के डिब्बे की खिडकी मे से बाहर को देखते है तो प्रमुख सडको को प्रकाशित करने के लिए लगाये गये सोडियम लैम्प की ज्योति मे निम्न-लिखित परिस्थिति मे लहरे अत्यन्त स्पष्ट देखी जा सकती है। इसके लिए खिडकी और आपके बीच लगभग ६ फुट का फासला होना चाहिए और खिडकी का काँच भीगा

होना चाहिए या धुँधला, और इसकी भीगी सतह पर ऊपर से नीचे की ओर धारियाँ सी पडी हो। दूर के लैम्प की रोशनी ज्योही काँच के कुछ भागो पर पडती है, त्योही लहरे दृष्टिगोचर हो जाती है। इसका कारण यह है कि पानी की परत की मोटाई सर्वत्र एक समान नही रहती, धारियो की जगह, पुँछ जाने के कारण, पतले प्रिज्मो की एक कतार-सी बन जाती है जिनके कोर तथा वर्त्तनकोण ऊर्ध्व दिशा मे पडे होते है, और इन कोणो के मान एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक बदलते रहते है। इनके कारण लैम्प के प्रतिबिम्ब अनियमित रूप से और कभी-कभी अचानक स्थानान्तरित होते है। चूँकि इन लैम्पो मे प्रत्यावर्त्ती धारा बहती है, अत ठीक तेजी से हरकत करनेवाले चश्मे के लेन्स के प्रयोग की तरह ही इस दशा मे भी लहरे दिखलाई पडती है।

८३. केन्द्रीय तथा परिमितीय दृष्टि-क्षेत्र के लिए अविरत दर्शन की आवृत्ति

ऐसे स्थानो पर जहाँ पावर-हाउस की सप्लाई की प्रत्यावर्त्ती विद्युत्धारा की आवृत्ति कम होती है (प्रति सेकण्ड २०–२५), निम्नलिखित दिलचस्प प्रयोग किया जा सकता है। पहले विद्युत लैम्प की ओर देखिए, लैम्प तो स्थिर चमक का प्रतीत होगा जबकि दीवार की रोशनी झिलमिलाती दीखेगी। फिर दीवार पर दृष्टि जमाइए, तो दीवार की प्रदीप्ति स्थिर, अविरत जान पडती है जबकि इस बार लैम्प का प्रकाश झिलमिलाता हुआ मालूम पडता है।[1]

स्पष्ट है कि सीधे केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र तथा परिमितीय दृष्टिक्षेत्र की दर्शन-अनुभूति की क्षमता अवश्य विभिन्न है। सम्भव है कि लैम्प की प्रकाश-तीव्रता का चढाव-उतार बहुत हलका हो और परिमितीय दृष्टि के लिए प्रकाश-तीव्रता की अन्तरीय-सीमा[2] अपेक्षाकृत कम ही हो। इसकी जाँच के लिए किसी चमकीली वस्तु को लेकर उसी लैम्प के प्रकाश मे हम एक वृत्त का निर्माण करते है। तो प्रकाश-पथ मे नियमित दूरियो पर प्रकाश की ज्योति का चढाव-उतार उस वक्त भी स्पष्ट दिखलाई पडता है जबकि हम नजर जमाकर उसे देखते है (§ ८२)। इसका अर्थ है कि हमारे ठीक सामने की ओर की दृष्टि प्रकाश-तीव्रता के थोडे अन्तर के लिए भी पर्य्याप्त सुग्राही अवश्य है, किन्तु प्रकाश झिलमिलाहट की तेज रफ्तार की तब्दीली का साथ देने मे यह असमर्थ रहती है।

1. Woog C. R **168**, 1222, **169**, 93, 1919. 2 Differential threshold

प्रयोगशाला के प्रयोग भी आँखो की इस विशिष्टता का अस्तित्व प्रमाणित करते हैं।

सबसे अधिक विचित्र बात तो यह है कि न केवल परिमितीय क्षेत्र मे हम प्रकाश-प्रदीप्ति के चढाव-उतार की अनुभूति करते है, बल्कि उनकी प्रतिसेकण्ड सख्या को भी हम कम करके आँकते है, हमे ऐसा प्रतीत होता है कि कदाचित् ये चढाव-उतार प्रतिसेकण्ड १० बार से अधिक नही हो रहे है।

८४. सायकिल का पहिया जो प्राकाश्य रूप से स्थिर रहता है

सामने से गुजरती हुई सायकिल का पहिया बहुत कुछ ऐसा ही दीखता है जैसा चित्र ८७ मे प्रदर्शित है। हमारी आँखे तीलियो के केवल उन भागो का अवलोकन कर पाती है जो केन्द्र के निकट स्थित है, क्योकि यहाँ ये धीरे-धीरे हरकत करती है।

चित्र ८७—तेजी से घूमता हुआ साइकिल का पहिया इस प्रकार दीखता है।

किन्तु ऐसी सडक के किनारे जरा इतमीनान से बैठ जाइए जहाँ से बहुत-सी सायकिले अवश्य गुजरने वाली हो। सडक के किसी खास स्थल पर नजर गडाइए। ज्योही सायकिल का अगला पहिया आपके दृष्टिक्षेत्र मे प्रवेश करता है, आपको अचानक ही बिलकुल स्पष्ट, बहुत-सी तीलियाँ उस वक्त भी दिखलाई देती है जबकि सायकिल तेजी से हरकत कर रही हो। यह बहुत ही अद्‌भुत घटना है—खास बात यह है कि लगातार एक ही दिशा मे नजर गडाये रखे, निकट आती हुई सायकिल की ओर नही देखना है।

व्याख्या इस प्रकार है—पहिये की परिधि का वह बिन्दु जहाँ पहिया जमीन को छूता है, एक क्षण के लिए स्थिर हो जाता है, क्योकि इस बिन्दु पर ही जमीन की पकड
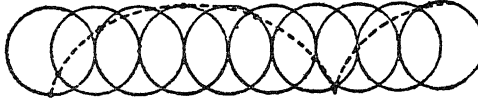
चित्र ८८—घूमते हुए पहिये की परिधि के एक बिन्दु का गमनपथ। जैसा कि हम देखते है, प्रत्येक चक्कर मे यह बिन्दु एक क्षण के लिए, जब कि यह भूमि को स्पर्श करता है, स्थिर हो जाता है।

पहिये पर पडती है (चित्र ८८)। अत इस बिन्दु के निकट तीलियो के सिरे भी क्षण भर के लिए स्थिर होंगे, जबकि धरती से दूर पडनेवाले बिन्दु रैखिक और भ्रमण-गति के सम्मिलित प्रभाव के कारण वक्र मार्ग-रेखा पर चलेगे। अत यदि हम भूमि के किसी खास स्थल पर ध्यान जमाकर देखते रह सके तो पहिये के निचले भाग करीब-करीब स्थिर ही जान पडेगे——दरअसल वास्तविक प्रेक्षण मे दिखलाई भी ऐसा ही पडता है। मेरा विश्वास है, तीलिया सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त दिखलाई पडती है जबकि ये हमारे परिमितीय दृष्टिक्षेत्र मे पडती है। अत पर्य्याप्त सम्भावना इस बात की है कि परिमितीय दृष्टिक्षेत्र मे प्रकाश की तेज रफ्तार की झिलमिलाहट के अवलोकन की क्षमता इस मामले मे भी कारगर होती है।

८५ मोटरकार का पहिया जो प्राकाश्य रूप से स्थिर प्रतीत होता है*

जब मोटरकार निकट आती हे तो इसकी रफ्तार चाहे सामान्य ही क्यो न हो, पहिये की तीलियाँ एक दूसरे से पृथक् नही देखी जा सकती है। रेटिना के प्रत्येक बिन्दु पर प्रकाश और अन्धकार की झिलमिलाहट इतनी तेज रफ्तार से होती है कि रेटिना पर उत्पन्न होने वाले प्रभाव एक दूसरे मे मिल जाते है, आख की पेशियाँ, दृष्टि-रेखा द्वारा शकु का निर्माण उतनी तेज रफ्तार से नही कर पाती जितनी तेज रफ्तार की आवश्यकता प्रत्येक तीली को अलग-अलग देख सकने के लिए होती है।

फिर भी रह-रहकर ऐसा होता है कि बस अत्यन्त छोटे लमहे के लिए तीलियाँ दृष्टिगोचर हो जाती है, जैसे, फोटो के 'स्नैपशाट' का दृश्य। आम तौर पर कुछ थोडी-सी तीलियाँ ही दिखलाई पडती है, किन्तु कुछ अवसरो पर मुझे प्रतीत होता है कि समूचा पहिया बिलकुल साफ दीख जाता है। सायकिल के पहिये के स्थिर दीखने की व्याख्या इस दशा के लिए सन्तोषजनक साबित न हो पायेगी। यह इतनी अद्भुत घटना है कि कभी-कभी यह कहा जाता है कि कुछ क्षणो पर पहिया वास्तव मे स्थिर हो जाता है जो नितान्त असम्भव बात है!

किन्तु बहुत शीघ्र ही इस बात का पता चल जाता है कि मोटरकार के पहिये का क्षणिक दर्शन लगभग उस वक्त होता है जब हम अपने पैरो को जमीन पर मजबूती से जमाते है, या पहिया उस वक्त भी दीख जाता है जब हम अपने चश्मे को ठकठकाते है (यदि आप का चश्मा निकट-दृष्टि का हे) या जब हम अपने सिर को झटका देते है।

* आजकल बहुत कम ही मोटरकार के पहियो मे तीलियाँ पायी जाती है। अत यह घटना कम अवसरो पर ही देखी जा सकती ह।

सम्भवत इन परिस्थितियो मे हमारी आँख या दृष्टिरेखा की दिशा मे तीव्र गति से अव-मन्दित कम्पन होने लगता है जो कुछ विशेष तीलियो की हरकत के अनुरूप ही होता है, अत अत्यल्प काल के लिए रेटिना पर बने उनके प्रतिबिम्ब स्थिर बने रह जाते है। कदाचित् नेत्र-गोलक का अक्ष ही इधर से उधर की दोलनगति करता है या कि नेत्र-गोलक समष्टिरूप से आँख के कोटर मे हिलता है (रैखिक गति) ? क्या हम परिकल्पना कर सकते है कि इस प्रकार के हल्के झटके खाकर आँख अपने अक्ष के गिर्द अनियमित चक्रीय गति करने मे समर्थ होती है ?

आँख की कम्पन-गति का प्रत्यक्ष प्रमाण निम्नलिखित से प्राप्त होता है, यदि हम रात्रि मे तेज कदमो से झूमते हुए चले और दूर के लैम्प पर नजर स्थिर जमाये रखे तो देखेगे कि हर कदम के साथ प्रकाश-स्रोत एक छोटा-सा वक्रपथ बनाता है जो बहुत कुछ चित्र ८९ की आकृति के मानिन्द होता है। यह घटना अकसर उस वक्त भी दिखलाई पडती है जब प्रेक्षक स्थिर खडा रहकर सामने से गुजरती हुई मोटरकार को देखता है। इसका समाधान इस बात मे मिलता है कि इस दशा मे आँख मे अनजाने ही, अचानक, थोडी-बहुत हरकत हो जाती है। आँख मे हलके झटके की गति प्राय होती है, इस बात को हम प्रमाणित कर सकते है यदि अस्त होते हुए सूर्य्य को सावधानी के साथ, एक क्षण के लिए देखे। तो अब उत्तर-प्रतिबिम्ब मे नन्हे-नन्हे कई काले बिन्दु देख पडेगे न कि अकेली, एक काली अविरत पट्टी (देखिए § ८८)।

चित्र ८९

८६. वायुयान का स्क्रू प्रोपेलर जो प्राकाश्य रूप से स्थिर दीखता है

वायुयान के एक यात्री ने देखा कि तेज रफ्तार के बावजूद भी घूमते हुए प्रोपेलर के ब्लेडो को वह पृथक्-पृथक् करके देख पाता था बशर्ते वह तिरछे करीब ४५° के कोण पर दृष्टि डाले अर्थात् परिमितीय दृष्टिक्षेत्र द्वारा अवलोकन करे। फिर भी प्रोपेलर प्रति सेकण्ड २८ बार घूमता है, अत प्रति सेकण्ड यह ५६ बार रोशनी को झिलमिलाता है ! तो 'प्रोपेलर' के देखने की अनुभूति और कुछ नही है, बल्कि अत्यन्त ऊँची आवृत्ति की झिलमिलाहट की रोशनी का ही प्रभाव है। इस बात से कि केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र के मुकाबले मे परिमितीय क्षेत्र मे इस घटना का अवलोकन अधिक आसानी से किया जा सकता है, पैरा ८३ मे दिये गये निष्कर्ष के लिए महत्त्वपूर्ण समर्थन प्राप्त होता है।

ये घटनाएँ उस वक्त और भी विलक्षण होती है जब प्रोपेलर कुछ धीमी गति से घूमता है, मिसाल के तौर पर, जब वायुयान उडान शुरू करने की तैय्यारी कर रहा

होता है। इन दशाओ मे इनकी झिलमिलाहट की गति सेकण्ड संख्या को आँकने मे हम आश्चर्य्यजनक गलतियाँ करते है। केन्द्रीय दृष्टिक्षेत्र मे तो यह सख्या काफी ऊँची लगभग २५ प्रतिसेकण्ड प्रतीत होती है, किन्तु परिमितीय क्षेत्र मे ऐसी अनुभूति होती है मानो प्रकाश-प्रदीप्ति की झिलमिलाहट प्रति सेकण्ड केवल १० बार ही हो रही है। यह उसी तरह की घटना है जैसी हमने अभी झिलमिलाते हुए लैम्प के सम्बन्ध मे देखी है (§ ८३)।

८७. सायकिल के घूमते हुए पहिये का प्रेक्षण

आम तौर पर सायकिल के घूमते हुए पहिये की तीलियाँ अलग-अलग दिखलाई नही देती, ये एक-दूसरे से मिलकर धुँधला पर्दा-सा बनाती है, जो केन्द्र के निकट सबसे अधिक मटमैला होता है और रिम की ओर अधिक दीप्तिमान्। समतल सडक पर पडनेवाली पहिये की छाया मे प्रदीप्ति का वितरण इसी प्रकार का होता है। यह छाया कितनी गाढी होती है? प्रत्येक तीली की मोटाई ०८ इच होती है और रिम पर उनके बीच का फासला औसत रूप से २ इच होता है। सडक के किसी बिन्दु पर प्रकाश कितनी देर तक पडता है, यह समय पहिये के खुले भाग के क्षेत्रफल तथा पूरे पहिये के क्षेत्रफल के अनुपात पर निर्भर करता है। अत ऊपर दिये गये अङ्को की मदद से हम लिख सकते है —

$$\frac{\text{सडक पर प्रकाश जितनी देर तक गिरता है}}{\text{पूरा समय जबतक पहिये पर प्रकाश गिरता है}} = \frac{२}{२ + ०८} = \frac{१००}{१०४}$$

ताल्बो के नियमानुसार इससे हमारी आँखो पर वही प्रभाव पडता है मानो पहिये से बनने वाली छाया एक स्थिर प्रदीप्ति की हो, जो सडक के बिना छाया वाले भाग की प्रदीप्ति के १००/१०४ के बराबर है। किन्तु सूर्य की किरणें पहिये पर लम्बवत् नही गिरती, अत छाया मे तीलियाँ एक दूसरे के अधिक निकट आ जाती है, यद्यपि उनकी मोटाई उतनी ही बनी रहती है। अत स्पष्ट है कि रिम के नजदीक की छाया आसपास की भूमि के मुकाबले मे ४ से लेकर ८ प्रतिशत तक कम प्रदीप्ति वाली होगी, और केन्द्र के निकट प्रदीप्ति की यह कमी सम्भवत बढकर १० से २० प्रतिशत तक हो जाती है। फिर भी प्रदीप्ति के इस अन्तर की अनुभूति कर सकना नितान्त कठिन होता है क्योंकि तुलना की जाने वाली दोनो पृष्ठभूमियो को एक दूसरे से अलग करनेवाली टायर की छाया

अत्यन्त गाढी बनती है। केन्द्र की ओर प्रदीप्ति का क्रमिक ह्रास मुश्किल से ही निगाह की पकड मे आता है, क्योकि हमारी प्रवृत्ति किसी घिरी हुई सर्वाङ्गपूर्ण आकृति को समष्टि रूप से देखने की होती है, और इस मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण प्रदीप्ति का वास्तविक अन्तर हमारी निगाह से चूक जाता है।

किन्तु विशेष ध्यान से देखने पर पहिये की छाया मे आम तौर पर हम एक या अधिक प्रकाश-छल्ले मौजूद पाते है (चित्र ९०)। अक्सर ये सीमित लम्बाई की वक्र आकृतियाँ होती है जो एक ओर खुली रहती है। सायकिल से उतर कर उस स्थल की जॉच कीजिए जहॉ प्रकाश का चाप बनता है। यह उस बिन्दु के सामने पडेगा जहॉ दो तीलियॉ एक दूसरे को काटती है—दर असल हम कह सकते है कि ऐसे प्रत्येक कटान-बिन्दु पर एक तीली विलुप्त हो जाती है, अत छाया का औसत गाढापन अवश्य कम हो जाना चाहिए। लेकिन यह अन्तर कितना हलका होता है! फिर भी हमारी ऑखे कितने स्पष्ट रूप से इसकी अनुभूति कर लेती है, क्योकि इस दशा मे तुलना की जानेवाली प्रदीप्तियॉ किसी विभाजक रेखा द्वारा पृथक् न होकर एक दूसरे के साथ सटी हुई रहती है। तीलियो के परस्पर गुँथे जाने के क्रम का वर्णन करना मुश्किल है, बहुधा चार तीलियो का समूह एक साथ गुँथा रहता है और इसी क्रम की पहिये के पूरे भाग मे बार-बार पुनरावृत्ति होती है। दो तीलियो का कटान-बिन्दु एक विशिष्ट वक्ररेखा बनाता है जो एक छोटे, चमकीले चाप की शक्ल की दीखती है। पहिया जब दो तीलियो के दर्मियान की दूरी का चौगुना फासला तय कर लेता है तो छोटे चाप का पुनर्निर्माण होता है। फिर, प्रत्येक समूह मे यदि दो कटान-बिन्दु मौजूद हो तो एक बिन्दु दूसरे बिन्दु के पथ का अनुसरण करता हुआ प्रतीत होता है और तब छोटा चाप विशेष रूप से चमकीला दिखाई पडता है। पहली दशा मे चाप अगल-बगल की छाया के मुकाबले मे १ प्रतिशत अधिक दीप्तिमान् दीखेगा और दूसरी दशा मे २ प्रतिशत अधिक। किन्तु चूँकि छाया मे तीलियाँ प्रक्षेपित होने पर आम तौर पर कुछ निकट आ जाती है और चमकीले चाप रिम से कुछ फासले पर ही बनते है, अत दीप्ति-अन्तर
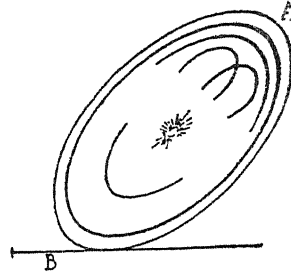
चित्र ९०—सायकिल के घूमते हुए पहिये मे प्रकाश तथा छाया की वक्र रेखाएँ।

का परिमाण सम्भवत ३ से ६ प्रतिशत तक हो सकता है। अत ये परिमाण, प्रदीप्ति अन्तर की न्यूनतम मात्राएँ प्रगट करते हैं जो दो सलग्न धरातलो के लिए नजर की पकड मे आ सकती है। यद्यपि सडक के धरातल का जो यहाँ प्रक्षेपण पर्दे-जैसा काम करता है, समतल न होना एक बडी खामी है, फिर भी प्रयोगफल हमारे पूर्ववर्त्ती अनुमान के साथ बखूबी मेल खाते है (§६७)।

इस बात का कारण प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिए कि प्रकाश के चाप और छल्ले, पहिये की दीर्घवृत्तीय छाया के सिरे A के निकट आम तौर पर सबसे अधिक चमकीले बनते हैं और इसकी जाँच कीजिए कि क्यो इनकी आकृति बिन्दु A पर वैसी नही है जैसी B पर।

अपनी सायकिल के पहिये की छाया को देखने के बजाय जब सीधे ही आप बगल मे जाती हुई सायकिल के पहिये को देखते है तो ये ही चाप और छल्ले और भी स्पष्ट दीखेगे, क्योकि इस दशा मे ये बिलकुल साफ उभरते है, बिना किसी धुँधलेपन के (देखिए §२)। चमकीली पृष्ठभूमि के सामने तीलियाँ काली प्रतीत होती है, अत ये अधिक चमकीले दीखते है, किन्तु जब मटमैले रग की पृष्ठभूमि के सामने पहिये पर सूर्य का प्रकाश पडता है तो छल्ले अपेक्षाकृत मन्द प्रकाश के दीखते है।

तेजी से घूमते हुए सायकिल के पहिये से प्रदर्शित होनेवाले विलक्षण प्रभावो मे इसे आखिरी प्रभाव मत समझ लीजिए। अक्सर ऐसा होता है कि जब आप चक्कर लगाते हुए पहिये की छाया का अवलोकन करते है तो तडित्कौंध की तरह तेजी से तीलियो की रेखाएँ स्पष्ट चमक उठती है, ऐसा तभी होता है, जब आपकी आँखे तीव्र-गति से वृत्ताकार घेरे मे हरकत करती है, ताकि अनजाने ही तीलियो की छाया के साथ उसी रफ्तार से आपकी निगाह भी चलती है (देखिए §८५)। यदि आप चश्मा पहनते है तो लेन्स को झटके की थोडी हरकत देना, इस बात के लिए पर्य्याप्त होगा कि तीलियो को अलग-अलग विचित्र झटके खाकर चलते हुए आप देख सके। किन्तु सबसे अधिक विलक्षण छाया आप उस वक्त देखते है जब आप ऊँची-नीची सतह की पत्थर जडी सडक पर सायकिल चलाते है।
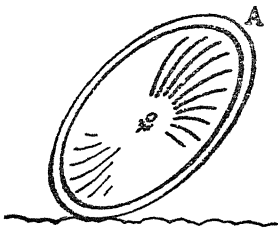
चित्र ९१——पत्थर जडी हुई सड़क पर से गुजरने वाली सायकिल के पहिये की छाया मे वक्र रेखाएँ।

पृष्ठभूमि के ऊँची-नीची होने के बावजूद भी आप छाया के करीब उसी भाग मे त्रिज्यीय वक्ररेखाओ का समूह स्पष्ट देखते है। ये रेखाएँ उस दशा मे भी प्रगट होती है जब आप स्वय तो समतल सडक पर सायकिल चलाते है, किन्तु पहिये की छाया फुटपाथ के ऊँचे-नीचे पत्थरो पर पडती है। स्पष्ट है कि प्रक्षेप-पर्दे की असमतल सतह का प्रभाव वैसा ही होता है जैसा चश्मे के लेन्स को ठक-ठकाने पर। किन्तु रेखाओ की वक्रता कैसे उत्पन्न होती है ? और वे आम तौर पर छाया के उसी भाग A मे ही क्यो दीखती है ?

ऊपर वर्णन की गयी वक्ररेखाओ के अतिरिक्त एक और विचित्र हलकी आकृति भी बनती है, अवश्य इसे तभी देखा जा सकता है जब एकदम नयी चमचमाती हुई तीलियोवाली सायकिल पर सूर्य की किरणे गिरती है।

८८ उत्तर-प्रतिबिम्ब

इन प्रेक्षणो के समय बहुत ही अधिक सावधानी बरतिए ! आँखो पर अत्यधिक जोर मत दीजिए ! एकसाथ लगातार दो से अधिक प्रेक्षण मत कीजिए !

अस्त होते हुए सूर्य को ध्यान से देखिए और तब आँखे बन्द कर लीजिए[1]। अब आँखो मे बाद मे बनने वाले उत्तर प्रतिबिम्ब मे कई नन्हे-नन्हे गोल मडल मौजूद होगे जो इस बात के प्रमाण है कि उस अल्पकाल मे जबकि आपकी नजर सूर्य पर गडी रही थी, आपकी आँखो ने हलके झटको मे गति की है। ये मडल आपको विशेष छोटे प्रतीत होगे क्योकि अपनी प्रचण्ड चमक के कारण सूर्य आपको वास्तविक आकार से कुछ बडा ही दीखता है, इसका सही आकार तो उत्तर-प्रतिबिम्ब मे ही प्राप्त होता है।

अपनी आँखे फिर खोलिए—जिस ओर आप दृष्टि डाले, उधर ही आपको उत्तर-प्रतिबिम्ब दीखेगे। जितने ही अधिक फासले की वस्तु पर आप प्रतिबिम्ब प्रक्षेपित करेगे उतने ही अधिक बडे आकार के ये उत्तर प्रतिबिम्ब प्रतीत होगे। अवश्य उनके कोणीय व्यास तो सदैव एक समान ही बने रहते है। यदि आपको मालूम है अमुक वस्तु फासले पर है, फिर भी यह आँख पर उतना ही बडा कोण बनाती है, जितना बडा कोण एक निकट की वस्तु बनाती है तो आप सहज ही अपने दैनिक अनुभव के आधार पर इस नतीजे पर पहुँचते है कि दरअसल इन दोनो मे दूर वाली वस्तु अवश्य बडी होगी।

1. Goethe, Theory of Colours (1840) Titchener, Experimental Psychology (New, York) I, 1, 29, I, 2, 47

मटमैली पृष्ठभूमि पर उत्तर प्रतिबिम्ब हलका दीखता है (पाजिटिव उत्तर प्रतिबिम्ब)। इसकी अनुभूति अच्छी तरह की जा सकती है यदि आँख को बन्द करके उसे हथेलियो से ढक दे क्योकि पलके पारदर्शी होती है। इसके प्रतिकूल प्रकाशित पृष्ठभूमि पर उत्तर प्रतिबिम्ब मटमैले रग के बनते है (निगेटिव उत्तर-प्रतिबिम्ब)। स्पष्ट है कि तीव्र प्रकाश रेटिना को स्थानीय तौर पर उत्तेजित कर देता है अत. उस प्रकाश की तो अनुभूति बनी रहती है, किन्तु साथ ही साथ अब रेटिना के उस भाग की सुग्राहिता नवीन प्रकाश-अनुभूतियो के लिए घट जाती है।

इसी प्रकार सूर्य की अपेक्षा कम प्रकाश देनेवाले प्रकाश-स्रोत अपेक्षाकृत हलके उत्तर-प्रतिबिम्ब उत्पन्न करते है। इस दशा मे रेटिना पर प्रभाव डालनेवाली उत्तेजना कुछ सेकण्डो मे या एक सेकण्ड से कम समय मे ही बहुत ही हलकी पड जाती है, केवल रेटिना की श्रान्ति बची रह जाती है अत अब केवल प्रकाशित पृष्ठभूमि पर विलोम उत्तर-प्रतिविम्ब देखे जा सकते है।

रगीन प्रकाश-स्रोतो के लिए उपर्युक्त दशा मे उत्तर-प्रतिबिम्ब श्वेत रग से काले रग मे तब्दील होने के वजाय अपने पूरक रग मे तब्दील हो जाता है, अत लाल रग हरे-नीले रग मे परिणत हो जाता है, नारङ्गी रग नीले मे, पीला रग बैगनी मे, हरा रग गुलाबी मे और इसी तरह रग का परिवर्त्तन उलटे क्रम मे भी चलता है।

सन्ध्या की झुटपुटे की बेला उत्तर-प्रतिबिम्ब के प्रेक्षण के लिए सर्वोत्तम समय है। गेटे द्वारा वर्णित उत्तर-प्रतिबिम्ब की सभी प्रमुख घटनाएँ सन्ध्या को ही देखी गयी थी। इस बेला मे आँखे पूर्ण विश्राम की अवस्था मे रहती है तथा पश्चिम के आकाश की रोशनी और पूर्व के आकाश के अन्धकार के बीच विपर्यास स्पष्टतम होता है।

अपनी कृति 'फाबेन्‌लेहर्' मे गेटे लिखता है 'एक सन्ध्या को जैसे ही मै सराय के कमरे मे घुसा, एक सुन्दर लडकी मेरी ओर आयी। उसका चेहरा चमचमाते हुए गौर वर्ण का था, बाल काले रग के थे और वह चटकीले लाल रग की बॉडिस पहने हुई थी। मुझसे कुछ फासले पर जब वह खडी थी तो मैने उस झुटपुटे मे उसे गौर से देखा। एक क्षण बाद जब वह चली गयी तो सामने की सफेद दीवार पर मुझे एक काला चेहरा दिखलाई दिया, जो चमकीले प्रकाश से परिवेष्टित था और इस स्पष्ट आकृति के वस्त्र-परिधान खूबसूरत समुद्री हरे रग के थे।'[1]

1 Goethe, Theory of Colours

कहा जाता है कि आग की नारगी–पीले रग की लपटो को आध घण्टे तक देखते रहने के उपरान्त लोगो को उदय होता हुआ चन्द्रमा नीला प्रतीत होता है।[1]

रात को आँधी-तूफान के समय तडित् कौध के देखने पर उसका उत्तर प्रतिबिम्ब, कभी-कभी प्रकाशित सफेद दीवार या धुँधले प्रकाश के आकाश की पृष्ठभूमि पर साँप की तरह टेढी-मेढी, काले रग की पतली रेखा की शक्ल मे देखा जा सकता है।[2]

सूर्यास्त के बाद समुद्र-तटपर खडे होकर यदि फासले पर देखे और क्षितिज पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक नजर दौडाएँ तो एक क्षण ऐसा आता है जबकि हलके प्रकाश वाले आकाश और अन्धकारमय समुद्र के बीच का अन्तर वास्तव मे दृष्टिगोचर नही हो पाता। स्पष्टत इसका कारण यह है कि जितनी अधिक देर तक कोई प्रकाश आँख को उत्तेजित करता है उतना ही उसका उत्तेजक प्रभाव क्षीण हो जाता है, इस क्रिया से रेटिना में श्रान्ति आ जाती है। वास्तव मे यह बात सच है, इसका पता इससे लगता है ज्योही हम अपनी दृष्टि थोडा ऊपर ले जाते है, त्योही समुद्र का निगेटिव उत्तर प्रतिबिम्ब आकाश पर ज्योति की धारी का रूप धारण कर लेता है। यदि हम अपनी दृष्टि नीचे की ओर ले आये तो समुद्र की सतह के सामने हम आकाश का अन्धकारमय उत्तर प्रतिबिम्ब देख सकते है।[3]

८९. एलिजाबेथ लिनो की घटना

प्रख्यात वनस्पतिशास्त्री की पुत्री, एलीजाबेथ लिनो ने एक सन्ध्या को यह देखा कि नास्टूर्टियम[4] के नारगी रग के फूलो से प्रकाश की ज्योति विकीर्ण हो रही थी। लोगो ने सोचा कि इस घटना का सम्बन्ध विद्युत् से है। डार्विन ने दक्षिणी अफ्रीका की लिली जाति के फूल पर प्रयोग करके इस प्रेक्षण का समर्थन प्राप्त किया था, तथा हैगरेन, डाउडेन और पहले के अन्य आन्वेषको ने भी इस प्रेक्षण की पुष्टि की है— ये प्रेक्षण सदैव ही उषा या सन्ध्या के झुटपुटे मे प्राप्त किये गये थे। कैनन रसेल ने इस प्रेक्षण की पुनरावृत्ति मेरीगोल्ड तथा प्रज्वलित झाडी (डिक्टैम्नस फ्रेक्सिनेला) के साथ की थी और साथ ही साथ उन्होने यह बतलाया था कि कुछ लोगो को यह ज्योति अन्य व्यक्तियो की अपेक्षा अधिक स्पष्ट दिखलाई देती है। फिर भी ऐसा प्रतीत होता

1. Cossells Book of Sports and Pastımes (London, 1903) p, 405
2 Nat, **60**, 341, 1905
3. Helmholtz, Physıologısche Optık, 3rd Ed II, 202
4 Nasturtıum (Tropaeolum majus)

है कि यह घटना, जिसके वारे मे उन दिनो समूचे ग्रन्थ लिखे गये, केवल उत्तर-प्रतिबिम्ब के कारण उत्पन्न होती है। गेटे को भी ये उत्तर-प्रतिबिम्ब उस वक्त दीख पडे थे जब उसने चटकीले रग के फूलो पर नजर गडायी और फिर रेतीली सडक पर दृष्टि डाली। पियेनी, पूर्वीय देश के पॉपी, मेरीगोल्ड तथा पीले क्रोकस के फूलो से मनमोहक हरे, नीले तथा बैगनी रग के उत्तर-प्रतिबिम्ब प्राप्त हुए थे।[1] ये निरीक्षण विशेषतया सन्ध्या के समय प्राप्त होते है तथा ज्वाला-जैसी चमक केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब एक क्षण के लिए हम दृष्टि एक ओर हटाते है—उत्तर प्रतिबिम्ब मे इस तरह के सभी व्योरे के प्राप्त होने की आशा की जा सकती है।

किसी व्यक्ति को जब यह इतमीनान हो जाय कि उसे यह घटना बहुत ही स्पष्ट दिखाई दे रही है तो उसे चटकीले रग के कागज के फूल को असली फूल के निकट रखकर यह देखना चाहिए कि कागज के ये फूल उस घटना का प्रदर्शन करते है या नही।

९०. उत्तर-प्रतिबिम्बो मे रगो का परिवर्तन

उत्तर प्रतिबिम्बो के विलुप्त होने की द्रुत गति भिन्न रगो के लिए विभिन्न होती है, विशेषतया उस दशा मे जबकि प्रकाश का प्रभाव अत्यन्त प्रबल रहा हो। यही कारण है कि सूर्य तथा अत्यन्त उजले पदार्थ के उत्तर-प्रतिबिम्ब रगीन दीखते है। साधारणतया मटमैली पृष्ठभूमि पर यह उत्तर-प्रतिबिम्ब पहले तो हरे-नीले रग का बनता है, फिर यह गुलाबी रग का हो जाता है।

'सन्ध्या के करीब मैने लुहारखाने मे ठीक उस समय प्रवेश किया जबकि दहकता हुआ लोहे का एक टुकडा हथौडे के नीचे रखा गया था। कुछ देर तक उसे गौर से देख चुकने के बाद मै पीछे मुडा तो सामने, कोयले के खुले हुए गोदाम पर नजर पडी। गुलाबी वर्ण का विशालकाय प्रतिबिम्ब मेरी ऑखो के समक्ष उतराता रहा, और जब उस काली पृष्ठभूमि से नजर हटा कर मैने हलके रग की लकडी की सतह की ओर देखा तो यह प्रतिबिम्ब कम प्रकाशित पृष्ठभूमि पर अर्द्ध हरे रग का और अधिक प्रकाशित पृष्ठभूमि पर अर्द्ध गुलाबी रग का प्रगट हुआ'[2]

धूप मे हम बर्फ के ढेर को देख रहे हो, या जब पुस्तक पढते हो जिसपर धूप पड रही हो, तो निकट की प्रत्येक चमकदार वस्तु हमे गुलाबी रग की दीखती है, बाद मे साये मे पडी गहरे रग की प्रत्येक वस्तु मनमोहक हरे रग की दीखती है। यहॉ भी चमकीली पृष्ठभूमि पर बनने वाले उत्तर-प्रतिबिम्ब के रग अन्धकारमय पृष्ठभूमि पर बनने वाले

1 Goethe, Theory of Colours 2 Goethe, Theory of Colours

उत्तर-प्रतिबिम्ब के रग के पूरक होते है। कुछ प्रेक्षको के अनुसार ये उत्तर-प्रतिबिम्ब गुलाबी के बजाय रक्तिम वर्ण के बनते है।

आशिक रूप से इसका एक और कारण भी हो सकता है, सूर्य का प्रकाश न केवल हमारी आँखो मे प्रवेश करता है बल्कि आँख के ऊपर भी वह गिरता है। आँख के ऊपर गिरने वाले प्रकाश का कुछ भाग पलको और आँख के कोटर को पार करके भीतर पहुँचता है तो इसका रग रक्त वर्ण का हो जाता है। हमारा दृष्टिक्षेत्र इस सामान्य लाल रग की रोशनी से पूर्णतया भर जाता है, ओर यह हमे उस वक्त स्पष्ट दिखाई पडता है जब आस-पास की चीजे मटमॅले काले रग की होती है। मिसाल के तौर पर काले अक्षर लाल दिखाई देते है। अब अगर हम छाया मे चले जायँ, या घर के अन्दर, तो लाल वर्ण के लिए हमारी आँख की श्रान्ति अब भी बनी रहती है, अत सभी चमकीले भाग हरे दिखलाई पडते है।

अस्त होते हुए सूर्य की ओर मुँह करके चले, तो भू-दृश्य की सभी अँधेरी वस्तुएँ हमे लाल रग की दिखलाई पडती है, यह प्रभाव उस वक्त विशेष प्रबल होता है जब हम एक क्षण के लिए इस तरह का आयोजन कर लेते है कि आँख पर सूर्य की रोशनी तो न पडे, किन्तु भू-दृश्य को हम देखते रह सके।

सन्ध्या के प्रकाश मे काले अक्षर लाल रग[1] के देखे गये है, सम्भवत इस कारण कि क्षितिज के निकट के सूर्य की किरणे पाठक की आँखो पर पड रही थी।

९० अ समकालीन विपर्यास[2]

सफेद ड्राइग कागज का तख्ता लीजिए, इसे अपने सामन सीधा ऊर्ध्व धरातल मे रखिए और ऐसी खिडकी के निकट खडे होइए जिसपर धूप न पड रही हो। कागज को खिडकी के धरातल के समकोण रखते हुए दीवार के समानान्तर देखिए तो कागज भलीभाँति प्रकाशित और प्रदीप्त दीखेगा। किन्तु कागज को अब खुली हुई खिडकी के निकट ले आइए ताकि क्षितिज के ऊपर के आकाश के एक भाग को कागज ढक ले, अब अचानक ही कागज काला दिखलाई देने लगता है! तथापि पहले की अपेक्षा इस पर अब कम रोशनी नही पड रही है, बल्कि इसके प्रतिकूल यह तो खिडकी के और भी नजदीक आ गया है, अत इस पर गिरने वाली रोशनी पहले से अधिक होगी। बात तो यह है कि इस दशा मे विपर्यास उत्पन्न करने वाली पृष्ठभूमि बदल जाती है।

1 Ibid 2 Simultaneous Contrasts

यह सरल प्रयोग मौलिक सिद्धान्त प्रगट करता है। खुले आकाश मे इस प्रकार के प्रभाव अक्सर दिखलाई देते है।

९१. परस्पर सटी हुई विभिन्न प्रदीप्तियो की सतहो के बीच की विपर्यास-सीमारेखा

मुख्यत सन्ध्या को, अन्धकारमय मकानो की कतार का ढाँचा हलके प्रकाश वाले आकाश के सम्मुख देखने पर, हाशिये पर प्रकाशमण्डित दीखता है। इसकी व्याख्या इस परिकल्पना द्वारा की जा सकती है कि आँख मे अनजाने ही थोडी हरकत होती है तो मकानो के दीप्तिमान् उत्तर-प्रतिबिम्ब निकट के आकाश पर प्रगट होते है, अत वहाँ प्रदीप्ति बढ जाती है। इस रीति से इस प्रभाव की केवल आशिक व्याख्या हो पाती है, प्रकाशित भाग के गिर्द रेटिना की सतह की सुग्राहिता मे ह्रास होना, इस मामले मे अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व रखता है (§ ७२)।

'एक बार मै घास के मैदान मे बैठा हुआ एक आदमी से बात कर रहा था जो कुछ फासले पर खडा था, उसके शरीर का ढाँचा धूमिल आकाश के सामने स्पष्ट दीख रहा था। ध्यान से, और लगातार कुछ देर तक, उसे देखते रहने के पश्चात् मैने अपनी निगाह फेरी तो मुझे उसका सिर दिखाई पडा जो जगमगाती हुई प्रकाश-ज्योति से परिवेष्ठित था।'[1]

पतगो के साथ प्रयोग करने के सिलसिले मे पेटर बैक्कैरिया ने देखा कि पतग तथा इससे बँधी डोरी के गिर्द एक छोटे बादल-जैसा ज्योति-पुज मौजूद था। जब कभी पतग की गति थोडी तेज होती, तो ज्योतिपुज का बादल पीछे ही छूट जाता और क्षणभर के लिए वह इधर से उधर उतराने लगता।[2]

प्रकाशीय विपर्यास की एक अत्यन्त ही अद्भुत मिसाल ऊबड-खाबड जमीन के उन मैदानो मे देखी जा सकती है जहा एक के बाद दूसरे टीले दूरी बढने के साथ आकाशीय परिदर्शन[3] के अनुसार हलके पडते जाते है, यहाँ तक कि अन्त मे दूर के धुँधलेके मे वे अदृश्य हो जाते है (प्लेट VIII, B)। प्रत्येक टीला सिरे के हाशिये पर पेदे की अपेक्षा अधिक अन्धकारमय दीखता है—यह प्रभाव इतना सुस्पष्ट होता है कि यह बरबस ध्यान आकृष्ट कर लेता है। फिर भी यह है केवल एक दृष्टि-भ्रम ही, जो इस कारण उत्पन्न होता है कि प्रत्येक टीले के सिरे के ऊपर प्रकाशित पट्टी मौजूद होती है और पेंदे के सहारे गहरे रग की पट्टी। इसे प्रमाणित करने के लिए भू-दृश्य के ऊपरी भाग को

1 Goethe, Theory of Colours 2 Ibid 3 Perspective

ढकने के उद्देश्य से कागज का एक टुकडा रखना चाहिए (प्लेट VIII, b मे बिन्दु रेखाओं की स्थिति पर), यह क्रिया यह दिखाने के लिए पर्य्याप्त होगी कि अब विपर्यास का प्रभाव विलुप्त हो जाता है।

शार्पे बतलाता है कि अमावस्या के दो दिन उपरान्त, नाखूनी नवचन्द्र के सम्मुख मन्द रोशनी से प्रकाशित चन्द्रमडलक के बाहरी हाशिय पर हलकी रोशनी दीखती है। तथापि यह विपर्यास घटना नही है, बल्कि यह चन्द्रमा के हाशिये वाले भाग की परावर्त्तन-शक्ति के अधिक होने का परिणाम है, कृष्णपक्ष की अष्टमी के चन्द्रमा मे यह प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।[1]

९२. छाया की सीमारेखा के सहारे विपर्यास का हाशिया[2]

सभी यह जानते है कि दफ्ती के टुकडे को धूप मे लेकर खडे हो तो पर्दे पर इसकी छाया पडगी। हाशिये पर, छाया और प्रकाश के दर्मियान अर्द्धछाया का प्रदेश मिलता है जो सूर्य के परिमित आकार के कारण बनता है (§२)। किन्तु क्या इस बात का सबको पता है कि इस अर्द्धछाया का हाशिया उस स्थल पर जहाँ प्रकाश अर्द्धछाया मे तब्दील होता है, **चमकीला** होता है ?

प्रयोग उस वक्त कीजिए जब सूर्य क्षितिज के निकट ही हो ताकि उसका प्रकाश मन्द ही रहे। दफ्ती के टुकडे के पीछे लगभग ४ गज की दूरी पर पर्दा रखिए और इसे इधर-उधर थोडा हिलाइए ताकि स्थानीय शिकने दूर हो जायँ। अब उक्त प्रभाव बिलकुल स्पष्ट दीखेगा। प्रेक्षण मे प्राप्त प्रकाश का वितरण चित्र ९२ की पूर्ण रेखा द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

क्या आप इसकी व्याख्या कर सकते है ? निम्नलिखित विवेचन से प्रकाश का प्रत्याशित वितरण प्राप्त किया जा सकता है। प्रकाशित पर्दे के क्रमागत विन्दुओ १, २, ३ से देखने पर सूर्य-मडलक के दफ्ती के पीछे ढक जानेवाले भाग का विस्तार उत्तरोत्तर कम होता जाता है। इन विन्दुओ की प्रदीप्ति भी सूर्य-मडलक के खुले हुए भाग के क्षेत्रफल की वृद्धि के अनुपात मे ही बढती जाती है, अत प्रदीप्ति विन्दु मे बने वक्रपथ का अनुगमन करती है। इस प्रकार चमकीले हाशिये का बनना नितान्त असम्भव है—सारा मामला प्रकाशीय दृष्टि-भ्रम के कारण उत्पन्न होता है।

और वास्तव मे सभी परिस्थितियाँ इसी धारणा का अनुमोदन करती जान पडती

1. Phil Mag 4, 427 See also Brit Astr Ass **28, 29, 45**
2. K Groes—Pettersen Ash Nachr **196**, 293, 1913

है। मास ने सिद्ध किया है कि जब कभी प्रदीप्ति का ह्रास एक समान दर से नही होता है तो ये विपर्यास-पट्टिया अनिवार्य रूप से प्रगट होती है—अर्थात् विपर्यास-पट्टी तभी दीखती है जब प्रदीप्ति-ग्राफरेखा वक्रमार्ग मे जाती है। हमेशा ही ऐसा प्रतीत होता है कि विपर्यास-पट्टी, ग्राफ की वक्ररेखा का ही परिवर्द्धित रूप है। दरअसल बात
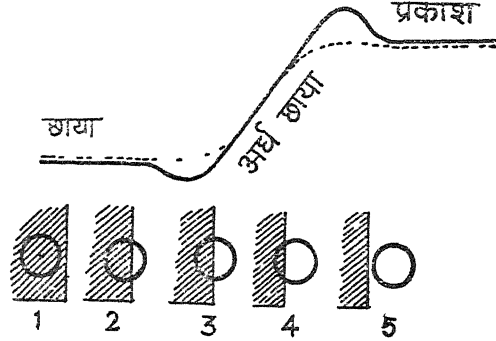
चित्र ९२—छाया की सीमारेखा के सलग्न विपर्यास हाशिये
. . . . दीप्ति का वास्तविक वितरण
——दीप्ति का आभासी वितरण

यही है—इसे समझने के लिए या तो हम कल्पना करे कि आँख मे निरन्तर थोडी हरकत होती रहती है या यह कि रेटिना के प्रकाशित भाग के निकट उसकी सुग्राहिता घट जाती है।

§९१ मे उल्लिखित दृष्टान्त भी माश के सिद्धान्त के पूर्णतया अनुकूल बैठते है—इस दशा मे केवल हमे प्रदीप्ति-वक्र के कोण को, वक्रता की वृद्धि के रूप मे मानना पडेगा।

और अन्त मे, समय-समय पर हमे अत्यन्त ही विशिष्ट अवसर इस सिद्धान्त की जाँच के लिए मिलते है—अर्थात् सूर्य के आंशिक ग्रहण के वक्त उपर्युक्त प्रयोग को इस अवसर पर दुहराने पर जैसे-जैसे चन्द्रमा के पीछे सूर्य-मडलक के हिस्से छिपते जाते है, और जैसे-जैसे छाया डालने वाली दफ्ती की स्थिति हम बदलते है, उसी के अनुसार अर्द्ध छाया के हाशिये पर प्रकाश के अनेक असाधारण वितरण-क्रम प्राप्त होते है। प्रत्येक वितरण-क्रम मे प्रकाश्य रूप मे विपर्यास-पट्टिया प्रदर्शित होती है और प्रत्येक दशा मे माश के नियम का पालन होता है। अत आश्चर्य नही कि ये छायाएँ इतनी असाधारण दीखती है कि आकस्मिक प्रेक्षको का भी ध्यान ये अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है (देखिए §३)।

९३ कृष्ण वर्ण का तुषार (स्नो)

धूमिल आकाश से तिरते हुए से नीचे गिरने वाले तुपार की नन्ही परत के टुकडो का अवलोकन कीजिए। आकाश की पृष्ठभूमि पर ये टुकडे निश्चय ही काले रग के दीखते है। यह बात ध्यान मे रखना चाहिए कि काला, धूमिल, और श्वेत रग केवल अकेले एक गुण के कारण भिन्नता प्रदर्शित करते है, और वह है उनकी प्रदीप्ति, जिसकी नाप के लिए आसपास की पृष्ठभूमि ही, तुलना के मापदण्ड का काम करती है। इस दशा मे सभी प्रदीप्तियो की तुलना आकाश से की जाती है, और यह आकाश जितना हम ख्याल करते है उससे कही अधिक प्रकाशमान है, कम-से-कम नीचे से दृष्टिगोचर होनेवाली गिरती हुई बर्फ के मुकाबले मे तो आकाश अत्यधिक चमकीला है ही। इस घटना का उल्लेख अरस्तू ने भी किया था।

९४ श्वेत तुषार और धूमिल आकाश

आकाश जब समान रूप से धूमिल रहता है तो हिमाच्छादित भूमि की तुलना मे यह बहुत अधिक मटमैला दीखता है। फिर भी स्पष्टत यह प्रभाव है भ्रमोत्पादक, क्योकि इसी आकाश से धरती प्रकाशित होती है, और जिस वस्तु पर प्रकाश गिरता है उसकी सतह की प्रदीप्ति प्रकाश-स्रोत की अपेक्षा कदापि अधिक नही हो सकती। दीप्ति-मापी यत्र द्वारा नापने पर आकाश की प्रदीप्ति-मात्रा निस्सन्देह अधिक ठहरती है। यदि दर्पण लेकर उसे इस प्रकार रखे कि आकाश का प्रतिबिम्ब तुषार के प्रतिबिम्ब से सटा हुआ बने तो आप देखेगे कि श्वेत आकाश की तुलना मे तुषार दरअसल भूरे रग का प्रतीत होता है। इस प्रयोग को अवश्य कीजिए क्योकि यह उतना ही विश्वसनीय है जितना आश्चर्यजनक।

इतने पर भी विपर्यास का भ्रम दूर नही होता यद्यपि हम जानते है कि वास्तव मे बात ठीक उलटी है। इस दशा मे तुषार और उसके आस-पास के अपेक्षाकृत अत्यन्त गहरे शेड के वृक्ष, झाडियॉ और मकानो के दर्मियान का विपर्यास ही निर्णायक तत्त्व बन जाता है।

इसी प्रकार बदलीवाले दिन सफेद रग की दीवार आकाश की अपेक्षा अधिक प्रकाशमान प्रतीत हो सकती है। फोटोग्राफ तथा चित्र इस भ्रमात्मक धारणा के अनुकूल न होने के कारण अत्यन्त अस्वाभाविक लगते है।

९५ रगो का विपर्यास

अनेक दशाओ मे जबकि वातावरण मे कोई एक विशेष रग प्रमुखता प्राप्त करता है तो इसके बदले मे पूरक रग विशेष चटकीला प्रतीत होगा। कुछ दशाओ मे इसकी

व्याख्या उसी प्रकार की जा सकती है जिस प्रकार विपर्यास हाशिये की—अर्थात् इस परिकल्पना द्वारा कि आँख मे अनायास ही निरन्तर हरकत होती रहती है। किन्तु इस सम्वन्ध मे अधिक महत्त्व की वात यह है कि रेटिना के वे भाग जो प्रमुख रग द्वारा उत्तेजित होते है, सलग्न भागो को उस रग के प्रति कम सुग्राही बना देते हे। इसका अर्थ हुआ कि हमारी आँख अव पूरक रग के लिए अधिक सुग्राही बन जाती है—अतः इस कारण आँखो को पूरक रग द्वारा अधिक सतृप्ति और ताजगी की अनुभूति मिलती हे। इस दृष्टिकोण से विचार करने पर हम पाते है कि रगो का विपर्यास इस व्यापक नियम का एक और उदाहरण है कि रग और प्रदीप्ति की अनुभूति रेटिना पर अङ्कित होनेवाले सभी प्रतिबिम्बो के सयुक्त प्रभाव द्वारा ही की जाती है।

एक प्रेक्षक ने इस बात पर गोर किया है कि सहन के फर्श में जडे धूसर रग के पत्थरो के दर्मियान उगी हुई घास, सन्ध्या को, जब बादल रक्तिम वर्ण की अत्यन्त हल्की आभा पत्थरो पर बिखराते है, अत्यन्त ही मनमोहक हरे रग की दीखती है।[1]

जब हम औसत रूप के खुले आकाश मे खेतो मे टहलते हे तो चारो ओर हरे रग की प्रमुखता रहती हे, और वृक्षो के तने, टीले तथा पगडण्डिया हमे ललछवे रग की दिखलाई पडती है।

हरे कॉच वाली खिडकी मे से देखने पर धूसर रग का मकान ललछवे रग का प्रतीत होता है। फिर समुद्र की लहरे जब मनोहर हरे रग की दीखती है तो छाया मे स्थित भाग गुलाबी रग के दिखलाई देते है[2] (देखिए §§ २१२, २१६)।

यदि आप के आसपास मिट्टी के तेल के लैम्प या मोमबत्ती की रोशनी हो रही है जो सुर्खी लिये हुए होती है, तो आर्क लैम्प या चन्द्रमा की रोशनी हरे-नीले रग की प्रतीत होगी। यह विपर्यास विशेष रूप से उस वक्त प्रबल होता है जब प्रकाश-स्रोत अत्यधिक प्रचण्ड ज्योति के नही होते—मिसाल के लिए चन्द्रमा और गैस की लौ, दोनो के प्रतिविम्ब को पानी मे जब हम एक साथ देखते है।

वृक्षो के झुरमुट को पार करके सूर्य की किरणे नीचे जमीन पर जब गिरती है तो इस तरह बनने वाले रोशनी के धब्बे आसपास के सामान्य हरे रग की तुलना मे हलके गुलाबी रग के प्रतीत होते है।[3]

1 Goethe, Theory of Colours 2 Ibid

3 Helmholtz 'On the relation of Optics to painting' popular science Literature 2nd Seriesce (London 1873)

लिनार्दो दा विन्ची ने इस बात का उल्लेख किया है कि किस तरह 'काले रग के वस्त्र-परिधान चेहरे को वास्तविकता से अधिक गौर वर्ण का बना देते है, तथा श्वेत वस्त्र चेहरे को साँवले रग का प्रदर्शित करते है, पीले रग के वस्त्र से चेहरे का रग खिल उठता है तथा लाल रग के वस्त्र चेहरे को पीला बना देते है।'

रग-विपर्यास उस वक्त विशेष रूप से प्रमुख होता है जबकि सलग्न प्रदेशो की प्रदीप्ति मे अन्तर बहुत अधिक नही होता। जब प्रदीप्तियो मे अन्तर **अत्यधिक** होता है तब उस दशा मे क्या नतीजा होता है? यह शाम के झुटपुटे मे बखूबी देखा जा सकता है जब पश्चिम के अङ्गारे-जैसे नारङ्गी वर्ण के आकाश की पृष्ठभूमि पर मकानो की कतार काले रग में उभरी हुई प्रतीत होती है। दूर से बस उनका गहरे काले रग का खाका ही दिखाई पडता है, तमाम ब्योरे और उनकी प्रदीप्तियो के अन्तर गायब हो जाते है। झाडियो और टहनियो की भी उसी प्रकार केवल रूपरेखा भर काले मखमल की भाँति दीखती है––उनके निज के रग गायब हो चुके रहते है (§२२०), ऐसा इसलिए नही होता कि चीज़ो पर पडने वाली रोशनी स्वय बहुत कम है, क्योकि उसी मोक़े पर भूमि पर वस्तुओ के रग की सभी बारीकियाँ स्पष्ट रूप से पहचानी जा सकती है।

वर्फ पर कुछ घटो तक चलते रहने के दर्मियान केवल श्वेत तथा भूरे रग ही देखने को मिलते है, अत अब अन्य रग हमे तृप्ति की और खुशनुमा होने की अनुभूति देते है। मानो हमारी आँखो को इन रगो की अनुभूति के लिए पर्य्याप्त विश्राम मिल चुका होता है।

गेटे अपनी कृति 'थियरी आव कलर्स' मे लिखता है "और फिर ये घटनाएँ कुशल प्रेक्षक को हर कही देखने को मिल जाती है, यहाँ तक वह इनसे ऊब-सा जाता है।"

९६. रगीन छाया

कागज के तख्ते पर पेन्सिल को सीधी खडी करे ताकि एक ओर से इसपर मोमबत्ती की रोशनी पडे और दूसरी ओर चन्द्रमा की रोशनी। तब इसकी दोनो छायाओ मे रग का स्पष्ट अन्तर दीखता है। मोमबत्ती से बननेवाली छाया का रग नीलापन लिये हुए होता है और चन्द्रमा वाली छाया पीलापन लिये हुए होती है।[1]

यह सही है कि रग का यह अन्तर **भौतिक** है क्योकि पहली छाया जहाँ पडती है वहाँ कागज केवल चन्द्रमा की रोशनी से प्रकाशित होता है और जहाँ दूसरी छाया पडती

1 Goethe, Theory of Colours

है वहाँ केवल मोमबत्ती की रोशनी पडती है, और चाँदनी निस्सन्देह मोमबत्ती के प्रकाश की अपेक्षा अधिक श्वेत है। किन्तु फिर भी चाँद की रोशनी नीली नही है। स्पष्ट है कि दोनो छायाओ के रग का अन्तर हमारी शारीरिक प्रक्रिया सम्बन्धी[1] कारणो से उत्पन्न विपर्यास द्वारा सशोधित होकर तीव्रतर हो उठता है।

इसी प्रकार रात मे सडक के लैम्प तथा चन्द्रमा की रोशनी से बनने वाली अपनी दोनो छायाओ के अन्तर का हम निरीक्षण कर सकते है।

विद्युत् लैम्प के प्रकाश का नारङ्गी रग सोडियम लैम्प की तुलना मे कितना गाढा है, इसका प्रेक्षण उन स्थानो पर किया जा सकता है जहाँ दोनो के प्रकाश परस्पर मिले हुए होते है। सोडियम लैम्प द्वारा बननेवाली छाया मनमोहक नीले रग की होती है, और विद्युत् लैम्प वाली छाया नारङ्गी वर्ण की। ज्योही हम अकेले सोडियम लैम्प के प्रकाश में आते है, हमारी छाया काले रग की प्रतीत होने लगती है—आगे चलते-चलते जब हम साधारण विद्युत् लैम्प के निकट पहुँचते है तो यही छाया अचानक नीले रग की हो जाती है, इसके विपरीत अकेले विद्युत् लैम्प के प्रकाश मे बनने वाली छाया, जब हम सोडियम लैम्प के निकट जाते है, अचानक नारङ्गी रग मे परिवर्त्तित हो जाती है। स्पष्ट है कि आँखे अपने वातावरण के प्रति अपने को सामानुयोजित कर लेती है और इस क्रिया में आँख की प्रवृत्ति होती है कि वातावरण के प्रमुख वर्ण को वह श्वेत प्रकाश के रूप मे ग्रहण कर ले, अत अन्य सभी रगो की अनुभूति अब इस तथाकथित 'श्वेत' प्रकाश के लिहाज से की जाती है।

गेटे लिखता है कि चटक पीले रग की वस्तुओ की छाया बैगनी रग की बनती है। भौतिक दृष्टि से निस्सन्देह यह बात सच नही है, किन्तु शारीरिक प्रक्रियाओ द्वारा उत्पन्न होने वाले विपर्यास के कारण ऐसा प्रतीत हो सकता है—उदाहरण के लिए जब वस्तु का प्रकाशित भाग प्रेक्षक के सामने पडता है, तो प्रेक्षक को इसकी छाया एक विकट रूप से तीव्र पीले प्रकाश के सानिध्य[2] मे दीख पडती है।

आप जानना चाहेंगे कि दोपहर को सूर्य की धूप मे छाया करीब-करीब पूर्णतया रगविहीन क्यो होती है जब कि आकाश का नीला वर्ण सूर्य के प्रकाश के रग से इतना अधिक भिन्न होता है। इसका उत्तर यह है कि प्रकाशित भाग और छाया की प्रदीप्ति मे अन्तर बहुत ही अधिक है। किन्तु पर्दे को जिसपर छाया पडती है यदि तिरछे झुकाएँ, ताकि सूर्य की किरणे इस पर करीब-करीब सतह के समानान्तर पडे, तो रग का विपर्यास

1 Physiological 2 Juxtaposition

और अधिक स्पप्ट तौर पर उभर आता है। इसका एक प्रख्यात उदाहरण है हिम पर पडने वाली छायाएँ—इस दशा में इनके रग की विशुद्धता विशेष रूप से निखर आती है। इनका रग नीला इसलिए होता है कि इन्हे केवल नीले आकाश से रोशनी मिलती है। इनका नीलापन स्वय आकाश के नीलेपन के बराबर तक पहुँचता है। चूँकि इन्हे हम सूर्य के पीलेपन वाले प्रकाश मे प्रदीप्त हिम के बगल मे देखते हैं अत इन्हे तो और भी अधिक नीला दिखना चाहिए। किन्तु प्रदीप्ति मे अन्तर अधिक होने के कारण जितनी आशा की जाती है उसकी अपेक्षा कम ही मात्रा मे यह नीलापन निखर पाता है। अब छाया का प्रेक्षण उस वक्त कीजिए जब सूर्य भू-दृश्य के पीछे छिपने को होता है—विशेषतया छिपने के पूर्व के अन्तिम क्षणो मे। सूर्य जैसे-जैसे नारङ्गी वर्ण, फिर लाल, तब गुलाबी रग धारण करता है वैसे-वैसे छाया भी क्रमश नीली, हरी और हरे-पीतवर्ण की होती जाती है। रग के ये शेड इतने प्रमुख इस कारण होते है कि इस दशा मे छाया और निकट के हिम की प्रदीप्ति मे अन्तर दिन की अपेक्षा बहुत कम होता है। क्योकि अब किरणे हिम धरातल पर अत्यन्त तिरछी होकर गिरती है, अत अब आकाश का विस्तृत प्रकाश अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता प्राप्त कर लेता है। इसके अतिरिक्त अब सूर्य के रग और भी अधिक सतृप्त हो जाते है।

जाडे के दिनो मे हार्ज[1] की यात्रा मे दिन छिपने के समय मै ब्रोकेन[2] से नीचे उतरा, ऊपर तथा नीचे के खेतो पर श्वेत बर्फ पडी थी और झाडियो का मैदान हिम से ढका था, दूर-दूर खडे वृक्ष, उभरी हुई पर्वत चोटियाँ, वृक्षो के झुरमुट तथा चट्टाने, पाले मे पूर्णतया ढकी हुई थी, और ओडर झील के उस पार सूर्य बस अस्त हो ही रहा था। दिन मे जबकि हिम के रग में पीलेपन का पुट मौजूद था, छायाएँ हल्के बैंगनी शेड की दिखलाई देती थी, किन्तु अब जबकि हिम के प्रकाशित भाग से अधिक चटकीले पीतवर्ण का प्रकाश परावर्तित हो रहा था, छायाएँ निश्चित रूप से चटकीले नीले रग की हो गयी थीं। किन्तु सूर्य जब ठीक डूबने को हुआ और उसकी रोशनी ने वायुमण्डल से प्रभावित होकर मेरे आसपास की सभी चीजो पर शानदार गुलाबी आभा फैला दी तो छाया का रग हरे वर्ण मे तब्दील हो गया जो विशुद्धता मे समुद्र के रग के मानिन्द था तथा सौन्दर्य मे मरकतमणि का मुकाबला करता था। घटना का दृश्य उत्तरोत्तर अधिक सजीव होता गया, वातावरण परीलोक-सदृश बन गया क्योकि प्रत्येक वस्तु इन दोनो पूर्णतया सन्तुलित चटकीले प्रकाश वर्णो से आच्छादित थी और तब अन्त मे सूर्य के अस्त

1. Harz 2. Brocken

हो चुकने पर यह शानदार दृश्य धूसर धुँधलके मे तब्दील हो गया जो बाद मे स्वच्छ रात्रि मे परिणत हो गया जिसमे चाँद और सितारे मौजूद थे।"[1]

वर्फ पर पडने वाली रगीन छाया की घटना आशिक तौर पर और कुछ अद्भुत तरीके से मानसिक कारणो पर अवलम्बित है।[2] दिन के वक्त जबकि आकाश नीला दीखता है, ये छायाएँ अधिक सतृप्त नीले रग की दीखती है बशर्त्ते इस बात का पता न हो कि हम वर्फ पर देख रहे है। दूरी पर स्थित साये मे पडी बर्फ की सतह से छाया मे स्थित सफेद वर्फ तथा 'नीले वर्ण की झील' दोनो का आभास हो सकता है। इसी प्रकार वर्फ पर पडने वाली छाया केमरे के घर्षित कॉच के परदे पर प्राप्त किये जाने पर वास्तविक दृश्य के मुकाबले मे कही अधिक नीले रग की दीखती है, अत तुरन्त ही यह पहचान मे आ नही पाती है। एक प्रेक्षक ने सनोवर के घने वन मे से दूर की झाडियो पर तुपार का अवलोकन किया तो जाहिर है कि उसका प्रेक्षण पक्षपातरहित था क्योकि तुपार उसे वास्तव मे नीले वर्ण का प्रतीत हुआ, परिस्थितियाँ इस प्रकार थी मानो दोनो ओर से खुली किसी लम्वी नली मे से उसका अवलोकन किया जा रहा हो (§ १७४)।

मनोवैज्ञानिको को इस बात का भलीभॉति पता है कि एक नन्हें सूराख मे से अवलोकन करने पर रग अपने असली वर्ण में देखे जा सकते हैं। उस दशा मे प्रभाव इस प्रकार का होता है मानो वे छिद्र के ही धरातल मे स्थित हो। किन्तु ज्योही हम कल्पना करते है कि प्रेक्षण की जाने वाली वस्तुएँ अपने निज के वातावरण मे है तथा उन पर रोशनी मामान्य तरीके से पड रही है तो स्वत ही हम वातावरण के प्रभाव की कमीवेशी दूर कर लेते हैं, अत वह वस्तु बदलती हुई दशाओ मे भी विशेष रूप से एक-सी बनी रहती है।

वालको के निरीक्षण से प्राप्त इसी घटना का (वालक निष्पक्ष प्रेक्षक होते है) अद्भुत विवरण एक रूसी लेखक ने दिया है। एक क्षण के लिए भी इस बात मे मुझे मन्देह नही है कि यह विवरण वास्तविक घटना से लिया गया है, यद्यपि लेखक ने कुछ तफमील की वाते छोड दी होंगी क्योकि उसने विवरण अपनी याददाश्त से लिखा है—आकाश का कम-से-कम कुछ भाग तो जब वर्फ गिर रही थी और सूर्य बादलो की ओट मे था, अवश्य नीला रहा होगा।

1 Goethe, Theory of Colours
2 I G Priest, J O S A, **13**, 308, 1326

"गाल्जा, देख ! . अरे यह तो नीली बर्फ क्यो गिर रही है ? देखो ! यह नीली है, एक दम नीली ! . "

'बच्चे उत्तेजित हो गये और आह्लादपूर्वक एक दूसरे को सम्बोधित करके चिल्लाने लगे !'

"नीली ! नीली ! ! नीली बर्फ !"

"नीली क्या है ? कहाँ ?"

'मैंने बर्फ से ढके खेतो और हिमाच्छादित पहाडो को देखा, मैं भी आह्लादित हो गया। कितना असाधारण दृश्य था ! हर दिशा से घूमती, फहराती बर्फ गिर रही थी, निकट भी, दूर भी, नीली परतो की लहर-जैसी । और बच्चे आह्लादमय उत्तेजना मे चिल्ला रहे थे '

"क्या नीला आकाश टुकडे-टुकडे होकर नीचे गिर रहा है ? क्यो, यही बात है न गाल्जा ?"

"नीला ! नीला ! !"

'और एक बार फिर मै इन नन्हे-मुन्ने बच्चो की काव्य-जनित तीक्ष्ण अनुभूति की क्षमता से प्रभावित हो गया। एक मै हूँ कि उनके साथ चलता जा रहा हूँ बिना इस बात की अनुभूति किये हुए कि हमारे चारो ओर नीली आभा तिरती हुई बिखर रही है। जिन्दगी मे कितने शीत काल मैने बिताये, कितनी ही बार गिरती हुई बर्फ को देखकर मै आह्लादित हो चुका हूँ, किन्तु एक बार भी तो मै धरती के ऊपर मँडराती हुई इस नि सीम नीली बर्फ की अजस्र वर्षा के प्रति आकृष्ट नही हो पाया था।'[1]

९७. परावर्तित रगीन प्रकाश से उत्पन्न रगीन छाया

रगीन वस्तुओ पर जब सूर्य का प्रकाश पडता है तो प्राय वे इतनी अधिक रोशनी इधर-उधर बिखेरती है कि इनके कारण छायाएँ बन जाती है जो पूरक रग प्रदर्शित करती है। प्रकाश के इस प्रभाव के प्रेक्षण के लिए एक छोटी पाकेटबुक एक आदर्श साधन साबित होती है। पुस्तिका को इस तरह खोलिए कि इसके दोनो ओर के भाग एक दूसरे के साथ समकोण बनाये—अब इसके दोनो फलको मे से एक तो सूर्य के प्रकाश को रोकता है और दूसरे फलक पर रगीन परावर्त्तन अङ्कित होता है। पाकेटबुक की पेन्सिल को कागज के सामने रखते है तो इसकी छाया पूरक रग ग्रहण कर लेती है,

1 From the Dutch translation Fj Gladkow, Nieuwe Crond (Amsterdam, 1933) p. 161

अत यह इस बात के लिए एक अत्यन्त ही सुग्राही निर्देशक है कि आपतित प्रकाश रगीन है अथवा नही। दीवार की हरे रग की सतह या हरी झाडियो से बननेवाली छाया गुलाबी रग प्रदर्शित करती है। पीले रग की दीवार नीली छाया डालती है (एक बार ४०० गज़ के फासले पर भी ऐसी छाया प्राप्त की गयी थी !) और पीले रग के पहाडी ढाल से भी इसी रग की छाया प्राप्त होती है।[१]

९८. विपर्यास-त्रिभुज

एक प्रेक्षक बतलाता है[२] कि एक बार स्वच्छ रात्रि मे अपने जहाज से उसने चन्द्रमा को जो क्षितिज से २०° की ऊँचाई पर था, लहरो द्वारा प्रकाश के एक त्रिभुज के रूप मे प्रतिबिम्बित होते देखा जो जहाज से लेकर क्षितिज तक फैला हुआ था। विलक्षण वात तो यह थी कि उसी वक्त उसने वैसा ही एक और त्रिभुज देखा जो उलटा और मटमैला था और यह चन्द्रमा से लेकर क्षितिज तक फैला था। किन्तु इसमे सन्देह नही कि यह एक वास्तविक घटना नही थी, बल्कि शारीरिक प्रक्रिया के फलस्वरूप घटी थी—ऐसा सोचने के कारण अनेक हैं, क्योकि यह घटना उस वक्त भी दिखाई देती है जब समुद्रतट के पहाड करीब-करीब चन्द्रमा की ऊँचाई तक पहुँचते है तथा यह उस वक्त विलुप्त हो जाती है जब नीचेवाला प्रकाश का त्रिभुज तथा चन्द्रमा किसी ओट के पीछ आ जाते है। और उलटी ओर मुँह फेरने के बाद उसने जब पुन उस ओर देखा तो यह भ्रमपूर्ण दृश्य केवल चन्द सेकण्ड बाद ही फिर दृष्टिगोचर हुआ। (चित्र ९२ अ)

यह विवरण मुझे कुछ बहुत विश्वसनीय नही जान पडा और मैने इस पुस्तक के द्वितीय सस्करण से इसे निकाल देने का निर्णय कर लिया था। सयोग देखिए कि तभी एक डच प्रेक्षक से ठीक इसी घटना का विवरण मुझे प्राप्त हुआ ! कुछ ही समय उपरान्त इसी तरह के प्रेक्षण अन्य लोगो से भी मुझे प्राप्त हुए। चित्रो तथा विज्ञापन पुस्तिकाओ मे भी इस प्रभाव को हम लोगो ने देखा। प्रयोगशाला मे बडी आसानी से इसकी पुनरावृत्ति की जा सकती है। इसमे सन्देह नही कि यह एक विपर्यास घटना है जिसके कारणो पर प्रेक्षक ने पर्य्याप्त प्रकाश डाला है, लगभग १० सेकड के प्रेक्षण के उपरान्त क्षितिज के ऊपर पहले अन्धकारमय हाशिया दीखता है, तब मटमैला त्रिभुज धीरे-धीरे ऊपर उठना है और करीव ५ सेकण्ड उपरान्त चन्द्रमा तक पहुँच जाता है। यदि आप चमकीले त्रिभुज को ओट मे ले ले, तो यह प्रभाव विलुप्त हो जाता है और यदि आप

1 C R 48, 1105, 1859 2 Cl Martins, C. R 43, 763, 1856

चन्द्रमा को ओट में लें, तो घटना में तब्दीली बहुत कम होती है, केवल मटमैले त्रिभुज का एकदम चोटी का सिरा विलुप्त हो जाता है।
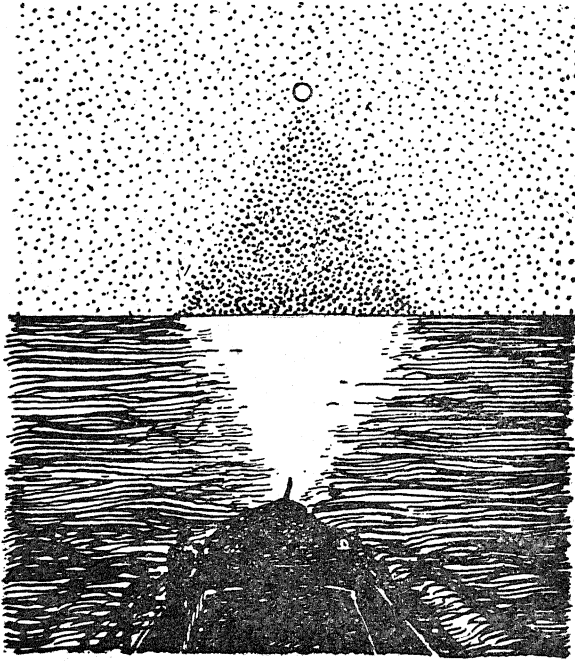
चित्र ९२ अ—**विपर्यास-त्रिभुज का निर्माण किस प्रकार होता है।**

यह आवश्यक प्रतीत होता है कि **क्षितिज के ऊपर का आकाश** धुँधली रोशनी से प्रकाशित होना चाहिए, मिसाल के लिए, जब धुन्ध चन्द्रमा की रोशनी से प्रकाशित होता है। प्रकाश्यतः इस विपर्यास-त्रिभुज का सम्बन्ध विपर्यास-धारियों से है। इस मटमैले त्रिभुज को एक तरह से लहरों में चमकीले त्रिभुज के प्रतिबिम्ब के रूप में हम देखते हैं—कदाचित् इस अनुभूति का कारण यह है कि हमारी सहज प्रवृत्ति चीजों को संमित रूप तथा योजनाबद्ध आकृतियों में देखने की होती है।

इसी प्रकार की घटना दिन के समय भी देखी गयी है जब चन्द्रमा का स्थान सूर्य ले लेता है, किन्तु अपेक्षाकृत यह बहुत कम स्पष्ट उभर पाती है।

अध्याय ९

प्रेक्षण द्वारा आकृति और गति का विवेचन

९१ स्थिति और दिशा सम्बन्धी प्रकाशीय दृष्टिभ्रम

मान लीजिए कि दृष्टिक्षेत्र मे हम वस्तुओ के दो समूहो को अलग-अलग पहचान पाते है। प्रत्येक समूह मे वस्तुएँ या तो परस्पर समकोण है या एक दूसरे के समानान्तर, किन्तु दोनो समूह एक दूसरे के लिहाज से झुकी हुई स्थिति मे है। तब इनमे से एक समूह प्रमुखता प्राप्त कर लेता है और हमारी प्रवृत्ति होती है कि ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज दिशा को निश्चित करने के लिए इसे ही हम अपना सही मापदण्ड मान ले।

रेलवे लाइन के मोड पर जब रेलगाडी खडी होती है या धीरे-धीरे चलती है और हमारा कम्पार्टमेण्ट एक ओर को झुक जाता है तो सभी खम्भे, मकान और स्तम्भ आदि विपरीत दिशा मे झुके हुए प्रतीत होते है। प्रगट है कि हमे अपने कम्पार्टमेण्ट के झुके होने का ज्ञान अवश्य है, किन्तु एक सीमित हद तक ही।

बगल से आने वाली हवा के झोके से हिलते हुए जहाज के दहलीज मे जब कोई व्यक्ति मुझसे मिलता है तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि ऊर्ध्व दिशा के मुकाबले मे वह एक ओर को झुका हुआ है।

सडक के हलके ढाल का निरीक्षण करते समय भी सायकिल सवार को इसी प्रकार का अनुभव होता है।[1] सदैव ही सडक का वह भाग जहाँ वह सायकिल चला रहा है, उसे बहुत अधिक क्षैतिज जान पडेगा। पहाडी के गहरे ढाल पर नीचे आते समय सडक के बगल मे पडे नाले का पानी उसे क्षैतिज तल मे नही जान पडेगा बल्कि ऐसा प्रतीत होगा मानो पानी की सतह का ढाल स्वय सायकिल सवार की ओर को है। नीचे की ओर के हलके ढाल पर ऐसा प्रतीत होता है मानो आगे चलकर सडक का ढाल ऊपर की ओर हो गया है जबकि वास्तव मे सडक वहाँ समतल ही होती है। फिर दूरी पर स्थित सडक की चढान बहुत ही अधिक तीव्र जान पडती है, इसके प्रतिकूल नीचे की ओर

1. Bragg, The Universe of Light (London 1933) p 66

की ढलान हलकी ही जँचती है। आँख विशेष रूप से इस बात की अनुभूति करती है कि हमारे सामने सडक के ढाल की तब्दीली किस प्रकार की है—और इस सिलसिले मे हमारी दृष्टि-अनुभूति हमारे उस अनुभव से प्राय भिन्न होती है जो पैडल चलाते समय रुकावट के बल द्वारा हम महसूस करते है।

जिस वक्त रेलगाडी ब्रेक लगाकर धीरे-धीरे चलती है, हम एक अद्भुत दृष्टिभ्रम का निरीक्षण कर सकते है। अपना ध्यान चिमनियो, मकानो, खिडकी के चौखटो या अन्य सीधी खडी वस्तुओ पर जमाइए, तो जिस क्षण रेलगाडी की रफ्तार विशेष अधिक परिमाण मे घटती है, आप को ऐसा प्रतीत होगा कि ये सभी ऊर्ध्व खडी वस्तुएँ सामने की ओर झुक आती है—यह प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट ठीक उस क्षण दीखता है जब रेलगाडी अचानक रुक जाती है—और फिर तुरन्त ही बाद वे पुन सीधी खडी हो जाती है। इन परिस्थितियो मे क्षैतिज तल का मैदान भी तिरछा झुका हुआ दीख पडता है और फिर यह पुन क्षैतिज हो जाता है। व्याख्या इस प्रकार है, ब्रेक के लगने पर हम तनिक आगे की ओर झुक जाते है मानो धरती के गुरुत्वाकर्षण की दिशा बदल गयी हो। अब हमारी पेशियो की इस नये ऊर्ध्वधरातल की अनुभूति के लिहाज से ये वास्तविक चीजे सामने की ओर हमारी तरफ झुकी-सी प्रतीत होती है (चित्र ९३)।
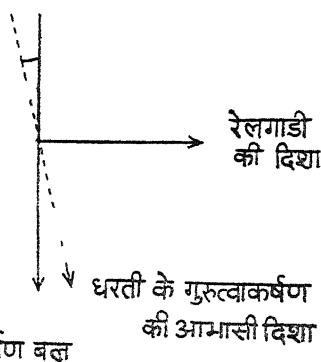
चित्र ९३—**रेलगाडी की गति के धीमे पड़ने पर धरती के गुरुत्वाकर्षण बल की दिशा में आभासी परिवर्तन।**

१००. गति की दृष्टि-अनुभूति कैसे होती है ?

आम तौर पर लोगो का ख्याल है कि हरकत उस वक्त प्रगट होती है जब किसी स्थिर बिन्दु के लिहाज से वस्तु की स्थिति मे परिवर्त्तन का निरीक्षण करते है। किन्तु यह बात अनिवार्य रूप से सही नही है, ठीक लम्बाई या समय की अवधि की भाँति

ही वेग की भी स्वतत्र, एकाकी प्रेक्षण-अनुभूति की जा सकती है। जब आप आकाश मे हरकत करते हुए बादलो को देखते है तो तुरन्त आप को उनकी दिशा और वेग की अनुभूति प्राप्त हो जाती है।

यह देखा गया है कि १′ या २′ प्रति सेकण्ड तक की मन्द कोणीय गति का पता हमारी दृष्टि-अनुभूति लगा लेती है किन्तु केवल उसी दशा मे जबकि दृष्टिक्षेत्र मे नाप के लिए स्थिर बिन्दु मौजूद हो (यद्यपि हम भले यह महसूस न कर पाये कि स्थिर बिन्दुओ के लिहाज से हम नाप कर रहे है।) इन स्थिर बिन्दुओ की अनुपस्थिति मे इससे दस गुनी रफ्तार तक के प्रेक्षण मे भी अनिश्चितता बनी रहती है—इस दशा मे तुलना-तत्र का कार्य आप की आँख करती है जिसकी पेशियाँ आप को यह महसूस कराती है कि आँख स्थिर है और इस तुलना-तत्र[1] के लिहाज से आप अपनी दृष्टि इन्द्रिय द्वारा अनुभव करते है कि प्रतिबिम्ब रेटिना पर हरकत करते है।

आकाश मे गुजरते हुए बादलो का अध्ययन कीजिए और अपने अवलोकन के समय इतमीनान के प्रारम्भिक क्षणो मे तुरन्त उनकी हरकत करने की दिशा निश्चित करने का प्रयत्न कीजिए। इसके लिए विभिन्न परिस्थितियाँ लीजिए—ऊँचे बादल तथा अपेक्षाकृत निकट के बादल, हलकी बयार तथा तेज हवा के झोके, चाँदनी रात तथा चन्द्रमाविहीन अँधेरी रात। यदि रफ्तार २′ प्रतिसेकण्ड हो तो इसका अर्थ है कि बादल के हाशिये को चन्द्रमा के मडलक को पूर्णतया पार कर लेने मे १५ सेकण्ड लगते है।

सूखने के लिए बाहर टॉगे गये चौडे खाने वाले जाल पर ध्यान दीजिए। रह-रह कर आने वाली हवा के झोके को जाल पर से गुजरता हुआ हम स्पष्ट देख सकते है, किन्तु आँख को यदि किसी एक खाने पर ही जमाये रखे तो मुश्किल से ही किसी किस्म की हरकत का आभास हो पाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी आँख परस्पर-सम्बद्ध नन्ही-नन्ही गतियो के मिश्रित प्रभाव के प्रति विशष रूप से सुग्राही है।

१०१. गतिशील तारे[2]

सन् १८५० के लगभग एक रहस्यमय घटना के प्रति लोगो के मन मे बडी दिलचस्पी उठी थी, तारे को जब आँख गडाकर देखते थे तो यह इधर से उधर हिलता हुआ

1 Frame of comparison

2 Pogg Ann **12**, 655, 1957 For more recent literature concerning autokinetic visual impressios, see Hdb d, Phys, Vol 20, Physiologische Optik p 174

प्रतीत होता था, मानो अपनी स्थिति बदल रहा हो। कहा जाता है कि यह घटना केवल सन्ध्या के धुँधलके मे देखी जा सकती थी और सो भी उस दशा मे जबकि प्रेक्षण किये जाने वाले तारे की क्षितिज पर ऊँचाई १०° से कम ही हो। तेज प्रकाश से टिमटिमाता हुआ तारा शुरू मे क्षितिज के समानान्तर, झटके की गति मे हरकत करता हुआ प्रतीत होता था, फिर पाँच-छ-सेकण्ड तक यह स्थिर अवस्था मे जान पडता, और तब उसी प्रकार यह पुन हरकत करता इत्यादि। कई प्रेक्षको ने तो इस घटना को इतने स्पष्ट तौर पर देखा कि उन्होने इसे वस्तुनिष्ठ ही समझा और इसकी व्याख्या करने के प्रयत्न मे इन्होने बतलाया कि वायु के गर्भ-स्तरो की उपस्थिति के कारण यह घटना उत्पन्न होती है।

किन्तु यहाँ किसी वास्तविक भौतिक घटना की उपस्थिति का प्रश्न ही नही उठता। कोरी आँख से दिखाई देनेवाली $\frac{1}{2}°$ प्रति सेकण्ड की गति एक औसत शक्ति की दूरबीन द्वारा आसानी से १००° तक आवर्द्धित की जा सकती है, इसका अर्थ है कि तब तारे इधर से उधर दोलन करेंगे और दृष्टिक्षेत्र मे उल्काओ की भाँति तीव्र वेग से एक सिरे से दूसरे सिरे को भागते नजर आयेगे। और प्रत्येक ज्योतिर्विद को पता है यह एक पूर्णतया निरर्थक सम्भावना है। उस वक्त भी, जबकि वायुमण्डल का उद्वेलन चरम सीमा पर होता है, झिलमिलाहट के कारण तारे का स्थिति-परिवर्त्तन कोरी आँखो की सुग्राहिता की सीमा की पकड मे नही आ सकता। किन्तु मानसिक दृष्टि मे इस घटना का महत्त्व किसी भी तरह से कम नही हुआ है।

व्याख्या प्राय इस प्रकार की जाती है कि ऐसा आँख की अनायास गति के कारण होता है जिसके लिए तुलना के निमित्त कोई सदर्भ वस्तु लभ्य नही होती है। किन्तु गिल्फोर्ड तथा उसके सहयोगियो के अनुसन्धान के उपरान्त यह व्याख्या युक्तिसगत नही जान पडती, तारो का आभासी विस्थापन नेत्र के अन्दर द्रव के अनियमित स्राव के कारण उत्पन्न हुआ जान पडता है, और यह स्राव नेत्र की पेशियो के विभिन्न दबाव से प्रभावित होता है (Americ Journ of Psych, 1928-29)।

किसी ने मुझसे एक बार पूछा था कि बहुत दूरी पर उडते हुए वायुयान पर दृष्टि जमाकर देखने पर वह सदैव ही नन्हे-नन्हे झटके खाकर हरकत करता हुआ क्यो प्रतीत होता है? इस दशा मे भी वही मानसिक कारण कार्य करता हुआ प्रतीत होता है जो हरकत करते हुए तारे' के लिए लागू होता है—और 'बहुत दूर' की शर्त इस बात की ओर इङ्गित करती है कि यह घटना भी सर्वाधिक रूप से क्षितिज के निकट ही उत्पन्न होती है।

और भला इस बात का समाधान हम कैसे कर सकते है कि अचानक ही और एक साथ तीन व्यक्तियो ने लगभग ३० मिनट तक चन्द्रमा को ऊपर नीचे नाचते हुए देखा ?[१]

१०२. विराम और गति की दशा के सम्बन्ध मे दृष्टिभ्रम

एक सुपरिचित दृष्टिभ्रम उस वक्त उत्पन्न होता है जब स्थिर रेलगाडी मे बैठे हुए आप बगल की रेलगाडी को उस वक्त देखते है जबकि वह चलना आरम्भ करती है। एक क्षण के लिए तो आप समझ बैठते है खुद आपकी ही रेलगाडी स्टेशन से रवाना हो रही है। या फिर ऊँची मीनार के पार आकाश मे गुजरते हुए बादलो को कुछ क्षणो तक देखते रहने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो बादल तो स्थिर है और मीनार ही हरकत कर रही है। इसी प्रकार कुछ लोगो को ऐसा दिखाई देता है मानो स्थिर बादलो के झुड के दर्मियान से चन्द्रमा भागता जा रहा है। पतले तख्ते पर चल कर नाले को पार करते समय इस बात की सावधानी रखिए कि नीचे बहते हुए पानी को न देखे वरना सिर चक्कर खा जायगा—यहाँ स्थिरता और गति की दशा के निर्णय करने की आप की क्षमता अव्यवस्थित हो जाती है क्योकि आप के दृष्टिक्षेत्र का असाधारण रूप से एक बृहत् भाग गतिशील होता है। प्रथम बार समुद्री यात्रा करनेवाले व्यक्ति को ऐसा जान पडता है कि केबिन मे लटकी हुई चीजे इधर-उधर झूल रही है और स्वय केबिन स्थिर है।

इन सभी उदाहरणो के दृष्टिभ्रम §९९ मे दिये गये दृष्टिभ्रम से निकट का सम्बन्ध रखते है। सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विवेचन से पता चलता है कि हमारी प्रवृत्ति उन चीजो को गतिशील मानने की होती है जिन्हे अपने-अपने अनुभव द्वारा हम भू-दृश्य मे अक्सर हरकत करती हुई जानते है। किन्तु इसके अतिरिक्त एक और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और अधिक व्यापक नियम यह है—हमारे लिए स्थिरता की अनुभूति स्वत दृष्टिक्षेत्र फ्रेम अर्थात् दृष्टिक्षेत्र को परिवेष्ठित करने वाले तत्त्वो से सम्बद्ध होती है, जबकि गति की अनुभूति दृष्टिक्षेत्र के भीतर घिरे हुए तत्त्वो से सम्बद्ध रहती है। उपर्युक्त दृष्टान्तो मे कई एक के लिए यह द्वितीय नियम प्रथम नियम के खिलाफ जाता है और जैसा हमारे दृष्टिभ्रम से स्पष्ट है, यह नियम हमारे दैनिक जीवन के सामान्य अनुभवो के बिल्कुल विपरीत ही बैठता है।

मै रेलगाडी के कम्पार्टमेण्ट मे खिडकी के निकट बैठा हुआ, मानो स्वप्न मे बाहर की भूमि को लीन होकर देख रहा हूँ जो रेलगाडी की रफ्तार के कारण पीछे को तेजी से

1 Nat, 38, 102, 1888

भागती जा रही है। गाडी के खडी होते ही और उसके स्थिर हो जाने का पूरा अहसास [illegible] है मानो रेलगाडी पीछे की ओर धीरे-धीरे सरकती जा रही है—किन्तु यह गति ऐसी नही है कि वाहर का समस्त दृष्टिक्षेत्र समान वेग से चलता हुआ जान पडे। निकट के लिए गति तेज जान पडती है, दूर के लिए अपेक्षाकृत धीमी, तथा जिस विन्दु पर मेरी दृष्टि टिकी है उसके दाहिने-बाये के स्थलो के लिए भी गति धीमी जान पडती है। समस्त भूदृश्य मेरे वैठने के स्थल के गिर्द चक्कर लगाता-सा प्रतीत होता है, किन्तु एक लचीले पदार्थ की तरह चक्कर लगाते हुए यह दृश्य जैसे खिच उठता है, फिर सिकुड जाता है। इसके घूमने की दिशा, रेलगाडी के चलते वक्त की दिशा की उलटी रहती है (§१०७)। यह एक दिलचस्प बात होगी यदि गाडी के खडे होते ही हम उठकर दूसरी ओर की खिडकी के निकट जा बैठे, तब दृश्य के घूमने की दिशा वही होनी चाहिए जो ट्रेन की हरकत के समय थी।

सम्भव है कि अनजाने ही हमारी आँख की पेशियाँ सामने से तेजी के साथ गुजरती हुई चीजो का अनुगमन करने की अभ्यस्त हो जाती है और जब गाडी खडी हो जाती है तो आँख की यह अनायास की हरकत तुरन्त नही रुक पाती, अत कुछ देर तक के लिए हम वास्तविक वेग मे अपनी ओर से 'क्षतिपूरक वेग' का सयोजन करते रहते है। किन्तु आँख की अकेली एक हरकत द्वारा इस बात का समाधान करना नितान्त असम्भव है कि क्यो दृष्टिक्षेत्र के हाशिये की ओर वेग बदलता जाता है। इस प्रकार के प्रयोग किये गये है जिनमे प्रेक्षक केन्द्र-बिन्दु से चारो ओर निरन्तर बिखरती रहने वाली नन्ही-नन्ही वस्तुओ का अवलोकन कुछ देर तक करता रहता है, जब हरकत बन्द हो जाती है तो चारो ओर से प्रकाशबिन्दु पुन केन्द्र की ओर आते हुए दीखते है। इसकी व्याख्या सम्भवत आँख की अकेली एक गति द्वारा नही की जा सकती। अधिक सम्भावना इस वात की है कि हमारा 'मस्तिष्क' जो दृष्टिक्षेत्र के प्रत्येक भाग मे वेग को एक निश्चित मात्रा मे घटा देने के लिए प्रशिक्षित हो चुका होता है, गति के रुक जाने पर भी अपनी यह क्रिया जारी रखता है।[1]

उपर्युक्त घटना उस वक्त भी दिखाई देती है जव कम्पार्टमेण्ट की खिडकी के काँच के किसी विशेप स्थल पर हम आँख गडा कर देखते है, इस प्रकार आँख की हरकत का विलोपन हो जाता है, इस घटना के दृष्टिगोचर होने के लिए यह शर्त्त जरूरी है कि

1 Von Kries in Helmholtz

रेलगाडी की रफ्तार इतनी तेज न हो कि बाहर की वस्तुएँ केवल एक लकीर-सी खीचती हुई प्रतीत हो।

फिर भी इसके प्रतिकूल ब्रूस्टर का बहुत दिनो पूर्व का प्रेक्षण[1] निश्चित रूप से यह सिद्ध करता है कि आँखे अनायास हरकत करती है। रेलगाडी की खिडकी से बाहर देखने पर निकट की पत्थर की रोडियाँ लकीर के रूप मे खिच उठी दिखाई देती है, किन्तु जल्दी से जरा दूर की जमीन पर नजर डाले तो जरा से लमहे के लिए ये रोडियाँ स्थिर-सी जान पडती है मानो विद्युत् चिनगारियो से ये प्रदीप्त हो उठी हो। मेरी राय मे इससे निश्चय ही यह सिद्ध होता है कि आँखे दरअसल हरकत करती हुई वस्तुओ का अनुगमन करती है यद्यपि अनुगमन की गति उनकी रफ्तार के ठीक बराबर नही होती।

ब्रूस्टर ने ही एक और निरीक्षण किया था—कागज के तख्ते मे कटी एक झिरी मे से देखते हुए उसने तेजी से भागती हुई पत्थर की उन रोडियो का अवलोकन किया तो उसने पाया कि सामने की ओर ही देखते हुए जब उसने आँख को अचानक इधर-उधर फिराया, ताकि रोडियो का प्रतिबिम्ब अप्रत्यक्ष दृष्टि-क्षेत्र मे पडे तो एक लमहे के लिए प्रत्येक रोडी स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गयी। आखिर इसकी व्याख्या क्या हो सकती है?

मेरी दाहिनी ओर एक खेल का मैदान है जिसके किनारे रेलिग की एक लम्बी बाड बनी है। इसके किनारे से गुजरते समय मै अपना सिर दाहिने मोडे रखता हूँ और मैदान मे खेलते हुए बच्चो को देखता रहता हूँ। दो-एक मिनट के बाद मै बिलकुल सामने की ओर निगाह डालता हूँ तो सडक के पत्थर के टुकडे तथा सामने की अन्य चीजे दाहिने से बाये हरकत करती हुई दीखती है। दुबारा इस प्रयोग को दुहराने के प्रयत्न मे इस बार जब मै बच्चो पर निगाह जमाने के बजाय बाड की रेलिग पर आँख गडाता हूँ तो यह घटना उतनी स्पष्ट नही उभर पाती है। इस किस्म के प्रेक्षण मे प्राय देखा जाता है कि यह आवश्यक नही है कि आँखे तेजी से हरकत करनेवाली वस्तुओ का ही स्वय अनुगमन करे, बल्कि बेहतर यही होता है कि निगाह किसी तटस्थ पृष्ठभूमि पर टिका दी जाय जबकि प्रकाश और अन्धकार के सुस्पष्ट विपर्यास वाले प्रतिबिम्ब रेटिना पर से होकर गुजरते रहे।

नीचे गिरती हुई हिम-लच्छियो का अवलोकन करते समय मै अपनी दृष्टि किसी एक लच्छी पर पहले जमाता हूँ जो नीचे को आ रही है, फिर फुर्ती के साथ ऊपर की

1 Proc Brit Ass p 47, 1848

किसी और लच्छी पर दृष्टि जमा देता हूँ, और यही क्रम कई मिनट तक जारी रहता है। इसके बाद जब मै हिमाच्छादित भूमि की ओर निगाह डालता हूँ तो यह सचमुच ऊपर उठती हुई नजर आती है और मुझे ऐसा अनुभव होता है जैसे स्वय मैं नीचे धँसता जा रहा हूँ।

तेज बहाव वाली नदी की सतह को या पानी पर हरकत करते हुए बर्फ के शिलाखण्डो को चन्द मिनटो तक देखते रहिए और इस दौरान अपनी दृष्टि द्वीप की किसी वस्तु या, मिसाल के लिए, नौका बाँधने वाले खम्भे पर टिकाये रखिए। अब पुन स्थिर जमीन पर नजर डाले तो आप को 'धारा की उलटी दिशा की गति' दीख पडेगी। इसी प्रकार पानी के झरने का कुछ देर तक अवलोकन करने के उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है मानो किनारे की भूमि ऊपर की ओर उठ रही है, 'एक अन्य अवसर पर मै एक अत्यन्त ऊँचे तथा बहुत सँकरे झरने को देख रहा था, और तब एक चिकने पर्वतीय ढाल पर मैने नजर डाली तो मुझे उसकी एक पतली पट्टी ऊपर सरकती हुई दिखलाई दी'—पर्किन्ज। पर्किन्ज एक बार खिडकी मे से सडक से गुजरते हुए घुडसवारो के जलूस को देख रहा था तो कुछ देर बाद उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि सडक की दूसरी ओर के मकानो की कतार उलटी दिशा मे हरकत कर रही है। खेत के पौदो की बालियो के बीच पगडण्डी से गुजरते समय यदि आप दूरस्थ चन्द्रमा को देखते रहे तो इस दृष्टिभ्रम के दृष्टिगोचर होने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ एक बार फिर प्राप्त हो जाती है।

सक्षेप मे ये परिस्थितियाँ इस प्रकार है (क) हरकत कम-से-कम एक मिनट तक जारी रहनी चाहिए, (ख) गति का वेग बहुत अधिक नही होना चाहिए इसके लिए वेग का एक अनुकूलतम मान होता है, और (ग) दृष्टि बराबर किसी स्थिर या गतिशील वस्तु पर इस प्रकार टिकी होनी चाहिए कि रेटिना पर से गुजरने वाले प्रतिविम्ब पर्य्याप्त विपर्यास और सुस्पष्ट विवरण प्रदर्शित कर सके।

१०३ दोलन करने वाले युग्म तारे

सुविख्यात ज्योतिर्विद हर्शेल ने इस घटना का अवलोकन किया था। सप्तर्षिमण्डल के एक छोडकर अन्तिम तारे का द्विनेत्री दूरबीन से प्रेक्षण कीजिए। आप इस चमकीले तारे के निकट ही मन्द प्रकाश का तारा देखेगे (चित्र ६१, ७८)। अच्छा होगा यदि प्रयोग उस वक्त आप करे जब मन्द प्रकाश का तारा चमकीले सितारे के ठीक नीचे स्थित हो (यद्यपि प्रयोग उस वक्त भी सफल हो सकता है जब यह तारा अन्य किसी स्थिति मे भी हो)। अपनी द्विनेत्री दूरबीन को आहिस्ते से बाये हटाइए, फिर दाहिनी ओर,

तब वापस बायी ओर उसे ले आइए और यही क्रम बस इस रफ्तार से जारी रखिए कि तारो के प्रतिबिम्ब नन्हे प्रकाशबिन्दु के रूप मे दीखते रहे। तब ऐसा प्रतीत होगा मानो मन्द प्रकाश का तारा प्रत्येक हरकत मे चमकीले तारे की तुलना मे कुछ पिछड जाता है, मानो यह डोरी द्वारा बँधा हो और चमकीले तारे के गिर्द दोलन गति कर रहा हो (चित्र ९४)। इसका कारण यह है कि रेटिना को प्रभावित करने मे प्रकाश को कुछ समय लगता है। और तारे की चमक जितनी अधिक होगी उतना ही कम समय यह रेटिना को प्रभावित करने मे लेगी। अत जितनी देर मे मन्द प्रकाश वाले तारे की स्थिति हम देख पाते है उतने समय मे चमकीला तारा कुछ दूर आगे जा चुका होता है।

चित्र ९४—**इधर-उधर हिलती हुई द्विनेत्री दूरबीन से देखने पर युग्म तारे का आभासी दोलन।**

इस घटना के सिद्धान्त का उपयोग पुल्फ्रिच ने एक नये ढग के दीप्तिमापी[1] के निर्माण मे किया है।

१०४ भ्रमणगति की दिशा के सम्बन्ध मे प्रकाशीय दृष्टिभ्रम

सन्ध्या के झुटपुटे मे पवन-चक्की के घूमते हुए पखो की सिल्युएत (चित्र ९५, a) को यदि चक्की के धरातल की तिरछी दिशा से देखे तो उसके घूमने की दिशा हमे दक्षिणावर्त्त भी प्रतीत हो सकती है और वामावर्त्त भी (चित्र ९५, b)। घूमने की दिशा को एक ओर से दूसरी ओर परिवर्त्तित देख सकने के लिए यह आवश्यक होता है कि पवन-चक्की पर एक क्षण के लिए ध्यान विशेपरूप से केन्द्रित किया जाय। किन्तु आमतौर पर इतना ही पर्य्याप्त होता है कि केवल शान्तिपूर्वक उसे देखते रहे तो चक्की के घूमने की दिशा अपने आप बदल जाती हुई प्रतीत होती है। अनेक ऋतु-अनुसन्धान वाले स्टेशनो पर रोबिन्सन अनीमोमीटर[2] लगे रहते है—यह एक छोटी पवन-चक्की होती है जो ऊर्ध्व धुरी के गिर्द चक्कर लगाती है। जब कुछ फासले से शान्तिपूर्वक मै बिना विशेप इच्छाशक्ति लगाये उसके घूमते हुए हत्थो को देखता हूँ तो हर २५, ३० सेकण्ड पर वे अपने घूमने की दिशा को उलट देते हुए प्रतीत होते है। इसी प्रकार वायु की दिशा बतलाने वाला हत्था इधर से उधर झूलते समय अपनी दिशा के बारे हमे भ्रम मे डाल सकता है विशेपतया उस दशा मे जबकि वह बहुत ऊँचाई पर न लगा हो (चित्र ९५, c)।

1 Photometer 2 Anemometer (वायु की रफ्तार नापने का यत्र)

इन सभी दशाओ मे घूमने की दिशा पहचानने की हमारी क्षमता इस बात पर निर्भर करती है कि भ्रमण-मार्ग का कौन-सा भाग हमारे निकट प्रतीत होता है और
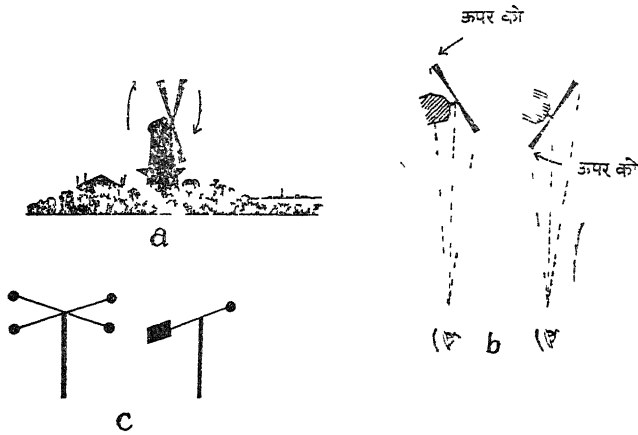
चित्र ९५—सध्या के समय पवनचक्की का सिल्युएत (छाया चित्र)

(a) प्रेक्षक इसका प्रेक्षण करता है।

(b) अपने प्रेक्षण का यह क्या अर्थ लगाता है।

(c) अन्य भ्रमोत्पादक सिल्युएत (छाया चित्र)।

कौन-सा भाग दूर। वे भाग जिन पर हमारा ध्यान विशेपरूप से आकृष्ट होता है, साधारणतया हमारे निकट जान पडते है। अत घूमने की दिशा का जाहिरा परिवर्त्तन इस कारण उत्पन्न होता है कि हमारे ध्यान का केन्द्रस्थल अचानक बदल जाता है।

१०५ पिंड-दर्शन की घटना[1]

रेलगाडी की खिडकी मे लगे घटिया किस्म के काँच मे से देखने पर हमे अजीब दिलचस्प बात दृष्टिगोचर होती है। गाडी के खडी हो जाने तक इन्तजार कीजिए और जमीन पर पडी पत्थर की रोडियो का अवलोकन करिए। अपनी आँख काँच के निकट ही लगाये रखिए, अपने सिर को स्थिर बनाये रखिए और अपनी पूर्ववर्त्ती धारणा

1. Steoroscopic Phenomena

को भूल जाइए कि जमीन को चौरस ही दिखना चाहिए। अचानक ही आप अनुभव करेगे कि जमीन मे उतार-चढाव मौजूद है, बल्कि अत्यन्त तीव्र उतार-चढाव। यदि कॉच के समानान्तर आप अपने सिर को हिलाये-डुलाये तो जमीन के ये उतार-चढाव-विपरीत दिशा मे हटते जान पडते है। यदि आप खिडकी से दूर हटते है, तो उस दशा मे भी ये उतार-चढाव उतने ही ऊचे दीखते हैं किन्तु उनके बीच का फैलाव बढ जाता है।

इसका कारण यह है कि खिडकी का कॉच पूर्णतया समतल नही है बल्कि इसकी मोटाई विभिन्न स्थलो पर विभिन्न होती है। आम तौर पर कॉच की सतह की उठान तथा उसका गहरापन किसी खास दिशा के समानान्तर चलते है, जो इस कारण उत्पन्न होते है कि तप्त पिघले हुए कॉच को इस्पात के रोलरो के बीच से गुजरना पडा है। कॉच की इस तरह की लहरदार सतह एक प्रिज्म सदृश काम करती है जिसके वर्त्तन कोर का कोणीय मान कम ही होता है,अत यह सतह किरणो मे थोडा विचलन पैदा कर देती है। चित्र ९६ मे आँखे L और R जमीन के बिन्दु A को देखती हुई मानी गयी है अत कॉच की सतह के ऊँचे-नीचे होने का आभास नही होने पाता। किन्तु आँखे जब बिन्दु B को देखती है तो किरण B R इस बार सीधी रेखा मे नही जाती बल्कि यह मुडकर B C R मार्ग का अनुसरण करती है। फल यह होता है कि आँखे ऐसी दिशा मे देखती है मानो वे B′ पर केन्द्रित हो, जो बिन्दु B की अपेक्षा अधिक निकट स्थित हैं। कॉच की सतह के अन्य किसी भाग मे किरणो का विक्षेप भिन्न होगा अत उस दशा मे दृश्य वस्तु का प्रतिबिम्ब पीछे हट गया हुआ प्रतीत होगा। इस व्याख्या से यह बात समझ मे आ सकती है कि कॉच की सतह की मोटाई का थोडा अन्तर भी बाहर की चीजो मे अत्यधिक उभार का दृष्टिभ्रम उत्पन्न कर सकता है यद्यपि अलग अलग आँखो पर पडने वाले प्रभाव जिस तरीके से एक दूसरे के साथ मिलकर यह भ्रम पैदा करते है, वह कभी-कभी काफी जटिल होता है। उदाहरण के लिए यदि

चित्र ९६—**विषम मोटाई वाले कॉच में से देखने पर भूमि ऊची नीची तरगमय जान पडती है।**

बायी आँख काँच के समतल भाग मे से देखती है और दाहिनी आँख ऊँचे-नीचे भाग से तो पिड-दर्शन का प्रभाव जिस तरीकेसे उत्पन्न होता है उसकी क्रिया-विधि का पता लगाया जा सकता है। अपनी बायी आँख बन्द करके सिर को इधर-से-उधर थोडा हिलाइए, तो भूमि का प्रतिरूप काँच के अवतल भागो के लिए उसी दिशा मे हटेगा जिस दिशा मे सिर हटता है (M, चित्र ९६) तथा उत्तल भागो के लिए प्रतिरूप विपरीत दिशा मे हटेगा (O, चित्र ९६) (क्यो ?) अब यदि आप दोनो आँखे खोल दे तो काँच के बिन्दु M और O भूमि के उन स्थलो की सीध मे पडते है जिन्हे हम औसत दूरियो पर देखते है। दाहिनी आँख से बिन्दु N की सीध मे अवलोकन करने पर हम श्रृग देखते हैं और P की सीध मे गर्त्त देखेंगे। स्वय निजके प्रेक्षण से इनकी जाँच करने का प्रयत्न करिए और प्रेक्षण-फल की बारीकियो का समाधान भी करिए।

इसी से एकदम मिलती-जुलती घटना उस वक्त भी देखने को मिलती है जब हम पानी की हलकी लहरो वाली सतह के अत्यन्त निकट खडे होते है। मिसाल के लिए, वृक्ष की किसी डाल के परावर्त्तित प्रतिबिम्ब पर निगाह जमाने का प्रयत्न करिए, चूँकि दोनो आँखे उस लहरदार सतह के एक ही बिन्दु को नही देखती अत इन्हे दीखने वाले दोनो प्रतिबिम्बो के बीच की कोणीय दूरी बराबर बदलती रहती है और आँख के अक्ष को उनपर ठीक तौर से केन्द्रित कर सकना कठिन हो जाता है। इस कारण एक विचित्र प्रकार की अनुभूति पैदा होती है जिसका विवरण दे सकना मुश्किल है। ज्यो ही हम एक आँख बन्द करते हैं त्यो ही पानी की सतह का दृष्टिगोचर होना एक तरह से बन्द-सा हो जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिबिम्ब के बजाय स्वय वृक्ष को ही हम देख रहे है जो हवा के कारण हरकत कर रहा है। दोनो आँखो के खोलते ही अचानक लहरदार सतह स्वय दीखने लग जाती है, किन्तु यह सतह **चमचमाती** सी है, यह एक लाक्षणिक घटना है जो उस वक्त उत्पन्न होती है जब कि दोनो आँखो मे से प्रत्येक भिन्न प्रदीप्ति के प्रतिबिम्ब ग्रहण करती है—एक प्रकाशमय और दूसरी अदीप्तिमान्।

१०६ चन्द्रमा पर मनुष्य[1]

'चन्द्रमा पर दिखलाई देने वाला मनुष्य' इस बात के लिए एक उत्तम चेतावनी है कि हमे अपने प्रेक्षण पर्य्याप्त तटस्थता के साथ करने चाहिए। चन्द्रमा पर दीखने वाले काले और चमकीले धब्बे वास्तव मे चिपटे मैदान तथा पहाड है और इनकी स्थितियाँ

1 Harley, Moon-Lore (London, 1885) Titchener, Experimental Psychology

प्रकाट्य रूप से बहुत ही बेतरतीब है। प्रदीप्ति के इस विलक्षण विभाजन मे अनजाने ही हम सुपरिचित शक्लो को पहचानने की कोशिश करते है। हम इनकी कुछ विशेषताओ पर अपना ध्यान केन्द्रित करते है तो ये और भी सुस्पष्ट हो उठती है जबकि अन्य शक्ले जिनपर हम कोई ध्यान नही देते, अस्पष्ट रह जाती है। इस प्रकार पूर्णिमा के चाद मे मनुष्य के चेहरे के कम-से-कम तीन पहलू देखे जा सकते है—बगल से दीखने वाला चेहरा, चेहरे का तीन चौथाई, तथा पूरा चेहरा। और चॉद पर स्त्री की शक्ल, टहनियो का बोझ लिये हुए बुढिया, खरगोश, तथा केकडे आदि की शक्ले भी देखी जा सकती है।

सर्वश्रेष्ठ प्रेक्षको ने भी इस प्रकार के दृष्टिभ्रम से धोखा खाया है—मङ्गल की नहरो का प्रेक्षण इस तरह के [illegible] से एक सुविख्यात उदाहरण है। अच्छा ही होगा कि मरीचिका या 'फाता मोर्गाना' (मिथ्या प्रकाश)[१] के अनेक अतिशयोक्तिपूर्ण विवरणो के सम्बन्ध मे उपर्युक्त बात का हम ध्यान रखे।

१०७ घूमता हुआ भू-दृश्य तथा साथ चलने वाला चन्द्रमा

दो ऐसे वृक्षो या दो मकानो पर ध्यान दीजिए जो हमसे असमान दूरी पर स्थित हो। ज्यो ही हम चलना आरम्भ करते है, हम देखते है कि **दूर की वस्तु हमारे साथ चलती है और निकट की वस्तु पीछे छूट जाती है।** यह विस्थापनाभास[२] का एक सरल दृष्टान्त है, जो रेखागणित की एक ऐसी घटना है जिसकी कोई विशेष भौतिक पृष्ठभूमि नही होती।

बाल्यावस्था मे जब मै एक रेलगाडी के अन्दर बैठा हुआ था तो सबसे पहले जिस बात ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया वह यह थी कि किस प्रकार भू-दृश्य मेरे गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता था। मान लीजिए, रेलगाडी मे से मै दाहिनी ओर बाहर देखता हूँ, तो निकट की प्रत्येक वस्तु दाहिनी ओर तेजी से भागती है जबकि दूर की प्रत्येक वस्तु मेरे साथ बायी ओर चलती है। सारा दृश्य उस काल्पनिक बिन्दु के गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता है जहाँ हमारी दृष्टि टिकी होती है। चाहे मै दूर के बिन्दु पर नजर टिकाऊँ या नजदीक के बिन्दु पर हर दशा मे उस बिन्दु से आगे के बिन्दु हमारे साथ चलते हुए प्रतीत होते है और उससे निकट के बिन्दु पीछे की ओर छूटते जाते है। इस प्रयोग को स्वय करिए! स्पष्ट है कि दृष्टि के ये प्रभाव विस्थापना भास के कारण उत्पन्न होते है, किन्तु इसके अतिरिक्त एक नयी बात यह है कि प्रत्येक वस्तु का सम्बन्ध हम उस

1 Fata Morgana 2 Parallax

बिन्दु से जोडते है जिसपर हमारी दृष्टि टिकी होती है। हमारी दृष्टि-अनुभूति की यह एक मनोवैज्ञानिक विशिष्टता है। चाहे हम पैदल चले, सायकिल पर सवार हो या ट्रेन मे जा रहे हो, हम देखते है कि विश्वस्त चन्द्रमा दूर के क्षितिज पर हमारा साथ देता रहता है। सूर्य और सितारे भी ऐसा ही करते है, केवल हम उनकी ओर उतना अधिक ध्यान नही देते। इससे सिद्ध होता है कि हमारा ध्यान भू-दृश्य पर केन्द्रित रहता है अत विस्थापनाभास के कारण दूरस्थित ये आकाशीय पिण्ड भू-दृश्य के मुकाबले मे हमारे साथ चलते हुए जान पडते है।

१०८ सर्चलाइट की घटना[1]—बादलो की पेटी

विस्तृत खुले मैदान मे सर्चलाइट प्रकाश किरणो की पतली शलाका क्षैतिज दिशा मे फेकती है। यद्यपि मै जानता हूँ कि किरणशलाका बिल्कुल सीधी रेखा मे जा रही है, फिर भी इस दृष्टिभ्रम को मै दूर नही कर पाता है कि इसमे कुछ वक्रता मौजूद है, बीच मे सबसे ऊँची और दोनो सिरो पर भूमि की ओर मुडी प्रतीत होती है। इस बात का इतमीनान करने के लिए कि प्रकाश-किरणो की शलाका एक सिरे से दूसरे सिरे तक बिल्कुल सीधी है, एक मात्र तरीका यह है कि अपनी आँखो के सामने एक सीधी छडी मै रखूँ।

इस दृष्टिभ्रम का कारण क्या है? प्रकाश-पथ को मुडा हुआ देखने की मेरी इस प्रवृत्ति का कारण यह है कि एक तरफ मै इसे बायी ओर नीचे को झुका हुआ देखता हूँ और दूसरी ओर दाहिनी ओर झुका हुआ। क्या टेलीग्राफ की साधारण क्षैतिज तार की सीधी लाइने इसी प्रकार आचरण नही करती है! किन्तु रात्रि को प्रकाश-किरणो की शलाका का अवलोकन करते समय आस पास की वस्तुएँ हमे नजर नही आती जिनकी सहायता से हम दूरियो का अन्दाज लगा सके, अत शलाका की शक्ल का पहले से हमे कुछ भी पता नही लग पाता।

इसी प्रकार की घटना सडक पर लगे ऊँचे लैम्पो की कतार का रात्रि को अवलोकन करने पर देखी जा सकती है, विशेषतया जब उसी के समानान्तर मकानो की कतार मौजूद न हो या जब वे पेडो के पीछे छिपे हो। तब लैम्पो की कतार ठीक सर्चलाइट की प्रकाश-शलाका की ही भाँति झुकी हुई दीखती है।

इसी से एकदम सम्बद्ध यह प्रेक्षण भी है कि अष्टमी और पूर्णिमा के बीच के चन्द्रमा के दोनो कोरो को मिलाने वाली रेखा सूर्य और चाँद को मिलानेवाली दिशा के

1 Bernstein, Zs f Psychol und Physical der Sinnesorgane, 34,132

समकोण बिलकुल नही जान पडती। हमे ऐसा प्रतीत होता है कि यह दिशा एक वक्र रेखा है। अपनी आँखो के सामने एक डोरी को तनी हुई खीचकर यह दिशा निश्चित करिए, तो आरम्भ मे चाहे कितना ही असम्भव यह क्यो न जान पडा हो, अब आप देखेंगे कि समकोण होने की शर्त्त पूरी होती है।

आकाश की मेहरावदार छत पर क्षितिज के एक ओर से बादलो की कतारे जो फैलती हुई जान पडती है, और आकाश की दूसरी ओर मिलती हुई दीखती है, वास्तव मे सीधी, एक दूसरी के समानान्तर, क्षैतिज दिशा मे जाती है, देखिए § १९१ भी।

यदि रात के समय प्रकाश-गृह (लाइटहाउस) के निकट उसकी ओर पीठ करके खडे हो तो अत्यन्त शानदार दृश्य देखने को मिलता है। विशाल प्रकाश-रेखाएँ आस-पास के दृश्य को जब प्रकाशित करती हुई चारो ओर घूमती है तो ये दूसरी ओर क्षितिज के कुछ नीचे एक कल्पित प्रति-प्रकाशस्रोत-बिन्दु'[1] पर परस्पर मिलती हुई जान पडती है और इसीके गिर्द वे घूमती हुई प्रतीत होती है।[2] ऐसी ही प्रकाश-रेखा को देखकर मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यह रेखा एक निश्चित धरातल मे पडती है जो आकाश मे प्रकाशरेखा की सही स्थिति और मेरी आँख के स्थिति-बिन्दु द्वारा निर्धारित होता है। प्रकाशरेखा जब घूमती है तो इस धरातल की स्थिति भी आकाश मे निरन्तर बदलती है किन्तु सदैव ही यह धरातल उस रेखा से गुजरता है जो प्रकाश-स्तम्भ, मेरी आँख तथा प्रतिप्रकाशसूत्र-बिन्दु को मिलाती है। अत बजाय इसके कि मेरे पीछे के बिन्दु से विकिरित होती हुई किरणे क्षैतिज तल मे बिखरी हुई रेखाओ की तरह दीखे, मुझे ये ऐसी किरणो के रूप मे दीखती हुई प्रतीत होती है जिनके निचले भाग तो कटकर अदृश्य हो गये है और किरणे क्षितिज के नीचे स्थित 'प्रति-प्रकाश-स्रोत बिन्दु' के गिर्द घूम रही है। यह तथ्य कि मै अनजाने ही इस द्वितीय निष्कर्ष को स्वीकार करता हूँ, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है। और यह मेरी इस प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न होता है कि सस्कृत किरणो को परस्पर सम्बद्ध मानकर मै कल्पना कर लेता हूँ कि वे आगे जाकर एक अदृश्य बिन्दु पर मिल जाती है।

1 Anti-light-source point

2 G Colange and J le Grand, C R, 204, 1882, 1937 इन दोनों व्यक्तियों की यह भ्रमपूर्ण धारणा है कि यह घटना केवल अत्यन्त विशिष्ट परिस्थितियों में ही देखी जा सकती है जैसी कि बेलद्वीप के शक्तिशाली प्रकाश-स्तम्भ के लिए लभ्य हैं। किन्तु नीदरलैण्डस के बूग स्थित छोटे प्रकाशस्तम्भ के निकट भी इस घटना का भलीभाँति अवलोकन किया जा सका है।

१०६. आकाश की मेहराबदार छत का प्रत्यक्षरूप से चिपटा दीखना[1]

खुले मैदान से आकाश का जब हम सर्वेक्षण करते है तो ऊपर का समूचा आसमान न तो अनन्त जान पडता है और न एक खोखला अर्द्ध गोला ही प्रतीत होना है जो पृथ्वी घेरे हो। बल्कि यह एक छत मानिन्द दीखता है जिसकी हमारे सिर के ऊपर की ऊँचाई क्षितिज तक के फासले के मुकाबले मे कम होती है (चित्र ९७)। किन्तु यह है केवल
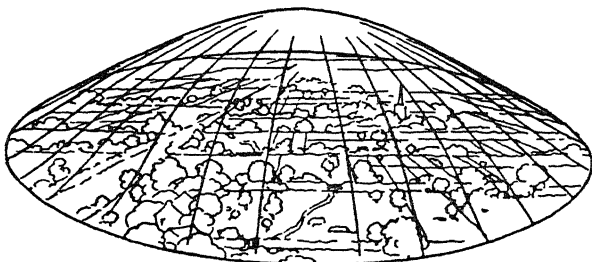
चित्र ९७—**आकाश पृथ्वी को मेहराब की तरह ढके हुए जान पड़ता है।**

अनुभूति, इससे अधिक कुछ भी नही। फिर भी हममे से अधिकतर लोगो के लिए यह अत्यन्त विश्वासोत्पादक है, अत इसका समाधान भौतिक कारणो से नही, बल्कि मनोवैज्ञानिक कारणो से ही किया जा सकता है।

स्वभावत किसी भी तरीके से इस चिपटेपन को वास्तव मे नाप सकना असम्भव है, फिर भी हम इसका अन्दाज लगा सकते है —

(क) हम प्रारम्भ इस प्रश्न से करते है कि अनुपात $\frac{\text{आँख से क्षितिज तक दूरी}}{\text{आँख से ऊर्ध्वबिन्दु तक दूरी}}$ का मान कितना प्रतीत होता है, यह अनुपात अधिकतर २ और ४ के दर्मियान मिलता है जो प्रेक्षक और उसके प्रेक्षण की परिस्थितियो पर निर्भर करता है।

(ख) हम यथासम्भव ऊर्ध्वबिन्दु[2] को क्षितिज से मिलाने वाले **चाप** के मध्यबिन्दु की दिशा का अन्दाज लगाते है। इस मध्यबिन्दु के निर्धारित हो जाने पर हम देखते

1 For the very extensive literaturre on this subject and the following one *see* A Muller, Die Referenzflachen der sonne und Gestirne, E Reimann, Zs f Psych u Physiol der Sinnesorgane, 1920 R von Sterne, Der Sehraum auf Grund der Erfahrung (Leipzig, 1907)

2 Zenith

हैं कि यह ४५° की कोणीय ऊचाई पर नही स्थित होता है बल्कि और नीचे अक्सर २०° या ३०° की ऊँचाई पर यह होता है—कुछ विरले अवसरो पर यह कोणीय ऊँचाई कम-से-कम १२° और अधिक-से-अधिक ४५° तक भी पहुँचती है।

यह आवश्यक है कि इसके लिए निरपेक्ष प्रेक्षक ढूँढे जायँ और उन्हे यह बात स्पष्ट समझा देनी चाहिए कि इस प्रयोग मे चाप को दो बराबर भागो मे विभाजित करना है, न कि चापकोण को। ऊर्ध्व बिन्दु को भी बिल्कुल सही सही निश्चित करना अत्यन्त आवश्यक है, इसके लिए सबसे बढिया तरीका यह है कि पहले दिक्सूचक की किसी एक दिशा की ओर मुँह करे और फिर ठीक इसकी विपरीत दिशा की ओर मुँह करे और देख ले कि दोनो ही बार प्राप्त ऊर्ध्व बिन्दु की स्थिति एक-सी है या नही।

यह वाञ्छनीय होगा कि (क) और (ख) प्रत्येक के लिए ५ बार निरीक्षण अङ्क प्राप्त करके उनका औसत ले।

आकाश का यह आभासी चिपटापन विभिन्न परिस्थितियो पर निर्भर करता है। आकाश के मेघाच्छादित होने पर यह अधिक बढ जाता है, विशेषतया उस दशा मे जब उच्च-पुञ्जमेघ या उच्च-स्तारमेघ का आवरण छाया रहता है जिससे गहराई का भान होता है और तब आँखे चिपटेपन का क्षितिज तक अनुगमन करती है। सन्ध्या के झुटपुटे मे चिपटापन विशेष रूप से बढ जाता है और अधेरी रात मे, जबकि तारे खूब चमकते रहते है, यह चिपटापन घट जाता है। सामान्यरूप से क्षितिज और ऊर्ध्वबिन्दु के बीच के कोण का निचला अर्द्धभाग दिन के समय २२° होता है और रात को ३०°। यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस सिलसिले मे समुद्र पर प्राप्त किये गये प्रेक्षण विशेष महत्त्वपूर्ण होते हैं—चारो ओर दृष्टिक्षेत्र विस्तृत और खुला होता है तथा आसपास ऐसी कोई चीज नही रहती जो प्रेक्षण-फल प्राप्त करने मे आप का ध्यान बँटाये।

लाल रग के काँच के बडे टुकडे मे से (इतना बडा जिससे उसके हाशिये दृश्य को विकृत न कर सके) देखने पर आकाश अधिक चिपटा प्रतीत होता है, नीले रग के काँच मे से देखने पर यह ऊपर को अधिक उठा हुआ तथा अर्द्ध गोलाकार शक्ल से अधिक मिलता-जुलता दीखता है।[1]

अधिक बारीकी से प्राप्त किये गये प्रेक्षणफलो से आकाश की छत की शक्ल के बारे मे और भी अधिक यथार्थ जानकारी हमे प्राप्त हो सकती है—अवश्य अनजाने ही हमे लगता है कि आकाशीय छत की शक्ल मेहराबदार है। अनेक प्रेक्षको को आकाश की छत की शक्ल फौजी टोपी (हेल्मेट) के मानिन्द जान पडती है।

1 Dember en U1be, Ann Phys, I, 313, 1920

११०. ऊँचाई आँकने मे अतिरंजना (चित्र ९८)

आकाश की मेहराबदार छत के आभासी चिपटपन का सम्बन्ध इस बात से जुडा जान पडता है कि क्षितिज के ऊपर की ऊँचाई के आँकने मे हम अतिशयोक्ति से काम लेते है। स्पष्ट है कि सदैव अनजाने ही **चाप** तथा उसके **कोण** की नाप मे हम धोखा खा जाते है—जैसे बिन्दु M को इस तरह चुने कि HM=MZ हो तो क्षितिज से इसकी कोणीय ऊँचाई ४५° से बहुत कम होगी, यद्यपि हमे यह ठीक ऊर्ध्व बिन्दु और क्षितिज के बीचोबीच स्थित जान पडता है।
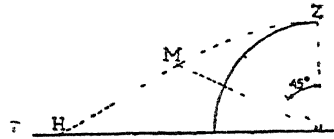
चित्र ९८—ऊर्ध्व बिन्दु से क्षितिज तक के आभासी चाप का दो भागो में विभाजन।

जाडे के दिनो मे दोपहर का सूर्य आकाश मे काफी ऊँचाई पर मालूम पडता है यद्यपि हमारे (हालैण्ड के) अक्षाश प्रदेश मे यह ऊँचाई क्षितिज से केवल १५° होती है। ग्रीष्म ऋतु मे यह करीब-करीब ऊर्ध्व बिन्दु पर पहुँचता जान पडता है जबकि वास्तव मे इसकी ऊँचाई मुश्किल से ही ६०° से अधिक आ पाती है।

इसी प्रकार पहाडियो की ऊँचाइयो और सामने की चढाई के ढाल की तीव्रता के आँकने मे हम अतिरंजना से काम लेते है। प्रेक्षको ने तो सूर्य और चन्द्रमा के गिर्द २२° कोण वाले प्रभामण्डल के विवरण मे उनकी ऊँचाई को चौडाई से ज्यादा बतलाया है (§१३४)।

ये दृष्टिभ्रम बहुत कुछ अशो मे दूर किये जा सकते है यदि भू-दृश्य को हम अधखुली आँखो से देखे, तब प्रकाशित तथा अँधेरे भाग अलग-अलग केवल वृहत् राशियो की शक्ल मे दीखते है।

१११. क्षितिज पर सूर्य और चन्द्रमा के आकार मे वृद्धि का आभास

यह एक सबसे प्रबल और व्यापक रूप से ज्ञात प्रकाशीय दृष्टिभ्रम है। उगता हुआ चन्द्रमा बहुत ही बडा दिखाई देता है, किन्तु जब यह आकाश मे ऊँचा चढ जाता है तो यह काफी छोटा दीखता है। और सूर्य भी, 'विशालकाय, टमाटर जैसा सुर्ख सूर्य' उगते समय कितना बडा दीखता है!"

किन्तु सचमुच क्या यह दृष्टिभ्रम ही है? आइए, सूर्य के प्रतिबिम्ब को प्रक्षेपित

करे और उसे नापे। चश्मे का एक लेन्स लीजिए जिसकी फोकसदूरी करीब दो गज हो[1], कार्क मे बने एक खाँचे मे इसे लगाइए और इसे अस्त होते हुए सूर्य के सामने खिडकी की दहलीज पर रखिए (चित्र ९९ क)। खिडकी खुली होनी चाहिए, अन्यथा इसके काँच
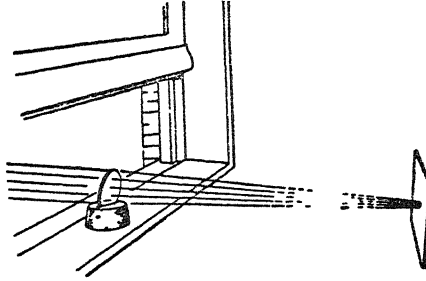
चित्र ९९ क—**लम्बी फोकस दूरी वाले लेन्स द्वारा सूर्य के बिम्ब का निर्माण।**

चित्र ९९ ख

प्रतिबिम्ब को अस्पष्ट बना देगे। प्रकाश किरणो को ग्रहण करने के लिए लेन्स के पीछे करीब दो गज की दूरी पर कागज का तख्ता रखते है और तब इस पर सूर्य का एक बढिया और स्पष्ट चित्र प्रगट होता है। यदि यह बिम्ब पूर्णतया गोल नही है तो अवश्य ही लेन्स आपतित किरणो के समकोण स्थित नही है, अत इसे इधर-उधर घुमाइए और थोडा बहुत इसे तिरछा झुकाइए। यह निश्चित कर लेने पर कि कहाँ पर कागज को रखने पर यथासम्भव सबसे अधिक स्पष्ट सूर्य-प्रतिबिम्ब बनता है, बिम्ब की व्यासरेखा के सिरे पेन्सिल के बिन्दुओ द्वारा अङ्कित करिए और स्केल की सहायता से आधे मिलीमीटर की शुद्धता तक इसकी नाप प्राप्त करिए। अच्छा होगा कि **क्षैतिज** व्यास की लम्बाई नापे क्योकि ऊर्ध्व व्यास वायुमण्डल के वर्त्तन[2] के कारण कुछ छोटा हो जाता है। इन नापो को कई बार दुहराइए, तब उनका औसत मान लीजिए।

इसी प्रयोग को अब उस वक्त करिए जब सूर्य आकाश मे ऊँचाई पर स्थित हो। इस बार प्रयोग की व्यवस्था अधिक जटिल होगी। लेन्स सहित कार्क को किसी ऊँचे स्तम्भ पर कील के सहारे लगा दीजिए। स्तम्भ का उपयुक्त पार्श्व चुनकर और कार्क

१ चश्मे के व्यापारी ऐसे लेन्स की शक्ति +० ५ मानते है। बिना घिसा हुआ लेन्स लीजिए जिसके हाशिये कोरे हो।

2 Refraction

को घुमाकर लेन्स के तल को सूर्य-किरणो के ठीक समकोण कर सकते है (चित्र ९९ ख)। सूर्य के प्रतिबिम्ब की नाप करिए तो पायेगे कि प्रतिबिम्ब उतना ही बडा रहता है **चाहे सूर्य आकाश मे ऊँचाई पर रहे या नीचे** रहे (नाप की शुद्धता की न्यूनतम सीमा तक)। अत्यन्त शक्तिशाली दूरबीन की सहायता से प्राप्त की गयी अत्यन्त शुद्ध नाप मे भी रत्ती भर का अन्तर नही पडता।

अत स्पष्ट है कि क्षितिज के निकट स्थित सूर्य और चन्द्रमा के आकार की वृद्धि एक मानसिक घटना है। किन्तु यह घटना भी निश्चित नियमो के अधीन है और इसे अङ्को मे व्यक्त कर सकते है। करीब १२ इच व्यास की सफेद दफ्ती की वृत्ताकार चकरी लीजिए और इसके सामने इतनी दूरी पर खडे होइए कि दफ्ती की चकरी उतने ही बडे आकार की दीखे जितना बडा चन्द्रमा दीखता है। अवश्य इसके लिए दोनो की सीधे ही **तुलना** नही की जा सकती है, अन्यथा आप देखेगे कि वास्तविक नाप की तरह इस दशा मे भी चन्द्रमा का आकार सदा एक-सा ही बना रहता है। अत आपको चाहिए कि पहले आप चन्द्रमाको देखे और अपने मस्तिप्कपर इसकी अनुभूति को भलीभाँति अकित कर ले कि चन्द्रमा कितना बडा दीखता है और तब पीछे मुडकर दफ्ती की चकरी के प्रत्यक्ष आकार से उसकी तुलना कीजिए। इससे भी अच्छा तरीका यह है कि काली पृष्ठभूमि पर सफेद चकरियाँ बहुत-सी लगा दी जाये और तव हर वार एक निश्चित दूरी पर खडे होकर उन्हे देखे। आकार निर्धारित करने की यह क्रिया, चन्द्रमा जव आकाश मे ऊँचाई पर स्थित हो, तब कीजिए और जब वह नीचे स्थित हो, तब भी।

इस प्रकार की तुलना सूर्य के लिए भी की जा सकती है। गहरे रग का काँच काम मे लाइए, मिसाल के तौर पर काली पड गयी हुई फोटोग्राफी की प्लेट, ताकि सूर्य के प्रकाश से आँखो को चकाचौध न लगे। फिर वाद मे नगी आँख से चकरियो को देखिए। ये प्रेक्षण कठिन पडते है क्योकि यह मनोवैज्ञानिक घटना अनेक सूक्ष्म बातो मे प्रभावित होती है जैसे उसके प्रति आप के ध्यान या तल्लीनता मे परिवर्त्तन आदि। देखिए कि कुछ थोडे अभ्यास के वाद आपको कितनी अधिक सफलता इस प्रयोग मे मिलती है।

इस तरीके से प्राप्त अङ्क हमे बतलाते है कि सूर्य और चन्द्रमा क्षितिज के निकट, आकाश मे अपनी ऊँची स्थिति के मुकाबले मे २ ५ से लेकर ३ ५ गुने तक वडे आकार के दिखाई देते है। अत निस्सन्देह भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक घटनाओ मे अन्तर विशेप-रूप से अधिक है। यह प्रभाव सध्या के धुँधलके के समय अथवा मेघाच्छादित आकाश के समय और भी अधिक प्रबल होता है।

सूर्यास्त के समय सूर्य के आकार की प्रत्यक्ष वृद्धि वहाँ और भी अधिक स्पष्ट होती है जहाँ भूमिखण्ड चौरस होता है वनिस्बत उस वक्त के जब सूर्य ऊँचे पहाडो के पीछे अस्त होता है। किन्तु समुद्र पर अस्त होने की दशा मे आकार की वृद्धि थोडी ही होनी है।[1]

अँगूठे और तर्जनी के दर्मियान मे से चन्द्रमा को देखिए या किसी नली मे से, यह छोटा दिखलाई देता है। ऐसे व्यक्ति जिनकी एक ही आँख होती है, क्षितिज के निकट के चन्द्रमा या सूर्य के आकार की वृद्धि से अनभिज्ञ होते है, यदि हम अपनी एक आँख ढँक ले, तो पहले की भाँति कुछ देर तक हमे यह दृष्टिभ्रम दिखलाई देता रहता है किन्तु फिर सन्ध्या के अन्त होते-होते यह दृष्टिभ्रम विलुप्त हो जाता है।

केवल सूर्य और चन्द्रमा ही नही, वल्कि तारा-समूह भी क्षितिज के निकट आवर्द्धित आकार के दिखलाई देते है। यहाँ तक कि हेडिजर ब्रुश (§१८२) भी क्षितिज पर, आकाश मे ऊंचाई की स्थिति के मुकावले मे करीब दो गुने लम्बे तथा दो गुने चौडे दिखलाई पडते हैं।

११२ क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डो के आकार मे प्रतीयमान वृद्धि, और आकाश की मेहराबदार छत की शक्ल मे पारस्परिक सम्बन्ध

इस बात का प्रयत्न किया गया है कि उपर्युक्त घटनाओ का समाधान आकाशीय मेहराब के प्रतीयमान चिपटेपन के आधार पर किया जा सके। इस धारणा के अनुसार हम कल्पना करते है कि सूर्य और चन्द्रमा हमसे उतनी ही दूर है जितनी दूर हमारे चारो ओर का आकाश। अत आकाश मे सूर्य जब नीचे की ओर होगा तो ऊँचाई की स्थिति के मुकाबले मे वह हमसे कई गुना अधिक दूरी पर जान पडेगा, किन्तु चूँकि इसका कोणीय व्याम उतना ही वना रहता है अत हम अनजाने ही समझ लेते है कि इसका आकार कई गुना वडा हो गया है। चित्र १०० से हम देखते है कि चूँकि सूर्य
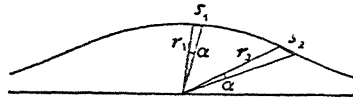
चित्र १००—जहाँ आकाशीय छत अधिक दूरी पर जान पडती है वहाँ सूर्य का मण्डलक अधिक बड़ा दीखता है।

1 Vaughan Cornish, Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1955) Chap II which contains an interesting theory about the phenomenon

की दोनो स्थितियो के लिए कोण α का मान समान है, अत $\frac{S_1}{S_2} = \frac{r_1}{r_2}$। इस सूत्र मे s_2 तथा s_1 सूर्य के दीखने वाले आकार है तथा r_2 और r_1 तदनुसार उनकी दूरिया है।

इस सम्बन्ध की जॉच करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा के प्रतीयमान आकार विभिन्न ऊँचाइयो के लिए ऑके गये है (देखिए § १११)। ये प्रयोग कठिन है। दिन के नीले आकाश मे, तथा रात के तारो से जगमगाते खुले आकाश मे किये गये प्रयोगो के निष्कर्ष से सिद्ध होता है सूर्य और चन्द्रमा के आकार मे बहुत कुछ आकाशीय छत (चापच्छद) की दूरी के अनुपात मे ही परिवर्त्तन होता है। आकाश मे नीचे की ओर स्थित सूर्य का आकार निकटस्थ बादलो के कारण (क्षितिज की पृष्ठभूमि पर छाया आकृति के रूप मे दीखनेवाली पार्थिव वस्तुओ के कारण नही) अधिक बडा प्रतीत होता है। इसका कारण यह है कि मेघाच्छादित आकाश बिना बादलों वाले खुले आकाश के मुकाबले मे अधिक चिपटा प्रतीत होता है अत ऐसी दशा मे क्षितिज भी हमसे अधिक फासले पर स्थित जान पडता है, और अनजाने ही हम सूर्य को इतनी अधिक दूरी पर मान लेते है कि अब हम सोच नही पाते कि सूर्य बादलो के सामने है। इसी प्रकार आकाश मे चन्द्रमा यदि नीचे की ओर हो तो निकट के बादलो के कारण दिन मे यह अधिक बडा प्रतीत होता है। यह एक अत्यन्त अद्भुत बात है कि यदि आसमान खुला हो तो सन्ध्या के झुटपुटे मे चन्द्रमा दिन या रात की अपेक्षा बहुत बडा दीखता है—यह निष्कर्ष इस तथ्य के अनुकूल ही है कि सन्ध्या के झुटपुटे मे आकाश की मेहराबदार छत अधिक चिपटी दीखती है। यदि रात मे कुहरा [illegible] चन्द्रमा [illegible]-पास के आकाश को तेज रोशनी से प्रकाशित करता है, और हमे प्रतीत होता है मानो रात्रि के हल्के चिपटेपन वाले आकाश की जगह सन्ध्या के झुटपुटे वाला चिपटा आकाश मौजूद है अत चन्द्रमा एक बार फिर बडे आकार का दीखता है। यदि कोई व्यक्ति यह सोचे कि क्षितिज के निकट स्थित होने पर या कुहरे से घिरे होने पर चन्द्रमा के आकार की प्रतीयमान वृद्धि का सम्बन्ध उसकी प्रदीप्ति की कमी के साथ जोडा जा सकता है तो उसकी इस गलत धारणा का समाधान निम्नलिखित दो प्रेक्षणो द्वारा किया जा सकता है —(क) नाखूनी शक्ल का **नवचन्द्र** कुहरे मे बडे आकार का **नहीं** दीखता—इसका कारण समझना आसान है, क्योकि नवचन्द्र निकट के आकाश में कम ही प्रकाश फैला पाता है। (ख) ऊँचे आकाश मे चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा का आकार बडा नही दीखता। ऊपर की इन तमाम बातो से यह स्पष्ट है कि पृष्ठभूमि का आकाश ही प्रमुख उपादान है जो हमारे लिए सूर्य और चन्द्रमा का आकार निर्धारित करता है। फिर भी हमे स्वीकार

करना होगा कि दोनो घटनाओ मे इस प्रकार का घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करने के खिलाफ कुछ आपत्तियाँ भी अवश्य है। अनेक व्यक्तियो को तो क्षितिज पर स्थित सूर्य या चन्द्रमा **निकटतम दूरी पर** जान पडता है और उनकी प्रत्यक्ष दूरी के बारे मे कुछ भी अन्तर को महसूस करने मे वे नितान्त असमर्थ रहते है, यद्यपि उनके आकार की वृद्धि का स्पष्ट रूप से वे अनुभव करते है। मेरे विचार मे इस प्रकार की आपत्तियो को निर्णायक नही मानना चाहिए, क्योकि बहुत सम्भव है कि दूरी के बारे मे एकदम सीधे ही प्रश्न करने पर हम ऐसी मनोवैज्ञानिक प्रेरणाओ को उभार देते है जो उन प्रेरणाओ से भिन्न होती है जो उनके इस स्वत निर्णय करने की क्षमता को विशेष रूप से प्रभावित करती है।

११३ अवतल धरती

यह आकाशीय छत की दृष्टि-अनुभूति का प्रतिरूप सरीखा है। जब वायु स्वच्छ होती है तो गुब्बारे से सर्वेक्षण करने पर धरती ऊपर की ओर झुकी जान पडती है अत ऐसा जान पडता है मानो हम एक बृहत् अवतल प्लेट के ऊपर-ऊपर उतरा रहे है। आँख से गुजरनेवाला क्षैतिज धरातल सदैव ही हमे समतल प्रतीत होता है, तथा इससे ऊपर या नीचे के दूर-स्थित अन्य क्षैतिज धरातल इस स्थिर धरातल की ओर झुके हुए प्रतीत होते है। बादलो की पेटी से कुछेक मील ऊपर जब गुब्बारा उतराता है तो ये बादल भी वक्र सतह के प्रतीत होते है जिनका उत्तल पार्श्व पृथ्वी की ओर होता है और अवतल पार्श्व ऊपर की ओर। यदि हम बादलो के दो स्तरो के दर्मियान स्थित हो, एक हमारे ऊपर और दूसरा नीचे तो हमे ऐसा महसूस होता है मानो हम घडी के दो विशालकाय काँच के दर्मियान उतरा रहे है। वायुयान पर से भी इसी प्रकार के प्रेक्षण प्राप्त किये जा सकते है।

११४ न्यूनानुमान का सिद्धान्त

'आकाशीय मेहराबदार छत' की प्रत्यक्षत अस्पष्ट मनोवैज्ञानिक घटना के लिए गणित का सूत्र प्राप्त करने मे स्टेर्नेक ने अत्यन्त कुशलता के साथ कामयाबी हासिल की है। यद्यपि यह सही है कि वह इस सूत्र के लिए किसी तरह की निश्चित व्याख्या नही दे पाया है, किन्तु उसने कम-से-कम इसका सम्बन्ध ऐसे प्रेक्षणो के एक बडे समूह से स्थापित किया है जिनसे हम अपने दैनिक अनुभव मे भलीभाँति परिचित है।

वस्तुएँ जितनी अधिक दूरी पर स्थित होती है, उनकी दूरियो का अन्तर आँक सकना उतना ही अधिक कठिन होता है। सडक के लैम्प जो हमसे १६० या १७० गज़ से

अधिक फासले पर होते है, सबके सब रात के समय एक ही दूरी पर स्थित जान पडते है। क्षितिज के पर्वतो मे से या आकाशीय पिण्डो मे से कोई भी दूसरो के मुकाबले मे अधिक दूरी पर नही जान पडते। सामान्य कोटि का अप्रशिक्षित प्रेक्षक सभी लम्बी दूरियो को कम ही आँकता है, उदाहरण के लिए, रात मे जलती हुई आग, खुले समुद्र से दिखलाई देने वाले बन्दरगाह की बत्तियाँ, आदि।

निकट की वस्तुओ के लिए इस न्यूनानुमान की मात्रा कम होती है, तथा वस्तुओ की दूरी के बढने पर यह न्यूनानुमान भी बढ जाता है और अन्त मे प्रत्यक्ष प्रतीत होने वाली यह दूरी एक सीमा तक पहुँच कर फिर आगे नही बढती। रेलगाडी से देखने पर आयताकार श्वेत समलम्ब चतुर्भुज[1] ▭ के मानिन्द जान पडते है, क्योकि भुजा α द्वारा बननेवाले कोण का मान इसकी सही दूरी के हिसाब से तो सही होता है, किन्तु भुजा की आभासी दूरी के हिसाब से यह कोण छोटा बैठता है। रेलगाडी जब सुरग मे प्रवेश करती है और खिडकी मे से आप सुरग के प्रवेश-द्वार की ईंटो की बनी दीवार को देखते है तो ईंटे उभरी हुई-सी प्रतीत होती है और आकार मे वे बडी जान पडती है। व्याख्या इस प्रकार है , यदि सही दूरी आधी हो जाती है तो आँख पर ईंटे पहले की अपेक्षा दो गुना बडा कोण बनाती है, किन्तु आभासी दूरी केवल डेढ गुना ही कम होती है (मिसाल के लिए), अत ऐसा प्रतीत होता है मानो ईंटे स्वय आकार मे बढ गयी है।

वान स्टेर्नेक ने व्यक्त दूरी d' और वास्तविक दूरी d को निम्नलिखित सरल सूत्र द्वारा परस्पर सम्बद्ध करने का प्रयत्न किया था — $d' = \dfrac{cd}{c + d}$

c हर एक दशा के लिए विशेष स्थिराङ्क है जो दी हुई प्रदीप्ति की दशा मे आँकी जा सकनेवाली महत्तम दूरी बतलाती है। c का मान २०० गज से लेकर १० मील तक पहुँचता है। इस सूत्र से हम देखते है कि c की तुलना मे जबतक d का मान बहुत कम रहता है, तब तक आभासी दूरी d' करीब-करीब वास्तविक दूरी d के बराबर ही रहती है। यदि d का मान उसी कोटि[2] का हो जाता है जिस कोटि का c, तो अधो-अनुमान मे वृद्धि हो जाती है, यदि c की अपेक्षा d का मान अधिक हो तो आभासी दूरी सीमा के निकट पहुँच जाती है। अत यह सूत्र हमारे अनुभव का एक उत्तम गुणात्मक[3] विवरण प्रस्तुत करता है। और अधिक सूक्ष्म प्रेक्षणो से पता चलता है कि यह सूत्र मात्रात्मक[4] दृष्टि से भी आश्चर्यजनक रूप मे सही सिद्ध होता है।

1 Trapezia 2 Order 3 Qualitative 4. Quantitative

न्यूनानुमान के सिद्धान्त से यह बात समझ मे आती है कि कैसे पहाड के पेंदे पर खडा प्रेक्षक O चढाई के ढाल की तीव्रता को अत्यधिक आँकता है—दूरी OB को वह OB′ के बराबर समझता है अतः AB के स्थान उसे AB′ दिखाई देता है। और इसी तर्क के अनुसार चोटी पर खडा प्रेक्षक नीचे की ढाल की तीव्रता को कम करके आँकता है (चित्र १०१)। अब हम देखेगे कि इस सिद्धान्त द्वारा आकाशीय मेहराबदार छत की आभासी शक्ल की व्याख्या करने का प्रयत्न कैसे किया गया है तथा इसके साथ-साथ इस बात की व्याख्या भी कि क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डो के आकार मे प्रकट रूप से वृद्धि क्यो हो जाती है।
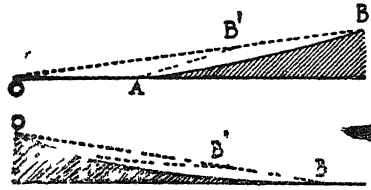
चित्र १०१—**प्रेक्षक O ऊपर की चढ़ाई को अधिक बढ़ाकर आँकता है और नीचे के ढाल को घटाकर।**

कल्पना कीजिए कि हमारे सिर के ऊपर डेढ मील की ऊँचाई पर बादलो की पेटी है। बादलो के इस स्तर को एक अत्यन्त चिपटी प्लेट के मानिन्द दीखना चाहिए क्योकि पृथ्वी की वक्रता के कारण क्षितिज के बादलो के स्तर से हमारी आँख की दूरी करीब ११० मील होती है जबकि ऊर्ध्व बिन्दु के बादल से आँख की दूरी केवल १ ५ मील है। किन्तु मेघाच्छादित आकाश इस शक्ल का बिलकुल ही नही दीखता। छोटी दूरी मे न्यूनानुमान थोडी मात्रा मे लगता है और लम्बी दूरी मे अधिक मात्रा मे। मान लीजिए कि हम अनुपात $\frac{\text{आँख से क्षितिज तक दूरी}}{\text{आँख से ऊर्ध्व बिन्दु तक दूरी}}$ का मान लगभग ५ आँकते है। इसका अर्थ है कि इन परिस्थितियो मे $c = ६ ६$ मील। अत न्यूनानुमान के सिद्धान्त के सूत्र से हमे सही मान प्राप्त होता है। (इस प्रयोग को स्वय आजमाइए!)। इससे हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि मेघाच्छादित आकाश हमे एक ऐसी मेहराब (चापच्छद) जैसा दीख पडेगा जिसकी शक्ल अति परवलयाकार खोखले पिण्ड की भीतरी सतह के मानिन्द होगी—जो वास्तव मे हमारी सामान्य अनुभूति के अनुकूल ही पडती है। अत ध्यान रखिए कि दरअसल आकाशीय छत हमे चिपटी नही दिखाई देती है, बल्कि इसके प्रतिकूल, अपनी वास्तविक ऊँचाई से कुछ **अधिक ही ऊँची** यह जान पडती है!

किन्तु दिन का नीला आकाश या रात का तारो भरा आकाश कैसा दीखता है?

इसके लिए वान स्टेर्नेक बस स्थिराक c के लिए हर बार एक नया मान लेता है और इस प्रकार उसका सूत्र प्रत्येक विशिष्ट दशा के लिए प्राप्त प्रेक्षण का आश्चर्यजनक रूप से सही विवरण प्रस्तुत करता है। किन्तु यह समझ पाना मुश्किल है कि इन दशाओ मे हम किसी खास 'दूरी' के मान के न्यूनानुमानित होने की बात कैसे कर सकते है। और यह हमे अधिक व्यापक प्रश्नो की ओर ले जाता है बादल सरीखी अनिश्चित वस्तुओ के लिए 'दूरी' की अनुभूति आखिर हमे प्राप्त ही कैसे हो पाती है ? और फिर नीचे आकाश की दूरी ? या फिर रात के बिना बादलो वाले खुले आकाश की दूरी ? जहा तक पार्थिव वस्तुओ का सम्बन्ध हे जिनकी लम्बाई, चौडाई या दूरी से हम अपने अनुभवो द्वारा भलीभाँति परिचित है, न्यूनानुमान का सिद्धान्त सही साबित हो सकता है, किन्तु यह अत्यन्त सन्देहजनक है कि यह ऊपर के आकाश पर भी लागू किया जा सकता है या नही। इसके अतिरिक्त अभी तक इस बात पर कोई प्रकाश नही डाला जा सका है कि अधोऽनुमान या न्यूनानुमान की उत्पत्ति कैसे होती है।

११५ दृष्टि-दिशा सम्बन्धी गौस का सिद्धान्त

उपर्युक्त पैराग्राफ के सम्बन्ध मे अनेक प्रेक्षण ऐसे मिलते है जिनसे यह पता चलता है कि आकाशीय छत की शक्ल तथा क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्डो के आकार मे प्रगट रूप से वृद्धि, इस बात पर निर्भर करती है कि शरीर के लिहाज से हमारी दृष्टि-रेखा की दिशा क्या है। अत गौस ने यह मान लिया कि पीढी दर पीढी के अनुभव ने समानुयोजन[1] द्वारा हमे इस योग्य बल दिया है कि अपने सामने की ओर की वस्तुओ का प्रेक्षण हम ऊपर की ओर की वस्तुओ की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह कर सके और हमारी यह क्षमता दूरी तथा आकार की लम्बाई-चौडाई आँकने की सामर्थ्य को प्रभावित करती है।

पूर्णिमा का चन्द्रमा जब ऊँचे आकाश पर चमक रहा हो, तो उस वक्त हम आराम कुर्सी पर बैठे या जमीन पर ही बैठे, इस तरह कि हमारा सिर किसी ढालुआँ धरातल पर टिका हो। यदि पीछे की ओर काफी झुके किन्तु सिर को शरीर के अन्य भागो के लिहाज से सामान्य स्थिति मे ही रखे, तो चन्द्रमा का अवलोकन करने पर यह काफ़ी बडे आकार का दीखता है। यदि हम अचानक उठ खडे हो, तब चन्द्रमा को देखने के लिए हमे निगाह ऊपर की ओर उठानी होती है, और अब वह एक बार फिर छोटा दीखता

1 Adaptation

है। इसके ठीक प्रतिकूल, क्षितिज पर पूर्णिमा का चन्द्रमा हमे उस दशा मे छोटा दीखता है जब हम आगे की ओर झुकते है।

दोनो ही घटनाएँ एक के बाद दूसरी उस वक्त देखी जा सकती है जब सूर्य क्षितिज से ३०° या ४०° की ऊचाई पर हो और धुन्ध के कारण इसकी चमक मन्द पड गयी हो। पीछे की ओर तथा सामने की ओर बारी-बारी से झुकिए तो उसी क्रम से सूर्यमडलक बडा और छोटा दीखेगा। पीठ के बल जमीन पर लेट जाइए, अब इस वक्त आकाश, उस ओर जिधर आप का सिर है, दबा हुआ प्रतीत होता है और इसके सामने ही दिशा
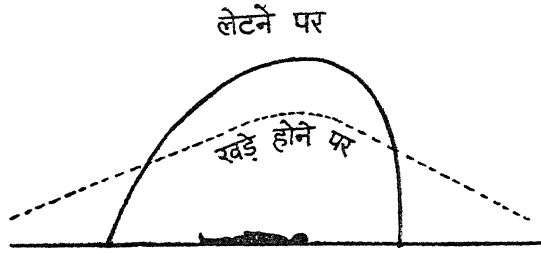
चित्र १०२—**आकाश, जैसा कि वह लेटने की स्थिति से तथा खड़े होने की स्थिति से दीखता है।**

मे वह पूर्णतया गोलाकार दीखता है (चित्र १०२)। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि (शरीर के लिहाज) से निगाह जब नीचे की ओर जाती है या सामने की ओर, तो प्रस्तुत दशा के लिए दोनो के समान प्रभाव होते है, जबकि ऊपर की ओर निगाह जाती है तो वस्तुएँ सकुचित हुई जान पडती है।

क्षैतिज दण्ड[1] के सहारे घुटनो के बल नीचे को लटक जाइए, और जबकि आप का सिर नीचे लटकता हो, चारो ओर इधर-उधर देखिए। आकाश आप को अर्द्ध गोले की शक्ल का दीखेगा।

ये सभी प्रेक्षण एक दूसरे का समर्थन करते है। इसके अतिरिक्त तारा-समूह को जब दूरबीन से देखते है ताकि भू-दृश्य के बाहरी प्रभावो से प्रेक्षण मुक्त रहे, तो इसी प्रकार जब वे क्षितिज के निकट नीचे ही स्थित होते है, तो वे बडे दीखते है। इस दशा मे किसी भी तरह प्रभाव डालने वाली चीज बस केवल निगाह की दिशा ही हो सकती है।

1. Horizontal bar

अत अव दर्पण की सहायता से सूर्य और चन्द्रमा के आभामी आकार की ओर अधिक जाँच करने का प्रयत्न मत कीजिए—क्योंकि उदाहरण के लिए, आकाश में ऊँचाई पर स्थित चन्द्रमा को दर्पण मे आप इस तरह देखते हैं कि आप की दृष्टि क्षैतिज दिशा मे स्थित रहती है। यदि किसी भी तरह प्रेक्षक को दर्पण की उपस्थिति का भान हो जाता है तो दृष्टि-भ्रम कुछ अशो मे नष्ट हो जाता है। इसी कारण इस ढग के प्रयोग का पूरा करना अत्यन्त कठिन होता है।

अभी वतलायी गयी दृष्टि-अनुभूतियो के सम्बन्ध मे दिये गये अन्य वहुत से सिद्धान्तो का आसानी से खण्डन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए कहा गया है कि आकाशीय छत की शक्ल के लिए एक 'भौतिक सिद्धान्त' प्रस्तुत किया जा सकता है। यह सिद्धान्त वस्तुत इस दुर्बोध्य तथ्य के रूप मे है कि आकाश जितना अधिक चमकीला होगा, उतना ही अधिक दूर वह प्रतीत होगा, दूरी प्रदीप्ति के वर्गमूल के अनुपात में वढती है। ऊर्ध्व विन्दु पर नीला आकाश क्षितिज की तुलना मे मन्द प्रकाश का होता है अत इस कारण इसकी ऊँचाई कम प्रतीत होगी। किन्तु इस सिद्धान्त का पर्य्याप्त रूप से खण्डन इस बात से हो जाता है कि आकाश पर जब चारो ओर समान रूप से वादल छाये रहते है तो ऊर्ध्व विन्दु पर आकाश क्षितिज की अपेक्षा अधिक चमकीला रहता है, किन्तु फिर भी यह चिपटा प्रतीत होता है। फिर इसके अतिरिक्त भी, मेघाच्छादित आकाश मे वादलो का वह भाग जो सूर्य के सामने पडता है, शेष भाग के मुकावले मे अधिक चमकीला दीखता है, तब भी यह चारो ओर के भाग के मुकावले मे हमारे अधिक निकट प्रतीत होता है।

११६. आकाशीय छत की दूरी का हमारा अनुमान पार्थिव वस्तुओ द्वारा किस प्रकार प्रभावित होता है

यदि आप मकानो की एक लम्बी कतार के सामने खडे हों और ठीक अपने सामने के मकानो को देखें तो इनके ऊपर का आकाश कतार के दूसरे सिरे के मकानो के ऊपर के आकाश के मुकावले मे वहुत अधिक नजदीक जान पडेगा।

प्रगट रूप से आकाश की दूरी हम ५० से ६० गज तक आँकते हैं। किन्तु हमे ऐसी वस्तुएँ भी दिखाई देती हैं जिनके वारे मे हमे अच्छी तरह ज्ञात है कि वे अत्यधिक दूरी पर हैं, यह बात इस निष्कर्ष के लिए पर्य्याप्त है कि उनकी पृष्ठभूमि का आकाश और भी अधिक दूरी पर स्थित प्रतीत होगा। हम कह सकते हैं कि कुछ हद तक पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु के लिए आकाश मे उनकी निज की पृष्ठभूमि होती है। इससे

स्पष्ट है कि ये सभी घटनाएँ विशुद्ध रूप से मनोवैज्ञानिक ही होनी चाहिए तथा किसी आदर्श नियामक धरातल पृष्ठ की बात करना, जो हमारे लिए आकाशीय छत ही होगी, नितान्त असम्भव है।

रेल की लम्बी पटरी की सीध मे देखिए या किसी ऐसी चौडी सडक को देखिए जिसके दोनो ओर वृक्ष लगे हो ताकि लम्बी दूरी का भान हो सके, तो इनकी लम्बाई की दिशा मे आकाश, दिक्सूचक की अन्य दिशाओ की अपेक्षा अधिक दूरीपर स्थित जान पडता है। किन्तु कागज के तख्ते से यदि आप क्षितिज रेखातक भू-दृश्य को ओट मे ले ले, तब तुरन्त वही आकाश निकट प्रतीत होने लग जाता है।

इसके प्रतिरूप के फलस्वरूप हम इसी प्रकार अपनी निगाह ऊर्ध्व दिशा की ओर डाल सकते है, तब आकाश अधिक ऊँचा प्रतीत होगा। यह उस वक्त विशेष प्रभावकारी होती है जब हम एक ऊची मीनार के पेदे से देखते है या और भी बेहतर होगा यदि किसी बडे रेडियो स्टेशन के पतले और ऊँचे खम्भो के पेदे के निकट से देखे। तब ऊपर का आकाश झुका हुआ प्रतीत होता है, यहाँ तक कि यह गुम्बज की शक्ल अख्तियार कर लेता है। तीन ऐसे स्तम्भो के दर्मियान समूचा आकाश ऊपर को उभरा हुआ सा प्रतीत होता है।[1] विभिन्न निरीक्षक, एक दूसरे से स्वतत्र तरीके पर, इसी प्रकार अपने लिए आकाशीय छत की आभासी शक्ल निर्धारित करते है (चित्र १०३)।
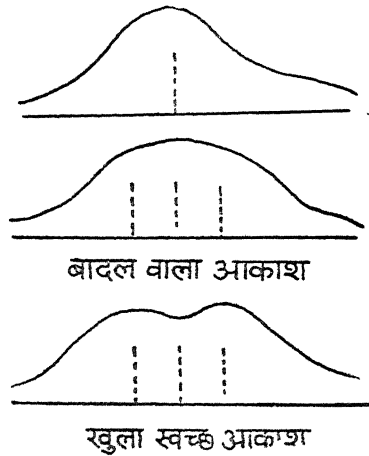
चित्र १०३—**एरियल के खभो के ऊपर आकाश की आभासी शक्ल।**

यदि इनमे से किसी एक स्तम्भ की ओर देखते हुए आप क्षितिज से ऊर्ध्व विन्दु तक के वृत्तचाप को दो भागो मे विभाजित करे (§१०९), तब निचला भाग बहुत बडा

1 H Stncklen, Diss Gottıngen, (1919)

प्रतीत होगा बनिस्वत उस दशा के जबकि स्तम्भ की ओर पीठ करके उतनी ही दूरी मे आप विभाजन का अन्दाज लगाये। निचले भाग मे बनने वाला कोण अब ४५° मे बडा, करीब-करीब ५६° के बराबर भी जान पडेगा जिसका अर्थ यह है कि आकाशीय छत एक अर्द्धगोले से भी अधिक ऊँची दीखती है।

ये प्रेक्षण कितने भी अधिक विश्वसनीय क्यो न हो, किन्तु स्मरण रखिए कि वे स्वय अपने तई आकाशीय छत की शक्ल या क्षितिज के निकट आकाशीय पिण्ड के आकार की प्रगट रूप मे वृद्धि का समाधान नही कर सकते। अत्यन्त गहरे रग के काँच मे से भी देखने पर सूर्य ऊँची स्थिति मे सदैव छोटा दीखेगा और नीची स्थिति मे बडा दीखेगा यद्यपि भू-दृश्य इस दशा मे कत्तई नही दृष्टिगोचर होते है।

११७. सूर्य और चन्द्रमा के आभासी आकार को इचो मे प्रगट करना—उत्तर–प्रतिबिम्ब की रीति[1]

हम जानते है कि सूर्य और चाँद के आकार को हम रेखीय माप मे नही व्यक्त कर सकते। हम तो केवल वह कोण नाप सकते है जो ये आँख पर बनाते है। फिर भी यह एक अद्भुत बात है कि बहुत से लोग दावा करते है कि ये आकाशीय पिण्ड शोरबे की प्लेट के आकार के बराबर है और कुछ थोडे से लोग इन्हे सिक्के के आकार का बताते है। हो सकता है कि यह आपको हास्यास्पद लगे, किन्तु स्मरण रखिए कि वैज्ञानिक विचारधारा वाला व्यक्ति भी यह महसूस करता है कि यह कह सकना नितान्त असम्भव होगा कि चन्द्रमा का व्यास १ मि० मीटर मालूम पडता है या १० गज, जबकि वह भली-भाँति जानता है कि ४ इच की दूरी पर १ मि० मीटर व्यास अथवा १००० गज की दूरी पर १० गज का व्यास चन्द्रमा को बिलकुल ठीक ढक लेगा। इस घटना मे भाग लेने वाले मनोवैज्ञानिक तथ्यो के बारे मे अभी तक बहुत कम जानकारी प्राप्त हो पायी है।

सभी को मालूम है कि सूर्य की ओर दृष्टि डाल कर पलक झपकाने पर उसका उत्तर-प्रतिबिम्ब प्राप्त किया जा सकता है (§८८)। बाद मे प्रत्येक वस्तु पर, जिसपर हम नजर डालते है, यह उत्तर-प्रतिबिम्ब प्रक्षेपित होता है। निकट की दीवार पर यह अत्यन्त छोटा और तुच्छ-सा दीखता है, और दूर की चीजो पर यह बडा प्रतीत होता है (ध्यान दीजिए कि हम उस कोण का मान नही आँकते जो यह आख पर बनाता है बल्कि स्वय उस वस्तु के आकार का अनुमान लगाते है।) यह प्रभाव भली प्रकार समझ मे

1 G ten Doesschate Nederl Tijdschr voor Geneesk 74, 748 1930

भी आता है क्योकि यदि कोई वस्तु दूरी पर स्थित होकर भी आँख पर उतना ही बडा कोण बनाये जितना बडा निकट की वस्तु बनाती है, तो रेखीय माप मे वह वस्तु अवश्य अधिक बडी होगी। यह प्रतिबिम्ब स्वय सूर्य के आकार के बराबर कब दीखता है ? विभिन्न प्रेक्षको के मतानुसार ऐसा उस वक्त प्रतीत होता है जब दीवार की दूरी ५५ से लेकर ६५ गज तक होती है, यह शर्त्त दिन के लिए तथा रात के लिए समानरूप से लागू होती है। अत इससे पता चलता है कि इतनी ही दूरी हम अपने और सूर्य या चन्द्रमा के बीच महसूस करते है। चूँकि इस दशा मे आँख पर बनने वाले कोण का मान १/१०८ रेडियन होगा, अत इस के अनुसार प्रतिबिम्ब का व्यास १८ से २२ इच तक होना चाहिए।

इसी प्रकार यह देखा गया है कि ६५ गज से अधिक फासले की दीवार पर भी उत्तर-प्रतिबिम्ब उतना ही बडा दीखता है जितना बडा ठीक उसके ऊपर के आकाश अर्थात् क्षितिज पर, जबकि ऊँचे आकाश पर प्रक्षेपित उत्तर-प्रतिबिम्ब निश्चय ही ६५ गज के फासले वाली दीवार पर बनने वाले प्रतिबिम्ब से छोटा दीखता है। इससे एक बार फिर यह बात प्रदर्शित होती है कि हमारे लिए ऊपर के आकाश की दूरी क्षितिज के मुकाबले मे कम दीखती है और अधोऽनुमान के सिद्धान्त के लिए सीमान्तक दूरी लगभग ६५ गज होती है (देखिए §११४)।

११७ अ. दृश्य-स्थल

अपने पहले के बनाये चित्रो की पुन माप करने पर वॉगनकोर्निश[1] इस नतीजे पर पहुँचा कि एक क्षेत्र के लिए, जिसे समष्टि रूप से हम एक नजर मे देख पाते है, उसके कोणीय विस्तार को उसके एक लाक्षणिक विशिष्टता के रूप मे निर्धारित करना उपयोगी होगा —इसे ही दृश्य-स्थल कहते है। भू-दृश्य की सामान्य दृष्टि-अनुभूति से यह घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। अशो मे नाप करे तो मैदानो मे इसका विस्तार बढ जाता है और पहाडो मे यह घट जाता है, रात्रि मे यह अधिक विस्तृत होता है और दिन मे कम। यह क्षेत्र जितना ही अधिक सकुचित होता है, हम कागज पर उसे चित्रित करते समय उसमे सूर्य और चन्द्रमा को उतना ही अधिक छोटे आकार का बनाते है, किन्तु कोणीय माप मे व्यक्त करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वे हमे अधिक बडे दिखलाई पडते है।

1 Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1935)

अध्याय १०

इन्द्रधनुष, प्रभामण्डल तथा कांतिचक्र[1]

इन्द्रधनुष

निम्नलिखित सरल बाते इन्द्रधनुष के अध्ययन की भूमिका समझी जा सकती है। पानी की अकेली एक बूँद मे जिस क्रिया को सम्पन्न होते हुए हम देखते है वही वर्षा की लाखो बूँदो मे दृष्टिगोचर होती है और फलस्वरूप चमकता हुआ रगीन वृत्तचाप बनता है।

११८. वर्षा की बूँदो मे व्यतिकरण की घटना[2]

अनेक व्यक्ति जिन्हे घरके बाहर भी चश्मा लगाना पडता है, इस बात की शिकायत करते है कि वर्षा की बूँदे प्रतिबिम्ब को विकृत कर देती है जिससे उसे पहचानना मुश्किल हो जाता है। कदाचित् उन्हे तसल्ली मिलेगी यदि उनका ध्यान हम उन्ही वर्षा-बूँदो मे दृष्टिगोचर होनेवाली शानदार व्यतिकरण[3] की घटना की ओर आकृष्ट करे। उन्हे बस इतना ही करना होगा कि वे किसी दूर के प्रकाश-स्रोत जैसे सडक के लैम्प को देखे। अब पानी की बूँद जो पुतली के ठीक सामने पडती है, विचित्र ढग से विकृत हो जाती है—यह प्रकाश के धब्बे सरीखी दीखती है जिसमे असाधारण रूप से दाते से कटे रहते है तथा जिसके हाशिये पर अत्यन्त सुन्दर विवर्त्तन धारियाँ दीखती है जिनमे रग भी दृष्टिगोचर होते है, (चित्र १०४, a)।

इस सम्बन्ध मे ध्यान देने योग्य एक बात यह है कि चश्मे को इधर-उधर थोडा हटाएँ तो भी प्रकाश का धब्बा उसी स्थिति पर बना रहता है। दूसरी बात यह है कि प्रकाश के धब्बे की सामान्य शक्ल तथा इधर-उधर निकले हुए उसके हाशिये का, प्रथम दृष्टि मे, बूँद की आकृति से किसी भी तरह का सम्बन्ध नही जान पडता। इसकी व्याख्या

1 Rainbow, halo and corona

2. Larmor, Proc Cambr. Philos. Soc 7, 131, 1891

3 Interference Phenomenon

मग्न ही है। आँख को एक छोटी दूरबीन समझिए जो दूर के प्रकाश-स्रोत का प्रतिबिम्ब बना रही है, और पानी की बूँद को प्रिज्मो का समूह मानिए जो दूरबीन के अभिदृश्य लेन्स के आगे रखा है। तब यह स्पष्ट है कि प्रत्येक नन्हा प्रिज्म किरणो के एक समूह को बगल की ओर वर्तित करता है, यह क्रिया अभिदृश्य लेन्स पर प्रिज्म की स्थिति
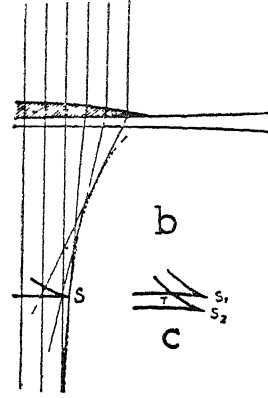
चित्र १०४—**चश्मे के लेन्स पर पडी हुई वर्षा की बूँद से प्रकाश का विवर्तन**
(a) **व्यतिकरण आकृति** (b) **प्रकाश किरणो का मार्ग; बिन्दुरेखा रश्मिस्पर्शी वक्र है; मोटी रेखा तरंग का धरातल है निशिताग्र S पर है।**
(c) **दो क्रमागत तरगाग्र, दोनो ही T बिन्दु से गुजरते है।**

द्वारा प्रभावित नही होती (बशर्त्ते यह अभिदृश्य लेन्स पर, दूरबीन के प्रवेशमुख के अन्दर अन्दर पडता हो।) किन्तु प्रकाश के धब्बे की शक्ल प्रिज्म के वर्त्तन कोण तथा हर एक प्रिज्म के अनुस्थापन[1] पर अवश्य निर्भर करती है। पानी की बूँद जो ऊर्ध्व दिशा मे खिच उठी होती है, दरअसल प्रकाश की क्षैतिज लकीर-सी बनाती है।

आइए, अब विवर्त्तन-धारियों[2] की बात करे। इन धारियो का अस्तित्व ही नही होता यदि पानी की बूँद लेन्स की सही आकृति धारण किये होती, ताकि प्रकाशस्रोत का प्रतिबिम्ब ठीक एक बिन्दु पर बनता। क्योकि उस दशा मे प्रकाश तरगाग्र के प्रत्येक भाग, चूँकि प्रकाशस्रोत से वे एक साथ ही चले थे, प्रतिबिम्ब-स्थल पर बिना किसी पारस्परिक कला-अन्तर[3] के पहुँचेगे। किन्तु बूँद की सतह की वक्रता अनियमित होती है, अत उससे वर्त्तित होने पर किरणे एक फोकस पर नही मिलती, बल्कि वे रश्मि-

1 Orientation 2 Diffraction fringes 3 Phase-difference

स्पर्शी वक्र[1] के धरातल पर एक-दूसरे से मिलती है (चित्र १०४, b)। ऐसी दशा में सदैव ही हम पाते है कि रश्मि-स्पर्शी के निकट के किसी भी बिन्दु से दो भिन्न किरणे गुजरती है जो विभिन्न लम्बाइयो के प्रकाशपथ को पार किये हुए होती है, अत इनके बीच व्यतिकरण होता है। त रग की सतह का रेखाचित्र खीचने पर हम एक उत्क्रमण बिन्दु[2] प्राप्त करते है जहाँ निशिताग्र[3] स्थित होता है। अत प्रत्येक क्षण पर एक बिन्दु T से सदैव ही दो तरगाग्र एक निश्चित कला-अन्तर पर गुजरेंगे (चित्र १०४, c)।

निश्चित बिन्दु से नापी गयी अन्धकारवाली धारियो की दूरी इस सूत्र से प्राप्त होती है, दू$=\sqrt[3]{(2m+1)^2}$ जिसमे m के मान 1, 3, 5 है। अत ये दूरियाँ उसी अनुपात मे होती है जिस अनुपात मे २ १, ३ ७ ५ ०, ६ १ आदि है।

११९ इन्द्रधनुष का निर्माण कैसे होता है ?

मेरा हृदय उछल-उठता है, जब मै करता हूँ दर्शन सुरधनु का आकाश पर।

—वर्ड्सवर्थ

ग्रीष्म ऋतु की सन्ध्या है और उमस बहुत ही अधिक है। पश्चिमी क्षितिज पर काले बादल छाये है, तूफान की तैय्यारी हो रही है। बादलो का एक काला मेहराव-सा तेज़ी के साथ ऊपर उठ रहा है और इसके पीछे दूरी पर स्थित आकाश साफ होता नज़र आ रहा है—सामने के किनारे पर हलके रग के अलका[4] बादलो का हाशिया है जिसपर पतली आडी धारियाँ दिखाई देती है। यह समूचे आकाश पर छा जाता है और फिर हमारे सिर के ऊपर से भयोत्पादक तरीके से गरज की एकाध गडगडाहट उत्पन्न करता हुआ गुजरता है। तब अकस्मात् ही मूसलाधार वर्षा होने लग जाती है—अव पहले की अपेक्षा ठण्डक हो जाती है। सूरज जो आसमान मे नीचे उतर चुका है, पुन चमकने लगता है। और इस तूफान मे, जो पूर्व दिशा की ओर वढ रहा है, रग-विरगी आभा के इन्द्रधनुष की चौड़ी मेहराब प्रगट होती है।

जब कभी इन्द्रधनुष दीख पड़ता है, सदैव ही पानी की बूंदो पर प्रकाश की क्रीडा के फलस्वरूप इसका निर्माण होता है। बहुधा ये बूंदे वर्षा-जल की बूंदे होती हैं, कभी-कभी कुहासे की नन्ही बारीक बूंदे भी। इनमे से सबसे नन्ही वूंदो मे, जिनसे वादल बनते है, इन्द्रधनुष कभी नही देखे जा सकते। अत यदि कभी आप किसीको यह कहते हुए सुने कि गिरते हुए तुषार मे या स्वच्छ आकाश मे उसने इन्द्रधनुष देखा है तो निश्चय

1 Caustic 2 Point of reversal 3 Cusp 4 Cirrus

ही समझ जाइए कि तुषार आधा गलकर पानी बन चुका रहा होगा या फिर पानी की झीनी फुआर पडी होगी जो कभी-कभी बिना बादलो के ही उत्पन्न हो जाती है। इस तरह कुछ और दिलचस्प प्रेक्षण स्वय करने का प्रयत्न करिए। पानी की ये बूंदे जिनमे इन्द्रधनुष का निर्माण होता है, आम तौर पर हमसे आध मील से लेकर डेढ मील की दूरी से अधिक फासले पर नही होती है (प्लेट IX a)। एक अवसर पर मैने इन्द्रधनुष देखा जो मेरी आँख से २० गज की दूरी पर स्थित जगल की मटमैली पृष्ठभूमि के सामने स्पष्ट उभरा था, अत स्वय इन्द्रधनुष तो और भी नजदीक रहा होगा। एक ऐसे दृष्टान्त का भी पता है जबकि ३ गज के फासले के जगल के सामने इन्द्रधनुष दिखलाई पडा था।[1]

इङ्गलैण्ड के एक प्राचीन अन्धविश्वास के अनुसार प्रत्येक इन्द्रधनुष के पेदे पर स्वर्ण से भरा कलश मौजूद होता है। इन दिनो भी कुछ ऐसे लोग है जिनका ख्याल है कि वे आसानी से इन्द्रधनुष के इस पेदे तक पहुँच सकते है, या वहाँ तक सायकिल पर जा सकते है तथा उनका कहना है कि उस स्थल पर एक अद्भुत टिमटिमाती हुई रोशनी देखी जा सकती है। यह बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिए कि इन्द्रधनुष एक वास्तविक चीज की तरह किसी एक निश्चित स्थिति पर मौजूद नही होता, एक विशेष दिशा से आते हुए प्रकाश के अतिरिक्त यह और कुछ भी नही है।

आर्थोक्रोमैटिक या पैन्क्रोमैटिक फिल्म पर पीले रग के फिल्टर[2] काँच की सहायता से $\frac{1}{10}$ सेकण्ड के प्रकाशदर्शन और F/16 के डायफ्राम पर इन्द्रधनुष का फोटोग्राफ प्राप्त करने का प्रयत्न करिए।

१२० इन्द्रधनुष का विवरण

"रुबेन्स का इन्द्रधनुष मटमैले नीलेरग का था, जो इन्द्रधनुष की ओर से प्रकाशित दृश्य मे आकाश के मुकाबले मे अधिक गहरे रग का दीखता था। रुबेन्स को प्रकाश-विज्ञान की अनभिज्ञता का दोष नही देना चाहिए बल्कि इस बात का कि उसने कभी भी इन्द्रधनुष का ध्यानपूर्वक प्रेक्षण नही किया था।"[3]

रस्किन 'दि ईगलस नेस्ट'

इन्द्रधनुष एक वृत्त का भाग होता है, इसे देखने पर पहली बात जो ध्यान मे आती है वह यह है कि अनुमान लगाये कि इसका केन्द्र कहाँ पर स्थित है, अर्थात् वह दिशा मालूम करे जिस ओर इस वृत्त-खण्ड का केन्द्र स्थित है। तुरन्त हमे पता चलता

1 Nat 87, 314, 1913 2 Filter

3 किन्तु इन्द्रधनुषवाले भू-दृश्य में छायाओ की दिशा इन्द्रधनुष के केन्द्र की दिशा मे नहीं पड़ती है।

है कि यह केन्द्रबिन्दु क्षितिज के नीचे स्थित है और सहज ही हम मालूम कर सकते हैं कि सूर्य से प्रेक्षक की आँख तक खीची गयी रेखा को यदि बढाये (पृथ्वी को भेदते हुए) तो यह उस केन्द्र बिन्दु की ओर इङ्गित करेगी, अर्थात् यह **प्रति-सूर्य बिन्दु**[1] होगा। यह रेखा ही वह अक्ष है जिससे इन्द्रधनुष का वृत्त एक पहिये की तरह जुडा है (चित्र १०५)।
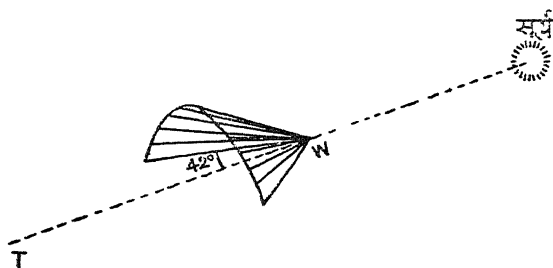
चित्र १०५—**सूर्य की अपेक्षा से वह दिशा जिधर हमें इन्द्रधनुष दिखाई देता है।**

इन्द्रधनुष से आँख तक आनेवाली किरणे एक शकु की सतह बनाती है, इनमे से प्रत्येक किरण अक्ष के साथ ४२° का कोण (शकु के शीर्ष-कोण का आधा) बनाती है।

सूर्य आकाश मे जितना ही नीचे उतरता है, उतना ही प्रति सूर्य-बिन्दु, अत पूरा इन्द्रधनुष ऊपर को उठता जाता है और तदनुसार वृत्त की परिधि का भी उत्तरोत्तर
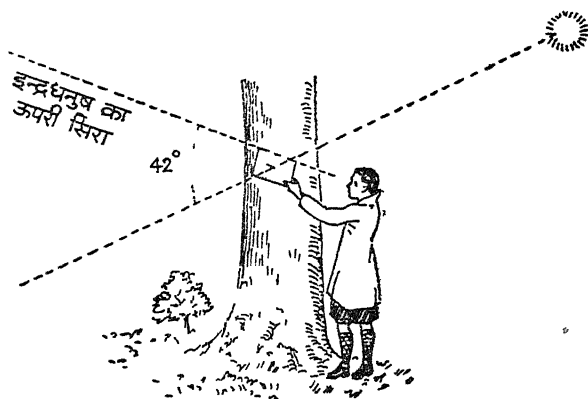
चित्र १०६—**इन्द्रधनुष से प्रति-सूर्यबिन्दु तक की कोणीय दूरी नापना।**

1 Antisolar point

अधिक भाग क्षितिज के ऊपर प्रगट होता है, यहाँ तक कि सूर्य के डूबने के क्षण यह अर्द्धवृत्त बन जाता है। इसके प्रतिकूल सूर्य की ऊँचाई जब ४२° से अधिक होती है तो यह क्षितिज के नीचे पूर्णतया विलुप्त हो जाता है, इसी कारण ससार के इस भाग मे (हालैण्ड मे) ग्रीष्म ऋतु मे दोपहर के लगभग किसी ने भी कभी इन्द्रधनुप नही देखा।

शीर्ष के अर्द्धकोण को नापने के लिए पिन के सहारे एक कार्ड को पेड के तने से लगाइए और इसे घुमाकर ऐसी स्थिति मे रखिए कि इसका एक हाशिया ठीक इन्द्र-धनुप के सिरे की ओर इङ्गित करे। तब पिन की छाया सूर्य को निरीक्षक से मिलानेवाली रेखा की दिशा बतलाती है अत **प्रति-सूर्य बिन्दु** से इन्द्रधनुप की कोणीय दूरी तुरन्त पढी जा सकती है (चित्र १०६)।

§२३५ मे बतलायी गयी विधियो मे से भी किसी एक का उपयोग क्षितिज से इन्द्र-धनुप के ऊपरी सिरे की कोणीय ऊँचाई h नापने के लिए किया जा सकता है (चित्र १०७)। तथा इसके चाप के दोनो छोर के दर्मियान के कोण 2α को भी नाप सकते
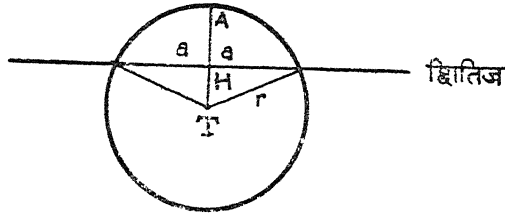
चित्र १०७—a, h, H, r **सभी चाप है, जिनकी नाप अंशो में की जाती है।**

है, साथ ही साथ प्रयोग के समय को भी अङ्कित कर लेते है। बाद मे गणना द्वारा सूर्य की ऊचाई भी मालूम कर लेते है जिससे प्रति-सूर्य बिन्दु T के लिए क्षितिज से नीचे के कोण H का भी मान मालूम हो जाता है। इन से वाञ्छित कोणीय त्रिज्या r के लिए तीन मान प्राप्त होते है जिनका औसत मान हम ले सकते है, जैसा निम्नलिखित मे दिया गया है—

$$r = H + h$$

$$\cos r = \cos\alpha \cos H$$

$$\tan r = \frac{1 - \cos\alpha \cos h}{\cos\alpha \sin h}$$

सच पूछिए तो इन्द्रधनुष को वृत्त चाप की शक्ल मे नही, वल्कि पूर्ण वृत्त की शक्ल का दीखना चाहिए। हम क्षितिज के नीचे इसे नही देख पाते है क्योकि क्षितिज के नीचे उतराती हुई वर्षा की बूँदे हमे दिखलाई नही देती। फिजिका[1] मे वतलाया गया था कि वायुयान से इन्द्रधनुष का पूर्ण-वृत्त देखा जा सकता है, जिसके केन्द्र पर वायुयान की छाया मौजूद होती है। दरअसल इस शानदार दृश्य का अवलोकन किया जा चुका है।

प्रमुख इन्द्रधनुष के गिर्द गौण इन्द्रधनुष का पाया जाना कुछ लोगो के ख्याल मे एक अपवादस्वरूप घटना है। किन्तु वास्तविकता यह है कि गौण इन्द्रधनुष करीब-करीब सदैव ही दृष्टिगोचर होता है, यद्यपि स्वभावत प्रमुख इन्द्रधनुष की तुलना मे यह अत्यन्त मन्द प्रकाश का दीखता है। यह प्रमुख इन्द्रधनुष का समकेन्द्रीय होता है, अत इसका भी केन्द्र प्रति-सूर्य-बिन्दु पर ही स्थित होता है, किन्तु इमसे आनेवाली किरणे सूर्य और नेत्र की अक्षरेखा के साथ ५१° का कोण बनाती है।

'इन्द्रधनुष के सात रगो' का अस्तित्व केवल काल्पनिक जगत् मे ही है, यह भाषा का एक ढग है जो बहुत दिनो से प्रचलित चला आ रहा है, क्योकि हम बहुत कम ही चीजो को उनके वास्तविक रूप मे देख पाते है। वास्तव मे इन्द्रधनुष के रग क्रमश एक-दूसरे मे सविलीन होते जाते है यद्यपि हमारी आँखे अनजाने ही उन्हे समूहो मे पृथक् करने का प्रयत्न करती है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि विभिन्न इन्द्रधनुषो में भारी अन्तर पाया जाता है, बल्कि स्वय वही इन्द्रधनुष जिसे आप देख रहे है, प्रेक्षण के दौरान मे बदल सकता है—इसका ऊपरी भाग निचले भाग से भिन्न हो जाता है। पहली वात तो यह है कि जब कोणीय माप मे रग की समूची पट्टी की केवल चौडाई नापते है तो बहुत अधिक अन्तर प्राप्त होता है (देखिए परिशिष्ट § २३५)। इसके अतिरिक्त, रगो का क्रम सदैव ही लाल, नारगी, पीला, हरा, नीला, और बैगनी होता है, किन्तु विभिन्न रगो की आपेक्षिक चौडाइयो तथा उनकी चमक मे, हर सम्भव तरीके के अन्तर पाये जाते है। मेरा अनुभव है कि विभिन्न प्रेक्षक एक ही इन्द्रधनुष का विवरण सदैव एक ही तरह से नही प्रस्तुत करते। अत इन्द्रधनुषो के अन्तर के बारे मे विश्वसनीय जानकारी हासिल करने के लिए या तो एक ही प्रेक्षक के प्रेक्षणो की तुलना की जानी चाहिए या फिर पहले से इस बात का इतमीनान प्राप्त कर लेना चाहिए कि दो प्रेक्षको की प्रेक्षण-अनुभूतियो में सामान्य रूप से परस्पर सामञ्जस्य पाया जाता हो।

1 Physica

इन्द्रधनुप के रगो के पक्षपात-रहित विवरण हमारा ध्यान इस महत्त्वपूर्ण बात की ओर आकृष्ट करते है कि प्राय इन्द्रधनुप के भीतरी हाशिये पर बैगनी के आगे कई अतिरिक्त धनुष भी होते है। सामान्यत वे सबसे अधिक स्पष्ट वहाँ दीखते है जहाँ इन्द्रधनुप की चमक सबसे अधिक होती है अर्थात् उसके उच्चतम बिन्दु के निकट। इनके रग आम तौर पर एक के वाद दूसरे, गुलावी और हरे रग के होते है। सच तो यह है इन्हे गलत नाम दिया गया है क्योकि यद्यपि इनका प्रकाश मन्द होता है फिर भी ये इन्द्रधनुष के ही भाग है जिस तरह उसकी 'सामान्य' रगो की पट्टियाँ उसके भाग है। ये अतिरिक्त धनुष अक्सर अपनी चमक तथा चौडाई के लिहाज से शीघ्रता के साथ वदल जाते है जो इस वात का सूचक है कि पानी की बूँदो के आकार मे तब्दीली हुई है (§१२३)।

गौण इन्द्रधनुष मे रगो का क्रम प्रमुख इन्द्रधनुप के रगक्रम का उलटा होता है, अत एक धनुष की लाल पट्टी दूसरे की लाल पट्टी के सामने पडती है। गौण इन्द्रधनुष वहुत कम ही इतना चमकीला होता है कि इसके 'अतिरिक्त धनुष' दृष्टिगोचर हो सके, ये बैगनी पट्टी के आगे पडते है अत गौण इन्द्रधनुष के वाहरी हाशिये से परे ये स्थित होते है।[1]

१२१. आँख के निकट का इन्द्रधनुष

जव हम फौआरे या झरने के ऊपर उतराती हुए पानी की बारीक फुआर पर सूर्य की किरणो को पडते हुए देखते है तो हमे स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि पानी की बूँदो के समूह से किस प्रकार इन्द्रधनुप का निर्माण होता है। स्टीमर के पार्श्व के सहारे जहाँ लहरे स्टीमर के अग्रभाग से टकराकर फेन के रूप मे ऊपर उठती है, कभी-कभी इन्द्रधनुष दिखाई देते है जो काफी देर तक स्टीमर के साथ ही लगे रहते है, नन्ही बूँदो के बादल के घने पडने पर कभी ये इन्द्रधनुप चटकीले दीखते है तो कभी इनके विरल होने पर इन्द्रधनुष का प्रकाश मन्द हो जाता है। इस घटना को देख सकने का उत्तम अवसर आपको विशेषतया उस समय प्राप्त हो सकता है जब स्टीमर की पथ-दिशा सूर्य की ओर जा रही हो।

ये कुछ सरल रीतियाँ है जिनकी मदद से बगीचे के अन्दर हम वर्षा की बौछार पैदा कर सकते है जो इन्द्रधनुष का निर्माण कर सकती है—(क) पानी फेकने की किर्मिच

1. Observed by Brewster in 1828

की नली, (ख) टिन्डल का उपकरण[1] जिसमे दाव से उत्पन्न की गयी पानी की धार धातु की एक गोल प्लेट पर टकराकर नन्ही बूँदो के रूप मे बिखर जाती है, या (ग) अन्तोलिक का फुआर उत्पादक[2], इसमे फुआर उत्पन्न करने के लिए केवल a पर मुँह लगाकर जोर से फूँक मारनी होती है (चित्र १०८)। अन्तोलिक के फुआर-उत्पादक मे छोटी नली bcd को चौडी नली ef के अन्दर दो-चार मिलीमीटर ऊपर-नीचे खिसकाकर बूँदो के आकार पर नियत्रण रखा जा सकता है, ऐसा करने के लिए कार्क की छिद्रमय चकरी को थोडा ऊपर-नीचे खिसकाना होगा। सिरे u के सूराख का आकार भी इस प्रयोग मे महत्त्व रखता है। उपकरण को खोले बिना ही चौडे मुह की नली a द्वारा भीतर पानी डाला जा सकता है। इस छोटे उपकरण द्वारा किये गये मेरे निज के प्रयोग अत्यन्त सन्तोषजनक रहे हैं।
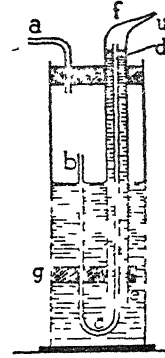
चित्र १०८—**प्रयोगशाला में इन्द्रधनुष का निर्माण करने के लिए फुहार-उत्पादक।**

कॉच के घेरे के अन्दर उगनेवाले पौदो पर पानी छिडकने के लिए प्रयुक्त होनेवाले फुआर-उत्पादक से निकलनेवाली नन्ही बूँदे आकार मे इतनी बारीक होती है कि उनमे यथार्थ इन्द्रधनुष तो देखा नही जा सकता, केवल सफेद रग का, धुन्ध का धनुष मिलता है जिसके हाशिये नीले और पीले रग के होते हैं (देखिए § १२८)। केवल यत्र-तत्र आकस्मिक तौर पर बडे आकार की बूँदो के एकाध समूह मिल जाते है तो एक क्षण के लिए सामान्य किस्म का इन्द्रधनुष दृष्टिगोचर हो जाता है।

इन्द्रधनुष के अवलोकन के लिए सदैव ही प्रति-सूर्य-विन्दु की दिशा से ४२° के कोण पर देखिए और बेहतर होगा कि सामने की पृष्ठभूमि गहरे मटमैले रग की हो।

प्रेक्षण के लिए इस किस्म के प्रयोग उत्तम सामग्री का काम देते हैं। हमारी क्षितिज-रेखा के नीचे भी जब पानी की बूँदो की पर्य्याप्त सख्या मौजूद होती है तो इन्द्रधनुष प्राय पूर्णवृत्त के रूप मे देखे जा सकते हैं। यदि हम चले तो इन्द्रधनुष भी हमारे साथ-साथ चलता है, यह कोई यथार्थ चीज़ नही है जो किसी निश्चित स्थान पर दिखाई

1. Phil Mag 17, 61, 1883 2 Antolic's vaporiser

देती हो, वल्कि यह एक निश्चित दिशा मे दृष्टिगोचर होता है, हम कह सकते है कि इसका आचरण इस तरह का है मानो यह अनन्त दूरी पर स्थित हो अत यह हमारे साथ-साथ उसी भाँति चलता है जिस भाँति चन्द्रमा। यदि बूँदो के बादल के अत्यन्त निकट खडे हो जैसे, उदाहरण के लिए, जब नली को पकडकर उसमे से पानी की फुआर निकालते है, तो दो इन्द्रधनुष देखे जा सकते है जो एक-दूसरे को काटते है। ऐसा कैसे होता है ? अपनी आँखे बारी-बारी से बन्द करिए, तो ऐसा प्रतीत होगा मानो प्रत्येक आँख अलग-से अपना निज का इन्द्रधनुप देखती है (यही निष्कर्ष इस बात से भी प्राप्त होता है कि इन्द्रधनुप हमारे साथ-साथ चलता है।) गौण इन्द्रधनुष तथा अतिरिक्त धनुष अक्सर शानदार रूप मे देखे जा सकते है। पानी की धार की दिशा यदि बदल दे, या फुआर के अन्य स्थलो मे इन्द्रधनुप का अवलोकन करे तो इन्द्रधनुष के रगो के आपेक्षिक चटकीलेपन मे अन्तर आ जाता है, इसका कारण यह है कि बूँदो का औसत आकार अब भिन्न हो गया है।

१२२ डेकार्ट का इन्द्रधनुष-सिद्धान्त[1]

पानी की बूँद के अन्दर प्रकाशपथ की जाँच करने के लिए हम एक फ्लास्क को पानी से भर कर धूप मे रखते है (चित्र १०९, a)। अब पर्दे पर जिसमे एक गोल सूराख (फ्लास्क से तनिक बडा) कटा है, एक हलकी रोशनी का इन्द्रधनुष R प्रगट होगा। यह पूर्णवृत्त की शक्ल का होता है, इसकी कोणीय दूरी ४२° होती है तथा यथार्थ इन्द्रधनुष की भाँति ही इसका लाल रग बाहरी हाशिये की ओर होता है।

काँच के गिलास की सहायता से भी यह प्रयोग इतनी ही सफलतापूर्वक किया जा सकता है, अवश्य गिलास की शक्ल बहुत कुछ बेलनाकार होनी चाहिए। समय सुबह या शाम का होना चाहिए जबकि आकाश मे सूर्य नीचे ही रहता है। पर्दे पर प्राप्त प्रतिबिम्ब वृत्ताकार नही होगा, बल्कि इसमे समानान्तर घाटियाँ दिखाई देगी।

फ्लास्क के सामने, धागे मे लटकता हुआ एक नन्हाँ-सा पर्दा S पर रखिए, तो इन्द्रधनुष के निचले भाग मे आप एक छाया देखेगे (चित्र १०९,b)। यदि फ्लास्क पर v के आसपास अपनी गीली उँगली का धब्बा लगा दे तो इन्द्रधनुष के निचले भाग मे तत्सम्बन्धी स्थल पर आपको मटमैले रग का धब्बा मिलेगा। अत स्पष्ट है कि इन्द्रधनुप का निर्माण उस वक्त होता है जब केन्द्रीय रेखा से SC की दूरी पर किरणे

1. Descartes Theory of the Rainbow

पानी की बूँद पर आपतित होकर उसकी पिछली सतह के बिन्दु v से परावर्त्तित होती है। यदि एक छल्ला ले जिसकी मोटाई कुछेक मिलीमीटर हो तथा उसका व्यास फ्लास्क के व्यास का ० ८६ हो और इसे आपतित किरणो के पथ मे इस तरह रखे कि आपतित किरण पुज की केन्द्रीय रेखा छल्ले के केन्द्र से गुजरे तो इस दशा मे इन्द्रधनुष पूर्णतया विलुप्त हो जाता है (चित्र १०९, c)।
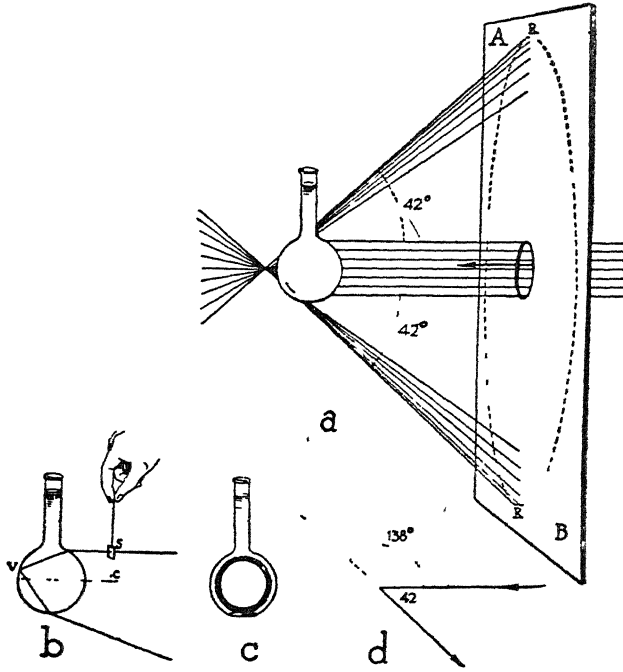
चित्र १०९—**पानी से भरे फ्लास्क द्वारा इन्द्रधनुष का निर्माण करना।**

चित्र ११० मे परावर्त्तन[1] तथा वर्त्तन[2] के सामान्य नियमो के आधार पर प्राप्त किया गया किरणो का सही मार्ग दिखलाया गया है। इससे यह देखा जा सकता है कि पानी की बूँद पर आपतित होनेवाली किरणे किस प्रकार अपने आपतन बिन्दु की स्थिति के अनुसार विभिन्न दिशाओ मे बूँद से बाहर निकलती है। उनमे से एक किरण अन्य

1 Reflection 2 Refraction

किरणो की अपेक्षा सबसे कम विचलित होती है, अर्थात् इसका विचलन कोण १३८° है—अत अक्षरेखा के साथ यह १८०°−१३८°=४२° का कोण बनाती है। बाहर निकलने वाली किरणे विभिन्न दिशाओ मे वितरित होती है—इनमे से केवल अल्पतम विचलन प्राप्त करनेवाली किरणे ही परस्पर समानान्तर दिशा मे निकलती है, अत आँखो मे ये ही किरणे अधिकतम 'घनत्व' के साथ प्रवेश करती है।
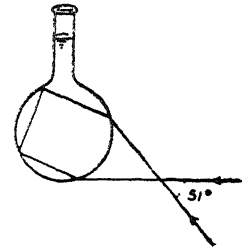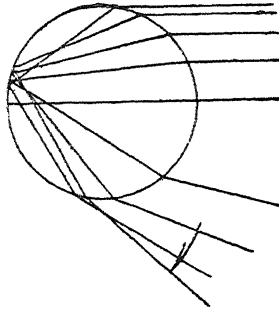
चित्र ११०—**पानी की बूंद के भीतर प्रकाश किरण का मार्ग, जिससे इन्द्रधनुष बनता है मोटी रेखा तरगाग्र इगित करती है।**

चित्र १११—**गौण इन्द्रधनुष की उत्पत्ति।**

पूर्णतया अँधेरे कमरे मे पर्दे पर अक्षरेखा के साथ ५१° के कोण बनानेवाली दिशा में गौण इन्द्रधनुप भी देखा जा सकता है या जब किरण अपनी आपतन दिशा से १८०°+५१°=२३१° के कोण पर विचलित होती है (चित्र १११)। प्रमुख इन्द्रधनुष के लिए किये गये प्रयोगो की भाँति ही प्रयोग करके यह सिद्ध कर सकते है कि गौण इन्द्रधनुष दो बार परावर्त्तित होनेवाली किरणो द्वारा बनते है। इनके रगो का क्रम प्रमुख इन्द्र-धनुष के रगो के क्रम का उलटा होता है, ठीक जैसा कि यथार्थ मे इन्द्रधनुषो में पाया जाता है।

अब कल्पना कीजिए कि बादल की बूँदो मे से प्रत्येक ऊपर बतायी गयी विधि के अनुसार ४२° के शकु मे प्रकाश की प्रचुर मात्रा परावर्त्तित करती है तथा उससे कुछ कम ही प्रकाश वह ५१° के शकु मे परावर्त्तित करती है। वे सभी बूँदे जो सूर्य से आने वाली आपतित किरणो की दिशा से ४२° की कोणीय दूरी पर है ऐसी स्थिति मे होती है कि वे अपने प्रमुख इन्द्रधनुप का प्रकाश हमारी आँख मे भेज सके, जबकि आपाती सूर्य-

किरण के साथ ५१° के कोण बनानेवाली बूँदो से दो बार परावर्त्तित होनेवाली किरणे हम तक पहुँचती है। अस्तु, इस प्रकार प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषो का निर्माण होता है (चित्र ११२)।
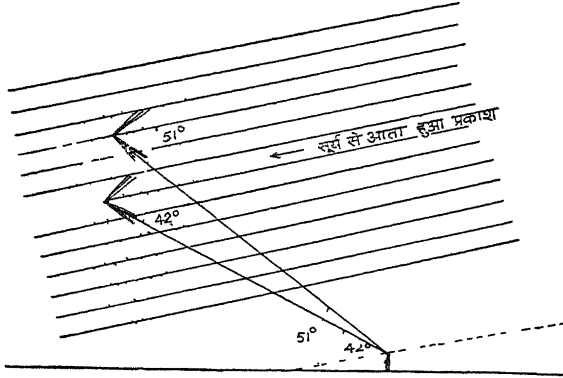
चित्र ११२—**वर्षा की बूँदो के बादल पर गिरने वाली सूर्य किरणें प्रमुख तथा गौण इन्द्रधनुषो का निर्माण करती है।**

१२३ इन्द्रधनुष का विवर्त्तन सिद्धान्त

डेकार्ट के सिद्धान्त मे केवल उन्ही किरणो का विचार किया गया था, जो अल्पतम विचलन प्राप्त करती है——मानो अकेली ये ही किरणे मौजूद हो। किन्तु वास्तविकता यह है कि इससे अधिक विचलनवाली अनेक किरणे भी मौजूद होती है जो एक **रश्मि-स्पर्शी** वक्र द्वारा पूर्णतया अन्वालोपित[1] होती है। और ठीक ये ही वे शर्त्ते है जिनके अनुसार **व्यतिकरण** उत्पन्न होता है जैसा कि चश्मे के लेन्स पर पडी पानी की बूँद के निकट स्थित **रश्मि-स्पर्शी** वक्र के लिए दिखाया जा चुका है (§११८)।

और विशेषतया नन्ही बूँदो का जब विचार करते है तो **प्रकाश-किरणों** की व्याख्या पूरी नही पडती, बल्कि इस तरह के किरणस्पर्शी वक्र के निकट जहाँ **निशिताग्र**[2] प्रगट होता वहाँ **तरगाग्र** की व्याख्या करनी चाहिए (चित्र ११०)।

हाइजिन्स के सिद्धान्त के अनुमार तरगाग्र के बिन्दु विकिरण के स्रोतबिन्दु माने जाते है, अत अब समस्या यह है कि इसकी जाँच करे कि तरगाग्र के प्रत्येक बिन्दु से आँख

1. Enveloped 2. Cusp

तक आने वाले कम्पन परस्पर एक-दूसरे के साथ व्यतिकरण किस प्रकार करते है। इस समस्या का अध्ययन एयरी ने किया और इसे स्टोक्स, मोबियस तथा पेर्नतेर ने पूरा करके अनुप्रयुक्त किया—इस अध्ययन से सुविख्यात इन्द्रधनुष-अनुकल[1] प्राप्त होता है—

$$A=c\int_{0}^{\infty} \cos \frac{\pi}{2} (u^3-zu)\, du$$

इसमे A उस प्रकाश-कम्पन का आयाम[2] है जो हमारी आँख मे प्रवेश करता है, तथा यह अल्पतम विचलनवाली किरण की दिशा के साथ बननेवाले कोण Z का फलन[3] है। इस अनुकल का मान प्राप्त करने के लिए इसे श्रेणी के रूप मे विकसित करना होता है तब Z की दिशा मे दीखनेवाले प्रकाश की तीव्रता का मान A^2 के बराबर मिलता है।
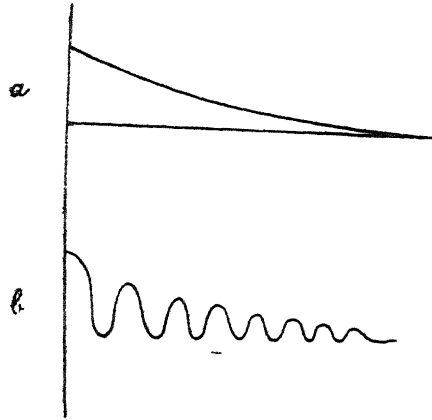
चित्र ११३—**पानी की बूंद म से होकर आनेवाली किरण शलाका में प्रकाश दीप्ति का वितरण। (a) डी कार्टी के सरल सिद्धान्त के अनुसार। (b) विवर्तन सिद्धान्त के अनुसार।**

चित्र ११३ मे दिखाया गया है कि किसी एक रग के लिए बडे आकार की बूंदो के लिए प्राप्त प्रकाश-वितरण (a), बूंद के छोटे होने की दशा मे विवर्त्तन द्वारा किस प्रकार बदल जाता है (b)। यह घटना प्रधानत. अल्पतम विचलन (Z=०) वाली किरणो द्वारा अभी भी निर्धारित होती है, किन्तु इसके अतिरिक्त अनेक लघु शीर्ष भी इसमे मौजूद होते हैं। अब विभिन्न रगो के प्रकाश के लिए इस तरह की वक्ररेखाएँ उनके तरग-दैर्घ्य के हिसाब से अलग-अलग स्थितियो पर खीचिए। विचलन कोण के किसी दिये हुए मान Z के

1 Rainbow-integral 2. Amplitude 3. Function

लिए इस प्रकार हमे विभिन्न रगो के मिश्रण का प्रकाश मिलता है, अत इन्द्रधनुप के रग कभी भी यथार्थरूप से सपृक्त वर्ण के नही हो सकते। चूँकि प्रत्येक रग का प्रथम तथा उच्चतम शीर्ष ही इस घटना मे महत्त्वपूर्ण योग देता है ओर तरग-दैर्घ्य के बढने के साथ ये शीर्ष भी खिसकते जाते है, अत इन्द्रधनुप मे रगो का क्रम मोटे तौर पर हम उसी प्रकार का पाते है जैसा कि प्रारम्भिक-सिद्धान्त से हमे प्राप्त होना है। विवर्त्तन के कारण रूपान्तर यह होता है कि बूँदो के आकार के अनुसार रगो मे थोडा अन्तर आ जाता है और इन्द्रधनुष के अन्दर की ओर अतिरिक्त धनुप प्रगट हो जाते है। अन्तत यह ध्यान मे रखना चाहिए कि सूर्य केवल एक बिन्दु नही है, अत सूर्य की किरणे एक-दूसरे के बिल्कुल ठीक समानान्तर नही होती (§१)। इस कारण पूरे आधे डिग्री के कोण का फैलाव ये प्राप्त करती है, फलस्वरूप इन्द्रधनुष के विभिन्न रगो की सीमाएँ एक-दूसरे मे थोडी बहुत अभिलोपित हो जाती है। इन्द्रधनुष को देखकर विवर्त्तन के सिद्धान्त की मदद से हम तुरन्त ही उन बूँदो के आकार का पता लगा सकते है जिनके कारण वह इन्द्रधनुष बनता है।

मुख्य लक्षण निम्नलिखित है—

व्यास	
१—२ मिलीमीटर	अत्यन्त चमकीला बैंगनी रग तथा चटकीला हरा रग, इन्द्रधनुष का लाल रग शुद्ध होता है किन्तु नीला रग नगण्य मात्रा मे ही पाया जाता है। अतिरिक्त धनुष कई होते है (मिसाल के तौरपर ५), इनका रग एक के बाद दूसरा गुलाबी-बैगनी तथा हरा होता है जो अविरत-रूप से प्रमुख-इन्द्रधनुष मे समाते हुए जान पडते है।
० ५० मिलीमीटर	इस दशा मे लाल रग अत्यन्त फीका रहता है। अतिरिक्त धनुषो की सख्या कम होती है, इस बार भी बैंगनी-गुलाबी तथा हरे रग एक के बाद दूसरे आते है।
० २०—० ३० मिलीमीटर	अब लाल रग तो नही दीखता, किन्तु शेष भाग मे धनुप चौडा और सुस्पष्ट रहता है। अतिरिक्त धनुष क्रमश अधिक पीले होते जाते है। यदि अतिरिक्त धनुषो के दर्मियान खाली जगह पड जाय तो इसका अर्थ है कि बूँदो का व्यास ० २० मिलीमीटर होगा। यदि प्रमुख इन्द्रधनुप तथा प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच

	जगह खाली पडती है तो बूँदो का व्यास ० २० मि० मी० से कम होगा।
० ०८—० १० मिलीमीटर	इन्द्रधनुप अधिक चौडा तथा अधिक पीला होता है, केवल बैंगनी रग चटकीला होता है। प्रथम अतिरिक्त धनुप तथा प्रमुख इन्द्रधनुप के बीच की खाली जगह विशेष चौडी होती है, तथा इस अतिरिक्त धनुप मे धवल रग की आभा स्पष्ट दिखाई पडती है।
.०६ मिलीमीटर	प्रमुख इन्द्रधनुप मे एक सुस्पष्ट सफेद पट्टी मौजूद रहती है।
० ०५ मिलीमीटर से कम	धुन्ध–धनुप (देखिए § १२८)।

१२४ इन्द्रधनुप के इर्द-गिर्द का आकाश[1]

एक सतर्क प्रेक्षक देख सकता है कि प्रमुख और गौण इन्द्रधनुषो के बीच का आकाश बाहर के आकाश के मुकाबले मे मद प्रकाश का दीखता है। अवश्य यह सही है कि पृष्ठभूमि मे विभिन्न चमकीलेपन के बादल मौजूद होते हैं, फिर भी यह प्रभाव साधारणतया स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। (प्लेट IX a)।

व्याख्या इस प्रकार है कि अल्पतम विचलन की किरणो के भेजने के अतिरिक्त प्रत्येक बूँद अन्य दिशाओ मे भी किरणो को परावर्त्तित करती है जो आपाती दिशा से अधिक मात्रा मे विचलित होती हैं। चित्र ११४ मे ये बिन्दु रेखाओ द्वारा प्रदर्शित की गयी हैं। ध्यान दीजिए कि गौण इन्द्रधनुप मे इन किरणो का विचलन प्रमुख इन्द्रधनुष की किरणो के विचलन की दिशा की उल्टी ओर होता है। अत प्रेक्षक को प्रमुख इन्द्रधनुप के भीतर के आकाश के इस भाग से सूर्य से हलका प्रकाश आता हुआ दिखाई देगा जो एक बार का परावर्त्तन प्राप्त करनेवाली उन किरणो से उत्पन्न होता है जिनका विचलन १३८° से अधिक होता है और इस कारण वे अक्ष के साथ ४२° से कम का कोण बनाती हैं, और तब गौण इन्द्रधनुप के बाहर वाले आकाश के भाग से भी हलका सूर्य-प्रकाश मिलता है जो दो बार परावर्त्तित हुई उन किरणो से उत्पन्न होता है जिनका विचलन २३१° से अधिक होता है, अत ये अक्षरेखा के साथ ५१° से बडा कोण बनाती है। कभी-कभी प्रमुख और गौण इन्द्रधनुषो के दर्मियान के धुँधली रोशनी वाले भाग मे प्रकाश की त्रिज्यीय लकीरे दिखलाई पडती है जिनमे किसी प्रकार का रग नही होता।[2] ये उषा-

1 Nat **109**, 309, 1922   2 S Thompsn Nat, **18**, 441, 1878

गोधूलि किरणों (§१९१) तथा गतिशील पानी पर की किरणों (§२१७) के सदृश ही होती है। इस घटना का समाधान आसानी के साथ किया जा सकता है, यदि हम कल्पना करे कि सूर्य और वर्षा की बूँदो के दर्मियान कही पर एक छोटा बादल उतरा रहा है (चित्र ११४)। इस दशा मे बादल की छाया मे पडने वाली बूँदे प्रेक्षक की ओर कुछ भी
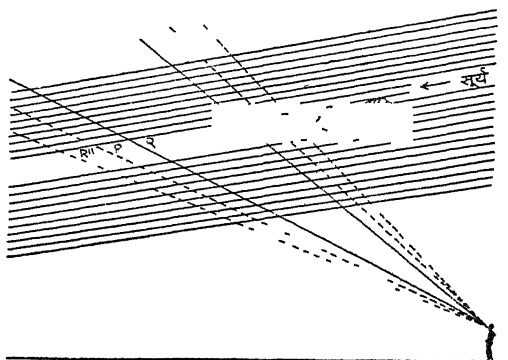
चित्र ११४—**सूर्य और वर्षा की बौछार के दर्मियान के बादल के टुकडे आकाश में त्रिज्यीय धारियो का निर्माण करते है।**

प्रकाश नही भेज पाती। प्रेक्षक को दिखाई देने वाले इन्द्रधनुष का निर्माण उसकी दृष्टि-रेखा मे पडने वाली तमाम बूँदो से आये हुए प्रकाश से होता है अत इस दशा मे इन्द्र-धनुष R बूँदो के प्रकाश से वञ्चित रह जाता है, इसी प्रकार गौण इन्द्रधनुष N बूँदो के प्रकाश से वञ्चित रहता है जबकि विस्तृत प्रकाश वाले भाग मे R', R'', तथा N', N'' सरीखी बूँदो से आने वाला प्रकाश अनुपस्थित रहता है। अत इस कारण उसकी आँख, सूर्य तथा उस बादल से गुजरने वाले धरातल मे घटना की सभी बाते हलकी पड जाती है, किरणपथ सरीखी छाया बनती है जो आगे बढाने पर ठीक सूर्य के सामने वाले बिन्दु अर्थात् इन्द्रधनुष के केन्द्र से गुजरती है।

१२५. इन्द्रधनुष मे प्रकाश का ध्रुवण[1]

काँच के एक टुकडे से प्रतिबिम्बित होने वाले इन्द्रधनुष को देखने का प्रयास अत्यन्त मनोरजक होता है—इसके लिए पारे की कलई वाला दर्पण नही लेना चाहिए जो इस

1. F Rinne Naturwiss, **14**, *1283*, *1936*

उद्देश्य के लिए अनुपयुक्त होगा, बल्कि साधारण काँच का टुकडा लेना चाहिए जिसकी पीठ पर कालिख लगी हो या उसके साथ काले रग का कागज लगा हो। इसे आँख के निकट इस तरह रखना चाहिए ताकि इसमें तिरछी दिशा से देख सके, अभिलम्ब से करीब ६०° के कोण पर। काँच को या तो क्षैतिज तल मे रख सकते है या ऊर्ध्व तल मे, जैसा चित्र ११५ मे दिखाया गया है। इन्द्रधनुष के ऊपरी सिरे का अवलोकन करे, तो
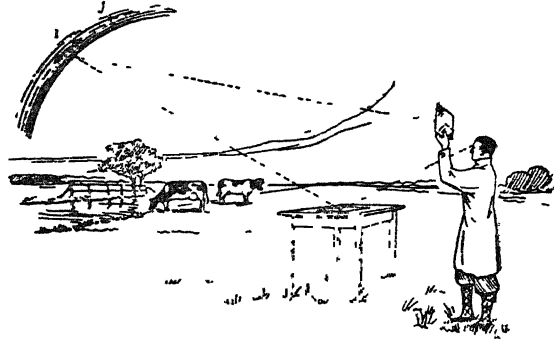
चित्र ११५—**इन्द्रधनुष में प्रकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण किस तरह करना चाहिए।**

हम देखेंगे कि काँच को क्षैतिज स्थिति मे रखने पर धनुष का प्रतिबिम्ब अत्यन्त स्पष्ट और चमकीला बनता है जबकि काँच को ऊर्ध्व तल मे खडा करने पर प्रतिबिम्ब इतना हलका बनता है कि वह करीब-करीब अदृष्टिगोचर ही रहता है। इससे पता चलता है कि इन्द्रधनुष के प्रकाश के गुण गमन दिशा के समकोण की विभिन्न दिशाओ मे विभिन्न होते है, अर्थात् यह ध्रुवित[1] प्रकाश होता है।

इस प्रेक्षण के लिए एक इससे भी सरल तरीका लभ्य है, इस तरीके मे एक 'निकल'[2] प्रिज्म मे से इन्द्रधनुष का प्रेक्षण करते है—यह प्रिज्म एक छोटा-सा उपकरण होता है जिसकी सहायता से हम तुरन्त मालूम कर सकते है कि अमुक प्रकाश ध्रुवित है अथवा अध्रुवित। 'निकल' प्रिज्म को उसके अक्ष के गिर्द घुमाते है तो उसकी एक स्थिति मे इन्द्रधनुष अत्यन्त चमकीला दीखता है और एक अन्य स्थिति मे अत्यन्त मन्द प्रकाश का। हम कल्पना कर सकते है कि सम्मिश्र प्रकाश, दो प्रकाश-कम्पनो से मिलकर बना है;

1. Polarised 2 Nicol

इनमे से एक का कम्पन किसी निश्चित दिशा 1 मे होता है तो दूसरे का दिशा J मे कम्पन होता है जो दिशा 1 के समकोण पडती है। हमे 1 तथा J दिशाओ की प्रकाश तीव्रताओ के अनुपात का मान २१ १ मिलता है, अर्थात् ध्रुवण की मात्रा बहुत हद तक पूर्ण है। गौण इन्द्रधनुष मे ध्रुवण इतना अधिक प्रबल नही होता यद्यपि इस दशा मे भी ध्रुवण सुस्पष्ट रहता है, अनुपात ८ १ मिलती है। ये दोनो ही निष्कर्ष सैद्धान्तिक विवेचन के अनुरूप है।

१२६ इन्द्रधनुष पर तडित्[1] का प्रभाव

जे० डब्ल्यू० लेन ने एक चित्ताकर्षक प्रेक्षण प्राप्त किया था। वादल के गरजने पर हर बार उसने देखा कि इन्द्रधनुष मे रगो की सीमाएँ अभिलोपित हो जाती थी। यह परिवर्त्तन अतिरिक्त धनुषो मे विशेष रूप से स्पष्ट था—बैगनी हाशिये और प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच का फासला पूर्णतया विलुप्त हो गया और पीले प्रकाश की दीप्ति बढ गयी। ऐसा प्रतीत होता था मानो समूचा इन्द्रधनुप स्पन्दन कर रहा हो। §१२३ मे दी गयी सारणी के अनुसार ये परिवर्त्तन इस बात का सकेत देते है कि बूँदो के आकार मे वृद्धि हुई होगी।

यह प्रकाशीय प्रभाव ठीक तडित् कौंध के क्षण नही उत्पन्न हुआ, वल्कि कई सेकण्ड उपरान्त, गरज की आवाज़ के साथ उत्पन्न हुआ। हम कल्पना कर सकते है कि वायु के कम्पन के कारण बूँदे एक दूसरे मे मिल जाना चाहती है, किन्तु यह प्रवृत्ति इतनी नगण्य-सी होती है कि इस कारण उत्पन्न होनेवाले प्रभाव का दरअसल वोधगम्य हो सकना असम्भाव्य प्रतीत होता है। यह भी सम्भव है कि विद्युत् विसर्जन बूंदो के तलीय खिंचाव मे ऐसी तब्दीली पैदा कर देता है कि वे एक दूसरे के साथ आसानी मे मिल जाते है, किन्तु उस दशा मे यह एक सयोग मात्र होगा कि इस तब्दीली मे जितना समय लगता है वह तडित् कौध और गर्जन की ध्वनि के बीच के समय अन्तर के ही बराबर हो जाय।

१२७ लाल इन्द्रधनुष

सूर्यास्त के ठीक पहले के पाँच या दस मिनट के दौरान मे लाल के अतिरिक्त इन्द्र-धनुष के अन्य सभी रग हलके पड जाते है और अन्त मे बस सम्पूर्ण लाल रग का धनुप रह जाता है। कभी-कभी तो यह आश्चर्यजनक रूप से चमकीला होता है और सूर्यास्त के बाद भी लगभग १० मिनटतक दिखाई देता रहता है, उस वक्त तक स्वभावत-

1 Lightning

इसका निचला भाग छिप जाता है, अत ऐसा प्रतीत होता है कि क्षितिज से कुछ ऊँचाई पर इस इन्द्रधनुष का प्रारम्भ होता है। प्रकृति यहाँ हमे सूर्य के प्रकाश के स्पेक्ट्रम का दिग्दर्शन करा रही है और इस बात का प्रदर्शन कर रही है कि सूर्यास्त के दौरान इसकी सरचना मे किस प्रकार का परिवर्त्तन होता है। यह परिवर्त्तन लघु प्रकाश-तरगो के परिक्षेपण[1] के कारण उत्पन्न होता है (§१७१)।

१२८ कुहरा धनुष या श्वेत इन्द्रधनुष[2]

बूंदे जब अत्यन्त छोटी होती है तो इन्द्रधनुष का स्वरूप बिलकुल ही भिन्न होता है। इसका हम भलीभाँति अवलोकन कर सकते है यदि सूर्य की ओर पीठ करके हम पहाडी पर खडे हो जबकि सामने और हमारे नीचे कुहरा छाया हो। तब धनुष का स्वरूप एक सफेद पट्टी-जैसा होता है, इसकी चौडाई साधारण इन्द्रधनुष की चौडाई की दूनी होती है तथा इसके बाहरी हाशिये का रग नारङ्गी और भीतरी का आसमानी सरीखा होता है। भीतर की ओर एक या कभी दो भी अतिरिक्त धनुष देखे जा सकते है जिनके बीच कुछ जगह छूटी रहती है—अद्भुत बात यह है कि उनके अन्दर रगो का क्रम सामान्य प्रमुख इन्द्रधनुष के लिहाज से उलटा होता है (पहले हरा और तब लाल)।

ये विशिष्टताएँ आश्चर्यजनक रूप से ० ०२५ मिलीमीटर या उससे कम की त्रिज्या वाली बूँदो के लिए प्राप्त सैद्धान्तिक गणनाफलो के अनुरूप उतरती है (§ १२३)। अत्यन्त छोटे आकार की उन बूँदो के लिए अब इन्द्रधनुष की त्रिज्या ४२° नही रह पाती, बल्कि यह कम होने लगती है और चूँकि बूँद के आकार के छोटे होने का अभिप्राय यह है कि यह प्रकाश के तरग-दैर्ध्य के मान के सन्निकट पहुँचती है, अत यह प्रभाव नीली किरणो की अपेक्षा लाल किरणो के लिए अधिक सुस्पष्ट होता है। अत अतिरिक्त धनुष मे लाल रग के लिए व्यास नीले की अपेक्षा अधिक छोटा होगा, इसलिए यह भीतर की ओर स्थित होगा।

जो लोग इतने भाग्यशाली है कि इस सुन्दर घटना के अवलोकन का उन्हे अवसर मिल सकता है, उन्हे धनुष के व्यास २θ (कोणीय माप अशो मे) के मान प्राप्त करने के लिए कुछ मानक्रियाएँ करनी चाहिए (देखिए § २३५)। इनमे प्रमुख इन्द्र-धनुष तथा प्रथम अतिरिक्त धनुष के बीच के मन्द प्रकाश वाले छल्ले की नाप सर्वाधिक शुद्धता के साथ प्राप्त की जा सकती है, इस प्रकार से प्राप्त किये गये

1 Scattering 2 Phil Mag, **29**, 456, 1890

मान से बूँदो का व्यास (मिलीमीटरो मे) निम्नलिखित सूत्र

$$a = \frac{0\ 31}{(41^\circ 44' - \theta)^{\frac{3}{2}}}$$

की सहायता से प्राप्त किया जा सकता है—
(अथवा विकल्पत हम प्रमुख इन्द्रधनुप के नीचे और नारङ्गी रग के हाशिये के बीच का औसत मान ले सकते है, किन्तु तब उपर्युक्त सूत्र के अश के लिए 0 31 को बदलकर 0 18 लेना पडेगा।)

आश्चर्य्य की बात है कि कुहरा-धनुप ऐसे समय भी देखा गया है जब कि ताप बहुत ही कम था (0° फा०), जिससे सिद्ध होता है कि वायुमण्डल मे पानी की बूँद बहुत ही अधिक मात्रा मे अतिशीतलन प्राप्त कर सकती है।[1] कुहरा-धनुप ऐसे समय पर भी देखा जा सकता है जब कि कुहरा इतना हलका था कि धनुष देखने वाले प्रेक्षक ने यह बतलाया कि कुहरा था ही नही।

कुहरा-धनुष उस वक्त करीब-करीब सदैव ही प्रगट होता है जबकि हमारे पीछे से आने वाली सर्चलाइट का चकाचोंध उत्पन्न करने वाला प्रकाश-पुन्ज सामने के धुन्ध को भेदता है। सडक के साधारण लैम्प भी अक्सर इस धनुष का निर्माण करते है, अवश्य ये धनुष हलकी दीप्ति के होते है और केवल अन्धेरी पृष्ठभूमि पर ही देखे जा सकते हैं। एक बार टिन्डल ने प्रकाशस्रोत के लिए मोमबत्ती का उपयोग करके इस तरह के धनुष का अवलोकन किया था। यदि धुन्ध के पीछे अँधेरी भूमि हो तो कुछ अवसरो पर कुहरा-धनुष सम्पूर्ण वृत्त के रूप मे देखा जा सकता है—स्पष्ट है कि हमारी आँख और पैरो के निकट की भूमि के दर्मियान की दो-चार गजो की दूरी इस घटना को उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त होती है।[2] कुछ अत्यन्त दुर्लभ अवसरो पर दुहरे कुहरा-धनुष भी देखे गये है।[3] § १६५ तथा § १२१ की भी तुलना कीजिए।

१२९ ओस-धनुष या क्षैतिज इन्द्रधनुष

शरद काल की सुबह को, हीदर झाडी पर लगे लाखो जालो पर, जो अन्यथा दिखाई नही पडते, ओस की नन्ही-नन्ही बूंदे बिखर जाती है तो सूर्य्य की किरणो से वे प्रकाशित हो उठते है। प्रकाश की इस लुका-छिपी मे हम अपने सामने एक इन्द्र-

1. Ch F Brooks, M W R **53**, 49, 1925 G C Simpson (**38**, 291, 1912) mentions the appearance of a fog-bow at a temperature of —29°C 2. Phil Mag, **17**, 148, 1883 3. Onweders, etc **52**, 54, 1931

धनुप उभरा हुआ देख सकते है जो वृत्त की शक्ल का नही बल्कि एक खुले मुँह के अतिपरिवलय[1] की शक्ल का होता है (चित्र ११६)।
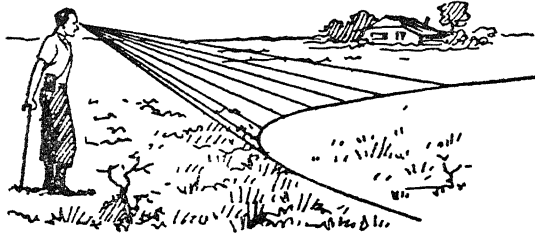
चित्र ११६—**ओस-धनुष।**

इसकी व्याख्या सरल ही है—सूर्य्य और आँख को मिलाने वाली अक्ष-रेखा के साथ ४२° का कोण बनाने वाली सभी दिशाओ से प्रकाश हमारी आँख मे पहुँचता है। सूर्य्य जब तक नीचे रहता है, तब तक इस तरह बनने वाला शकु भूमि की सतह को अतिपरिवलय के वक्र पर काटता है। दिन के चढने पर यह वक्र दीर्घवृत्त बन जाता है, यद्यपि इस शक्ल का धनुष दुर्लभ अवसरो पर ही देखा जा सका है। आप प्रयोग मे सहायता लेने के लिए किसी से कह सकते है कि वह वक्रमार्ग को भूमि पर चिह्नित करके उसकी माप करे, और तब सूर्य्य की ऊँचाई (प्रेक्षण के समय की मदद से मालूम करके) की सहायता से इस बात का सत्यापन कर ले कि यह वक्र वास्तव मे एक अतिपरिवलय है, जो ऐसे शकु से प्राप्त किया गया है जिसका शीर्षकोण ४२° है।[2] इस बात पर ध्यान दीजिए कि किस तरह आँख से दूरी बढने पर रगीन पट्टी की चौडाई बढती जाती है। केवल एक ही ऐसे दृप्टान्त का पता है जब कि ओस मे कुहरा-धनुष के साथ अतिरिक्त धनुष भी देखे गये थे।[3]

ओस-धनुष निम्नलिखित परिस्थितियो मे भी देखा गया है—(क) तालाब पर जो कारण्ड घास[4] से ढका हो, घास के लॉन पर, (ख) ऐसे तालाब पर जिसकी सतह पर चिकनाई फैली हो ताकि उस पर ओस की बूँदे नीचे के पानी से मिले बिना पडी रह सके, मिसाल के लिए फैक्टरी के कोयल्ले के जर्रो से भरे धुएँ के कारण सतह

1 Hyperbola 2 A E Heath, Nat 97, 6, 1916
3 W J Humphreys Journ Frankl. Inst, 20, 661, 1929
4 Duck-weed

इस प्रकार की बन सकती है। एक दशा मे बूँदो का आकार ० १ मिलीमीटर से लेकर ० ५ मिलीमीटर तक था और प्रति वर्ग सेण्टीमीटर २० बूँदे मौजूद थी जबकि एक सुस्पष्ट ओस धनुष देखा गया।[1] (ग) झील या समुद्र पर लडके सुबह के वक्त जब कि वायु तो ठण्डी हो चुकी होती है, किन्तु पानी अब भी गर्म बना रहता है, अत पानी की सतह के ऊपर हलका धुन्ध छाया रहता है। ऐसी दशा मे सम्पूर्ण धनुष सदैव ही दृष्टिगोचर नही होता, केवल इसके दोनो छोर दिखाई देते है। (घ) बर्फ जमी हुई सतह पर जो प्रकाश्यत ओस की उपयुक्त आकार की बूँदो द्वारा ढकी जा सकती है। ऐसा कैसे सम्भव होता है?[2]

इस प्रेक्षण का एक महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक पहलू भी है। इन्द्रधनुष हमे वृत्ताकार और ओस-धनुष अतिपरिवलयाकार क्यो दीखते है जब कि दोनो ही दशाओ मे प्रकाश किरणे एक ही दिशा से हमारी आँख मे पहुँचती है? यह एक प्रश्न है प्रेक्षण और आकाक्षा के सम्मिश्रण का। जब हम ओस-धनुष देखते है तो हम इस विचार से प्रभावित होते है कि यह प्रकाशीय घटना क्षैतिज तल मे फैली हुई है, और अनजाने ही हम अपने से पूछ बैठते है कि घास पर पडने वाले प्रकाश के वक्र की शक्ल क्या होनी चाहिए ताकि घटना हमे इसी स्वरूप मे दिखाई दे? अवश्य ही उत्तर होगा एक दीर्घ वृत्त या अतिपरिवलय। किन्तु इसके प्रतिकूल यदि हम पूछे 'ओस-धनुष हम क्योकर देख पाते है?' तब हमारा उत्तर प्रेक्षण और उसकी व्याख्या दोनो पर आश्रित होगा। यदि हम केवल इस प्रकाशीय घटना को ही देखते और इसकी उत्पत्ति के बारे मे हमे कुछ भी पता न होता तो हमे केवल एक वृत्ताकार शक्ल का ही भान होता' (स्टोक्स)। पिण्डदर्शन[3] के आधार पर पृथक् बूँदो तथा उनके समूह की दूरी का अनुमान लगाने से हमे निश्चय ही इस बात का पता लगाने मे सहायता मिलेगी कि ओस-धनुष क्षैतिज तल मे स्थित है (देखिए § १५२)।

प्रतिबिम्बित ओस धनुष के लिए देखिए § १३१।

१३०. प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष

यदि हमे एक इन्द्रधनुप बादल मे बिन्दु A की दिशा मे दिखाई दे रहा है, और तब हम शान्त, स्थिर पानी मे भू-दृश्य के प्रतिबिम्ब का अवलोकन करे तो हम इन्द्र-

1 Nat 43, 416, 1891 2 Clerk Maxwell, Papers II. 160

3 Stereoscopic vision

धनुष को बिन्दु B की दिशा मे देखेगे, अत प्रतिबिम्बित बादल पर, बनिस्बत उस दशा के जब कि बादल को हम सीधे ही देखते है, इन्द्रधनुप कुछ नीचे स्थित प्रतीत होता है (देखिए चित्र ११७)।
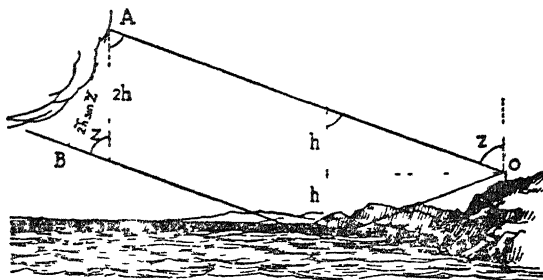
चित्र ११७ क—**प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष।**
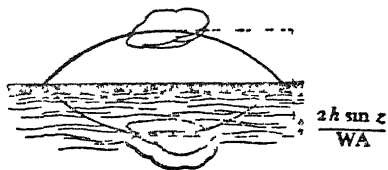
ख—

इसका कारण, जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, यह है कि इन्द्रधनुष का अस्तित्व बादल के धरातल मे किसी यथार्थ वस्तु की तरह नही है, बल्कि एक तरह से यह अनन्त दूरी पर स्थित है। अत सच पूछा जाय तो स्थानान्तर बादल का होना है, जबकि इन्द्रधनुप का प्रतिबिम्बन क्षितिज के लिहाज से पूर्णतया सममित[1] है। बादल के स्थानान्तर का हम अधिक आसानी से अवलोकन कर सकते है यदि हम पानी से कुछ ऊँचाई h पर मौजद हो। इस दशा मे तब हम उसके स्थानान्तर का कोणीय मान मालूम करके उसकी दूरी OA के मान की भी गणना कर सकते है, क्योकि—

$$\text{कोणीय स्थानान्तर} = \frac{2\ h \sin z}{OA}$$

फिर, एक नितान्त भिन्न प्रभाव उस वक्त उत्पन्न होता है जब सूर्य्य की किरणे इन्द्रधनुप का निर्माण करने के पहले ही परावर्त्तित हो लेती है। तब प्रति-सूर्य्य-बिन्दु

1 Symmetrical

T के प्रतिबिम्ब T′ केन्द्र के गिर्द स्थानान्तरित चाप WS प्रगट होगा (चित्र ११८)। यह चाप विस्तार में अर्द्ध वृत्त से अधिक होता है। दोनों चापों के सिरों के बीच की दूरी बिन्दु T और T′ के बीच की दूरी के बराबर होती है, अर्थात् क्षितिज के ऊपर सूर्य्य की कोणीय ऊँचाई α की दो गुनी। अनेक दशाओं में स्थानान्तरित चाप का एक भाग ही दृष्टिगोचर होता है—उदाहरण के लिए, केवल उसका सिरा, या केवल उसके दोनों छोर। अत जब आप कोई असाधारण इन्द्रधनुष देखें तो सबसे पहले आपको इस तरह के प्रतिबिम्बन की सम्भावना की बात सोचनी चाहिए। तदुपरान्त उन

चित्र ११८—R=**इन्द्रधनुष।** RR=**प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष।** WS=**सूर्य के प्रतिबिम्बन से बना हुआ इन्द्रधनुष।**

अवस्थाओं पर विचार कीजिए जब पास-पड़ोस में बड़े जलाशय मौजूद हों और तब चाप की अपूर्णता की व्याख्या इन जलाशयों की स्थिति के आधार पर कीजिए। प्रतिबिम्बन से उत्पन्न हुए दोनों धनुष एक दूसरे के पूरक होते हैं ताकि दोनों मिलकर सम्पूर्ण वृत्त बना सकें (चित्र ११८)।

१३१ प्रतिबिम्बित ओस-धनुष[1]

ओस-धनुष भी पानी में प्रतिबिम्बित हो सकते हैं और तब सतह पर तैरती हुई नन्ही बूँदों द्वारा निर्मित मनोहर रंगों का अतिपरिवलय दुहरे रूप में दिखाई पड़ता है। इन दोनों धनुषों में कम प्रकाश का धनुष प्रतिबिम्बन द्वारा बनता है, यह बात अत्यन्त स्पष्ट हो जाती है यदि हम ओसधनुष का अवलोकन बर्फ जमी हुई सतह पर करें, तब द्वितीय धनुष विलुप्त हो जाता है।

इस दशा में भी दोनों धनुषों के बीच की कोणीय दूरी सूर्य की कोणीय ऊँचाई की दो गुनी होती है। किन्तु चूँकि इस बार बूँदें स्वय पानी की सतह पर ही स्थित हैं, अत सीधे ही यह ज्ञात करना सम्भव नहीं हो पाता है कि किरणों का परावर्त्तन उनके बूँदों में से गुजरने के बाद हुआ है कि पहले। दोनों ही दशाओं में हमें अतिपरिवलय

1 W J Humphreys Journ Frankl Instit 207, 661, 1929

मिलेंगे (देखिए चित्र ११९, दोनों ही चित्रों में परावर्तित किरण कोण ४२°–० पर ऊपर की ओर उठती है)।
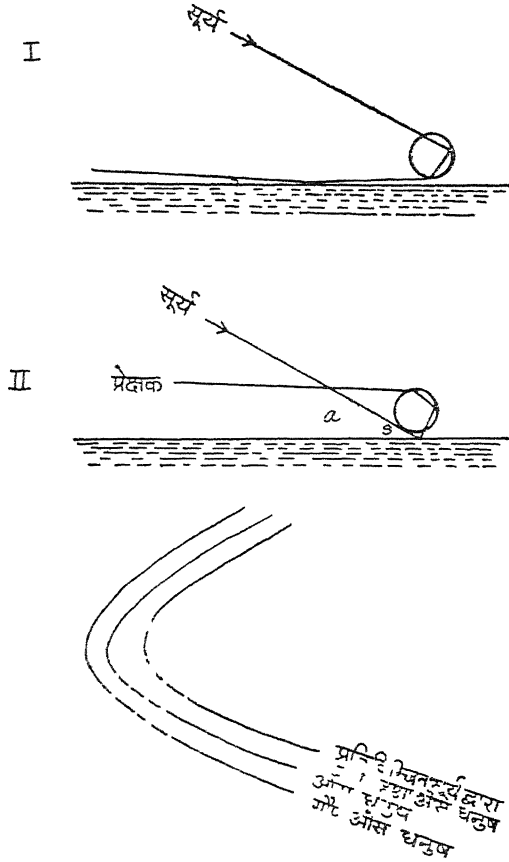
चित्र ११९—**प्रतिबिम्बित ओस-धनुषों का निर्माण।**

I **ओस धनुष प्रतिबिम्बित होता है।**

II **प्रतिबिम्बित सूर्य ओस-धनुष का निर्माण करता है।**

तथापि सूर्य्य जब पर्याप्त ऊँचाई पर स्थित होता है (२१° से ४२° तक) तब विवेचन के लिए दो तत्त्व प्राप्त होते हैं—

(क) प्रतिबिम्बित धनुष का सिरे के निकट का भाग अनुपस्थित रहता है। कारण यह है कि किरणें जब मार्ग II का अनुसरण करती है, तो आपाती किरण पुंज का कुछ भाग परावर्त्तित होने के पहले ही स्वयं बूंदों के कारण छिप जाता है, तब इसके बाद किरण बूंद में प्रवेश करती है। यदि किरणपथ I के अनुसार हो तब यह लाक्षणिक विशिष्टता नही उत्पन्न हो पाती।

(ख) यदि दोनो धनुषो के दो निकटवर्त्ती बिन्दुओं का 'निकल' प्रिज्म द्वारा अवलोकन किया जाय तो यह पाया जाता है कि दोनो के प्रकाशकम्पन की दिशाओं में बहुत अधिक अन्तर होता है और आम तौर पर वे क्षैतिज नही होते है। यह प्रदर्शित कर सकते है कि ऐसा केवल तभी हो सकता है जब वर्त्तन के पूर्व ही परावर्त्तन हो जाय।

अब यह प्रश्न शेष रहता है—किरणो के लिए सामान्यत पहले ही परावर्त्तित हो जाने की सम्भावना अधिक क्यो होती है ? उत्तर केवल यह है कि किरणपथ I की दशा मे बाहर निकलने वाली किरणे पानी की सतह पर अत्यन्त तिरछी दिशा मे गिरती है और इस कारण निकटवर्त्ती बूंदो की आड मे वे छिप जाती है।

आकाश मे सूर्य्य जब नीचे होता है, तब प्रकाश की किरणे पहले बूंद मे प्रवेश कर जाती है और तब वे परावर्त्तित होती है, इस बार भी धनुष का ऊपरी भाग छिप जाता है, किन्तु ध्रुवण की मात्रा भिन्न होती है। इस दशा का अभी तक सूक्ष्म अध्ययन नही किया गया है।

१३२ असामान्य इन्द्रधनुष की घटना[1]

यहां हम इन्द्रधनुष की विलक्षण शक्लो की कुछ आकृतिया दे रहे है जो अगर-पानी पर होने वाले परावर्त्तन के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु मेरे विचार मे तो इनकी
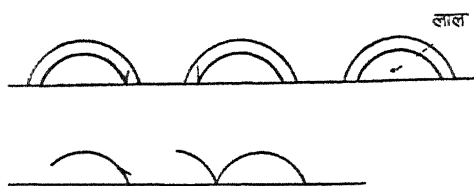
चित्र १२०—**असामान्य इन्द्र-धनुष की घटनाएँ**

1. Onweders, etc **21**, 54, 1900, **24**, 160, 1903, **29**, 110, 1908, Hemel en Dampkring **27**, 359, 1929

कोई मन्तोपजनक व्याख्या अभी तक नही मिल सकी है। इस तरह की घटनाओ के लिए अपनी आँखे खुली रखने के लिए यह एक और कारण है। असामान्य धनुषो के लिए लाल और बैंगनी हाशियो की पारस्परिक स्थितियो पर विशेष ध्यान दीजिए।

१३३ चन्द्र-इन्द्रधनुष

सूर्य्य की ही तरह चन्द्रमा द्वारा भी इन्द्रधनुष बनते है, यद्यपि जैसा कि स्वाभाविक है, चन्द्र-इन्द्रधनुष अत्यन्त क्षीण प्रकाश के होते है। यही कारण है कि वस्तुत ये केवल पूर्ण चन्द्र के समय देखे जा सकते है और इनमे विरले ही रगीन होते है—ठीक उमी प्रकार, जैसे क्षीण प्रकाश से आलोकित वस्तुएं रात को आम तौर पर रगहीन प्रतीत होती है (§ ७७)।

इस सम्बन्ध में प्रभामण्डल को देखकर भ्रम मे मत पड जाइए कि यही चन्द्र-धनुष है। इन्द्रधनुष तो चन्द्रमा के सामने के रुख, आकाश मे केवल दूसरी ओर दिखलाई देता है। यदि निकट ही कोई चमकीला तारा स्थित हो, तो चन्द्र-इन्द्रधनुष की त्रिज्या का मान अत्यन्त यथार्थता के साथ नापा जा सकता है।

प्रभामण्डल[1]

१३४ प्रभामण्डल की घटना का सामान्य वर्णन[2]

वसन्त ऋतु के सुहावने खुले मौसम के चन्द दिनो के बाद बैरोमीटर का दाब कम हो जाता है और दक्षिण की वायु बहना आरम्भ करती है। पश्चिम की ओर से ऊँचाई पर पख जैसे और मुलायम बादल प्रकट होते है, आकाश धीरे-धीरे दूधिया रग धारण कर लेता है जो अलका-स्तार[3] बादलो के झीने पर्दे के कारण पोलकी[4] रत्न की तरह चमकता है। सूरज, ऐसा प्रतीत होता है, मानो धुँधले काँच के पीछे से चमक रहा हो, इसकी सीमा-रेखाएँ स्पष्ट नजर नही आती, बल्कि अपने परिपार्श्व मे मिल-सी जाती है। कुछ अजीब-सी अनिश्चित रोशनी भू-दृश्य पर पडती है—और मै 'महसूस' करता हूँ कि अवश्य सूर्य्य के गिर्द कोई प्रभामण्डल मौजूद है।

और आम तौर पर मेरा यह ख्याल सही उतरता है।

सूर्य्य को चारो ओर से घेरे हुए एक चमकीला छल्ला देखा जा सकता है जिसकी त्रिज्या २२° से कुछ अधिक ही होती है, इसे देखने का सबसे बढिया तरीका है कि मकान

1 Haloes 2 Die Haloerscheinungen (Hamburg 1929)
3 Cirro-stratus 4 Opalescent

की छाया मे खडे हो जायँ, या धूप मे चकाचौंध मे बचने के लिए सूर्य्य को हाथ की ओट मे ले ले (§ १६०)। यह एक अनुपम दृश्य होता है! पहले-पहल देखने वाले को छल्ला बहुत ही बडा प्रतीत होता है—यद्यपि यह 'लघु प्रभामण्डल' है, प्रभामण्डल सम्बन्धी अन्य घटनाएँ तो और भी बडे पैमाने पर घटती है। अपनी भुजा को सूर्य्य की सीध मे तान कर हाथ की उँगलियो को एक दूसरे से अलग फैलाइए, आप देखेगे कि अँगूठे और कनिष्ठ उँगली के सिरो के बीच की दूरी सूर्य्य के गिर्द मौजूद प्रभामण्डल की त्रिज्या के लगभग बराबर है (देखिए § २३५)।

चन्द्रमा के गिर्द भी आप इसी तरह का छल्ला देख सकते है। मेरा तात्पर्य कोरोना से नही है जिसका व्यास दो-चार डिग्री ही होता है और जो भीतर की ओर लाल और बाहरी हाशिये पर नीले रग का होता है, बल्कि उसी प्रकार के बडे छल्ले से है जैसा कि सूर्य्य के प्रभामण्डल के लिए अभी बतलाया जा चुका है। केवल एक बार एक प्रेक्षक को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था कि डूबते हुए सूर्य्य के गिर्द एक छल्ला, और उगते हुए पूर्णचन्द्र के गिर्द भी एक छल्ला एक ही साथ वह देख सका था।

आम तौर पर जैसी उम्मीद की जाती है उसकी अपेक्षा कही अधिक बार ये छल्ले देखे जा सकते है। निश्चित तौर पर एक अभ्यस्त प्रेक्षक, यदि सारे दिन प्रेक्षण करता रहे तो दुनिया के इस भाग मे औसत रूप से हर चार दिन मे एक बार प्रभामण्डल देखने मे समर्थ होगा और अप्रैल तथा मई के महीने मे तो हर दो दिन मे वह इसे एक बार देख सकता है, सर्वाधिक सतर्क प्रेक्षक तो वर्ष भर मे २०० दिन प्रभामण्डल देख सकते है! अत क्या यह अविश्वसनीय नही जान पडता कि अब भी कितने लोग ऐसे मिलते है जिन्होने सूर्य्य के गिर्द प्रभामण्डल पर कभी गौर ही नही किया है?

लघु आकार के प्रभामण्डल के अतिरिक्त और दूसरे भी प्रकाश-धनुष तथा धब्बो के रूप मे केन्द्रित प्रकाश मिलते है जिनमे से प्रत्येक का अलग-अलग नाम दिये गये है—इन सबको मिलाकर 'प्रभामण्डल की घटना' के नाम से पुकारा जाता है। इनमे से जो सर्वाधिक प्रमुख है वे चित्र १२१ मे दिखलाये गये है, मानो ये एक काल्पनिक आकाशीय ग्लोब पर अकित किये गये हो। अब हम बारी बारी से इन पर विचार करेगे। किन्तु इस बात को ध्यान मे रखना होगा कि इनमे से केवल कुछ थोडे ही एक साथ देखे जा सकते है। इनमे अनेक जिनका प्रेक्षण किया गया है, सूर्य्य के कारण बने थे, चन्द्रमा से सम्बन्ध रखने वाले प्रभामण्डल क्षीण प्रकाश के होते है, और इनके रग तो एक तरह से अगोचर ही रहते है (देखिए §§ ७७, १३३)।

सामान्यत इनका निर्माण या अलका मेघ के झीने आवरण मे होता है और विरले ही दशाओ मे अलका-पुञ्ज या उच्च-पुञ्ज मेघ मे, ये तडित-अलका बादलो मे देखे जा सकते है किन्तु अधिक मौको पर नही। प्रभामण्डल उत्पन्न करने वाले सभी बादल बर्फ के नन्हे क्रिस्टलो से बने होते है और इन क्रिस्टलो के आकार की नियमितता ही इस प्रकाशीय घटना की सुन्दर सममिति के लिए उत्तरदायी है। बर्फ वाले अनेक और बहुत से बादलो मे प्रभामण्डल की घटना बिलकुल ही नही प्रदर्शित होती, इसका कारण यह है कि नन्हे तुषार कण, तथा बर्फ के क्रिस्टलो के गोलाकार समूह के आकार उस शक्ल से भिन्न होते है जो प्रिज्म की भाँति प्रकाश का वर्त्तन करने के लिए आवश्यक है, और फिर यह भी कि अत्यन्त छोटे आकार के क्रिस्टल की दशा मे विवर्तन के कारण आभा-मण्डल की घटना का अभिलोप हो जाता है।

चित्र १२१—**प्रभामण्डल की कतिपय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाओ का रेखाचित्र।**

प्रभामण्डल ही फोटोग्राफी वैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, कोणो की सूक्ष्म नाप के लिए तथा प्रकाशदीप्ति ज्ञात करने के लिए भी इसका उपयोग होता है। किन्तु इन कामो के लिए फोटोग्राफी की प्लेट को केमरे के अक्ष के समकोण रखना चाहिए तथा प्लेट और अभिदृश्य लेन्स के बीच की दूरी सही-सही मालूम रहनी चाहिए तथा चौडे मुह वाले अभिदृश्य लेन्स को काम मे लाना होगा,साथ मे नारङ्गी वर्ण का फिल्टर तथा पैन्क्रोमैटिक फिल्म का उपयोग करना होगा। सूर्य्य के लिए प्रकाशदर्शन का समय, १२ लेन्स के लिए, ०१ सेकण्ड होगा। चन्द्रमा के लिए ६ लेन्स को काम मे लाइए और प्रकाशदर्शन का समय १० सेकण्ड रखिए। क्षितिज के कुछ भाग को, या कम से कम किसी एक वृक्ष को अपने फोटो के अन्दर अवश्य सम्मिलित कीजिए।

१३५ २२° वाले प्रभामण्डल का लघु छल्ला

(चित्र १२१ a, प्लेट IX b)

प्रभामण्डल की समस्त घटनाओ मे इसी की बहुलता सबसे अधिक होती है, छल्ला, पूर्ण वृत्त की शक्ल का होता है केवल उस दशा को छोड कर, जबकि अलका-

स्तार मेघ आकाश में असमान रूप से बिखरे रहते हैं; सामान्यतः सबसे अधिक चमक इसके सिरे या पेंदे पर रहती है या दाहिनी या बायीं ओर; बीच के भागों की चमक अपेक्षाकृत कम ही होती है। भीतरी किनारा सुस्पष्ट होता है और लाल रंग का; फिर आता है पीला रंग, हरा और श्वेत जो नीले रंग पर समाप्त होता है। §२३५ में बतलायी गयी किसी एक विधि से लघु छल्ले की त्रिज्या नापी जा सकती है, (अधिक वाञ्छनीय होगा कि त्रिज्या की नाप, सूर्य से लेकर छल्ले के भीतरी, लाल रंग के, हाशिये तक की जाय)। श्रेष्ठतम नाप से त्रिज्या का मान २१° ५०' प्राप्त होता है।

कुछ रातों को चन्द्रमा के गिर्द के प्रभामण्डल की त्रिज्या की नाप अत्यन्त यथार्थता के साथ की जा सकती है बशर्ते प्रेक्षक किसी निश्चित तारे को ऐसी स्थिति में देख सके कि वह प्रभामण्डल के भीतरी हाशिये पर प्रभामण्डल के सबसे अधिक चमकीले स्थल पर पड़े। उस दशा में प्रेक्षक को उस तारे का नाम भर ज्ञात कर लेना होगा (आवश्यकता पड़ने पर नक्षत्र-मानचित्र की सहायता से इसे पहचाना जा सकता है;) और प्रेक्षण का समय अङ्कित कर लेना होगा। इसके उपरान्त कोई भी खगोलशास्त्री गणना करके मालूम कर सकता है कि इस क्षण दोनों आकाशीय पिण्ड एक दूसरे से कितनी दूरी पर थे (देखिए चित्र १२५)।

इस बात पर गौर कीजिए कि प्रभामण्डल के भीतर का आकाश बाहर के आकाश की तुलना में मन्द प्रकाश का दीखता है; यदि ऐसा नहीं है तो उसका कारण यह होता है कि प्रभामण्डल एक ऐसे विसृत प्रकाश के ऊपर आरोपित रहता है जिसकी प्रदीप्ति सूर्य से बाहर की ओर क्रमशः घटती जाती है। यह घटना हमें बहुत कुछ अंशों में इन्द्रधनुष के सम्बन्ध में प्रेक्षित की जानेवाली घटना का (जहाँ कि दोनों धनुषों के दर्मियान का आकाश मन्दप्रकाश का होता है) स्मरण दिलाती है और यह भी वैसे ही कारणों से उत्पन्न होती है।

लघु प्रभामण्डल बर्फ के नन्हें क्रिस्टलों युक्त बादल द्वारा सूर्यप्रकाश के वर्त्तित होने से बनता है—हम जानते हैं कि इन क्रिस्टलों की शक्ल प्रायः षटपहल प्रिज्म की होती है। प्रत्येक दिशा में जिधर हम देखते हैं, इस शक्ल के असंख्य प्रिज्म हर सम्भव दिशा में अनुस्थापित होकर उतराते रहते हैं (चित्र १२२)। इस किस्म का षटपहल प्रिज्म प्रकाश को इस तरह वर्तित करता है मानो इसका वर्त्तन कोर ६०° कोण का हो; आपाती किरणों के लिहाज से अपनी स्थिति के अनुसार यह उन्हें कम या अधिक मात्रा में विचलित करेगा, किन्तु क्रिस्टल के अन्दर यदि किरणपथ सममित है तब

विचलन का मान अल्पतम D होगा जो इस सुविख्यात सूत्र से प्राप्त होता है[1] —

$$n=\frac{\sin \frac{1}{2}(A+D)}{\sin \frac{1}{2} A}$$

यहाँ n प्रिज्म के पदार्थ का वर्त्तनाङ्क है तथा A इसके वर्त्तनकोर का कोण है।
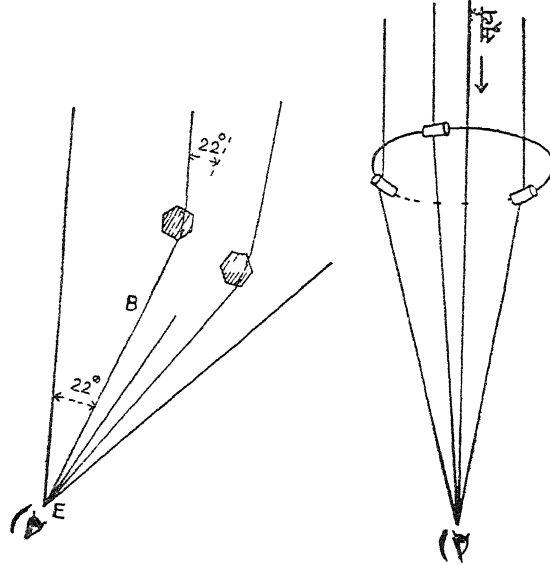
चित्र १२२—**किस प्रकार लघु या २२° के प्रभामण्डल की उत्पत्ति होती है।**

कोण A के मान ६०° तथा वर्त्तनाङ्क के मान १ ३१ (पानी का वर्त्तनाङ्क) से हमे D=22° प्राप्त होता है, जो ठीक लघु प्रभामण्डल की त्रिज्या के मान के बराबर है।

वास्तव मे यह सहज ही देखा जा सकता है (जैसा कि इन्द्रधनुष के लिए) कि किरणे OB जो अल्पतम विचलन प्राप्त करती है, प्रभामण्डल को सबसे अधिक प्रकाश प्रदान करेगी, क्योकि इस स्थिति मे प्रिज्म के घुमाने पर वर्त्तित किरणो की दिशा मे केवल बहुत ही थोडा अन्तर पडता है। अत ऐसे क्रिस्टलो की सख्या अपेक्षाकृत बहुत अधिक होगी जो आँखो मे बनिस्वत अन्य दिशाओ के इस खास

१ यह सूत्र भौतिक विज्ञान की किसी भी पाठ्य पुस्तक में प्रिज्म के अल्पतम विचलन के प्रकरण में मिल सकता है।

दिशा के निकट ही दिशाओं मे प्रकाश भेज रहे हैं। हमारी गणना पीली किरणों के लिए की गयी थी, लाल किरणों के लिए अल्पतम विचलन का कोण कुछ कम ही होता है, नीली किरणों के लिए अल्पतम विचलन का कोण कुछ अधिक होता है। इस कारण से ही प्रभामण्डल का भीतरी हाशिया लाल रग का और बाहरी नीले रग का होता है। किन्तु चूंकि किरणे EC भी जिनका विचलन अल्पतम विचलन से थोडा अधिक होता है, कुछ प्रकाश प्रभामण्डल मे पहुँचाती है अत हरे और नीले प्रकाश की अल्पतम विचलनवाली किरणों के साथ कुछ हदतक पीला और लाल प्रकाश भी मिला रहता है, अत ये पीतवर्ण का प्रदर्शन करती है। थोडा प्रकाश अब भी प्रभामण्डल के बाहर हर तरफ दिखलाई देगा किन्तु अन्दर नही—जैसा कि अभी बतलाया जा चुका है, अत अन्दर के सुस्पष्ट हाशिये और साथ-साथ बाहर के धुधले अस्पष्ट हाशिये, दोनो का समाधान हो जाता है। किन्तु जब कभी क्रिस्टल बिना तरतीब, हर किसी सम्भव दिशा मे वितरित नही हुए रहते है, बल्कि कुछ **विशेष वरीयता की स्थितियाँ** अख्तियार करते हैं तब लघु प्रभामण्डल के बाहर की उद्दीप्ति मे कुछ भिन्नता आ जाती है और प्रकाश के कतिपय धब्बे तथा वृत्तचाप प्रकट होते हैं जिनकी अब हम व्याख्या करने जा रहे हैं।

तो आइए, पहले कम से कम इसी प्रश्न पर विचार करे कि क्या यहा भी **विवर्त्तन का सिद्धान्त** कार्य करता है जिस तरह वह इन्द्रधनुष के निर्माण मे भाग लेता है।[1] सिद्धान्तत उसे भाग लेना चाहिए, बर्फ के क्रिस्टल मे से प्रकाश की एक पतली शलाका गुजरती है जिसकी चौडाई h है (चित्र १२२), अत यह क्रिस्टल प्रकाश का विवर्त्तन उसी भाँति करता है जिस भाँति एक झिरी जिसकी चौडाई h हो। अत्यन्त छोट आकार के क्रिस्टल एक श्वेत प्रभामण्डल उत्पन्न करेगे जिसका हाशिया लाल रग का होगा, ठीक उसी प्रकार जैसे पानी की नन्ही बूँदे कुहरा-धनुष का निमाण करती है (§१२८)। फिर, इसकी आशा की जा सकती है कि लघु छल्ले के बगल मे अतिरिक्त छल्ले भी प्रकट होगे (§१२३), और वास्तव मे कतिपय अवसरो पर इन्हे देखा भी जा चुका है, किन्तु गणना से पता चलता है कि इन्द्रधनुष वाले अतिरिक्त छल्लो की तुलना मे इन्हे अधिक मन्द प्रकाश का होना चाहिए तथा ये मुख्य छल्ले के बाहर तथा भीतर दोनो ओर स्थित होगे। भीतर वाले अतिरिक्त छल्ले अधिक

1. Visser, Proc Acad, Amsterdam, Summary in Hemel en Dampkring, **15**,17 1917 and **16**, 35, 1918

आसानी से देखे जा सकते है क्योकि ये मन्द प्रकाश की पृष्ठभूमि पर प्रकट होते है। अब तक के प्राप्त प्रेक्षणो से इस बात का आभास मिलता है कि लघु प्रभामण्डल की चौडाई और रग मे अन्तर हो सकता है, किन्तु इस सिलसिले मे आवश्यक है कि और अधिक प्रेक्षण प्राप्त किये जायँ। रगो की जाँच करने का प्राय सबसे बढिया तरीका यह है कि कालिख लगे काच मे से देखे और इस प्रकार प्रत्येक रग की पट्टी की अलग-अलग चौडाई का अन्दाज लगाये ओर फिर सबकी मिली हुई चौडाई का। इन्हे आप अपनी स्वतत्र राय के अनुसार नाम दे सकते है ! क्या कोई भी दो प्रेक्षक एक ही प्रभामण्डल के रगो को सदैव एक-सा नाम दे सकते है ? लाल और नारङ्गी रग की पहचान मे अक्सर लोग भ्रम मे पड जाते है, इसी प्रकार नीले और बैगनी रगो के दर्मियान भी लोग धोखा खा जाते है, ध्यान दीजिए कि प्रभामण्डल की घटना मे पीला रग कितने दुर्लभ अवसरो पर प्राप्त होता है !

वर्त्तन के सरल सिद्धान्त के अनुसार लघु छल्ले मे मोटे तौर पर नीला रग नही होना चाहिए और बैगनी रग तो कत्तई नही मिलना चाहिए और यही बात ऊपर वाले स्पर्शकीय चाप तथा कृत्रिम सूर्यो के बारे मे भी लागू होनी चाहिए (§१३६)। किन्तु निरीक्षण से पता चलता है कि कभी-कभी इनमे नीला विशेष रूप से प्रबल होता है, विशेषतया ऊपर के स्पर्शकीय चाप तथा कृत्रिम सूर्यो मे, और इनका वर्ण सदैव ही चटकीला होता है। विवर्त्तन का सिद्धान्त बतलाता है कि नीले और बैगनी रग कैसे प्रकट होते है, बशर्ते क्रिस्टल सही आकार के मौजूद हो, और यह सिद्धान्त इसका भी समाधान करता है कि क्यो स्पर्शकीय चाप और कृत्रिम सूर्य, लघु छल्ले की अपेक्षा अधिक चटकीले रग प्रदर्शित करते है। अन्त मे विवर्त्तन का सिद्धान्त इस बात का भी स्पष्टीकरण करता है कि क्यो कभी तो रग लघु छल्ले मे खूब चटकीले उभरते है और अन्य अवसरो पर बृहत् छल्ले मे, लघु छल्लोके रग अधिक चटकीले उस वक्त होते है, जब कि प्रिज्म के वर्त्तन करनेवाले फलक चौडे होते है जैसा कि **प्लेट की शक्ल** वाले क्रिस्टल मे होता है, किन्तु यदि ये फलक सॅकरे होते है, जैसे **स्तम्भ की शक्ल वाले** क्रिस्टल मे होता है, तब लघु छल्ला पीलापन लिये हुए होता है और बृहत् छल्ला चटकीले रग प्रदर्शित करता है।

लघु छल्ले का प्रकाश ध्रुवित होता है। इन्द्रधनुष के प्रतिकूल, इस दशा मे, प्रकाश के कम्पन छल्ले की समानान्तर दिशा की अपेक्षा, उसकी समकोण दिशा मे, अधिक प्रबल होते है। यह बात ठीक समझ मे भी आ जाती है, क्योकि यहाँ परावर्त्तन तो कत्तई नही होता, केवल दो बार वर्त्तन होना है। फिर भी यह प्रभाव उतना स्पष्ट

नही होता जितना इन्द्रधनुष मे । प्रचलित जनश्रुति के अनुसार लघु छल्ला वर्षा की पूर्व सूचना का द्योतक है, और जब वे कहते है कि 'प्रभामण्डल जितना ही अधिक बडा होगा उतनी ही जल्दी वर्षा होगी' तो उनका तात्पर्य होता है कि **लघु छल्ला न कि कोरोना,** वर्षा की पूर्व सूचना देता है। और वास्तविकता यह है कि अल्का-स्तार मेघ प्राय अल्प दाबवाले प्रदेश के अग्रगामी होते है ।

१३६. उप-सूर्य[1] या लघु प्रभामण्डल के कृत्रिम सूर्य (चित्र १२१, ख)

ये कृत्रिम सूर्य लघु छल्ले पर मौजूद सकेन्द्रित प्रकाश के दो धब्बे होते है जो सूर्य की ही ऊँचाई पर स्थित होते है । प्राय ऐसा होता है कि इन दोनो मे से केवल एक ही ठीक तौर पर देखा जा सकता है, और कभी-कभी लघु छल्ला तो अदृश्य रहता है जबकि दोनो कृत्रिम सूर्य स्पष्ट दिखलाई देते है । आम तौर पर कृत्रिम सूर्यो की चमक अत्यधिक होती है, ये भीतर की ओर स्पष्ट रूप से ललछवे रग के होते है, फिर पीला रग आता है जो आगे क्रमश नीलामिश्रित श्वेत रग मे परिणत हो जाता है।

सूक्ष्म निरीक्षण करने पर पता चलता है कि दरअसल ये कृत्रिम सूर्य लघु छल्ले के बाहर कुछ फासले पर स्थित होते है और सूर्य की ऊँचाई के अधिक होने पर यह दूरी और भी अधिक हो जाती है, और सूर्य जब बहुत ऊँचा होता है तो यह अन्तर कई अशो का हो सकता है ।

कृत्रिम सूर्य उस वक्त दीखते है जब बर्फ के पटपहल प्रिज्मो की एक बडी सख्या ऊर्ध्व दिशा की खडी स्थिति मे होती है । यह शर्त नन्हे बर्फ-स्तम्भो के लिए सही उतरती है जो एक सिरे पर खोखले होते है, या 'छतरी की शक्ल' वाले धीरे-धीरे नीचे गिरते हुए क्रिस्टलो के लिए भी (चित्र १२३)[2]। इन प्रिज्मो मे से होकर गुजरने पर

चित्र १२३—**बर्फ के क्रिस्टल जो कृत्रिम सूर्य्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं।**

किरणे अब अल्पतम विचलन के मार्ग पर नही चलती, क्योंकि वे अक्ष के समकोण

1 Parhelia

2 इस अन्तिम दृष्टान्त के विरोध मे कहा गया है कि ये छतरियाँ उलट जायगी क्योंकि षटपहल सिरा भारी होता है, किन्तु डान्जोन (Danjon) ने वस्तुत उन्हें सीधी स्थिति में नीचे उतराते हुए देखा है (L' Astronomie 68, 420, 1954)। विसेर (Visser) ने उपसूर्य के लिए एक अन्य व्याख्या दी है।

धरातल मे नही स्थित होती। सूर्य की ऊँचाई h हो तो इस दशा मे 'आपेक्षिक अल्पतम विचलन' इस शर्त्त द्वारा निर्धारित होता है—

$$\frac{\sin \frac{1}{2}(A+D)}{\sin \frac{1}{2} A} = \sqrt{\frac{n^2 - \sin^2 h}{1 - \sin^2 h}}$$

अत प्रकाश का आचरण इस प्रकार होता है मानो तिर्यक् किरणो के लिए वर्तनाङ्क के मान मे वृद्धि हो गयी हो (देखिए §१३५)। इस समीकरण से हम निम्न-लिखित सारणी आसानी से प्राप्त कर सकते है—

सूर्य की ऊँचाई	कृत्रिम सूर्य से लघु छल्ले की दूरी
०°	०°
१०°	०° २०′
२०°	१° १४′
३०°	२° ५९′
४०°	५° ४८′
५०°	१०° ३६′

प्रेक्षण-फल के साथ ये मान बहुत अच्छी तरह मेल खाते है। सूर्य की ४०° से अधिक ऊँचाई के लिए दुर्भाग्यवश मुश्किल से ही कोई माप लभ्य है क्योकि उस दशा मे यह घटना बहुत कुछ अस्पष्ट हो जाती है, इस कमी को दूर करने का प्रयत्न कीजिए।

१३७. लघु प्रभामण्डल के स्पर्शकीय क्षैतिज चाप (चित्र १२१, c)

ये चाप, जो लघु प्रभामण्डल के सिरे और पेदे पर चमक की वृद्धि के रूप मे प्रकट होते है, अनुकूल परिस्थितियो मे अपेक्षाकृत प्रकाश के बहुत बडे वक्र—'परिवृत्त प्रभा-मण्डल'—के भाग के रूप मे देखे जा सकते है। प्रभामण्डल की यह अति विचित्र घटना उस वक्त उत्पन्न होती है जब पटपहल प्रिज्मो के अक्ष क्षैतिज तल मे होते है और ये प्रिज्म अपनी स्थिति के गिर्द हलका दोलन करते है—ऐसी परिस्थितियाँ तब उत्पन्न होती है जब क्रिस्टल प्लेट की शक्ल के बजाय स्तम्भ की शक्ल के होते है।

परिवृत्त प्रभामण्डल की आकृति बहुत कुछ सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करती है (चित्र १२४)। जब सूर्य अधिक ऊँचाई पर नही होता तब हम केवल इतना देख

पाते हैं कि ऊपर का स्पर्शकीय धनुष दोनों छोर पर नीचे की ओर झुका हुआ होता है, और अधिक ऊँचाई के लिए यह करीव-करीब दीर्घवृत्त की शक्ल का दीखता है। क्षितिज के नीचे पड़नेवाले वक्र की शक्ल गणना द्वारा प्राप्त की गयी है और कभी-कभी ये पहाड़ पर से देखे भी जा सके हैं, जबकि हम दृष्टि नीचे की ओर डाल सकते
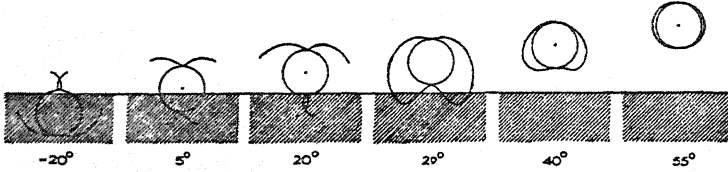
चित्र १२४—सूर्य्य की बढ़ती हुई विभिन्न ऊँचाइयों के लिए परिवृत्त प्रभामण्डल के विभिन्न स्वरूप।

हैं। (अनुमान किया जाता है कि इन्हें देख सकने की उतनी ही सम्भावना ऊँची मीनार या वायुयान से भी हो सकती है।)

१३८, लघु प्रभामण्डल के तिरछे स्पर्शकीय चाप या 'लाउट्ज के तिरछे चाप' (चित्र १२१, d)[1]

छोटे आकार के ये चाप अद्‌भुत होते हैं जो कृत्रिम सूर्य से नीचे की ओर झुके होते हैं और लघु प्रभामण्डल को स्पर्श करते हैं—यह एक अत्यन्त दुष्प्राप्य घटना है। इन्हें देख सकना केवल तभी सम्भव है जब सूर्य ऊँचाई पर स्थित हो, अतः तब कृत्रिम सूर्य लघु प्रभामण्डल से कुछ दूरी पर होते हैं। ये नन्हें चाप उस वक्त उत्पन्न होते हैं जब बर्फ के नन्हें ऊर्ध्व प्रिज्म जिनसे कृत्रिम सूर्य उत्पन्न होते हैं, ऊर्ध्व अक्ष के गिर्द हलका दोलन करते हैं। प्रायः तो केवल इतना भर दीखता है कि कृत्रिम सूर्य १° या २° तक खिंच उठा हो; लघुचाप क्षैतिज तल के साथ करीब ६०° के कोण पर झुका होता है। केवल एक बार चाप पर्य्याप्त रूप से स्पष्ट तथा लम्बा दीखा था। अतः इस घटना की सम्भावित झलक पाने के लिए सदैव ही यह आवश्यक होता है कि कृत्रिम सूर्य का सावधानी के साथ प्रेक्षण किया जाय।

1. Visser, Diss. Utrecht, 1936
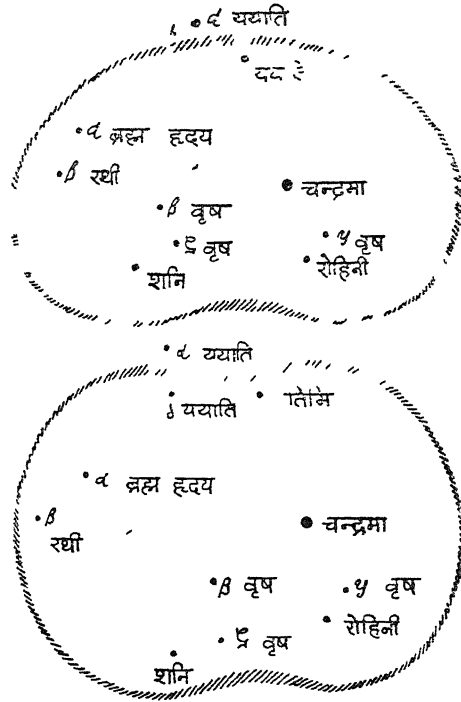
चित्र १२५—**चन्द्रमा के निकट तारे की स्थिति के लिहाज से परिवृत्त प्रभामण्डल।**
(After Veenhuizen, Onweders ect 35, 119, 1914 By kind permission of the Royal Dutch Meteorological Institute,)

१३९. पैरी का चाप (चित्र १२१, e)

अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर ही यह दिखलाई देता है। थोडा ही झुका हुआ छोटा-सा यह चाप, ठीक लघु प्रभामण्डल के ऊपर स्थित होता है। इसकी उत्पत्ति उस दशा मे होती है जब पटपहल प्रिज्मो की प्रवृत्ति न केवल अपने अक्ष को क्षैतिज तल मे रख कर उतराने की होती है बल्कि उनके एक फलक की सतह भी क्षैतिज तल मे रहती है।

१४० वृहत् छल्ला या ४६° कोण का प्रभामण्डल (चित्र १२१, f)

सूर्य से यह, लघु प्रभामण्डल की अपेक्षा, पूरे दो गुने फासले पर स्थित होता है और उसी प्रकार के रग इसमे भी होते है, किन्तु इसकी चमक कम होती है तथा यह और

भी कम अवसरो पर दृष्टिगोचर होता है। भीतरी हाशिये की त्रिज्या मालूम करने के लिए सही माप की आवश्यकता होती है। इस प्रभामण्डल की उत्पत्ति भी उसी प्रकार होती है जिस प्रकार २२° कोण वाले प्रभामण्डल (लघु छल्ले) की, केवल इस बार वर्त्तन करनेवाले प्रिज्म के कोर ९०° वाले होते है जो हर सम्भव तरीके से अनु-

चित्र १२६—**बर्फ के षटपहल प्रिज्म म प्रकाश-किरण का अल्पतम विचलन २२° तथा ४६° का हो सकता है।**
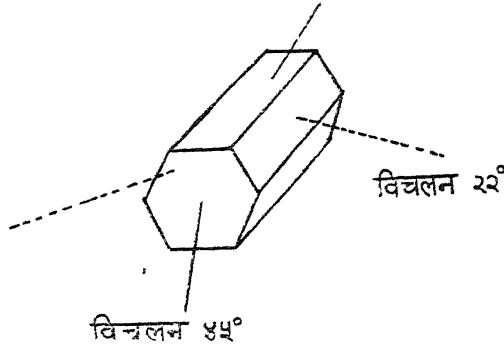
स्थापित रहते है। जैसा चित्र १२६ से प्रकट है, बर्फ के एक ही किस्म के क्रिस्टल लघु तथा वृहत् दोनो प्रकार के प्रभामण्डल का निर्माण कर सकते है।

१४१ वृहत् प्रभामण्डल के कृत्रिम सूर्य (चित्र १२१, g)

ये बहुत ही कम अवसरो पर देखे जा सके है—और यह आश्चर्य की भी बात नही, क्योकि इनके निर्माण के लिए प्रिज्मो की एक बडी सख्या के ९०° वाले वर्त्तन कोर को ऊर्ध्व स्थिति मे होना पडेगा। बर्फ के क्रिस्टलो की आम शक्ल को ध्यान मे रखते हुए यह बात कल्पनातीत प्रतीत होती है कि प्रिज्म ऐसी स्थिति कभी धारण भी कर सकते है।

१४२ वृहत् प्रभामण्डल के निचले स्पर्शकीय चाप (चित्र १२१, h)

ये भी दुर्लभ ही है। ये बर्फ के क्रिस्टलो के एक विशेष प्रकार के अनुस्थापन के कारण उत्पन्न होते है—इस स्थिति मे क्रिस्टल का अक्ष तथा एक पार्श्वफलक, दोनो ही क्षैतिज होते है तथा प्रकाश का वर्त्तन उन दो फलको द्वारा होता है जो एक-दूसरे के

समकोण होते है। सूर्य जब बहुत ही अधिक ऊँचाई पर होता है तो चाप सीधे हो गये दीखते हैं, जहाँ तक कि अन्त मे वे सूर्य की ओर अवतल भी हो जाते है।

१४३ बृहत् प्रभामण्डल का ऊपरी स्पर्शकीय चाप (चित्र १२१, 1)

यह चाप केवल तभी उत्पन्न होता है जब ९०° वाले प्रिज्म अपने वर्त्तनकोर क्षैतिज तल मे रखे हुए उतराते है तथा अपनी स्थिति के गिर्द घूमते है, या कम्पन करते है। अब इनमे से वे प्रिज्म जो अल्पतम विचलन करने के लिए अनुकूल स्थितियो मे होते है, विचाराधीन स्पर्शकीय चाप उत्पन्न करते है। प्राय एक ऐसा चाप दिखलाई देता है जो वहुत अधिक इस चाप के सदृश होता है, किन्तु वास्तव मे इसकी उत्पत्ति का कारण और ही है—यह ऊपर वाला यथार्थ स्पर्शकीय चाप नही है, वल्कि यह ब्रैवेम का परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु चाप है।

१४४ परिवृत्त-ऊर्ध्व बिन्दु[1] चाप (चित्र १२१, J)

प्रभामण्डल की एक सुन्दरतम घटना! अक्सर ही दीखनेवाला विविध चटकीले रगो से सुशोभित यह चाप क्षितिज के समानान्तर होता है तथा इन्द्रधनुष के सभी रग इसमे प्रदर्शित होते हैं। बृहत् प्रभामण्डल के ऊपरी स्पर्शकीय चाप की उपस्थिति की सामान्यत जहाँ हम आशा करते है, वहाँ से कुछ अश ऊपर यह स्थित होता है।
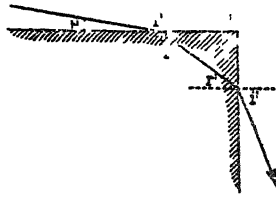
चित्र १२७—९०° वाले बर्फ के प्रिज्म से प्रकाश-किरण का वर्त्तन।

इस घटना के समाधान के लिए हमे प्लेट या छतरी की शक्ल के क्रिस्टलो की कल्पना करनी होगी जो अपने अक्ष को ऊर्ध्व दिशा मे रखे हुए स्थिर-समतुलन की दशा मे उतराते रहते है (चित्र १२७)। तब ९०° के कोण वाले प्रिज्म से सूर्य की किरण-शलाका वर्त्तित होगी, किन्तु सामान्यत यह अल्पतम विचलन का वर्त्तन नही होगा। चित्र १२७ से स्पष्ट है कि—

$$\sin i' = n \sin r' = n \cos r = n\sqrt{1 - \frac{\sin^2 i}{n^2}} = \sqrt{n^2 - \sin^2 i}$$

इसमे सहज ही हम देखते है कि विचलन का कोण $i' + i - 90°$ है। सूर्य की कोणीय ऊँचाई H = १०° के लिए यह विचलन कोण करीब ५०° आता है, फिर H =

1 Circum zenithal

२०° के लिए यह घटकर ४६° हो जाता है जो अल्पतम मान है, तथा H=३०° के लिए यह फिर बढकर ४९ ५° हो जाता है। H=३२° सूत्र मे 1'=१०° प्राप्त होता है तथा परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप विलुप्त हो जाता है। व्यावहारिक तौर पर यह केवल सूर्य की १५° और २५° के बीच की ऊँचाइयो के लिए दिखाई देता है। इसका अर्थ हुआ कि सूर्य जव आकाश मे नीचे स्थित हो तभी परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप को ऊपरी बृहत् छल्ले के स्पर्शकीय चाप (जिसका विचलन कोण ४६° होता है) से पृथक् पहचाना जा सकता है।

जाँच की एक उत्तम कसौटी यह है कि वास्तविक परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप करीव-करीब सदैव ही कृत्रिमसूर्य के साथ प्रगट होते हैं, इनकी उत्पत्ति से यह बात समझ मे भी आती है। बेर्सोन के अनुसार बादल, जो कृत्रिम सूर्य प्रदर्शित करता है और बाद मे ४६° की ऊँचाई तक उठ जाता है, तब परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप प्रदर्शित करेगा।

यह रोचक होगा कि अपेक्षाकृत अधिक सौर ऊँचाई (लगभग ३०° के निकट) पर परिवृत्त-ऊर्ध्वविन्दु चाप की तलाश की जाय। सिद्धान्त के अनुसार तो वृत्त के आधे भाग से अधिक को हम कभी देख ही नही सकते, किन्तु व्यवहार मे दृष्टिगोचर होनेवाला भाग घटकर वृत्त का एक तिहाई ही रह जाता है, फिर भी कहा जाता है कि एक बार सम्पूर्ण वृत्तचाप भी देखा जा सका था (कर्न का प्रभामण्डल)[1]।

यदि स्पर्शकीय **तथा** परिवृत्त-ऊर्ध्व विन्दु चाप दोनो ही साथ-साथ दीख रहे हो तब इन दोनो के बीच कुछेक अश के अन्तर की **खाली जगह** अवश्य दिखलाई देनी चाहिए। और वास्तव मे इसका उल्लेख प्राप्त है कि एक बार एक चौडा चाप देखा गया था जो लम्बाई के एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक अन्धकारमय पेटी द्वारा दो भागो मे विभाजित था, तथा यह अचानक ही प्रगट हुआ और थोडी ही देर बाद विलुप्त हो गया।[2] किन्तु इस ढग के प्रेक्षण निस्सन्देह दुर्लभ ही रहते है क्योकि यह घटना तभी सभाव्य हो सकती है जब क्षैतिज तल मे उतराती हुई प्लेटो का झुण्ड तथा अनियमित दिशाओ मे अवस्थित प्लेटो के झुण्ड एक साथ आकाश में मौजूद हो।

१४५ क्षैतिज वृत्त या सौर परिवृत्त (चित्र १२१, k)

यह एक वृत्त है जो क्षैतिज तल के समानान्तर उसी ऊँचाई पर अवस्थित होता है जिस ऊँचाई पर सूर्य रहता है। यद्यपि कुछ अवसरो पर पूरे ३६०° के दायरे मे इस

1 Observations by Lambert in 1838 after Pernter-Exner p 300, M W R, 50, 132, 1922 2 M. W. R, 506, 1920

वृत्त का अवलोकन किया जा सकता है, किन्तु अक्सर सूर्य के निकट, जहाँ आकाश अवश्य ही अधिक चमकीला होता है, इस वृत्त को देख पाना मुश्किल होता है। इस वृत्त का **रगहीन** होना स्पष्ट रूप से यह बतलाता है कि इसकी उत्पत्ति परावर्त्तन के कारण होती है, वर्त्तन के कारण नही, इस दशा मे ऊर्ध्व अक्ष की स्थिति मे उतराने वाले बर्फ के प्रिज्मो के पार्श्वफलक ही परावर्त्तन करनेवाले तल होते है।
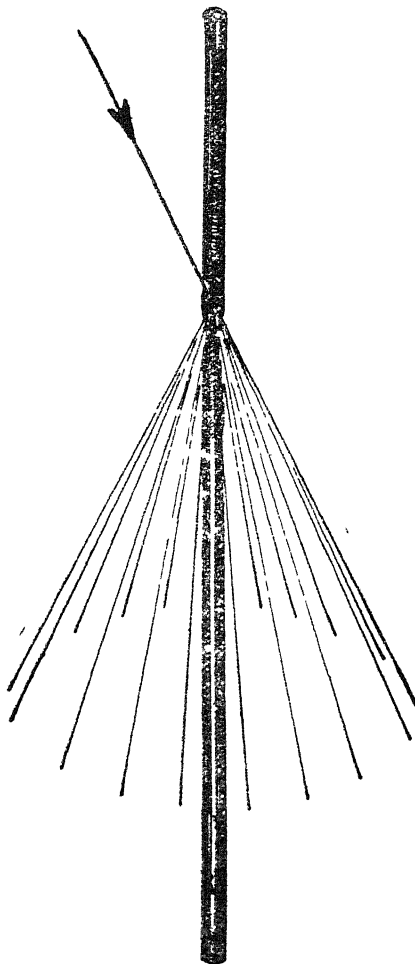
चित्र १२७ क—**बेलनाकार सतह से परावर्त्तन द्वारा प्रकाश के शकु का निर्माण।**

इसी प्रकार की प्रकाश की पेटी उस वक्त देखी जा सकती है जब किसी प्रकाश-स्रोत को हम खिडकी के काँच मे से देखते है जिसे किसी तेल लगे कपडे से एक ही दिशा मे पोछा गया हो या जब प्रकाशस्रोत को ऐसे काँच द्वारा परावर्त्तित होते देखते है जिसकी सतह समानान्तर धारियो के रूप मे उभरी हो। प्रकाश की पेटी सदैव ही सतह की उभार-रेखा की समकोण दिशा मे होती है।

यह इस सामान्य प्रकाशीय नियम का एक उत्तम उदाहरण नियम है कि बेलन से परावर्त्तित होने पर किरणें

एक शकु आकार का तल बनाती है जिसका अक्ष यह वेलन होता है[1] (चित्र १२७ क)।

१४६ प्रकाश-स्तम्भ या सूर्य-स्तम्भ[2]

उगते हुए या अस्त होते हुए सूर्य के ऊपर, ऊर्ध्व दिशा मे स्थित प्रकाश-स्तम्भ या प्रकाश का गुच्छा-सा अक्सर ही देखा जा सकता है और सबसे बढिया तो यह उस वक्त दीखता है जब सूर्य किसी मकान के पीछे छिपा रहता है ताकि आँखो को चकाचौध न लगे। प्रकाश का यह स्तम्भ स्वय रगहीन होता है, किन्तु जब सूर्य नीचे स्थित होता है और इस कारण यह पीला, नारङ्गी या लाल वर्ण धारण कर लेता है, तब प्रकाश-स्तम्भ भी स्वभावत उसी रग की झलक अख्त्यार कर लेता है। सामान्यत यह केवल ५° तक ऊँचा होता है, और बहुत कम अवसरो पर इसकी ऊँचाई १५° या इससे अधिक पहुँचती है। सूर्य जब आकाश मे ऊँचाई पर स्थित होता है तब ये प्रकाश-स्तम्भ अत्यन्त दुर्लभ मौको पर ही दिखलाई देते है, किन्तु इसके प्रतिकूल, सूर्य जब कि सचमुच क्षितिज के नीचे स्थित होता है, तो ये प्राय ही बहुत अच्छी तरह देखे जा सकते है। सूर्य के **नीचे** प्रकाशस्तम्भ केवल यदा-कदा ही बनते है, और सूर्य के ऊपर बनने वाले स्तम्भो की अपेक्षा ये छोटे होते है।

बर्फ की परतो के एक ऐसे बादल की कल्पना कीजिए जिसमे सभी परते पूर्णतया क्षैतिज हो तथा अत्यन्त धीरे-धीरे नीचे को उतर रही हो। इन्ही परिस्थितियो मे ये सूर्य की आपाती किरणो को परावर्तित करती है, किन्तु ये परावर्तित किरणे हमारी आँखो मे पहुँच नही पायेगी। किन्तु मान लीजिए कि ये परते अपनी क्षैतिज स्थिति से एक छोटे से कोण Δ पर दिक्सूचक की सभी दिशाओ की ओर **थोड़ी झुकी है**, अत अब परावर्तित किरणे हर प्रकार के लघु विचलन प्राप्त करेगी। और यदि परतो का झुकाव $\frac{h}{2}$ (h=सूर्य की कोणीय ऊँचाई) से
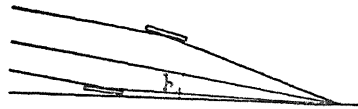
चित्र १२८—**सूर्य्य के ऊपर और नीचे बनने वाले प्रकाश-स्तम्भ की सरलतम व्याख्या।**

1 W Maier explains on this principle most of the halo phenomena (zeitschr f Meteor 4, 111 1950)

2 K Stuchtey Ann d Phys 59, 33, 1919 Cb references to § 14.

कम रहता है तो सूर्य के नीचे प्रकाशस्तम्भ का निर्माण करीब-करीब उसी प्रकार होगा जिस प्रकार तरगो वाले पानी की सतह पर प्रकाशस्तम्भ के धब्बो का निर्माण होता है (§१८)। जब परतो का झुकाव h मे अधिक हो जाता है तब हम न केवल सूर्य के नीचे स्तम्भ देखते है बल्कि इसके ऊपर भी एक हलकी रोशनी का स्तम्भ दिखलाई देता है।

किन्तु यह विवरण दो बातो मे प्रेक्षण के प्रतिकूल बैठता है। पहली बात यह कि सूर्य के नीचेवाला प्रकाशस्तम्भ ऊपरवाले स्तम्भ की अपेक्षा हमेशा अधिक चमकीला होना चाहिए, दूसरे यह कि सूर्य जब काफी ऊँचाई पर हो तब सूर्य के ऊपर का स्तम्भ तो कभी भी नही दीखना चाहिए क्योकि क्षैतिज स्थिति के गिर्द बर्फ की परतो का दोलन अपेक्षाकृत थोडा ही होता है (देखिए § १४८)। किन्तु इन दोनो मे से कोई भी बात सच नही उतरती।

प्रकाशस्तम्भ की उत्पत्ति का कारण **बारम्बार होनेवाला परावर्त्तन** बतलाया गया है, किन्तु तब उस दशा मे प्रकाशमात्रा हलकी होनी चाहिए तथा जैसा साधारणत प्रतीत होता है उससे कही अधिक चौडा यह स्तम्भ होता, जैसा कि गणित द्वारा निष्कष प्राप्त भी किया जा सकता है। एक अन्य कारण यह बतलाया जाता था कि इसकी उत्पत्ति **पृथ्वी की वक्रता** के कारण होती है, लेकिन इसका एक परिणाम यह होगा कि किसी एक दिशा मे प्रेक्षक को स्पष्ट रूप से विभिन्न झुकाव की परते दीखनी चाहिए। और अन्त मे यह समझा जाता था यह क्षैतिज अक्ष के गिर्द तेजी से घूमती हुई बर्फ की परतो के कारण उत्पन्न होता है जो इसीलिए खाली जगह मे हर सम्भव तरीके की अनुस्थापित स्थिति धारण कर लेगी। यह अन्तिम परिकल्पना वास्तव मे सर्वाधिक सम्भाव्य प्रतीत होती है यद्यपि इस पर आधारित गणना अभी तक कभी भी पूरी नही की जा सकी है।

प्रकाशस्तम्भ कितनी सरल घटना प्रतीत होता था। कौन भला सोच सकता था इनके समाधान के प्रयत्न मे इतनी सारी कठिनाइयो का सामना करना पडेगा ?

१४७ क्रॉस[1] (प्लेट IX, b)

जब एक ऊर्ध्वस्तम्भ तथा क्षैतिज वृत्त का एक भाग साथ-साथ प्रगट होते है तब आकाश मे हमे एक क्रॉस दिखलाई पडता है। यह कहना अनावश्यक ही होगा कि अन्धविश्वास ने इस घटना को अत्यधिक महत्त्व दिया है।

1 Crosses

१४ जुलाई, सन् १८६५ को आल्प्स पर्वतारोही ह्विम्पर तथा उसके साथी, मैटर-हार्न की चोटी पर सबसे पहले पहुँचे, किन्तु वापस आते समय उसके चार साथियो के पैर फिसल गये और वे सिर के बल एक खड्डे मे गिर गये। शाम के करीब ह्विम्पर ने आकाश मे प्रकाश का एक भयोत्पादक वृत्त देखा जिसमे तीन क्रास थे, 'प्रकाश की यह प्रेतस्वरूप आकृति स्थिर तथा गतिहीन थी, यह एक अजीब तथा भयावह दृश्य था जो मुझे अनोखा लगा और इस मौके पर अवर्णनीय रूप से प्रभावोत्पादक भी प्रतीत होता था।'

१४८ अधोवर्ती सूर्य

इसे केवल किसी पर्वत या वायुयान से ही देख सकते है। यह थोडा-बहुत आयताकार रगहीन प्रतिबिम्वत होता है, इस दशा मे सूर्य पानी की सतह मे नही, बल्कि बादल मे प्रतिबिम्वित होता है। यह बादल दरअसल बर्फ की परतो का बना होता है जो अत्यन्त स्थिर भाव से उतराता हुआ प्रतीत होता है, तभी तो प्रतिबिम्ब अपेक्षाकृत इतना अधिक स्पष्ट बन पाता है। अनुकूल परिस्थितियो मे यह आयताकार बिम्ब एक दीर्घ वृत्तीय विवर्त्तन-वलय से परिवेशित होता है जिसकी त्रिज्या ० ५° से लेकर १° तक होती है। प्रगटत बर्फ के क्रिस्टल पर्दे मे बने विवर्त्तनकारी छिद्र सरीखे काम करते है। चूँकि उनका प्रेक्षण हम विषमतलीय स्थिति से करते है, अत ऊर्ध्व धरातल मे इनका प्रक्षेपित व्यास छोटा हो जाता है अत विवर्त्तन बिम्ब अधिक चौडा हो जाता है[1] (देखिए § १६२)।

१४९. दुहरा सूर्य

कभी-कभी सूर्य के ठीक ऊपर प्रकाश का एक धब्बा हम देखते है और केवल अत्यन्त दुर्लभ अवसरो पर इसके नीचे भी यह धब्बा दिखलाई पडता है। सूर्य और उसके इस धुँधले प्रतिबिम्ब के बीच की दूरी आमतौर पर १° या २° से अधिक नही होती। कुछेक अपवाद स्वरूप दशाओ मे सूर्य-मडलक के ऊपर इस तरह के दो या तीन प्रतिबिम्ब भी देखे गये है। सम्भवत यह घटना केवल इस कारण उत्पन्न होती है कि बादलो के असमान वितरण के फलस्वरूप प्रकाशस्तम्भ की चमक स्थानीय रूप से जगह-जगह बढ जाती है।

1 Ch-F Squire Journ Opt Soc Amer **42,** 782, 1952 & 43, 318 1953

१५०. अत्यन्त ही दुर्लभ तथा सदेहास्पद प्रभामण्डल की घटना

विभिन्न आकृतियो के प्रभामण्डल के वाद जिनका विवरण अभी दिया जा चुका है, हम निम्नलिखित सूची इस उद्देश्य से दे रहे है कि पाठक को इसका आभास मिल सके कि इन अत्यधिक दुर्लभ घटनाओ मे जो सर्वाधिक अप्रत्याशित अवसरो पर आश्चर्य-जनक स्पष्टता के साथ प्रगट होती है, कितनी अधिक विलक्षणताएँ निहित है ।[1]

सूर्य के गिर्द छल्ले के रूप मे जिनका विस्तार ६°—७°, ९°, ११½°, १५°, १६½° १८°—२०°, २४½°, २६°, २७½°, ३३°, ३४° तक होता है । इन हलके प्रकाश की चमक वाले वृत्तो का अवलोकन करते समय सदैव सूर्य को ओट मे रखने की साव-धानी बरतिए ! ये छल्ले शकु के आकार वाले बर्फ के क्रिस्टलो मे होनेवाले वर्त्तन से बनते है, जबकि ये क्रिस्टल बेतरतीब दिशाओ मे अवस्थित होते है । इसी कारण इस तरह के कई छल्ले एक साथ ही बनते है ।

सूर्य के गिर्द ९०° त्रिज्या का एक श्वेत प्रकाश का वृत्त । कभी-कभी ऊपरी स्पर्श-कीय चाप सहित । अत्यन्त ही अस्पष्ट । सूर्य के गिर्द १२०° त्रिज्या का एक श्वेत प्रकाश का वृत्त ।

प्रनि सूर्य, जो कि क्षैतिज वृत्त पर सूर्य के ठीक सामने स्थित होता है—सामान्यत यह रगहीन और कुछ-कुछ धुँधला-सा होता है । कृत्रिम सूर्य, ९०° के वृत्त पर सूर्य से ३३° तथा १९° की कोणीय दूरियो पर ।

क्षैतिज वृत्त पर सूर्य से १२०° की कोणीय दूरी पर और ४०° (?) ८४°—१००° (?), १३४° (?), १४२° (?) तथा १६५° (?) पर भी प्रतिसूर्य सरीखे प्रकाश-धव्वे मिलते है ।

क्षितिज के नीचे का कृत्रिम सूर्य, जो वायुयान, या किसी पर्वत से, साधारण कृत्रिम सूर्य के प्रतिविम्व के रूप मे दिखलाई पडता है ।

कृत्रिम सूर्य तथा प्रनिसूर्य के ऊपर के प्रकाश-स्तम्भ । कृत्रिम सूर्य के भी कृत्रिम सूर्य (एक गौण प्रभामण्डल की घटना) । कृत्रिम सूर्य जो उस बिन्दु पर स्थित होते है जहाँ लघु वृत्त तथा ऊर्ध्व प्रकाश स्तम्भ क्षितिज से मिलते है ।

1 Numerous interesting observations in the periodical *Hemel en Dampkring* and in the publication of the Royal Dutch Meteorological Institute *Onweders en Optische Verschijnselen*

कृत्रिम सूर्य की स्थिति पर लघु वृत्त के स्पर्शकीय चाप। ११$\frac{1}{2}$° और २४$\frac{1}{2}$° के वृत्त के ऊपरी स्पर्शकीय चाप। सूर्य से गुजरने वाले तिर्यक् चाप तथा प्रति-सूर्य से गुजरने वाले तिर्यक् चाप जो प्राय श्वेत होते है, किन्तु एक बार ये रगीन प्रकाश के भी देखे गये थे। सूर्य के सामने, दूसरी ओर के चाप, अर्थात् प्रतिसूर्य के गिर्द के वृत्त जिनकी कोणीय त्रिज्याएँ ३३°, ३५° तथा ३८° की होती है। असाधारण परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु वाले चाप जो विभिन्न ऊचाइयो या पर दीखते है।

सूर्य के गिर्द एक दीर्घवृत्त, जिसके दीर्घ अक्ष का विस्तार ऊर्ध्व दिशा मे १०° होता है और क्षैतिज दिशा मे लघु अक्ष का विस्तार ८° होता है।

प्रतिसूर्य के गिर्द बूगेर का प्रभामण्डल जिसकी कोणीय त्रिज्या ३५°—३८° होती है। इसे कुहरा-धनुष से पृथक् करके पहचानना कठिन होता है, किन्तु बूगेर का प्रभामण्डल पूर्णतया रगविहीन होता है, इस पर अतिरिक्त धनुष चाप नही होते है और आम तौर पर प्रभामण्डल की अन्य घटनाएँ भी इसके साथ-साथ प्रगट होती है।

१५१. तिर्यक् और प्रभामण्डल की घटनाएँ

कभी-कभी प्रकाश के ऐसे स्तम्भ देखे गये है जो ऊर्ध्व दिशा मे स्थित नही थे बल्कि ऊर्ध्व तल से २०° तक झुके हुए थे।

पानी की लहरदार सतह पर दीखने वाले प्रकाश के स्तम्भ सरीखे तिरछे धब्बो की उत्पत्ति का कारण नन्ही तरगो की प्रमुखता प्राप्त करनेवाली दिशा बतलायी गयी थी, यहाँ पर भी स्पष्ट है कि हम कल्पना कर सकते है कि बर्फ के क्रिस्टल क्षैतिज तल मे नही उतराते है बल्कि कतिपय वायु-धाराओ के प्रभाव से वे तिरछे होकर उतराते है, ऐसा ठीक-ठीक कैसे होता है, इसका समाधान करना कुछ अधिक सरल नही प्रतीत होता है।

परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु चाप झुकी स्थिति मे देखा गया है। ठीक सूर्य के ऊपर यह सबसे अधिक ऊँचा होता है तथा दोनो पार्श्व मे यह क्षितिज की ओर झुका रहता है। क्षैतिज वृत्त तो सूर्य से १°–२° नीचे की स्थिति से गुजरता हुआ देखा गया है। लघुवृत्त का कृत्रिम सूर्य एक बार अपनी सही स्थिति से ४०° अधिक ऊँचाई पर देखा गया था, यह घटना तो विशेष रूप से स्पष्ट देखी गयी थी क्योकि सूर्य अस्त होने वाला ही था।

इस सम्बन्ध मे भी और अभी प्रेक्षण प्राप्त करने की आवश्यकता है और प्रेक्षण की व्यक्तिगत त्रुटियो को दूर करने के लिए भी विशेष सावधानी बरतनी चाहिए, अत साहुल का उपयोग कीजिए। फोटो लेते समय केमरे के सामने कुछ फासले पर साहुल को लटकाइए ताकि यह फोटोग्राफी की प्लेट पर (कुछ धुँधला ही) दीखे।

१५२. प्रभामण्डल की घटना के विकास-क्रम की दशा

नौसिखुए प्रेक्षक सदैव ही प्राकृतिक घटनाओ की नियमितता के प्रति अतिशयोक्ति से काम लेते हैं, वे वर्फ के क्रिस्टलो की आकृति पूर्णतया सममित बतलाते है, इन्द्रधनुष मे सात रग वे गिन लेते है तथा आकाशीय तडित् को टेढी-मेढी वक्ररेखा के रूप मे वे देख पाते है। इसी प्रकार प्रभामण्डल की घटनाओ के बारे मे भी लोगो की प्रवृत्ति उन्हे वास्तव से अधिक पूर्ण बतलाने की होती है। फिर भी लघुवृत्त की आधी परिधि के देखने मे और उसके सम्पूर्ण भाग को देखने मे विशाल अन्तर है। प्राकृतिक घटनाओ की 'अपूर्णता' भी निश्चित नियमो के अधीन होती है और इस दृष्टि से इस अपूर्णता को केवल एक और 'नियमितता' ही मान सकते है।

इसी कारण यह आवश्यक है कि प्रभामण्डल की प्रत्येक घटना के विकास-क्रम की दशा का अध्ययन करने मे उसकी प्रकाश-तीव्रता के साथ-साथ दृष्टिगोचर होने वाले भाग के विस्तार का भी तखमीना लगाया जाय। इन प्रेक्षणो का औसत मान लेने पर बादलो के वितरण की ऊलजलूल अनियमितताओ के प्रभाव का भी बहुत कुछ निराकरण किया जा सकता है। आम तौर पर यह पाया जाता है कि वे ही भाग जिनकी प्रकाश-तीव्रता अधिकतम होती है, सर्वाधिक बहुलता के साथ प्रगट होते है। विशेष अधिक चमक वाली आभा ही औसत रूप से विशेप विस्तार भी प्राप्त करती है। बादलो की मध्यम रूप से हलकी मोटाई का स्तर प्रभामण्डल के निर्माण के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होता है; अत्यन्त पतले स्तर मे क्रिस्टलो की सख्या बहुत ही कम होती है, तथा वहुत मोटे स्तर पर्य्याप्त प्रकाश को अपने मे से गुजरने नही देते है, या फिर उन्हे हर किसी दिशा मे बिखेर देते है।

एक बहुत ही दिलचस्प वात यह है कि लघु वृत्त का शीर्ष भाग, औसत रूप से निचले भाग की अपेक्षा तीन गुने बार अधिक दिखलाई पडता है। इसके कारण के लिए बतलाया गया है कि निचले भाग के लिए बादलो के स्तरो मे से गुजरने वाला किरण-पथ बहुत अधिक लम्बा होता है, यद्यपि यह बात जितनी हितकर सावित हो सकती है उतनी ही अहितकर भी।

१५२. क. वायुयान-जनित बादलो मे प्रभामण्डल की घटनाएँ

कई वार प्रभामण्डल की घटनाएँ उन कृत्रिम अलका बादलो मे देखी गयी है जो कभी-कभी वायुयान के गुजरने पर उनके पीछे बन जाते है। विशेषतया कृत्रिम सूर्य तो अकमर चमकीले बनते है। किन्तु लघुवृत्त, क्षैतिज वृत्त, परिवृत्त-ऊर्ध्वबिन्दु चाप

तथा उप-सूर्य भी देखे गये है। इन तमाम प्रेक्षणो से यह स्पष्ट है कि इन बादलो मे बर्फ के क्रिस्टल ऊर्ध्व अनुस्थापन[1] की विशेष प्रवृत्ति प्रदर्शित करते है।

इन अलका बादलो मे तोप के गोले की विस्फोट तरगे वृत्तीय तरगिकाओ की शक्ल मे प्रसारित होती देखी गयी है। किन्तु वास्तव मे एक विलक्षण दृष्टान्त तो वह है जिसमे ये मटमैली तरङ्गे केवल क्षैतिज वृत्त के सहारे प्रसारित होती देखी गयी।[2] बरबस हमे यह मानना पडता है कि तरङ्ग के गमन के समय बर्फ के क्रिस्टल अपनी ऊर्ध्व अनुस्थापन की स्थिति से घूम जाते है।

१५३. आँख के निकट प्रभामंडल की घटना

सँकरी सडक से गुजरते हुए एक प्रेक्षक ने चन्द्रमा के गिर्द एक प्रभामण्डल देखा, किन्तु उसने विशेष बात यह देखी कि इस प्रभामण्डल का एक भाग एक मटमैली दीवार पर प्रक्षेपित हो रहा था, जो आकाश पर प्रक्षेपित होनवाले शेष भागो के साथ मिलकर पूरी आकृति बनाता था। हाथ से चन्द्रमा को ओट दे देने पर भी उसे प्रभामण्डल दीखता रहा था, अत यह स्वय आँखो के अन्दर निर्मित होनेवाली घटना नही हो सकती थी, बल्कि जाहिर है कि आँख और दीवार के दर्मियान, भूमि से कुछ ही गज की ऊँचाई पर बर्फ के क्रिस्टल उतरा रहे थे।

अत्यधिक ठड वाली शाम को (१७° फा०) रेलवे स्टेशन पर रेलगाडी के इजिन की भाप मे एक सुन्दर प्रभामण्डल की घटना देखी जा सकी थी। एक लैम्प के निकट जहाँ हर किसी दिशा मे भाप की फुहारे निकल रही थी, सिगार की शक्ल की रोशनी की सतह दिखाई दी थी जिसका एक सिरा आँख के पास था और दूसरा सिरा लैम्प के पास (चित्र १२९), इस सतह पर पडने वाले सभी नन्हे-नन्हे क्रिस्टल प्रकाशित हो उठे थे, किन्तु भीतर की जगह मे बिलकुल अन्धकार था। इस सतह के स्पर्शकीय शकु का शीर्ष कोण लगभग ४४° का था। उससे सहज ही स्पष्ट है कि सिगार की शक्ल की यह सतह उन सभी बिन्दुओ P का बिन्दुपथ है जो इस प्रकार चलते है कि रेखा EP तथा PL द्वारा क्रमश L तथा E पर बननेवाले कोणो का योग २२° हो।

इस प्रेक्षण का एक महत्त्वपूर्ण अग त्रिविमितीय प्रकृति है। ऐसा केवल इसलिए सम्भव हो पाता है कि प्रकाशस्रोत इतने निकट स्थित होता है और दोनो आँखे एक ही साथ पृथक्-पृथक् प्रकाश-बिन्दुओ का अवलोकन करके पिण्डदर्शन के सिद्धान्त द्वारा उनकी दूरियो का अन्दाज़ लगा लेती है।

1 Vertical orientation 2 Archenhold, Nat 154, 433, 1944

उसी सन्ध्या को, स्टेशन के एक अपेक्षाकृत अधिक शान्त कक्ष में यह देखा गया कि वहाँ लैम्पों द्वारा प्रकाश के 'क्रास' का निर्माण हो रहा था। यह घटना एक दम नयी नहीं है। रूस और कनाडा में जाड़े की ऋतु में दूर के लैम्पों के ऊपर प्रकाश के स्तम्भ अक्सर देखे जा सकते हैं जो वायु में उतराते हुए बर्फ़ के क्रिस्टलों से बने धुन्ध की उपस्थिति प्रमाणित करते हैं।
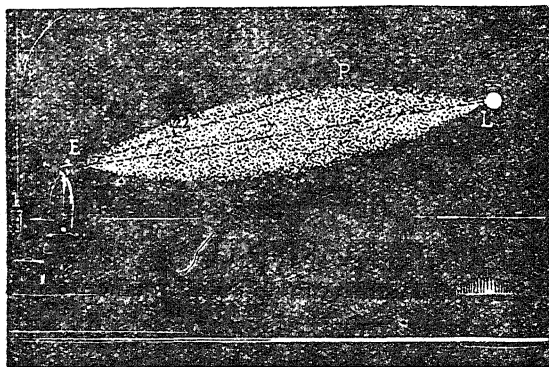
चित्र १२९—**एक लघु आभामण्डल (आँख के अत्यन्त निकट प्रेक्षित)**

लघु प्रभामण्डल, कृत्रिम सूर्य, ऊपरी स्पर्शकीय चाप और बृहत् प्रभामण्डल, कुछ अवसरों पर तेज़ी से चक्कर खाती हुई तुषार-राशि में देखे गये हैं।

यह विचित्र बात है कि इन परिस्थितियों में कृत्रिम सूर्य अकसर करीब-करीब बिलकुल ऊर्ध्व प्रकाश-स्तम्भ की शक्ल में देखे गये हैं जो इन्द्रधनुष के रंगों में विभूषित थे तथा कभी-कभी १५° की ऊंचाई तक पहुँचते थे। एक विशेष अवसर पर अधोसूर्य देखा गया था जो २२° वाले पूर्णवृत्त से परिवेष्टित था; सूर्य केवल ११° की ऊँचाई पर था और इस घटना का कुछ अंश दूरस्थ पर्वतों की पृष्ठभूमि के सन्मुख देखा गया था।[1]

१५४. धरती पर प्रभामण्डल की घटना

हम ओसधनुष के रूप में, इन्द्रधनुष को क्षैतिज तल पर प्रक्षेपित हुआ देख चुके हैं; उसी प्रकार ताज़ा गिरे हुए बर्फ़ पर हम कभी-कभी लघु तथा बृहद्वृत्त, अति परिवलय के चाप के रूप में देख सकते हैं (चित्र १३०), विशेषतया उस वक्त जबकि ताप असामान्य

1 Gabler Zeitschr f. Meteor, 8, 127, 1954

रूप से कम (१५° फा० या उससे भी कम) हो, और पाला-तुषार गिरने पर तो और भी अधिक बहुलता के साथ ये देखे जा सकते हैं।[1] इनका प्रेक्षण करने के लिए सूर्योदय के आध घण्टे या अधिक-से-अधिक एक घण्टे बाद, या सूर्यास्त के घण्टे आध घण्टे पहले इसे देखने का प्रयत्न करना चाहिए। दीप्ति पथ-रेखा नन्हे-नन्हे पृथक् क्रिस्टलो से बनी होती है जो अत्यन्त आश्चर्यजनक रगो से जगमगाते रहते है, ये रग अधिकाश लाल तथा भूरे-स्वर्णिम होते है, किन्तु प्रकाश्य रूप से ये रग हल्के ही रहते है। जब हम चलते है तो प्रकाश की यह घटना भी साथ-साथ चलती है।
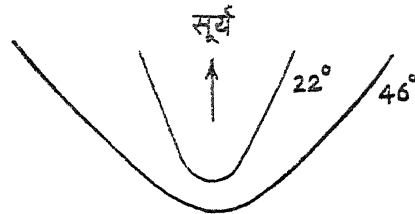
चित्र १३०—**लघु और बृहद् वृत्त जो ताजे गिरे हुए तुषार से ढकी भूमि पर अति परवलय के रूप में प्रगट होते हैं।**

सूर्य तथा आँख से, क्रिस्टल तक खीची गयी रेखाओ के दर्मियान का कोण सामान्य तरीको से नापा जा सकता है और तब आप देखेंगे कि प्रकाश-किरणे क्रम से २२° या ४६° के कोण पर वर्त्तित होती है। परिवर्द्धक लेन्स द्वारा क्रिस्टल की आकृति की जाच कीजिए और तब उस आकृति का रेखाचित्र बनाकर कोणो को नापिए।

कान्ति-चक्र (कोरोना)

१५५ तेल के धब्बो मे व्यतिकरण के रग

वर्षा की बौछार के बाद जमीन गीली हो जाती है तो सडक के काले ऐसफाल्ट की सतह पर हमे अक्सर रगीन धब्बे दिखलाई पडते है, ये धब्बे कभी-कभी तो २ फुट व्यास तक के होते है और ये रगीन, समकेन्द्रीय वृत्तो के बने होते है। यद्यपि आम तौर पर ये नीले-भूरे धब्बे-से होते है, किन्तु विशेष दिनो पर और कुछ खास सडको पर ये धब्बे अत्यन्त सुन्दर भी हो सकते है। स्पष्टत सडक से गुजरने वाली मोटरकारो से गिरे हुए तेल की बूंदो से ये बनते है, तेल की प्रत्येक बूंद अत्यन्त पतली परत के रूप मे फैल

1. Listing Ann d Phys 122, 161, 1864 Meyer Das Wetter 42 137, 1925

जाती है तथा इस परत की ऊपरी और निचली सतहो से परावर्तित होनेवाली किरणो के परस्पर मिलने से व्यतिकरण रग उत्पन्न होते है––दूसरे शब्दो मे सुविख्यात 'न्यूटन के वृत्त' बनते है जो साबुन की झाग के बबूले मे दीखने वाले बिलक्षण मनमोहक रगो के सदृश होते है। विज्ञान की साधारण पाठ्य पुस्तको मे इनका समाधान मिल जायगा, किन्तु मै इस बात की ओर आप का ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगा कि यहाँ पर स्वय आँखो के सामने हमे प्रकाश की तरग-प्रकृति का प्रमाण देखने को मिलता है।

निम्नलिखित सारणी मे धब्बे के बाहरी हाशिये से लेकर क्रमश भीतर की ओर केन्द्र तक के रग गिनाये गये है––परत की मोटाई μ (१/१००० मिलीमीटर) मे व्यक्त की गयी है।

I		II	
रग	परत की मोटाई μ मे	रग	परत की मोटाई μ मे
काला	०	बैंगनी	० १९०
पीला–भूरा	० ०८०	नीला	० २२१
बादामी–पीला	० ११५	हरा	० २७०
लाल	० १७०	पीला	० ३०५
——		लाल	० ३४०
III		IV	
बैंगनी	० ३८५	भूरा–नीला	० ५९५
नीला	० ४००	हरा	० ६५५
हरा	० ४५५	बादामी (गेहुआ रग)	० ६९५
पीला	० ५०५	V	
बादामी (गेहुआ रग)	० ५२५	पीला नीला–हरा	० ८२०

अत तेल की परते हाशिये पर सबसे अधिक पतली होती है और केन्द्र की ओर उनकी मोटाई बढती जाती है। कभी-कभी तो केन्द्र पर भी उनकी मोटाई केवल इतनी ही बढ पाती है कि बस रगो के क्रम के द्वितीय सोपान ही प्राप्त हो पाते है और कभी मोटाई इतनी अधिक होती है कि सारणी मे बतलाये गये तमाम रगो के बाद गुलाबी और हरे रग एक के बाद दूसरे कई बार आते है और वे निरन्तर हलके पीले पडते जाते है, यहाँ तक कि अन्त मे वे 'उच्चतर क्रम के श्वेत रग' मे परिवर्तित हो जाते है और तब उस दशा मे बीच मे कोई वृत्त नही दीखते।

[illegible] और तब तेल की परत की अनुप्रस्थ[1] काट का रेखाचित्र पैमाने के अनुसार बनाइए। यदि आप दस मिनट बाद इस क्रिया को दुहराएं तो आप पायेंगे कि तेल का यह नन्हा-सा स्तूप अब पिचक कर और फैल गया है। किसी एक निश्चित रग के वृत्त का निरीक्षण इस दृष्टि
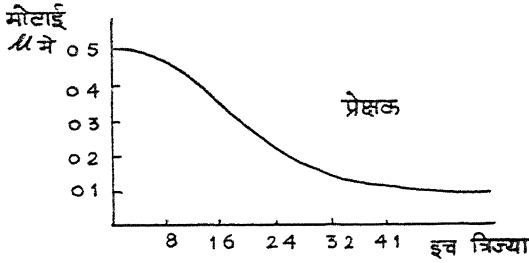
चित्र १३१—**भीगे ऐसफाल्ट पर पानी की बूंद की अनुच्छेद माप (व्यतिकरण रंगो द्वारा निर्धारित)।**

से कीजिए कि समय के हिसाब से इसकी आकृति कैसे बदलती है, तब आप देखेंगे कि यह वृत्त पहले तो फैलता है, फिर सिकुडता है। ऐसा क्यो? और अन्त मे बस आप एक भूरा धब्बा देखते है जिसकी उत्पत्ति के कारण का आपको कभी भी पता नही चलता यदि आपने इसके निर्माण की इन क्रियाओ का प्रेक्षण न किया होता। सबसे बढिया तरीका तो यह है कि खडे होकर किसी एक धब्बे का अवलोकन करे और इसके हर एक परिवर्तन का नाप करे। इसके लिए कुछ अधिक धैर्य्य की आवश्यकता नही होगी, कदाचित् आध घटे से अधिक समय न लगेगा। धब्बे को सायकिल वालो तथा पैदल चलने वालो से बचाइए और इस बात के लिए प्रार्थना कीजिए कि इसके जीवन-काल तक कोई मोटरकार इस पर से न गुजर जाय!

तेल के धब्बे को तिरछी दिशा से देखिए तो रगो की स्थितियाँ बदल जाती है मानो तेल की परत अब पतली हो गयी है। क्योंकि यदि आप इसे और अधिक तिरछी दिशा से देखे तो ये रगीन वृत्त सिकुडे हुए प्रतीत होते है। इस प्रकार किसी एक स्थल के रग, बाहरी, बारीक परतवाले वृत्त के रग मे तबदील हो जाते है। व्यतिकरण करने

1 Transverse

वाली दोनो किरणो के कला-अन्तर[1] की गणना करके इस बात की व्याख्या करने का प्रयास कीजिए ।

तेल की परत को एक छोटा बालक उगली से थपथपाता है तो रग वदलने लगते है, किन्तु फिर तेजी के साथ ये अपनी पूर्वावस्था पुन प्राप्त कर लेते है, इस बार वृत्त कुछ छोटे हो जाते है क्योकि उगली के साथ तेल का कुछ अश अब वहाँ से हट गया है ।

कभी-कभी सुडौल आकृति के दुहरे धब्बे भी दीखते है जो स्पष्टत एक ही धब्बे के भाग होते है । इसमे रहस्य की कोई बात नही है, ये एक सामान्य धब्बे के भाग है जिस पर से मोटर कार का पहिया गुजर चुका होता है ।

हमे तो उस वक्त तक पूर्ण सन्तोप नही प्राप्त होगा जव तक हम स्वय रगीन वृत्त नही वना लेते । तालाब के पानी पर मिट्टी के तेल या तारपीन की एक बूँद को डाल देने पर अवर्णनीय सुन्दर रग उत्पन्न होते है । किन्तु इस प्रयोग के लिए यदि हम मोटर-कार मे काम आने वाले **तेल (मोबिल आयल)** का उपयोग करे तो हमे एक आश्चर्य-जनक वात प्राप्त होगी । यह तेल पतली परत के रूप मे फैलता नही है, और हमे रग आदि कुछ भी नही दिखाई पडते । पानी की सतह की भाँति ही भीगी सडक का भी हाल होता है । तो क्या सडक पर वनने वाले रगीन धब्बे मोटर के तेल के कारण न उत्पन्न होकर सम्भवत पेट्रोल के कारण वनते है ? लेकिन इसमे भी हमे निराश ही होना पडता है, क्योकि पेट्रोल तो केवल भूरे सफेद रग का धब्बा पैदा करता है जो स्पष्ट अत्यन्त ही पतली परत का होता है और रगीन शानदार वृत्तो से इसका कोई सादृश्य नही होता । अधिक वारीकी से निरीक्षण करने पर पता चलता है कि केवल **इस्तेमाल किया हुआ, आक्सीकृत** तेल ही जो मोटर के इजिन से नीचे टपकता रहता है, गीली सतह पर परत के रूप मे फैलने की सामर्थ्य रखता है ।[2] तेल का आक्सीकरण जितना अधिक परिपूर्ण होगा, उतनी ही पतली परत उससे तैय्यार होगी ।

तेल के अधिकाश धब्बो मे त्रिज्यीय पट्टियाँ-सी दीखती है । प्रत्येक रगीन वृत्त बाद के वृत्त मे मिलता है तो एक तरह की धारियाँ वहाँ बन जाती है, और सबसे बाहर का श्वेत-भूरा वृत्त भी इसी प्रकार धारियो के रूप मे समाप्त होता है । गीली सडक पर पेट्रोल उडेल कर हम देख सकते है कि इससे बनने वाला धब्बा किस प्रकार फैलता तथा किस प्रकार हर दिशा मे इसकी शाखाएँ बन जाती है जो त्रिज्यीय पट्टियो और धारियो का निर्माण करती है । गन्दे पानी पर तैरती हुई रगीन परत मे भी यही

1. Phase-difference 2 K B Blodget J. O S A, **24**, 313,1934

घटना प्राय देखी जा सकती है। सम्भव है कि इस दशा मे जटिल आणविक बल कार्य कर रहे हो।

जहाँ कही भी पतली परते बनती है, वही व्यतिकरण के रग मौजूद होते है उदाहरण के लिए केरासन या तारपीन की पतली सतहे जो पानी पर तैरती रहती है, एक ही रग वाली रेखा निश्चित मोटाई की दिशा इङ्गित करती है और इन रेखाओ की विकृति तथा विरूपण उस द्रव की तमाम धाराओ और भँवर आदि का पता हमे देते है। रेलगाडी के इजिनो की चिमनी की ताँबे की दागवाली सतह पर कभी-कभी मनमोहक रग देखे जा सकते है। क्या ऐसा इस कारण होता है कि तावा गर्म होने के बाद आक्सीकृत हो गया है? या कि इस कारण कि वायुमण्डल तथा प्रज्वलन की गैसो मे से सल्फाइड की कोई एक तह-सी चिमनी पर जम जाती है?

१५६ खिडकी के बर्फ जमे हुए काँच पर शानदार रगो की छटा

एक बार मैने निम्नलिखित विचित्र घटना का प्रेक्षण किया था। जाडे की अत्यन्त ठण्डी रात थी (ताप १४° फा०), और रेलगाडी के जिस कम्पार्टमेण्ट मे मै बैठा था वहाँ मेरे सहयात्रियो की श्वास से निकलने वाली भाप पानी बनकर खिडकी पर बर्फ के रूप मे जमने लगी थी। अचानक ही मैने देखा कि रास्ते मे लगा प्रत्येक लैम्प जिसके सामने से होकर हम गुजरते थे, अद्भुत रगो का प्रदर्शन करता था, जमी हुई बर्फ की पतली तह का रग आसमानी नीला था और अन्य भागो का हरा या लाल। लगभग एकवर्ग सेण्टीमीटर के क्षेत्र तक ये रग करीब-करीब एक से ही बने रहते और ये सभी रग केवल खिडकी से गुजरने वाले प्रकाश मे दीखते थे, उसमे परावर्तित होने वाले प्रकाश मे नही। ये रग इतने कमनीय तथा सपृक्त थे कि तुरन्त इस बात का आभास हो सका कि यह एक अत्यन्त ही विलक्षण घटना थी! यह घटना कुछ ही मिनटो तक रही थी, तब तक बर्फ की तह कई मिलीमीटर मोटी हो गयी तथा रग विलुप्त हो गये।

अब इसके बाद मुझे पता चला है कि इस प्रकार की घटना का विवरण दिया जा चुका है[1] तथा उन चन्द मिनटो मे मेरे प्रेक्षण के लिए जितना सम्भव था उसमे कही अधिक विस्तार का समावेश उस विवरण मे दिया गया है। मैने यह भी पाया कि ५° से० ग्रेड (१४° फा०) से नीचे के ताप पर, घर मे बाहर काच के टुकडे को थोडी

1 Observed by Ch F Brooks, M W R 53, 49, 1925 and by Schlottmann Met. Zs. 10, 156 1893

देर तक छोड दे ताकि इनका ताप भी उतना ही हो जाय जितना बाहर की हवा का और तब कुछ दूरी पर खडे होकर इस कॉच पर फूँक मारे तो उक्त प्रेक्षण की, हम जितनी बार चाहे उतनी बार, पुनरावृत्ति कर सकते है। यदि खिडकी के अत्यन्त ठण्डे कॉच पर अपनी श्वास आप छोडे तो ऐसा जान पडता है कि आप की श्वास की भाप पहले एक छोटे अर्द्ध गोले की शक्ल के बर्फ के टुकडो के रूप मे जमती है (क), फिर लगभग आधे मिनट बाद इस तह मे नन्ही दरारे-सी फट जाती है और बर्फ के जर्रे नन्हे-नन्हे समूहो मे एकत्र हो जाते है (ख), यहाँ तक कि अन्त मे ये लम्बी सुइयो की शक्ल धारण कर लेते है जिनके दर्मियान पारदर्शी बर्फ देखी जा सकती है। इनमे से केवल दशा (ख) मे ही रग प्रगट होते है और यही कारण है कि इनका जीवनकाल इतना थोडा होता है। एक और लाक्षणिक विशिष्टता यह है कि प्रेक्षित लैम्प या प्रकाश-स्रोत स्वय रगीन जान पडता है। और जबकि आप श्वास छोड रहे हो, यह क्रमश नीललोहित, नीला, हरा, पीला आदि रग प्रदर्शित करता है, अर्थात् न्यूटन के व्यतिकरण के सभी रग। प्रकाश-स्रोत के गिर्द लगभग १° त्रिज्या का एक चमकीला कान्ति वृत्त प्रगट होता है जिसमे पूरक रग प्रदर्शित होते है—कदाचित् इसकी त्रिज्या धीरे-धीरे बढती जाती है। यह सर्वाधिक स्पष्ट उस वक्त दीखता है जब एक क्षण के लिए श्वास छोडने की क्रिया को रोक कर आप प्लेट को ऑख के अत्यन्त निकट रखते है। दिन के समय कदाचित् हिमाच्छादित चमकीली छत को गुलाबी रग का आप देख सकेगे और इर्द-गिर्द का अदीप्त भू-दृश्य हरा दीखेगा। विस्तृत क्षेत्र, जैसे चमकीला आकाश, अवश्य ही अपना रग नही बदलता क्योकि जिस किसी ओर हम दृष्टि डालते है हम रगीन 'प्रकाश-स्रोत' को देखते है जिस पर इर्द-गिर्द के क्षेत्र का विस्तृत अनुपूरक रग अध्यारोपित रहता है। यदि कॉच की प्लेट को तिरछी करे तो रग बदल जाते है मानो प्लेट की तह मोटी हो गयी हो।

प्रकाश्यत हमे मानना होगा कि प्लेट पर उपस्थित तह बर्फ और वायु के सम्मिश्रण से बनी है[1]। प्रकाशस्रोत से आनेवाली किरणो मे से कुछ वायु मे से गुजरती है और कुछ बर्फ मे से, इन दोनो किरण-समूहो मे कला-अन्तर[2] मौजूद होता है। अत कुछ विशेष तरग-दैर्घ्य वाले प्रकाश तरगो का शमन हो जाता है और प्रकाशस्रोत रगीन वर्ण का दीखने लगता है (चित्र १३१ क)। किन्तु सम्मिश्रण के बिन्दु-स्थलो के

1 This explanation reduces the phenomenon to a case of "colours of mixed plates" as described by Wood in his Physical Optics

2 Phase-diffrence

हाशियो पर प्रकाश का विवर्त्तन भी होता है, अत इस प्रकार उत्पन्न होने वाला पथान्तर[1] प्रथम क्रिया मे उत्पन्न हुए कला-अन्तर की ठीक ठीक क्षतिपूर्त्ति कर देता है। अत सीधे आने वाली किरणो का जो रग विलुप्त होता है वही तिर्यक् किरणो मे पुन प्रगट होता है। आकार की कोटि के लिए हमे मानना होगा कि तह की मोटाई १ μ होती है तथा कण एक दूसरे से ० १ मिलीमीटर की औसत दूरी पर स्थित है।
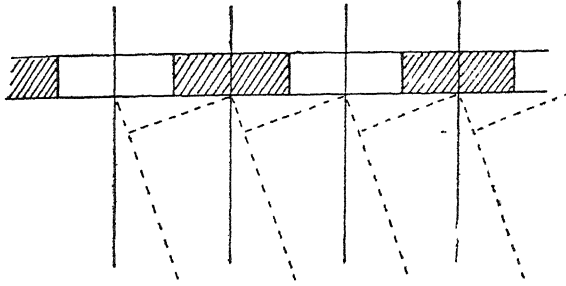
चित्र १३१ क—**हलकी बर्फ की तहवाली काँच की प्लेट में से देखने पर रंग की उत्पत्ति।**

अब आप समझ सकते है कि प्लेट को आँख से कुछ फासले पर रखने पर क्यो इसका प्रत्येक भाग एक यथार्थ, निश्चित रग प्रदर्शित करता है—किन्तु ऐसा केवल तभी होता है जब प्रकाशस्रोत से इसे एक भलीभाँति निर्धारित कोणीय दूरी पर रखे। यह भी एक रोचक बात है कि अत्यधिक चमक वाले प्रकाश-स्रोत एक हलके विषम[2] कान्तिचक्र से परिवेष्टित दीखते है बशर्त्ते काँच की प्लेट को आप आँख के निकट रखे।

आप जबकि प्रेक्षण कर रहे होते है और उस पर विचार कर रहे होते है, उतनी देर मे सम्भवत बर्फ की तह का वाष्पीभवन (ऊर्ध्वपातन[3]) हो जाता है। अब आप जितनी बार चाहे, प्रयोग को दुहरा सकते है, किन्तु काँच को पहले ही पोछ कर साफ करने का प्रयत्न मत कीजिए। यह अनावश्यक कार्य होगा और नवीन सघनन की क्रिया मे यह बाधक होगा।

कुछ कम ठण्डे ताप पर काँच की प्लेट पर जमनेवाली भाप सुपरिचित विवर्त्तन कान्तिचक्र प्रदर्शित कर सकती है, यद्यपि अक्सर रगो का क्रम विषम होता है, जैसा उस वक्त देखा जा सकता है जबकि सघनित जल-बूँदे बडे आकार की होती है (§१६२)।

1 Path-difference 2 Aonmalous 3 Sublimation

१५७ लौहमिश्रित पानी मे व्यतिकरण के रंग

हीद झाडीवाले मैदानो मे जहाँ की मिट्टी लौहमिश्रित रहती है, खाइयो के भूरे रग के पानी की सतह कभी-कभी एक पतली उद्दीप्त परत से ढकी होती हैं—इसके फीके रग मोती के सीप के रग सदृश होते है। पानी मे मौजूद लौह-आक्साइड के कलिल[1] विलयन के कारण ये उत्पन्न होते है जिसमे लौह-ऑक्साइड के कण छोटी-छोटी समान्तर प्लेटो के रूप मे अपने को सजा लेते है जिनके बीच लगभग $\frac{१}{४}$ μ की दूरी होती है और इस तरह की परतदार झिल्ली बहुत कुछ 'लिपमैन की रगीन फोटोग्राफी' की पद्धति के अनुसार काम करती है।

१५८. प्रकाश का विवर्त्तन

रात का समय है। कुछ फासले पर अन्धकार को चीरती हुई घरघराहट के साथ एक मोटरकार हमारी ओर आ रही है और इसकी 'हेडलाइट' के लैम्प चौडी सडक पर चकाचौध उत्पन्न करनेवाला तेज प्रकाश फेकते है। एक सायकिल सवार इस तेज रोशनी के सामने से गुजरता है ताकि एक क्षण के लिए हम उसकी छाया मे आ जाते है। और तभी अचानक सायकिल सवार की काली सिल्युएत[2] एक अद्भुत मनोहर प्रकाश से चारो ओर से मण्डित दीखती है, यह प्रकाश इस आकृति के हाशियो से विकिरित होता हुआ जान पडता है। वृक्षो तथा पैदल चलनेवाले व्यक्तियो के गिर्द भी यही प्रभाव देखा जा सकता है। यह वस्तुत 'विवर्त्तन प्रभाव' है। 'विवर्त्तन' नाम उस प्रभाव को दिया गया जिसके अनुसार किसी अपारदर्शी पर्दे के हाशिये पर प्रकाश किरण मुडती है और इस तरह ज्यामितीय प्रकाश-सिद्धान्त से जहाँ छाया होनी चाहिए उस प्रदेश मे तरगाग्र का कुछ भाग प्रवेश कर जाता है। यदि विचलन कोण कम ही हो तो इस तरह मुडने वाला प्रकाश पर्याप्त तीव्र होता है, किन्तु विचलन कोण का मान बढने पर विर्वात्तित-प्रकाश तेजी के साथ घटता है, इसी कारण जब सायकिल सवार काफी फासले पर होता है और मोटरकार उससे आगे बहुत अधिक दूरी पर होती है तो प्रकाश का प्रभाव इतना अधिक सुन्दर होता है।

इसी प्रकार की घटना अधिक बडे पैमाने पर पर्वतीय देशो मे उस वक्त देखी जा सकती है जब वायु स्वच्छ हो और आप किसी पहाडी की साया मे खडे होकर उसके वृक्ष-आच्छादित ऊपरी भाग को प्रात कालीन आकाश की पृष्ठभूमि के सम्मुख एक काली

1 Colloidal 2 Silhouette

रेखाकृति की शक्ल मे देखते है। सूर्य जब उगने को होता है तो वे वृक्ष जो आकाश के उस भाग के सामने पडते है जहाँ प्रकाश अधिकतम होता है, एक चमकीले रजत-श्वेत प्रदीप्ति से परिवेष्टित हो जाते है।[1]

कहा जाता है कि हमारे देश मे भटकटैया[2] झाडियाँ सूर्य की पृष्ठभूमि पर देखी जाने पर इसी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती है।

१५९ नन्ही खरोचो द्वारा प्रकाश का विवर्त्तन

रेलगाडी की खिडकी मे से यदि आप सूर्य को देखे तो आपको कॉच पर हजारो बारीक खरोचे दिखलाई देगी जो सूर्य के गिर्द समकेन्द्रीय वृत्तो मे अवस्थित होती है। कॉच के जिस किसी भी भाग से हम देखे, इन खरोचो की आकृति सदैव एक-सी ही रहती है जिससे हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि कॉच की **तमाम सतह** पर **हर दिशा** मे खरोचे
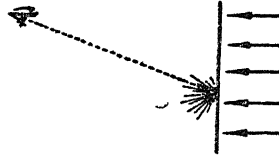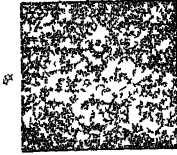
चित्र १३२—**खिड़की के कॉच पर बनी हुई खरोच द्वारा प्रकाश का विवर्तन।**

पडी हुई है, यद्यपि हम केवल उन्ही को देख पाते है जो प्रकाशकिरणो के आपतन धरातल के समकोण पडते है (देखिए § २७)। क्योकि प्रत्येक खरोच, प्रकाश का विस्तरण अपनी समकोण दिशा मे करती है, अत केवल इस धरातल मे स्थित प्रेक्षक को ही यह दृष्टिगोचर हो पाती है।

जहाँ तक इतनी बारीक खरोचो का सम्बन्ध है, हम परावर्त्तन या वर्त्तन का उल्लेख नही कर सकते, और अच्छा यही होगा कि इस दशा मे प्रकाश-किरणो के विचलन को हम विवर्त्तन माने। यदि आप इनमे से किसी एक खरोच का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करे तो आप देखेगे कि कुछ विशिष्ट दिशाओ मे यह अत्यधिक शानदार रगो का हर सम्भव क्रमो मे प्रदर्शन करता है। यदि आप एक 'निकल' का उपयोग करे तो आप पायेगे

1 This phenomenon, superficially observed by Folie, was at that time a matter of much discussion It can be found in Rep. Brit Ass 42, 45, 1872, later in Nat 47, 364, 2 Furze

कि आपतन तथा प्रेक्षण की दिशाएँ तिरछी रखने पर प्रेक्षित प्रकाश अत्यधिक मात्रा मे ध्रुवित होता है। ये सभी घटनाएँ अत्यन्त जटिल होती हे और सैद्धान्तिक भौतिकी द्वारा केवल आशिक रूप से ही इनका समाधान हो पाता है।[१]

१६० कान्तिचक्र (कोरोना)

श्वेतरग के हलके रुई के गाले-जैसे बादल चन्द्रमा के सामने से आहिस्ते-आहिस्ते गुजरते है। हमारे नेत्र आकाश के इस प्रकाशित भाग की ओर अनायास ही आकृष्ट हो जाते है जो रात्रि के भू-दृश्य का केन्द्र-सा जान पडता है। हर बार, जब कोई छोटा बादल का टुकडा सामने आता है, तो हलकी रोशनी से चमकने वाले चन्द्रमा के गिर्द रग-बिरगे प्रकाश के वृत्त हमे दिखलाई पडते है—इनके व्यास चन्द्रमा के व्यास से कुछ ही गुने बडे होते है।

आइए, इन रङ्गो के क्रम की हम ध्यानपूर्वक जाँच करे। चन्द्रमा के निकटतम नीले रङ्ग का हाशिया होता है जो बाहर की ओर पीत-श्वेत वर्ण धारण कर लेता है और फिर यह रङ्ग भी बाहरी हाशिये पर भूरे रग मे परिणत हो जाता है। यह **आभामण्डल**[२] (आरियोल) ही कान्तिचक्र का सरलतम रूप और यही रूप सर्वाधिक अवसरो पर दृष्टि-गोचर होता है। यह उस वक्त वास्तव मे चित्ताकर्षक दीखता है जब यह अन्य बृहत्तर और मनोहर रगो के वृत्तो से परिवेष्टित होता है। निम्नलिखित सारणी से देखा जा सकता है कि ये क्रम करीब-करीब ठीक न्यूटन के व्यतिकरण वृत्तो के रगक्रम सरीखे ही है, अन्तर केवल इतना है कि ऋतुवैज्ञानिको ने विभिन्न 'कोटियो' की सीमाओ को भौतिक शास्त्रियो से तनिक भिन्न प्रणाली पर निर्धारित किया है, वह इस प्रकार कि प्रत्येक कोटि का रगसमुदाय लाल रग के वृत्त पर खत्म हो। अत्यन्त दुर्लभ अवसरो पर आभामण्डल के बाहर तीन रग-समुदाय देखे गये है (चार रगीन वृत्तो का कान्तिचक्र)।

I प्रभामण्डल या (नीलापन लिये हुए)—श्वेत—(पीलापन लिये हुए) —भूरामिश्रित लाल।

II नीला—हरा—(पीला)—लाल।

III नीला—हरा—लाल।

IV नीला—हरा—लाल।

करीब-करीब निश्चित रूप से यह प्रतीत होता है कि रगो के क्रम मे कभी-कभी परिवर्त्तन होता है। उपर्युक्त सारणी मे कोष्ठक मे दिये गये रग कभी तो उपस्थित हो

1. Rayleigh, Phil Mag 14, 350, 1907, Papers v, 410　2 Aureole

जाते है, कभी अनुपस्थित। कान्तिचक्र के रगो के इस परिवर्त्तन की जाँच करते समय चन्द्रमा की कला को भी ध्यान मे रखना चाहिए, क्योकि इसकी वजह से विवर्त्तन का प्रारूप कभी अधिक धुँधला, कभी कम धुँधला हो जाता है।

कातिचक्र की त्रिज्या नापने का सबसे बढिया तरीका है कि लाल रग के वृत्त से, जहाँ रग-समुदाय की प्रत्येक कोटि समाप्त होती है, माप आरम्भ की जाय क्योकि यही रग सर्वाधिक चटकीला होता है और तब कातिचक्र के आकार की तुलना चन्द्रमा के व्यास (३२′) से करनी चाहिए। कातिचक्र का आकार पर्य्याप्त मात्रा मे बदलता रहता है, उदाहरण के लिए आभामण्डल के भरे होशिये के वृत्त की त्रिज्या कभी-कभी केवल १° भर हो सकती है जबकि अन्य अवसरो पर यह ५° तक होती है। इस त्रिज्या की न्यूनतम माप, जिसका प्रेक्षण किया जा सका है, १०′ तथा महत्तम मान १३° था।

सूर्य के गिर्द कान्तिचक्र बहुतायत से देखे जा सकते है या कम-से-कम उतनी बार तो अवश्य ही, जितनी बार चन्द्रमा के गिर्द वे दिखलाई देते है। किन्तु सूर्य के गिर्द बनने वाले कान्तिचक्र पर हमारा ध्यान उतनी बहुतायत से नही जा पाता, क्योकि स्वभावत. उसकी चकाचौध पैदा करनेवाली रोशनी की ओर देखने से हम बचना चाहते है। फिर भी सूर्य की तीव्र प्रदीप्ति के कारण उस आकाशीय पिण्ड के गिर्द बनने वाले कान्तिचक्र प्राय सर्वोत्तम होते है।

निम्नलिखित सुझावो को बरतने से प्रेक्षण मे विशेष सुविधा हो सकती है—

(क) स्थिर शान्त पानी मे सूर्य के प्रतिबिम्ब का प्रेक्षण कीजिए, इसी रीति से न्यूटन ने सूर्य के गिर्द बनने वाले कान्तिचक्र का सुविख्यात प्रेक्षण प्राप्त किया था।

(ख) काले रग के पालिश किये हुए सगमर्मर पत्थर का उपयोग एक साधारण दर्पण की तरह कीजिए, या सधान (वेल्ड) करनेवाले मिस्त्री के उपयोग मे आनेवाले काले रग के चश्मे को काम मे लाइए अथवा कॉच के साधारण टुकडे के पीछे काली वार्निश लगाकर उसे ही दर्पण की तरह इस्तेमाल कीजिए। इन प्लेटो को ऑख के निकट रखना चाहिए ताकि एक विस्तृत दृष्टिक्षेत्र का सर्वेक्षण कर सके।

(ग) सगमर्मर के पहिया या सधान करनेवाले मिस्त्री के चश्मे को लीजिए जो इतना पारदर्शी हो कि आप बिना चकाचौध का अनुभव किये ही सूर्य का प्रेक्षण उसमे से कर सके।

(घ) इस बात का ध्यान रखिए कि सूर्य छत के हाशिये की आड मे छिप जाय।

(ङ) कुछ गजो के फासले पर रखे हुए वाटिका ग्लोब मे इस तरह प्रेक्षण कीजिए कि सूर्य का प्रतिबिम्ब आपके सिर के कारण विलुप्त हो जाय ।

आभामण्डल लगभग हर किस्म के बादलो मे हलका-हलका दृष्टिगोचर होता है । उच्च-पुञ्ज या स्तार-पुञ्ज मेघ मे यह विशेष चटकीला होता है और तब प्राय द्वितीय रगीन वृत्त का भी हलका आभास मिलता है । सर्वाधिक सुन्दर कान्तिचक्र जिनके रग मनमोहक रूप से विशुद्ध होते है, उच्चपुञ्ज बादलो मे मिलते है, ये अलका-पुञ्ज मेघ मे भी मिलते है । कभी-कभी छोटे आकार के, मन्द प्रकाशवाले कान्तिचक्र शुक्र, बृहस्पति तथा अधिक चमकीले सितारो के गिर्द भी दिखलाई देते है ।

१६१ कान्तिचक्र की घटना का समाधान[1]

बादलो मे दीखने वाले कान्तिचक्र का निर्माण बादल मे मौजूद पानी की बूँदो द्वारा प्रकाश के विवर्त्तन के कारण होता है । बूँदे जितनी छोटी होगी, कान्तिचक्र उतने ही बडे होगे । उन बादलो मे जिनमे बूँदे सब की सब एक ही आकार की हो, कान्तिचक्र पूर्णरूप से विकसित होते है और उनके रग विशुद्ध होते है, किन्तु उन बादलो मे जिनमे हर आकार की बूँदे परस्पर मिली-जुली रहती है, विभिन्न आकारो के कान्तिचक्र एक साथ ही बनते है और वे एक-दूसरे के ऊपर पडते है। यही कारण है कि शुद्ध रूप से विकसित कान्तिचक्र की घटना केवल विशिष्ट जाति के बादलो मे ही पायी जाती है जहाँ जलवाष्प के सघनन के लिए परिस्थितियाँ पर्याप्त रूप से समान होती है । इसी कारण रगो के क्रम के सूक्ष्म अन्तर विभिन्न आकार की बूँदो की सख्या, बादलो की मोटाई आदि पर निर्भर करते है ।

सैद्धान्तिक विवेचन की सामान्य तर्क प्रणाली इस प्रकार है—

(क) एक ही आकार की बूँदो वाले, सामान्य रूप से घने बादल द्वारा विवर्त्तन यथार्थत वैसा ही होता है जैसा अकेली एक बूँद द्वारा होनेवाला विवर्त्तन, बादल की दशा मे विवर्त्तित प्रकाश की केवल तीव्रता अधिक होती है ।

(ख) बूँद द्वारा उत्पन्न विवर्त्तन ठीक वैसा ही होता है जैसा पर्दे मे बने एक नन्हे छिद्र द्वारा होनेवाला विवर्त्तन (बेबिनेट का सिद्धान्त) ।

(ग) छिद्र द्वारा उत्पन्न होनेवाले विवर्त्तन की गणना करने के लिए छिद्र को हम कम्पनो का उद्गमस्थान मानते है (हाइजिन्स का सिद्धान्त), और तब

1 G C Simpson, Quart Journ **38**, 291, 1912, Ch F Brooks, M. W R, **53**, 49, 1925, Kohler, Met Zs, **40**, 257, 1923

हम ज्ञात करते है कि छिद्र के सभी भागो से तरगे किस प्रकार नेत्र मे प्रवेश करती है, तथा परस्पर व्यतिकरण करती है।

कान्तिचक्र तथा वृत्ताकार छिद्र के विवर्त्तन-प्रतिबिम्व के वीच के सादृश्य का प्रेक्षण करना एक बिल्कुल आसान बात है। खिडकी के सामने जिस पर धूप पड रही हो, एक कार्डबोर्ड का पर्दा लटकाइए जिसके बीच मे एक छिद्र बना हो, किन्तु छिद्र को चाँदी के वर्क से ढका होना चाहिए जो कार्डबोर्ड पर चिपकाया गया हो। चाँदी के वर्क मे सुई से नन्हा सूराख कीजिए और तब लगभग १ गज की दूरी से सूर्य की दिशा मे इस चमकीले प्रकाशबिन्दु को देखिए जवकि अपनी आँखो के सामने उसी प्रकार का एक और चाँदी का वर्क रखा हो, और इसमे भी सुई की नोक से छिद्र बना हो। ये सूराख बारीक से बारीक सुई द्वारा वने होने चाहिए और सूराख करते समय उँगलियो के दर्मियान सुई को इधर-उधर फिराते रहना चाहिए, स्वय ये सूराख व्यास मे ० ५ मि० मीटर से अधिक नही होने चाहिए। यह नन्हा सूराख जिसका अवलोकन आप कर रहे है, फैलकर एक मडलक-जैसा प्रतीत होगा जो एक छोटे पैमाने का आभामण्डल (आरिएल) है, और इस मडलक के गिर्द आप वृत्तो के समुदाय देखेगे जो कान्तिचक्र के भिन्न क्रमागत कोटियो के तुल्य है। आँख के सामने का छिद्र जितना ही अधिक बारीक होगा, विवर्त्तन प्रतिरूप उतना ही अधिक बडा होगा।

क्रमागत महत्तम तथा निम्नतम प्रदीप्तियो की हर माने मे तुलना एक आयताकार झिरी पर होनेवाले विवर्त्तन से की जा सकती है, केवल इस दशा मे इनके दर्मियान की दूरियाँ भिन्न होती है। आभामण्डल के सबसे वाहरी हाशिये के लाल रग तथा प्रथम कोटि के लाल रग, क्रमश कोणीय दूरियो $\delta = \frac{0\ 00070}{2}$ तथा $\frac{0\ 00127}{2}$ पर पडते है, (2=सूराख का व्यास मिलीमीटर मे, तथा δ=कोणीय दूरी जो केन्द्र से नापी गयी है)।

अत कान्तिचक्र से हम गणना कर सकते है कि बादल की बूँदे कितनी बडी है। यदि चन्द्रमा के गिर्द आभामण्डल की त्रिज्या स्वय चन्द्रमा के व्यास की चार गुनी है अर्थात् $\frac{४}{१०८}$ रेडियन, तव बादल ऐसी बूँदो के वने होगे जिनके व्यास $\frac{१०८}{४}$ ×० ०००७०=० ०१९ मिलीमीटर है। यह गणना पूर्णतया सही नही है क्योकि सूर्य या चन्द्रमा केवल विन्दुमात्र नही है, बल्कि उनकी त्रिज्या १६′ है। अत सबसे बाहर के हाशिये का मान स्पष्टत विशेप अधिक प्राप्त होता है और इसी कारण प्राय

प्रेक्षित कोण δ के मान मे से इस १६$'$ को हम घटाने के वाद ही इसे उपर्युक्त सूत्र मे प्रयुक्त करते है, किन्तु यह अत्यन्त सदेहात्मक है कि ऐसा करना उचित भी है या नही। परिणाम-स्वरूप आप पायेगे कि बादल की बूँदो का आकार ० १ से लेकर ० २ मिलीमीटर तक प्राप्त होता है। यह सम्भाव्य है कि समान मोटाई की **बर्फ-सूचियो** वाले बादलो से भी कान्तिचक्र का निर्माण हो सके—ये **बर्फ-सूचियाँ** प्रकाश का विवर्त्तन उसी भाँति करती है जिस भाँति एक झिरी, क्योकि पूर्ण विकास पाये हुए तथा सर्वोत्तम रगो वाले कान्तिचक्र यदा-कदा पतले, ऊँचे अलका मेघो मे देखे जाते है और ये बादल बर्फ-सूचियो से बने होते है।

फिर तो बर्फ-सूचियो की मोटाई की गणना उतनी ही आसानी से की जा सकती है जितनी आसानी से पानी की बूँदो के आकार की। ऊपर बताये गये कान्तिचक्र मे जिसके भूरे हाशिये की त्रिज्या चन्द्रमा के व्यास की चार गुनी है, बर्फ-सूचियो की

मोटाई $\frac{०\ ०६२}{४}$=० ०१५ मिलीमीटर प्राप्त होती है।

कान्तिचक्र के प्रेक्षण के समय यह कह सकना अत्यन्त कठिन होता है कि इसका निर्माण पानी की बूँदो से हुआ है या बर्फ-सूचियो से। बर्फ-सूचियो से बनने वाले कान्तिचक्र मे क्रमागत अदीप्तियो[1] के दर्मियान की दूरियाँ ठीक एक दूसरे के बराबर होती है और यह दूरी केन्द्र और प्रथम अदीप्ति के बीच की दूरी के बराबर होती है जबकि पानी की बूँद वाले कान्तिचक्र मे आभामण्डल की त्रिज्या क्रमागत कोटियो की चौडाई से २० प्रतिशत अधिक बडी होती है। फिर बर्फ की सूचियो के लिए क्रमागत कोटियो की प्रकाशतीव्रता पानी की बूँदो वाले कान्तिचक्र की तुलना मे अधिक धीरे-धीरे घटती है। किन्तु इन अन्तरो का प्रेक्षण कर सकना सरल नही है। सर्वोत्तम नापजोख कभी तो कान्तिचक्रो के निर्माण की पहली विधि को इङ्गित करती है तो कभी दूसरी विधि को, किन्तु दोनो ही दशाओ मे, बादलो की किस्म के विचार से जैसी आशा की जानी चाहिए उसीके अनुकूल वे पाये जाते है। वायुयानो द्वारा सीधे ही प्राप्त किये गये प्रेक्षणो से ज्ञात होता है कि इनमे ४५ प्रतिशत दशाओ मे कान्तिचक्र का निर्माण पानी की नन्ही बूँदो से होता है और ५५ प्रतिशत बर्फ-सूचियो से।[2]

भौतिकज्ञ के लिए, एक सुन्दर कान्तिचक्र की उपस्थिति बादलो मे केवल पानी की बूँदो अथवा बर्फ-सूचियो की अत्यधिक समानता की ही द्योतक नही है। इसे देखकर

1. Dark Minima 2 Visser Proc. Acad. Amsterdam 52, 1943

वह इस निष्कर्ष पर भी पहुँचता है कि सभवत बादल का निर्माण अभी हाल मे ही हुआ है——मानो यह एक 'अल्पवयस्क बादल' है। क्योकि बूँदो के समूह की निरन्तर प्रवृत्ति असमान आकार धारण कर लेने की होती है, जो बूँदे तनिक छोटे आकार की होती हैं वे सबसे अधिक तेजी के साथ वाष्प बन जाती है जबकि बडे आकार की बूँदे नन्ही बूँदो को मानो हडप करके अपना आकार अत्यन्त शीघ्रता के साथ बढा लेती है।

जब अलका-पुञ्ज या उच्च-पुञ्ज (रुई के गाले सदृश) बादल चन्द्रमा के सामने से गुजरते है तो कभी-कभी बहुत अच्छी तरह हम यह देख सकते है कि हर बार जब कोई नया बादल चन्द्रमा की ओर सरकता है तो किस प्रकार एक असममित कान्तिचक्र हाशिये की ओर फैला हुआ बनता है (चित्र १३३)। स्पष्ट है कि इन बादलो मे बाहरी हिस्से की बूँदे भीतरी हिस्सो की बूँदो की अपेक्षा छोटे आकार की है। वास्तव मे यह बिलकुल साफ जाहिर है कि इन बाहरी हिस्सो की बूँदो का वाष्पीकरण आरम्भ हो चुका होता है।

चित्र १३३—एक छोटे आकार के बादल के हाशिये के निकट असममित कान्तिचक्र (कोरोना)।

यद्यपि ये सभी कान्तिचक्र जिनका अभीतक वर्णन किया गया है, बादलो मे उत्पन्न होते है, किन्तु ऐसा भी होता है कि छोटे आकार के, किन्तु मनमोहक रगो से विभूषित कान्तिचक्र पूर्णत निरभ्र नीले आकाश मे देखे गये है। शिकागो के निकट यर्केज वेध-शाला पर एक ग्रीष्मऋतु मे मैने सूर्य के गिर्द कान्तिचक्र का बार-बार अवलोकन किया। चन्द्रमा के गिर्द भी ये देखे गये है——किन्तु सावधान रहिए कि आँख मे होनेवाली विवर्तन-घटना से आप धोखा न खा जायँ (§ १६३)! ऐसा प्रतीत होता है कि वायुमण्डल की शान्त अवस्थाओ, और विशेषतया उत्क्रमण[1] के दौरान मे, वायु मे मौजूद धूलिकण अत्यन्त धीरे-धीरे नीचे को तिरते रहते है, अत जो कण वायु मे उतराते रह जाते है उनके आकार मे कुछ अधिक अन्तर नही होता और वे कान्तिचक्र का निर्माण कराते है।[2]

1 Inversion
2 Penndorf and Stiank Zeitschr angew Meteor 60, 233, 1943

१६२ खिडकी के कॉच पर कान्तिचक्र

जाडे की ऋतु मे यदि हम भलीभाति प्रकाशित जलपानगृह के बगल से जाते हुए गुजरे तो हम प्राय देख सकते है कि लैम्प रगीन वृत्तो से परिवेष्टित होते है जो खिडकी पर मोजूद नमी के कारण उत्पन्न होते है। खिडकी के काच के कुछ भागो पर ये वृत्त, अन्य भागो की अपेक्षा वडे आकार के दीखते है। प्राय हम केवल 'आभामण्डल' देख पाते है,किन्तु कभी-कभी रगीन वृत्त आश्चर्य्यजनक रूप से सुन्दर दीखते है, ऐसा लगता है कि कुछ खास किस्म के कॉच अन्य कॉच की अपेक्षा सदैव ही अधिक अच्छे कान्तिचक्र प्रदर्शित करते है। इस घटना की व्याख्या इस प्रकार है—खिडकी के कॉंच पर मौजूद पानी की नन्ही बूँदो द्वारा प्रकाश के विवर्त्तन के कारण ये कान्तिचक्र बनते है, और इन बूँदो के आकार मे जितनी अधिक समानता होगी, कान्तिचक्र उतने ही अधिक मनोहर बनेगे। यह असम्भाव्य नही कि कुछ खास किस्म के कॉच पर बूँदे अन्य किस्म के कॉच की अपेक्षा अधिक समरूप से घनीभूत होती है।

ये कान्तिचक्र बादलो के कान्तिचक्र के साथ प्रबल सादृश्य रखते है, किन्तु इनके निर्माण की विधि भी तो एक-सी ही है। एक दशा मे विवर्त्तन करनेवाली बूँदे कॉंच पर स्थित होती है और दूसरी दशा मे वे वायु मे ऊँचाई पर बादलो के जर्रों के रूप मे उतराती रहती है। फिर भी खिडकी के कॉच पर बने कान्तिचक्र तथा हवा मे बनने वाले कान्तिचक्र मे अन्तर है, वह यह कि प्रथम दशा मे प्रकाश-स्रोत एक प्रदीप्त आभामण्डल की जगह अन्धकारमय क्षेत्र से परिवेष्टित होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी उत्पत्ति बूँदो की सममित सजावट के कारण होती है जो एक दूसरे से समान दूरी पर बनती है, जबकि बादल मे बूँदो का वितरण अनियमित होता है।[1] अत खिडकी के कॉंच पर कान्तिचक्र के निर्माण की क्रिया अपेक्षाकृत अधिक जटिल है। भीतर वाले एक या दो वृत्त पृथक्-पृथक् नन्ही बूँदो द्वारा होनेवाले व्यतिकरण से उत्पन्न होते है, जो प्रकाश के अनुकूल[2] स्रोत सरीखे काम करते है और ये एक दूसरे से लगभग बराबर दूरी पर स्थित होते है, किन्तु बाहरी वृत्तो का निर्माण प्रत्येक अलग-अलग बूँदो द्वारा होता है और इनकी त्रिज्या इन बूँदो के करीब-करीब समान आकार द्वारा निर्धारित होती है।

1 Donle, Ann. d Phys **34**, 814, 1888 K Exner, Sitzungsber, Akad Wien **76**, 522, 1877, **98**, 1130, 1889
Prins Hemel en Dampkring 38 244, 1940—Reesinckand devries Physica J 603, 1940 2 Coherent

यदि हम खिडकी मे से तिरछी दिशा की ओर देखे, तो हम देख सकते है कि कान्ति-चक्र की शक्ल पहले दीर्घवृत्तीय हो जाती है, फिर परिवलय आकृति की, यहाँ तक कि अन्त मे वह अति परिवलय की शक्ल की भी हो जाती है। यदि परिस्थितियाँ वैसी ही होती जैसी ओस-धनुष की दशा मे, तब इससे हम यह समझते कि 'खिडकी के कॉच पर चित्रित होनेवाले कान्तिचक्र दीर्घवृत्तीय आदि होते है, किन्तु मेरी आँखो से देखे जाने पर वे ऑख और लैम्प को मिलाने वाली अक्ष-रेखा के गिर्द पूर्णतया शकु आकार की सतह पर स्थित होते है और वे वृत्त के रूप मे प्रक्षेपित होते है। किन्तु यहाँ परिस्थितियाँ भिन्न है। प्रक्षेपित होने की दशा मे कान्तिचक्र वास्तव मे दीर्घवृत्तीय हो गये है, वे क्षैतिज दिशा मे और भी अधिक फैल गये है, स्पष्टत इसका कारण यह है कि उस दिशा मे देखे जाने पर प्रत्येक बूँद सामने की ओर पिचक जाती है, अर्थात् दीर्घवृत्तीय हो जाती है। साथ ही साथ इससे यह भी सिद्ध होता है कि विवर्त्तन करने वाले जर्रे गोलीय नही है बल्कि ये अर्द्धगोलीय अथवा गोलीय-खण्ड है, क्योकि उस दिशा मे जिधर की ओर बूँदो का प्रक्षेपण सबसे अधिक छोटा पडता है, कान्तिचक्र सबसे अधिक चौडे होगे।

धुँधले कॉच की खिडकियो पर सूर्य के प्रतिबिम्ब के गिर्द भी कान्तिचक्र देखे जा सकते है, ठीक बात तो यह है कि यह घटना आकाश मे नही देखी जा सकती, किन्तु वास्तविक कान्तिचक्र से यह केवल थोडी ही भिन्न है।

कॉच के एक छोटे से टुकडे पर लाइकोपोडियम चूर्ण की एक बारीक तह छिडकिए (यह एक चूर्ण है जिसका उपयोग औषधिविक्रेता दवा की गोलियो पर छिडकने के लिए करते है।)। कम-से-कम १० गज की दूरी पर रखे विद्युत् लैम्प को इस कॉच मे से देखिए। आप इसे शानदार कान्तिचक्र से परिवेष्टित देखेगे। अकेला यही चूर्ण इस घटना को उत्पन्न कर सकता है क्योकि लाइकोपोडियम के जर्रे सबके सब करीब-करीब एक ही आकार के होने के कारण समान रूप से आचरण करते है जबकि अनियमित आकार के पदार्थ से उत्पन्न होनेवाले छोटे, बडे, कान्तिचक्र एक दूसरे से मिलकर अस्पष्ट बन जाते है। यदि कॉच को आप तिरछे रखे तो कान्तिचक्र के प्रक्षेपण मे कोई परिवर्त्तन नही होता और इस लिहाज से खिडकी के धुँधले कॉच से बननेवाले कान्तिचक्र से ये भिन्न होते है। प्रकाश-स्रोत के गिर्द का क्षेत्र, इस दशा मे, प्रदीप्त होता है, अन्धकारमय नही, लाइकोपोडियम चूर्ण के जर्रों के दर्मियान की अनियमित दूरियो से ऐसी ही आशा भी की जाती है।

यदि खिडकी के कॉच पर एक या दो फुट की दूरी से आप अपनी श्वास छोडे और तब इस तरह बननेवाले कान्तिचक्र की परीक्षा करे और उन्हे नापे तो आप देखेगे कि

घनीभूत आर्द्रता ज्यो-ज्यो वाष्प बनती जाती है त्यो-त्यो कान्तिचक्रो का आकार बढता नही है, इससे यह प्रदर्शित होता है कि बूँदे कम उत्तल हो जाती है किन्तु उनकी परिधि मे कमी नही होती।

खिडकी के कॉच पर प्राय ऐसे कान्तिचक्र देखे जाते है जिनमे रगो का क्रम नितान्त असामान्य होता है। प्रकाश-स्रोत की ओर से आरम्भ करे, तो क्रम इस प्रकार मिलते है, मन्द दीप्ति–पीतहरा–लाल–पीला–हरा–गाढा नीललोहित–बादामी–श्वेत। ऐसा उस वक्त होता है जब बूँदे कुछ थोडी बडी ही रहती है, इस दशा मे वे अपार-दर्शी मडलक सरीखा आचरण नही करती, बल्कि उनमे से गुजरने वाली किरणे भी व्यतिकरण नमूने के निर्माण मे भाग लेती है। अवश्य, इस प्रकार के कान्तिचक्र परा-वर्त्तित प्रकाश मे नही दिखाई देते।

न्यून ताप पर ऐसी कॉच की खिडकियो पर जिसपर पाला जम गया होता है, कभी-कभी हम लगभग ८° त्रिज्या का कान्तिचक्र देखते है जो सम्भवत एक प्रभामण्डल है। क्योकि इसका भीतरी हाशिया लाल रग का होता है और बाहरी नीले रग का। प्रगटत वर्फ के क्रिस्टल नन्हे प्रिज्म सरीखे काम करते है जैसा § १३५ मे, किन्तु इस दशा मे वर्त्तनकोर का कोण छोटा होता है।

जाडे के दिनो मे स्वय अपनी श्वास से हवा मे बनने वाले कान्तिचक्र का अवलोकन करिए, इस बादामी हाशिये की त्रिज्या ७° से लेकर ९° तक होती है। सूर्य-रश्मियो की पतली शलाका मे आभामण्डल (आरिएल) के गिर्द उसे परिवेष्टित करनेवाले प्रथम रगीन वृत्त को भी आप देखने मे समर्थ हो सकते है।

प्याले की गर्म चाय के ऊपर भी आश्चर्यजनक कान्तिचक्र देखे जा सकते है। चाय का ताप ४०°–६५° सेण्टीग्रेड अवश्य होना चाहिए, सूर्य कम ही ऊँचाई पर रहना चाहिए, ताकि द्रव के ऊपर के नन्हे वाष्पबादल सूर्यप्रकाश की आपाती दिशा से तनिक तिरछी ओर से देखे जा सके। कुछ फासले से वाष्प की प्रत्यक फुत्कार विलक्षण रग प्रदर्शित करती है, विशेषतया नीललोहित या हरा रग। कभी-कभी यह अधिक सुविधाजनक होता है कि ऑख वाष्प के निकट रखी जाय ताकि रगो का सभ्रम न उत्पन्न होने पाये।

लाइकोपोडियम चूर्ण से बने कान्तिचक्र की त्रिज्या नापिए और तब इसके जर्रो की लम्बाई-चौडाई हिसाब लगाकर मालूम करिए और फिर सूक्ष्मदर्शी की सहायता से अपने परिणाम की जॉच कीजिए।

१६३ प्रकाश का कान्तिचक्र जो आँख मे ही उत्पन्न होता है[1]

रात को आर्कलैम्प तथा अन्य चमकीले प्रकाश-स्रोतो के गिर्द मै हलके प्रकाश का वृत्त देख सकता हूँ जो अन्धेरी, काली पृष्ठभूमि पर प्रबल विपर्यास प्रदर्शित करता है, और यदि आसमान साफ हुआ तो चन्द्रमा के गिर्द भी यह वृत्त दीखता है, तथा चकाचौध के प्रकाश वाले सूर्य के गिर्द भी, जबकि पेडो के झुरमुट मे से यह झाँकता है। इस प्रकाश-वृत्त का व्यास लगभग ६° होता है। भीतर की ओर यह नीले रग का और बाहर की ओर लाल रग का होता है अत इसकी उत्पत्ति का कारण विवर्त्तन होगा, न कि वर्त्तन। बादलो मे बनने वाले कान्तिचक्र के साथ इसका प्रबल सादृश्य जान पडता है, किन्तु इनके बीच निश्चय ही अन्तर है। यदि मै ऐसी जगह खडा होता हूँ जहाँ से चन्द्रमा मकान के कोने के पीछे छिप भर जाता है, तो 'बादल वाला कान्तिचक्र' अब भी दिखलाई देता रहता है, जबकि 'आँख मे बनने वाला कान्तिचक्र' प्रकाश-स्रोत को ओट मे लेते ही, पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि इस कान्तिचक्र का स्वय **आँख में** ही निर्माण होता है (एन्टोप्टिक)।[2]

क्या ये आँख मे मौजूद नन्ही कणिकाओ द्वारा उत्पन्न होते है जो प्रकाश का विवर्तन उसी प्रकार करते है जिस प्रकार लाइकोपोडियम चूर्ण या बादलो मे मौजूद पानी की बूँदे करती है ? कुछ प्रेक्षको के लिए तो दरअसल बात ऐसी ही है।

किन्तु अनेक प्रेक्षको को अपेक्षाकृत छोटे कान्तिचक्र दिखलाई पडते है जिनके प्रथम दीप्त वृत्त की त्रिज्या केवल १ ५° होती है। ये कोर्निया के कोशो के, तथा लेन्स को आच्छादित करनेवाली झिल्ली के नाभि-कणो द्वारा होनेवाले विवर्त्तन द्वारा उत्पन्न होते है। प्रत्येक पृथक नाभिकण से उत्पन्न होनेवाला विवर्त्तन विशेष महत्त्व नही रखता, बल्कि खास महत्त्व तो इन तमाम नाभिकणो के परस्पर सहयोग का है, ये नाभिकण एक दूसरे से करीब-करीब समान दूरी (लगभग ० ०३ मिलीमीटर) पर स्थित होते है। अन्य प्रेक्षक थोडे कुछ बडे आकार के कान्तिचक्र का विवरण देते है जो अधिक प्रबल तथा स्पष्ट हो जाते है बशर्त्ते (सावधानी के साथ) आँख को आस्मिक[3] अम्ल की वाष्प से स्पर्श कराएँ। इन परिस्थितियो मे कोर्निया के कोष नन्ही-नन्ही ढेरियो के रूप मे उभर आते है जो आकार मे पर्य्याप्त मात्रा मे एक समान होते है ताकि विवर्तन द्वारा वे कान्तिचक्र का निर्माण कर सके। इस तरह के एक कान्तिचक्र के लिए एक प्रेक्षक

1 A Gullstrand in Helmholtz, Physiologische Optik, 3rd edi
2, Entoptic 3 Osmic acid

ने निम्नलिखित नाप दिये है आभामण्डल (आरिएल) के लाल हाशिये की त्रिज्या= १° २३′, नीले-हरे वृत्त की, ३° ४६′, तथा लाल वृत्त की, ४° २२′ होती है।

आँख मे बनने वाले (एन्टोप्टिक) कान्तिचक्र की एक तीसरी किस्म वह है जिसे मै स्वय देखता हूँ और यही किस्म सर्वाधिक दृष्टिसुलभ है। कभी-कभी लगातार हफ्तों तक इस कान्तिचक्र के कुछ विशेष **वृत्तखण्ड** असाधारण रूप मे स्पष्ट दीखते रहते है, इससे सावित होता है कि बादलो वाले कान्तिचक्र से बिल्कुल भिन्न व्याख्या इसके लिए देनी होगी क्योकि यह समझ पाना कठिन है कि नन्हे कणो से विवर्त्तन द्वारा यह घटना कैसे उत्पन्न हो सकती है। कागज का एक टुकडा लीजिए जिसमे २ मिलीमीटर व्यास का एक सूराख बना हो, और इसे आँख की पुतली के सामने पहले ठीक बीचोबीच केन्द्र पर रखिए और तब धीरे-धीरे इसे पुतली के हाशियो की ओर खिसकाते जाइए, यहाँ तक कि अन्तमे कान्तिचक्र के केवल दो खण्ड ही बच जायँ अर्थात् प्रकाशस्रोत के बाये के तथा उसके दाहिने के खण्ड, अवश्य कागज के सूराख को पुतली के निचले भाग के सामने रखना होगा। यदि सूराख को पुतली के दाहिनी या बायी ओर रखे तो कान्ति-चक्र के वे ही भाग पुतली के नीचे तथा ऊपर दिखलाई दे सकते है। इससे हम यह निष्कर्ष प्राप्त करते है कि विचाराधीन कान्तिचक्र सम्भवत नेत्र के क्रिस्टलीय लेन्स के त्रिज्यीय शिराओ द्वारा होने वाले विवर्त्तन के कारण उत्पन्न होते है, क्योकि इस व्याख्या से प्रयोग की सभी बातो का समाधान हो जाता है। नेत्र मे बननेवाले कान्तिचक्र की प्रथम दो किस्म के कान्तिचक्रो के मुकाबले मे इस तीसरे किस्म की पहचान करने के लिए, छिद्र का उपयोग एक विश्वसनीय तरीका है। क्योकि यदि विवर्त्तन के लिए केन्द्र का काम शिराएँ न करती, बल्कि कण करते, तब उस दशा मे पुतली के सामने ओट देने से कान्तिचक्र केवल धूमिल पड जाते और सो भी परिधि के सम्पूर्ण भाग पर प्रदीप्ति समान रूप से घट जाती।

कुछ ऐसे अवसर आते है जब मेरे लिए कान्तिचक्र करीब-करीब अदृश्य-सा बन जाता है सिवाय उस दशा मे जबकि मै ऊपर की ओर या बगल की ओर दृष्टि फिराता हूँ या जबकि मै अत्यन्त थका हुआ होता हूँ। **अन्य अवसरो पर मै इसे लगातार देख सकता हूँ।**

इस तरह की अनुभूतियाँ इस बात का अधिक यथार्थता के साथ निर्णय करने मे हमारी सहायता करती है कि आँख के किस भाग मे कान्तिचक्र का निर्माण होता है। रात्रि मे ज्यो ही मै सडक के लैम्प पर दृष्टि डालता हूँ त्यो ही कान्तिचक्र दृष्टिगोचर होता है किन्तु कुछ ही सेकण्डो मे यह विलुप्त हो जाता है। मैने देखा है कि इस घटना

का सम्बन्ध आँख की पुतली के सिकुडने से है जबकि अन्धेरे के प्रति समानुयोजित हो चुकने बाद अचानक आँख को तेज प्रकाश का सामना करना पडता है। यही कारण है कि अर्द्धरात्रि मे जागने के उपरान्त अचानक जब हम जलती हुई मोमबत्ती या लैम्प पर दृष्टि डालते है तो हमे इसके गिर्द चमकीला कान्तिचक्र दिखलाई पडता है।[1] ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवत कान्तिचक्र का निर्माण क्रिस्टलीय लेन्स के एकदम बाहरी हाशिये पर होता है और इसीलिए जब पुतली सिकुडती है तो कान्तिचक्र तुरन्त विलुप्त हो जाता है।

आँख की शिराओ या कणो द्वारा उत्पन्न होनेवाली इन विवर्त्तन घटनाओ के लिए विवर्त्तन कोण, तथा विवर्त्तन उत्पन्न करनेवाले कणो के आकार के पारस्परिक सम्बन्ध सामान्य के मुकाबले मे अधिक जटिल होते है।

आँख मे बनने वाले कान्तिचक्र की परीक्षा और नापजोख सोडियम लैम्प के प्रकाश मे करिए जो सडको के किनारे अक्सर लगे रहते है।

१६४ हरा तथा नीला सूर्य[2]

एक प्रेक्षक का कहना है कि इजिन की चिमनी से निकलनेवाली भाप मे से होकर उसकी दृष्टि जब सूर्य पर पडी तो भाप के तीन फुआरो तक सूर्य चटकीले हरे रग का प्रतीत हुआ यद्यपि बाद की फुआरो का कोई विशेष असर उस पर नही पडा। एक स्थानीय रेलगाडी के रवाना होते समय मैने भी इसी तरह का प्रभाव देखा था। यह इजिन (जो काफी पुरानी चाल का था) भाप के बादल छोड़ता था जो बार-बार ऊपर उठकर आकाश की अल्प ऊँचाई पर स्थित सूर्य के प्रकाश को एक क्षण के लिए मन्द बना देते थे। इस तरह का एक बादल जब धीरे-धीरे हलका पडकर विलुप्त हुआ तो एक क्षण ऐसा भी आया कि सूर्य पुन दिखलाई दे सका, इसका रग कभी हलका हरा, कभी हलका नीला होता और कभी-कभी तो ऐसे हलके हरे रग का दीखता जो हलके नीले रग मे परिणत हो जाता या फिर हलके नीले रग से हलके हरे रग मे यह बदल जाता। एक सेकण्ड से कम समय के अन्दर प्रकाश इतना तेज हो गया तथा बादल का आवरण इतना झीना कि अब कुछ भी स्पष्ट नही दिखलाई दे सका।

1 Cf a similar observation by Descartes in Goethe's Theory of Colours

2 Nat, **37**, 440, 1888, Quart Journ. **61**, 177, 1935,

इस तरह घटनाएँ उस वक्त घटती है जब कि भाप मे मौजूद पानी की बूंदे अत्यन्त छोटे आकार की, 1 μ और 5 μ के दर्मियान की होती है। इस दशा मे प्रकाश पर वे किस प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करती है इस बात की सही व्याख्या यह मानकर नही की जा सकती कि पानी की बूँदो की जगह नन्हे सूराख या अपारदर्शी मण्डलक है जो प्रकाश का विवर्त्तन करते हो। बूँदो से विवर्त्तित होनेवाले प्रकाश, उनकी सतह से परावर्त्तित होनेवाले प्रकाश, तथा उसमे से गुजरकर सीधे आनेवाली रोशनी के सम्मिलित प्रभाव की जाँच करने पर इस घटना की क्रियाविधि मोटे तौर पर समझी जा सकती है।[1]

वाष्प की अनुपस्थिति मे भी सूर्य और चन्द्रमा के हरे, हलके नीले, तथा आसमानी नीले रग बार-बार देखे गये है जो घण्टो तक वैसे ही बने रहे थे। ये रग सर्वाधिक स्पष्ट क्राकातोआ के सुविख्यात ज्वालामुखी उद्गार (१८८३) के बाद के बरसो मे देखे गये थे।[2] हम जानते है कि उस वक्त ज्वालामुखी के अत्यन्त बारीक धूलिकणो की एक बृहत् राशि वायुमण्डल के उच्चतम स्तरो मे फिक गयी थी और इन धूलिकणो को नीचे आकर एकत्र होने मे बरसो लगे थे तथा इस बीच ससार के एक विशाल क्षेत्र मे ये फैल गये थे और इस प्रकार सर्वत्र अत्यन्त शानदार सूर्योदय तथा सूर्यास्त के दृश्य इन्होने उपस्थित किये थे। हम कल्पना कर सकते है कि किन्ही दिनो धूल के इन बादलो मे सब एक ही आकार के नन्हे-नन्हे कण मौजूद रहे होगे जो सूर्य के आश्चर्यजनक रगो का समाधान कर सकते है। रेत के तूफान मे सूर्य का रग नीला देखा गया है।

२६–२८ सितम्बर १९५१ के नीले वर्ण के सूर्य ने समस्त पश्चिमी तथा मध्य यूरोप मे विशेष उत्सुकता जगायी है।[3] चन्द्रमा भी, और यहाँ तक कि तारे भी, नीले रग के हो गये थे। सूर्य का विकिरण मद्धिम पड गया था, क्षितिज के निकट सूर्य पीला नही, बल्कि आश्वेत था। शीघ्र ही यह दिखलाया जा सका कि इस घटना की उत्पत्ति तैलीय कणो के वृहत्काय बादलो के कारण हुई थी—ये कण ० ५ से बडे न थे और कदाचित् इनमे कालिख के जर्रे भी मिले हुए थे जो कनाडा के एलबर्टा स्टेट के वनो की आग से निकलकर आकाश मे ऊँचे चढे थे। ये ५–७ किलोमीटर की ऊँचाई पर उतराते

1 R Meche, Ann. der Phys **61**, 471, 1920, **62**, 623, 1920—Van de Hulst, Light Scattering (1957),

2 Kiessling Met, Zs, **1**,117, 1884, Nat, 1883,

3 W Gelbke, Zeitschr, f, Meteor **5**, 82, 1951—P. Wellmann, Zeitschr, f, Astroph, 28, 310, 1951,

—Wilson, Monthly Not, R, Asir, Soc, 111, 478, 1951,

हुए ४ दिनो उपरान्त यूरोप पहुँच गये थे। वायुयान से देखने पर पता चला कि ये बादल १३ किलोमीटर तक की ऊँचाई पर भी पहुँचे थे।

इसी किस्म की घटनाओ मे हम एक असाधारण कान्तिचक्र को भी सम्मिलित कर सकते है जिसका प्रेक्षण एक बार कुहरे मे किया गया था[1]—एक चटकीले पीत-हरे वर्ण का आभामण्डल (आरिएल) लाल रग के एक चौडे वृत्त से परिवेशित था जो स्वय भी नीले वृत्त से घिरा था तथा उसमे हरे वृत्त भी मौजूद थे। निश्चय ही इसका समाधान कुहरे मे स्थित बूँदो के क्षुद्र आकार द्वारा किया जा सकता है।

इन घटनाओ की दुर्लभता जनसाधारण मे प्रचलित इस वाक्याश मे परिलक्षित होती है कि "एक बार जबकि चन्द्रमा नीला था।"

१६५ प्रकाशमण्डल[2] (प्लेट I, मुखपृष्ठ)

यदि हम किसी पहाडी की चोटी पर उस वक्त मौजूद हो जबकि सूर्य आकाश मे नीचे ही स्थित हो तो कभी-कभी हम स्वय अपनी ही छाया कुहरे की सतह पर पडती हुई देखते है, इस दशा मे छाया का सिर एक प्रकाशमण्डल से परिवेष्टित पाया जायगा जिसमे वे ही चटकीले रग पाये जाते है जो सूर्य और चन्द्रमा के गिर्द बननेवाले कान्तिचक्र मे दीखते है। एक अवसर पर इस तरह का एक प्रकाशमण्डल देखा गया था जिसके गिर्द पाँच वृत्त मौजूद थे। किन्तु यह स्मरण रखिए कि यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपनी छाया तथा आसपास के अन्य व्यक्तियो की भी छाया देख पाता है बशर्त्ते ये लोग उसके काफी नजदीक हो तथा कुहरा काफी फासले पर हो, किन्तु **प्रकाशमण्डल तो केवल अपनी ही छाया के सिर के गिर्द देखा जा सकता है !** अत्यन्त विशिष्ट परि-स्थितियो मे सडक के लैम्प की रोशनी प्रकाशमण्डल उत्पन्न करने के लिए पर्य्याप्त सिद्ध हुई थी, किन्तु इसके लिए पृष्ठभूमि को अत्यन्त गहरे मटमैले रग का होना जरूरी था।

बादलो की हमवार तह के ऊपर वायुयान मे उडते समय करीब-करीब सदैव ही वायुयान की छाया को रगीन वृत्तो से परिवेष्टित देखा जा सकता है(चित्र १३३ क)। ये वृत्त बादल मे स्थित जलबूँदो के आकार के अनुसार ही छोटे या बडे होते है। प्रकाश-मण्डल के लिहाज से वायुयान की छाया की स्थिति को देखकर प्रेक्षक तुरन्त जान सकता है कि वह वायुयान के सिरे के निकट है या उसकी पूँछ के निकट, क्योकि प्रकाशमण्डल

1 H Kohler, Met Zs **46**, 164, 1929

2 The Glory

का केन्द्र ठीक सूर्य-नेत्र रेखा पर पडता है। अक्सर प्रकाशमण्डल अपेक्षाकृत बहुत बडे कुहरा-धनुप से घिरा होता है जो करीब-करीब सफेद रग का होता है (§ १२८)।
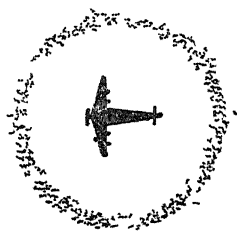
चित्र १३३ क—**बादलो पर वायुयान की छाया के गिर्द प्रकाशमंडल।**

कुछ काल तक तो इसका समाधान अनिश्चित-सा ही रहा। कान्तिचक्र से तुलना करने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि जलबूँदो का बादल सूर्य के प्रकाश को किसी-न-किसी प्रकार पीछे की ओर परिक्षेपित करता है और तब ये वापस आने वाली किरणे अन्य बूँदो द्वारा विवर्त्तित हो जाती है, ठीक उसी प्रकार जैसे कान्तिचक्र मे सूर्य से सीधे ही आनेवाली किरणो का विवर्त्तन होता है। किन्तु अब यह प्रमाणित हो चुका है कि पीछे की ओर होनेवाले परिक्षेपण के फलस्वरूप ही प्रकाश-मण्डल का निर्माण हो जाता है[1]।

प्रकाशमण्डल की त्रिज्या प्राय बदलती रहती है, स्पष्ट है कि कुहरे के कुछ हिस्सो मे बूँदे अन्य भागो की अपेक्षा बडे आकार की होती होगी। कुहरा जब अभी-अभी बना हो तो प्रकाशमण्डल का आकार बहुत बडा होता है और इसमे मौजूद पानी की बूँदो का आकार, गणना के अनुमार ६μ से अधिक नही होता। प्रकाशमण्डल अक्सर कुहरा-धनुष द्वारा परिवेष्टित होता है, और यदि आँख से कुहरे की दूरी ५० गज से अधिक हो तब तो सदैव ही यह कुहराधनुष दिखलाई पडता है। यह विलक्षण बात है कि कुहरा-धनुष प्रकाशमण्डल की तुलना मे [illegible] है—अवश्य ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रभाव के कारण ही प्रतीत होता है।

इन दोनो घटनाओ का एक साथ उत्पन्न होना विश्वसनीय तरीके पर यह प्रगट करता है कि प्रकाशमण्डल का निर्माण पानी की नन्ही बूँदो के कारण होता है, बर्फ के क्रिस्टलो के कारण नही (स्मरण रखिए कि कान्तिचक्र का निर्माण दोनो ही कारणो से हो सकता है!)। यह दिलचस्प बात है कि इन दशाओ मे तापक्रम शून्य से कुछ डिग्री कम ही था, फलस्वरूप ये बूँदे बहुत कम शीतलीकृत[2] अवस्था मे थी। केवल अपवादस्वरूप ही बर्फ के बादलो से बने हुए प्रकाशमण्डल देखे जा सके है।

1 B Ray Proc Ind Assoc 8, 23, 1923—Van de Hulst, Journ Opt Soc Amer **37**, 16, 1947 and Light Scattering (1957)—Naik and Noshi, Journ Opt Soc Amer, **45**, 733, 1954, 2 Under-cooled

और उस दशा मे ये प्रकाश के चमकीले श्वेत धब्बे सरीखे दिखाई पडते है जो ऊपर अभी बतायी गयी घटना से पूर्णतया भिन्न होते है।

यद्यपि प्रथम दृष्टि मे प्रकाशमण्डल कान्तिचक्र के मानिन्द जान पडता है, फिर भी कतिपय लाक्षणिक अन्तर देखे जा सकते है। प्रथम अदीप्तवृत्त कुछ-कुछ अधिक धुधला होता है, और इसकी त्रिज्या अपेक्षाकृत छोटी होती है, बाहरी वृत्त अपेक्षाकृत अधिक चटकीले होते है। किन्तु सबसे प्रमुख विशेपता है इसका **प्रबल ध्रुवण**, वायुयान की करीब-करीब प्रत्येक उडान के अवसर पर एक साधारण पोलरायड की मदद से इसका प्रेक्षण किया जा सकता है—हम देखते है कि त्रिज्यीय कम्पन प्रमुखता प्राप्त किये होते है। यह प्रेक्षण थियरी से प्राप्त निष्कर्प की आश्चर्य्यजनक रूप से सम्पुष्टि करता है।

ऐसी ही है तू, जैसे कि जब,
वह लकडहारा पश्चिमवर्त्ती मुडता हुआ हरी घाटी के ऊपर
शिशिर उषा मे, जहॉ मेषमर्दित लीको की भूलभुलैयो पर
दृश्यहीन हिमकुहर एक जगर-मगर धुध के ताने-बाने बुनता है,
निहारता है पूर्ण अपने सम्मुख, पगचापहीन सरकती हुई,
एक बिम्ब छवि को जिसका शीश है आभा परिवेष्टित,
विमुग्ध ग्रामीण इसके शुभ्रवर्णो की पूजा करता है,
और जानता नही कि जिसका वह अनुगमन करता है, वह छाया उसीसे रचितहै।
—एस टी कोलरिज ('एक भाव-वस्तु के प्रति स्थिरता' से)।

१६६. उद्दीप्त बादल (प्लेट X)

उन लोगो को जो आकाश का अध्ययन करने के अभ्यस्त नही है, यह जानकर आश्चर्य्य होगा कि बादल प्राय अत्यन्त शानदार और विशुद्ध रगो का प्रदर्शन कर सकते है जैसे हरा, बैगनी-लाल, नीला । सन्ध्या या उपा काल की घटनाओ से इन रगो का कोई भी सम्बन्ध नही है क्योकि आकाश मे सूर्य चाहे ऊचाई पर स्थित हो या नीचे हो, दोनो ही दशाओ मे ये रग प्रगट होते है। बादलो पर ये अनियमित रूप से रगीन हाशिये, धब्बो और धारियो की शक्ल मे वितरित रहते है। कुछ प्रेक्षको का दावा है कि इन रगो मे धातु जैसी चमक होती है—इस कथन से उनका अभिप्राय क्या है? ऐसे मनोहर बादलो को देखकर परम आह्लाद की अनुभूति होती है जिसका वर्णन करना कठिन है, किन्तु यह निश्चय ही बहुत कुछ हद तक रगो की विशुद्धता,

उनके मृदु सम्मिश्रण तथा उनके विकीर्ण प्रकाश के कारण उत्पन्न होती है। इस अनुपम दृश्य से हम अपनी आखे हटा नही पाते।

इस तरह के **उद्दीप्त बादल** वर्ष के हर मौसम मे प्रगट होते है, किन्तु शरद ऋतु मे विशेष रूप से। ये सूर्य के निकट प्रगट होते है, और सूर्य से २° की दूरी के अन्दर ये अधिकाश चकाचौंध उत्पन्न करनेवाले धवल प्रकाश के होते है। यदि गहरे रग का कॉच काम मे लाये तो ये सर्वाधिक बहुतायत से ३° से १०° की दूरी तक देखे जाते है और केवल कोरी आँखो से ये १०° से २०° की दूरी तक देखे जा सकते है, नीललोहित तथा लाल रग ही सबसे अधिक बहुलता से प्रगट होते है जो दूरी बढने के साथ फीके पडते जाते है। कुछ इक्के-दुक्के प्रेक्षको ने और भी अधिक दूरी पर (५०° की दूरी तक) उद्दीप्त बादल देखे है, यहाँ तक कि प्रति-सूर्य के बिन्दु के आसपास भी (ब्रुक्स)[1]। इनके प्रकाश की तीव्रता प्राय इतनी प्रचण्ड होती है कि अनेक प्रेक्षको के लिए यह असह्य सिद्ध होती है। इनके प्रेक्षण के लिए सदैव किसी मकान या पेड के साये मे खडे होना चाहिए या फिर आँख की रक्षा के लिए § १६० मे बतायी गयी कोई विधि काम मे लानी चाहिए।

आँखो की सुरक्षा के किसी साधन का सहारा लिये बिना ही उद्दीप्त बादलो की ओर देर तक देखते रहने के बाद मैने अक्सर यह पाया कि नील-लोहित और लाल रग मेरी आँखो के सामने नाचते रहे थे—ये वे ही रग है जो प्रकाश की इन सभी प्रचण्ड अनुभूतियो के उत्तर-प्रतिबिम्ब स्वरूप रह जाते है (§ ९०)। और, जैसा कि तथ्य है, ये ही उद्दीप्त बादलो के सर्वाधिक प्रमुख रग है। अत एक तरह से आश्चर्य्यचकित होकर मैने सोचा कि कही ऐसा तो नही है कि यह समूची घटना आखो की श्रान्ति का नतीजा हो। किन्तु निश्चय ही ऐसी बात है नही, क्योकि दो विभिन्न प्रेक्षको को एक से ही रग दिखाई देते है, और ऊपर बताये गये किसी भी तरीके से प्रकाश के मार्ग मे व्यवधान उपस्थित करने पर भी ये रग दिखाई देते रह जाते है, और अन्त मे अपेक्षाकृत हलकी चमक के बादलो मे भी उद्दीपन प्राय दिखलाई पडता है।

यदि आकाश मे बादल के टुकडे यत्र-तत्र बिखरे हो तो बादलो मे रग की झलक करीब-करीब सदैव ही देखी जा सकती है। पुञ्ज-मेघ[2], पुञ्ज-जलद[3], तथा पुञ्जस्तारीय बादलो मे रगीन हाशिये दीखते है, किन्तु इन पर हम कम अवसरो पर ही ध्यान दे पाते है क्योकि इर्द-गिर्द प्रकाश की चमक इतनी अधिक होती है। यदि काले कॉच के बने

1 Brooks loc, cit 2. Cumuli. 3 Cumulonimli

दर्पण या इसी तरह के अन्य किसी उपकरण मे देखे तो ये मनोरम रगो का प्रदर्शन करते है। उदाहरण के लिए किसी ऐसे पुञ्ज-मेघ का अवलोकन करिए जो अब विघटित ही होने वाला हो और सूर्य के सामने से गुजर रहा हो। तथापि अभी यह वास्तविक उद्दीपन नही है, इन बादलो के रगो का विचार कान्तिचक्र के भाग के रूप मे करना चाहिए जो इतनी फीकी ज्योति के इसलिए होते है कि उनका निर्माण करने वाली बूँदो के आकार मे बहुत अधिक विभिन्नता होती है।

वास्तविक उद्दीप्त बादल अलका-पुञ्ज तथा उच्च-पुञ्ज जाति के कुछ विशेष बादल होते है—खास तौर से ऐसे बादल जो तेजी के साथ तूफान के पूर्व या बाद अपना रूप परिवर्त्तन करते होते है (विशेषतया पुञ्ज-मेघ जो पार्श्वो मे उभरे से रहते है)। रगो का वितरण, धारियो, पहियो या 'आँखो' की शक्ल मे होता है। प्रथम दृष्टि मे यह वितरण-क्रम अत्यन्त बेतरतीब जान पडता है, किन्तु कुछ देर उपरान्त एक तरह की क्रमबद्धता इनमे हम देख पाते है। प्रगटत यह क्रम बादल की सरचना पर निर्भर करता है, कुछ धारियो का रग एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक-सा रहता है अथवा हाशिया नीललोहित—लाल रग का होता है।

उद्दीपन के रगो का समाधान अक्सर उन्हे कान्तिचक्र के टुकडे मानकर किया गया है कि बादल के प्रत्येक भाग मे तमाम बूँदो का आकार बहुत ही अधिक एक समान होता है, किन्तु एक भाग मे स्थित बूँदे दूसरे भाग की बूँदो से आकार मे भिन्न होती है। किन्तु इस दृष्टि-बिन्दु से यह समझ पाना कठिन होता है कि सूर्य से ३०° से अधिक ऊँचाई पर भी उद्दीपन कैसे दिखलाई दे पाते है—स्वय अपने अनुभव से मै जानता हूँ कि ऐसी घटना वास्तव मे देखी गयी है। इन दशाओ के लिए हमे अत्यन्त क्षुद्र आकार (2μ) के कणो की या नन्हे परतदार पख जैसे वर्फक्रिस्टलो की कल्पना करनी होगी जो एक प्रकार की विवर्त्तन-ग्रेटिग[1] का निर्माण करते है—एक सर्वथा नवीन समाधान अभी हाल मे विश्वसनीय तर्क के साथ प्रस्तुत किया गया है।[2] उद्दीपन की अद्भुत, तेज चमक का समाधान इस बात को मान कर किया जा सकता है कि बादल बर्फ की नन्ही, पतली प्लेटो से बने होगे।

नन्ही-नन्ही ऐसी प्लेटो के समुदाय पर विचार कीजिए जो वायु की धाराओ के कारण चक्कर कर रही है। इनका वर्त्तनाक n है तथा मोटाई p है। केवल एक विशेष स्थिति मे ही ये सूर्य के प्रकाश को परावर्त्तित करके हमारी आँख मे भेज सकेगी।

1 Diffraction grating 2 H Dessens, Ann Geophys **5**, 264, 1949

किरणशलाका प्लेट के सामनेवाली सतह तथा पीछे वाली सतह दोनो से परावर्तित होती है अत साबुन के बुलबुले की ही भाति यहाँ भी व्यतिकरण की घटना उत्पन्न होगी। चित्र १३३ ख से सहज ही देखा जा सकता है कि दोनो किरणो के दर्मियान प्रकाशीय पथान्तर का मान $= n\,BCD - bcd = 2\left(\frac{np}{\cos i} - p \tan r \sin i\right)$

$$= \frac{2\,np}{\cos r}\left(1 - \frac{\sin i \sin r}{n}\right)$$

$$= \frac{2np}{\cos r}\left(1 - \sin^2 r\right)$$

$$= 2\,np \cos r$$
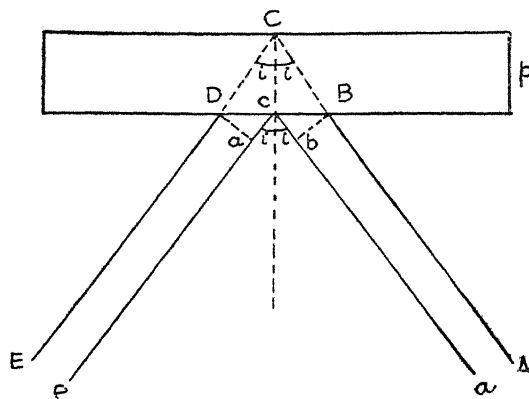
चित्र १३३ ख—**(ऊपर C के नीचे i i की जगह r r तथा बायीं तरफ D a की जगह D d समझिए)**

चूँकि अधिकतर उद्दीप्त बादल सूर्यके निकट देखे जाते है अत कोण i का मान लगभग ७०°—८०° होता है और पथान्तर लगभग २p के बराबर। इस व्यतिकरण से उत्पन्न होने वाले रग अधिक सपृक्त नही होते, प्रकाश्यत इसका कारण यह है कि पथान्तर तरग दैर्ध्य के ४ या ५ गुने के बराबर होता है, अत प्लेट की मोटाई अवश्य १ या २ माइक्रॉन (माइक्रान= ००० ४ से० मी०) के बराबर होगी। बादल पर रगो का वितरण इन प्लेटो की मोटाई पर निर्भर करता है जो बादलके भिन्न भागो मे भिन्न होती है। उद्दीपन दुर्लभ अवसरो पर ही देखे जाते है अत हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि प्लेटो की मोटाई एकसम दुर्लभ अवसरो पर ही हो पातीहै। उद्दीप्त बादल बर्फ की क्रिस्टल-प्लेटो से बने होते है—इस बात की सम्पुष्टि उन अनेक

दृष्टान्तो से हो जाती है जब–५०° सेन्टीग्रेड ताप पर और ४—११ किलोमीटर की ऊँचाई वाले बादलो मे ये उद्दीपन देखे गये है।

उद्दीप्त बादलो का प्रकाश ध्रुवित नही होता।

उद्दीप्त बादल चन्द्रमा के गिर्द भी देखे गये है यद्यपि उतनी बार नही जितनी बार सूर्य के गिर्द, फिर ये अपेक्षाकृत फीके रगके होते है। स्पष्ट है कि इसका कारण उनकी अत्यन्त हलकी चमक है।

केवल अकेले एक बार आकाश मे विज्ञापन लिखने वाले वायुयान से बने कृत्रिम बादल मे उद्दीपन देखा गया था।

१६७ मोती के सीप[1] वाले बादल

ये अत्यन्त दुर्लभ और अद्भुत किस्म के उद्दीप्त बादल होते है जो सामान्य बादलो की तुलना मे कही बडे पैमाने पर प्रगट होते है, बादलो की पूरी की पूरी पट्टी मछली के शरीर की परतो (चोइयो) की तरह चमकती है और कभी-कभी विशुद्ध वर्ण और मनोरम रगो से परिपूर्ण दीखती है। सूर्यास्त से पहले सूर्य से १०° से लेकर २०° तक की दूरी पर ये बादल विशेषरूप से सुन्दर प्रतीत होते है। इनकी प्रमुख विशेषता यह है कि सूर्य के अस्त होने के बाद भी करीब दो घण्टे तक ये दृष्टिगोचर होते रहते है—यह बात उनकी अत्यधिक ऊँचाई की सूचक है।[2] हाल मे अधिक सूक्ष्म तरीको से इस ऊँचाई का मान १६ मील प्राप्त किया गया है जबकि सामान्य ढग के बादल कभी भी आठ मील से अधिक ऊँचाई पर नही होते। मोती के सीप वाले बादल जब दीप्तिहीन होने लगते है तो पर्य्याप्त तेजी के साथ, लगभग अचानक ही, करीब चार मिनटके दौरान मे ये प्रकाशहीन हो जाते है—ठीक इतना ही समय सूर्य के गोले को क्षितिज से नीचे डूबने मे लगता है। अत बहुत सम्भव यह प्रतीत होता है कि इनकी दीप्ति सन्ध्या के धुधलके के कारण नही, बल्कि सीधे सूर्य के कारण उत्पन्न होती है।

रगो का वितरण-क्रम लगभग पूर्णतया बादलो की किस्म पर निर्भर करता है। कभी-कभी ये बादल धारीदार, लहरदार या अलकामेघ-जैसे होते है, कभी-कभी

1 Mother-of-pearl

2 Their height follows the time their illumination lasts, accurate computations in Mohn, Met Zs **10**, 82, 1893, also is Jesse Met Zs , **3**, 1886, ete Stormer Geofysiske Publikasjoner g , No. 4, 1931 Beitrage Zur Geophys 32, 63, 1931 Nat. **145**, 221, 1940 Weather **3**, 13, 1948, H, Wehner, Meteor, Rundschau **4**, 180, 1951

बादलो की समूची पट्टी करीब-करीब एक ही रग की होती है जिसके हाशिये पर स्पेक्ट्रम के रग प्रकट होते है या फिर क्षैतिज दिशा की आडी आयताकार पंक्तियो की शक्ल मे ये दीखते है जिनके बीचसे हम आकाश की पृष्ठभूमि पोलकी रत्न सरीखे दूधिया रग को देख सकते है। ये रग कभी तो स्थिर बने रहते है, कभी वे धीरे-धीरे बदलते जाते है। सूर्य से जब बादलो की दूरी ४०° से अधिक हो जाती है तो ये रग विलुप्त हो जाते है। सारा दृश्य अवर्णनीय रूप से मनोरम तथा शानदार होता है।

यदि इन बादलो का 'निकल' द्वारा प्रेक्षण करे तो 'निकल' को घुमाने पर रग बदलते हुए दीखते है। एक अवसर पर इन मोती के सीप वाले बादलो मे एक प्रभामण्डल देखा गया था जो इस बात का सूचक है कि सम्भवत इनमे बर्फ–क्रिस्टल मौजूद है (§१३४)। अधिकाश इनका निर्माण ठीक निम्नदाब[1] के गुजर जाने के बाद होता है जब कि आकाश अत्यन्त निर्मल हो जाता है। आस्लो मे आमतौर पर ये जाडे की ऋतु मे दिखाई देते है जबकि उत्तर या पूर्व दिशा मे एक अत्यन्त निम्नदाब मौजूद होता है या जबकि अटलाण्टिक महासागर पर तूफान चलता होता है और उष्ण, सूखी वायु-धारा बहती होती है, क्योकि ऐसे मोको पर आकाश बहुत ही निर्मल होता है अत आकाश के उच्चतम स्तर भी देखे जा सकते है।

१९ मई १९१० के दिन, जब कि हेली धूमकेतु की पूँछ मे से पृथ्वी गुजरी थी, मोती के सीप वाले बादलो का अलौकिक रूप से मनोरम निर्माण देखा गया था। लगता है मानो इन दोनो घटनाओ के बीच परस्पर कोई सम्बन्ध मौजूद है।[2]

परा–अलका तथा रात्रि के दीप्तिमान् बादलो के लिए देखिए §§ १९८, १९९

हेलीगेन्शीन[3]

१६८. ओस से ढकी घास[4] पर हेलीगेन्शीन (प्लेटXI)

तडके सुबह को जबकि सूर्य अभी आकाश मे नीचे ही रहता है और ओस वाली घास पर लम्बी साया डालता है, हम अपने सिर की छाया के ऊपर और उसके निकट एक अद्भुत् रगहीन आभामण्डल (आरिएल) देखते है। नही, यह कोई प्रकाशीय भ्रम नही है और न ही विपर्यास की कोई घटना, क्योकि जब वही साया बजरी वाली

1. Depression
2 Slocum, J R A S, Can, 28, 145, 1934, with a beautiful photo
3 Heiligenschein
4 Quart. Journ, 39, 157 1913, E, Macy, Met Zs, 39, 229, 1922

सडक पर पडती है तो फिर इस दशा मे हमे प्रकाश का यह आभामण्डल दिखलाई नही पडता।

यह घटना सर्वोत्तम उस वक्त होती है जब छाया की लम्बाई कम-से-कम १५ गज हो तथा वह छोटे क़द की घास या तिनपतिया पौदो पर पडती हो जो धनी ओस के कारण भूरा सफेद रग धारण किये हुए हो। इन परिस्थितियो मे हेलिगेन्शीन बहुत स्पष्ट दीखता है। दोपहर को पानी की बौछार के बाद, या रात को विद्युत् लैम्प के तेज प्रकाश मे यह उतना स्पष्ट नही बन पाता। यदि इस घटना के बारे मे किसी किस्म का सशय हो तो वास्तविकता की जॉच का सबसे बढिया तरीक़ा इस प्रकार है—(1) घास के समूचे मैदान का सर्वेक्षण करिए और देखिए कि आप की छाया के निकट प्रकाश की मात्रा कैसे बढती है, (11) दो चार क़दम चलिए; आप देखेगे कि प्रकाश की झलक आपके साथ-साथ चलती है तथा वे स्थल जहॉ घास विशेषरूप से प्रकाशित नही थी, छाया के निकट आते ही प्रकाशित हो उठते है, (111) अपनी छाया की तुलना अन्य लोगो की छाया से करिए, आप देखेगे कि हेलिगेन्शीन केवल आप के ही सिर के गिर्द दिखाई देता है। इससे सभवत आप दार्शनिक विचारो मे खो जायॅगे। जब सोलहवी शताब्दी के सुविख्यात इटैलियन कलाकार बेन्वेन्यूतो चेलिनी[1] ने यह बात देखी तो उसने सोचा कि प्रकाश की यह झलक स्वय उसकी विशेष प्रतिभा का सूचक है!

इस अद्भुत घटना का समाधान क्या हो सकता है? इसके लिए ओस की बूँदे निश्चय ही अनिवार्य है क्योकि एक बार जब ओस का वाष्पीकरण हो चुकता है तो हेलिगेन्शीन करीब-करीब विलुप्त ही हो जाता है, घास पर पानी की बूँदे छिडक देने पर पुन इसे उत्पन्न किया जा सकता है। सफेद चादर या सफेद कागज के तख्ते पर छिडकी गयी पानी की बूँदो के निकट जब हमारे सिर की छाया पहुॅचती है, तो वे स्पष्ट रूप से प्रकाश से जगमगाती है।

कॉच का गोल पेंदे का फ्लास्क लेकर उसे पानी से भरिए और सूर्य की किरणो के मार्ग मे उसे रखिए, यह फ्लास्क अब एक बडे पैमाने पर पानी की बूँद जैसा काम करता है। इसके पीछे कागज का तख्ता रखिए जो घास की ऐसी पत्ती का स्थान लेता है जिस पर ओस की बूँद पडी हो। यदि फ्लास्क का हम आपाती किरणो से थोडी ही हटी हुई दिशा से प्रेक्षण करे, तो यह अत्यधिक मात्रा मे प्रकाशित दीखता है बशर्त्ते कागज इससे थोडी ही दूरी पर, करीब-करीब इसके फोकस बिन्दु पर, रखा गया हो।

1 Benvenuto Cellini

इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ओस की प्रत्येक बूँद, जिस पत्ती पर वह स्थित होती है, उसपर सूर्य का प्रतिबिम्ब बनाती है, तब इस प्रतिबिम्ब से करीब-करीब आपाती किरणो की दिशा मे ही, अर्थात् सूर्य की ओर, किरणे उत्सर्जित होती है (चित्र १३४ a)। इससे यह बात समझ मे आ जाती है कि क्यो बूँदे अपने
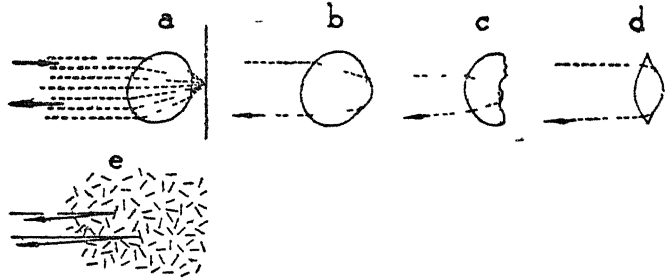
चित्र १३४—**ओस से ढकी घास पर हेलिगेन्शीन।**

अन्दर से प्रकाश उत्सर्जित करती हुई जान पडती ह, उसी प्रकार जैसे बिल्ली की आँखो से प्रकाश निकलता हुआ जान पडता है। यह इस बात की भी उत्तम व्याख्या है कि क्यो घास से प्रतिसूर्य बिन्दु की दिशा मे इतना अधिक प्रकाश आता हुआ दीखता है तथा क्यो इस दिशा से हट कर जब हम देखते है तो प्रकाश की तीव्रता तेजी के साथ घट जाती है। किन्तु यह प्रकाश हरे वर्ण का क्यो नही होता ?

अवश्य ही अन्य बाते भी इस घटना मे भाग लेती है। यदि हम फ्लास्क का पुन-प्रेक्षण करे तो हम देखेगे कि इसके सामने के भाग तथा पीछे के भाग दोनो से ही प्रकाश का परावर्त्तन होता है। साधारण-सी गणना करने पर पता चलता है कि फ्लास्क के पृष्ठभाग से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश की दीप्ति घास की पत्ती से पुन उत्सर्जित होनेवाले प्रकाश की लगभग आधी होती है तथा सामने के भाग से परावर्त्तित होनेवाले प्रकाश की तुलना मे करीब आठवाँ हिस्सा।

किन्तु फ्लास्क की गर्दन तथा उसके चिपटे पेदे से अत्यधिक चमक का प्रकाश आता है, यह प्रकाश पूर्ण परावर्त्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। और हमारी ओस की बूँदो के लिए सम्भवत यह सर्वाधिक महत्त्व की बात है, क्योकि बूँदे अनियमित रूप से विकृत हुई शक्ल की होती है (चित्र १३४, b, c, d) विशेषतया रोएँदार, सफेद रूई जैसी सतह वाले पौदो पर। अत विभिन्न बिन्दुओ से पूर्ण परावर्त्तित होकर आनेवाली किरणे उतनी ही उज्ज्वल तथा प्रचण्ड तीव्रता की होती है जितनी कि वे उस वक्त होती है जब

कि वे सूर्य से चलकर बूँदो तक पहुँचती है। द्वितीय समूह की ये परावर्त्तित किरणे आपाती दिशा मे परावर्त्तित होने के लिए कोई निश्चित प्रवृत्ति नही दिखलाती। किन्तु निम्न-लिखित विलक्षण प्रेक्षण प्राप्त किया गया है--घास की केवल वे ही पत्तियाँ प्रकाश का पुन उत्सर्जन करती है जिनपर सूर्य की किरणे वास्तव मे गिरती है, और स्वभावत, सूर्य की दिशा मे अन्य पत्तियो के कारण इनके लिए प्रकाश की कोई रुकावट मौजूद नही होती, जबकि अन्य बहुत-सी दिशाओ के लिए पत्तियो के सामने कोई स्पष्ट खुला मार्ग नही होता (चित्र १३४, e)। यही कारण है कि प्रेक्षक जब आपाती दिशा मे देखता है तो उसे सदैव ही अधिक प्रकाश दिखाई पडता है। इस अद्भुत रूप से सरल सिद्धान्त (सीलिगर तथा रिशाज[1] द्वारा प्रवर्त्तित) का उपयोग तो ज्योतिर्विज्ञान मे, शनि के वलय मे प्रकाश के वितरण की व्याख्या के लिए किया जा चुका है, हम जानते है कि शनि के वलय पत्थर के नन्हे टुकडो से बने है।

अभी बताये गये प्रकाशीय प्रभावो को मिले-जुले लेने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ये हेलिगेन्शीन के प्रकाश की उज्ज्वलता तथा उसकी दिशा की व्याख्या पर्याप्त रूप से प्रस्तुत करते है।

१६९. बिना ओसवाली सतहो पर हेलिगेन्शीन

इस घटना का प्रेक्षण करना अत्यन्त कठिन है, और §१६८ मे बतलायी गयी विधियाँ इस कार्य्य के लिए विशेष उपयोगी होगी। हेलिगेन्शीन कटी फस्लवाले ठूँठदार खेत पर, नन्ही घास पर, और यहाँ तक कि खुरदरी मिट्टी पर भी देखा गया है, जब सूर्य अधिक ऊँचाई पर नही था, तो उस वक्त बढिया कटी हुई घास के लॉन पर जिसकी घास की पत्तियाँ सीधी तथा बराबर ऊँचाई की थी, मैने स्पष्ट और निश्चित तौर पर इसे देखा है और उससे अधिक स्पष्टता के साथ मैने इसे 'मोलिना कोयरुला'[2] घास के गुच्छे पर देखा है।

यदि प्रेक्षक लॉन से कुछ फासले पर खडा हुआ है, मान लीजिए सौ डेढ सौ गज की दूरी पर, तो उसकी छाया इतनी धुँधली होती है कि वह एक तरह से पहचानी भी नही जा सकती (देखिए §२) और बस स्वय हेलिगेन्शीन ही लगभग २° व्यास के एक धब्बे की शक्ल मे (चन्द्रमा के व्यास के लगभग चार गुने आकार का) विशेष तौरपर दिखलाई पडता है जो हमारी दिशा मे थोडा बहुत चिपटा होकर खिचा रहता है।[3]

इसकी व्याख्या वैसी ही है जैसी ओसवाली घास की हेलिगेन्शीन के लिए विन्टर-

1. Seelınger and Rıcharz 2 Molınıa coerulea 3 Nat **90**, 621, 1913

फील्ड की व्याख्या (देखिए §१६८)। इसे हम निम्नलिखित ढग पर व्यक्त कर सकते है—अधिकाश ठूँठो पर, सामने की कतारो के बीच की खाली जगह मे से होकर सूर्य की रोशनी पडती है, सूर्य-रश्मियो की दिशा मे प्रेक्षण करने पर इस प्रकार प्रकाशित सभी छोटी सतहे देखी जा सकती है, यदि और तिरछी दिशा मे देखे तो साये मे पडनेवाली घास की अनेक पत्तियाँ दिखाई देगी, अत औसत चमक कम हो जाती है।

अक्सर श्वेत रग के शेनोपोडियम[1] पर सुस्पष्ट हेलिगेन्शीन देखा जा सकता है। इस पौदे की सतह पर नन्हे-नन्हे, गोल आकार के कोप मौजूद होते है जो निश्चय ही ओस की बूंदो सदृश काम करते है और इस पौदे की कुछ किस्मो पर ये कोष विशेषरूप से सुस्पष्ट उभार पाये हुए होते है।[2]

१७०. गुब्बारे की छाया के गिर्द हेलिगेन्शीन

गुब्बारे मे उडते समय, इससे लटकने वाली टोकरी की छाया को गौर से देखिए जो नीचे के देहाती क्षेत्र पर पडती है। लगभग सदैव ही इस छाया के गिर्द प्रकाश का एक आभामण्डल (आरिएल) मौजूद रहता है। और यह प्रेक्षक के भ्रम से उत्पन्न होनेवाली कोई विपर्यास की घटना नही है, ऐसा इस बात से सिद्ध होता है कि यह आभामण्डल ओस से ढके खेतो और घास के मैदानो पर और भी सुस्पष्ट दीखता है, तथा अनाज के खेतो पर यह प्रकाश के ऊर्ध्व स्तम्भ का रूप धारण कर लेता है जो अनाज के पौदो की डण्डियो की समानान्तर दिशा मे अवस्थित होता है। यह हेलिगेन्शीन का एक विशेष मनोरम रूप है, क्योकि धरती से गुब्बारे की अत्यधिक दूरी के कारण हम धरती की सभी चीजो को ऐसी दिशा से देखते है जो सूर्य की आपाती किरणो के साथ अत्यन्त छोटा कोण बनाती है। यदि छाया बादलो की पेटी पर से गुजरती है तो इस बात की सम्भावना उत्पन्न होती है कि रगीन प्रकाश-वृत्तोवाली शानदार छाया की घटना दीख पडे (§§१२८, १६५)।

डाक्टर ह्विप्पल (हार्वर्ड वेधशाला) मुझे लिखते है कि उन्होने अकसर हर प्रकार की भूमि पर इस घटना का अवलोकन वायुयान से किया है, शरत ऋतु के रग-बिरगे फूलपत्तियो से ढके वनो पर यह घटना विशेषरूप से सुन्दर दीखती है। चमकीले धब्बे की चौडाई २° के करीब होती है। मरुभूमि पर भी यह दिखलाई देती है, ओस से ढके खेतो पर यह अधिक चमकीली होती है, पानी की सतहो पर हम केवल सामान्य गहरे रग **की छाया देखते है।**[3]

1. Chenopodıum 2 V Lommel, Ann d Phyd. 1874, Jubelband10
3. See also Butler, Journ Opt Soc Amer **45**, 328, 1955

अध्याय ११

आकाश का प्रकाश तथा उसका वर्ण

१७१. धुएँ द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण[1]

प्रकाश के परिक्षेपण के अध्ययन का आरम्भ हम एक ऐसी नहर के किनारे टहलने से करेंगे जिसमे किश्तियो का आना-जाना बहुतायत से होता है। गुजरनेवाली अनेक किश्तियो मे तेल या पेट्रोल के इजिन लगे होते है जो बारीक धुआँ फेकते है, यह धुआँ मटमैले आकाश की पृष्ठभूमि पर नीले रग का दीखता है। किन्तु यदि इस धुएँ को खुले आकाश की प्रकाशित पृष्ठभूमि पर देखे तो यह बिलकुल ही नीला नही प्रतीत होता बल्कि यह पीले रग का दीखता है। स्पष्ट है कि धुएँ के लिए नीलापन उस तरह का विशिष्ट गुण नही है जैसा नीले काँच के लिए नीलेपन का गुण, बल्कि धुएँ का रग इस बात पर निर्भर करता है कि उस पर प्रकाश किस तरह पड रहा है और ऊपर दिये गये दोनो दृष्टान्तो मे धुएँ के प्रकाशित होने के तरीके भिन्न है। व्याख्या इस प्रकार है—

मटमैली पृष्ठभूमि के सामने धुआँ सूर्य की उन समस्त किरणो द्वारा प्रकाशित होता है जो पीछे की दिशा को छोडकर अन्य दिशाओ से उसपर तिरछी गिरती है। ये किरणे धुएँ द्वारा हर दिशा मे परिक्षेपित होती है, इन परिक्षेपित किरणो मे कुछ किरणे हमारी आँख मे प्रवेश करती है तो धुआँ हमे दृष्टिगोचर होता है। जिन जर्रो से धुएँ का निर्माण हुआ रहता है, वे लाल या पीले प्रकाश की अपेक्षा नीले प्रकाश का परिक्षेपण अधिक मात्रा मे करते है, इसलिए धुआँ हमे नीला दिखलाई देता है। इसके प्रतिकूल प्रकाशित पृष्ठभूमि के सामने धुआँ हमे उस प्रकाश के कारण दीखता है जो उसे पार करके हमारी ओर आता है और तब यह पीला प्रतीत होता है क्योकि आपतित श्वेत प्रकाश का नीला रग इधर-उधर सभी दिशाओ मे परिक्षेपित हो जाता है, बहुत थोडा अश ही आँख मे पहुँच पाता है अत केवल पीला और लाल बच जाता है जो धुएँ को पार करके आगे आता है और धुआँ यही रग धारण कर लेता है।

1. Scattering

'कई वर्ष पहले की बात है, कुछ इसी तरह की चीज किलार्नी मे मैने देखी थी[1] जबकि वायुरहित दिनो मे छोटे मकानो की छत से धुएँ का स्तम्भ ऊपर उठता था। प्रत्येक स्तम्भ का निचला भाग देवदार वृक्षो की मटमैली पृष्ठभूमि के सामने पडता था और ऊपरी भाग बादलो की चमकीली पृष्ठभूमि के सामने। स्तम्भ का निचला भाग नीला दीखता था क्योकि यह मुख्यत परिक्षेपित प्रकाश की सहायता से देखा जाता था, और ऊपरी भाग लाल वर्ण का था क्योकि यह उसमे से पार आनेवाले प्रकाश द्वारा देखा जाता था।' (जे टिन्डल[2])।

परिक्षेपित प्रकाश मे नीले तथा पार आने वाले प्रकाश मे लाल रग की यही घटना अत्यन्त स्पष्टरूप से डिजल इजिन से विसर्जित धुएँ मे उस वक्त देखी जा सकती है जब रेलगाडी को रवाना करने के लिए इजिन को तेजी से चलाते है और डिजेल बस, तथा डिजल मोटर लारी मे भी यह घटना देखी जा सकती है। या 'फिर, सूखी पत्तियो के सुलगने से उत्पन्न होनेवाले धुएँ, पतझड के मौसिम मे झाड झखाड के ढेर के जलने से पैदा होनेवाले धुएँ, या स्वय अपने घर की चिमनी के धुएँ मे, जबकि हम लकडी जलाते है, यह घटना देखने को मिलती है।

इन सभी दशाओ मे धुआँ कोलतार सरीखे द्रव की असाधारण रूपसे नन्ही बूँदो से बना होता है जबकि साधारण पत्थर के कोयले के धुएं मे कालिख के अधिक बडे टुकड मौजूद होते है। और प्रकाश के तरगदैर्घ्य λ (लगभग ० ०००6 मि० मी०) की तुलना मे आँका गया परिक्षेपण करनेवाले जर्रो का आकार ही धुएँ का रग निर्धारित करता है। यदि जर्रे प्रकाश के तरग-दैर्घ्य के एक दशमाश या दो दशमाश से छोटे ही होते है तब परिक्षेपण $\frac{1}{\lambda^4}$ का समानुपाती होता है और स्पेक्ट्रम के बैगनी रग की ओर के प्रकाश के लिए परिक्षेपण की मात्रा तेजी से बढती है, इतने छोटे जर्रो से होनेवाले परिक्षेपण से, चाहे वे किसी भी पदार्थ के क्यो न बने हो, सदैव ही सुन्दर नीला-बैगनी प्रकाश मिलता है। किन्तु बडे आकार के जर्रो के लिए प्रकाश के बैगनी रग की ओर परिक्षेपण की मात्रा की वृद्धि थोडी ही हो पाती है, क्योकि इस दशा मे परिक्षेपण $\frac{1}{\lambda^2}$ का समानुपाती होता है। जर्रो का आकार जब बहुत बडा होता है तब प्रकाश के तरगदैर्घ्य पर परिक्षेपण की निर्भरता उल्लेखनीय नही हो पाती और इस दशा मे परिक्षेपित प्रकाश भी श्वेत ही रहता है। 'बहुत बडे' आकार से अभिप्राय है कि प्रकाश के तरगदैर्घ्य की तुलना मे बहुत बडा, उदाहरण के लिए ० ०1 मिलीमीटर के आकार के जर्रे।

1 Kilarney 2 J Tyndall

इससे यह बात समझी जा सकती है कि क्यो सिगार या सिगरेट का धुआँ तुरन्त ही हवा मे फेके जाने पर नीला दीखता है, किन्तु कुछ देर तक मुँह मे उसे रख कर धुआँ बाहर निकाले तो यह सफेद रग का हो जाता है। बाद वाली दशा मे धुएँ के जर्रे पानी की परत से घिर जाते है अत अपेक्षाकृत ये बहुत बडे आकार के बन जाते है।

वाष्प-इजिन की भाप सेपटीवाल्व के बहिर्द्वार (एक्जास्ट छिद्र) के निकट तो नीलापन लिये रहती है किन्तु और ऊपर जाने पर सफेद हो जाती है, क्योकि ऊपर जाने पर वाष्प का और अधिक सघनन[1] हो जाता है अत उसमे स्थित बूँदो का आकार बढ जाता है। इजिन के धुएँ और भाप के रग के अन्तर का, आपतित प्रकाश, तथा उनमे से गुजर कर आनेवाले प्रकाश, दोनो ही मे ध्यानपूर्वक अवलोकन करिए और इस बात की सावधानी बरतिए कि इन दोनो के बीच आप कभी धोका न खाएँ!

अभी तक हमने केवल अपेक्षाकृत हलके धुएँ के बादलो द्वारा होनेवाले परिक्षेपण पर विचार किया है, किन्तु अत्यन्त घने धुएँ मे यह घटना जटिल हो जाती है, क्योकि तब प्रकाश का एक जर्रे से दूसरे जर्रे तक बारम्बार परिक्षेपण होता है। सूखी पत्तियो की ढेरी की आग से उठते हुए धुएँ का प्रेक्षण कीजिए, तो आप देखेंगे कि धुएँ के स्तम्भ के हाशिये तो मनोरम नीले रग के होते है जिस प्रकार लकडी से उठनेवाले सभी धुएँ होते है, किन्तु केन्द्र के निकट की ओर के भाग जहाँ धुआँ सबसे अधिक घना होता है, करीब-करीब सफेद रग के ही होते है। सरलता से यह सिद्ध कर सकते है कि जो प्रकाश काफी मोटी तहो से परिक्षेपित होकर हमारी आँखो मे पहुँचता है वह सदैव ही श्वेत रग का होगा चाहे उसके प्रत्येक जर्रे से परिक्षेपित होनेवाला प्रकाश कितना ही अधिक नीला क्यो न हो, क्योकि धुएँ के बादल पर गिरनेवाला समस्त प्रकाश अन्त मे उससे बाहर निकलेगा ही, बशर्त्ते क्रिया केवल परिक्षेपण की हो रही हो, अवशोपण की नही (§१७६)।

हमारी चिमनी का धुआँ तथा फैक्टरी से निकलनेवाला धुआँ आपतित प्रकाश मे आमतौर पर काला दीखता है, धुएँ का स्तम्भ चाहे कितना ही मोटा तथा अपारदर्शी क्यो न हो—इससे प्रगट होता है कि कालिख के टुकडे प्रकाश का न केवल परिक्षेपण करते है बल्कि उसका प्रबल अवशोषण भी करते है। इस किस्म के धुएँ की पतली तहो मे से देखने पर आकाश बादामी रग का प्रतीत होता है, फिर भी परिक्षेपण के प्रकाश मे इस धुएँ का जो रग दीखता है उसे मुश्किल से ही नीलापन लिये हुए कहा जा

1 Condensation

सकता है। अत आकाश का यह बादामी रग, धुएँ के जर्रों द्वारा अन्य रगो के अवशोपण के कारण उत्पन्न हुआ समझना चाहिए। यह व्याख्या इस बात के अनुरूप ही है कि कार्बन द्वारा प्रकाश का अवशोपण स्पेक्ट्रम के लाल रग से बैंगनी रग की ओर तेजी से बढता जाता है, जब किसी आग लगे हुए मकान से उठते हुए धुएँ मे से होकर हम सूर्य को देखते है तो उसका रग रक्तिम वर्ण का दीखता है जो इसी विशिष्टता का प्रदर्शन करता है।

१७३ नीला आकाश[1]

मेघ-दलो के ऊपर है व्योम सतत नीलवर्णी—एच ड्राखमान्[2]।

नि सीम सौन्दर्य के साथ नीला आकाश पृथ्वी को परिवेष्टित किये हुए है। लगता है मानो यह नीलापन अथाह है, जैसे स्वय इसकी गहराई घनीभूत हो गयी हो। इसके रग की किस्मे अपरिमित है, और यह रग दिन प्रति दिन तथा आकाश के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक बदलता रहता है।

इस आश्चर्य्यजनक नीले वर्ण का कारण क्या हो सकता है? स्वय वायुमण्डल से उत्सर्जित होनेवाले प्रकाश के कारण यह उत्पन्न नही हो सकता क्योकि तब तो रात्रि के समय भी यह चमक पैदा करता। न ही इस कारण कि इसके पीछे नीले प्रकाश का कोई स्रोत मौजूद है क्योकि रात को हम उस अँधेरी पृष्ठभूमि के सौन्दर्य्य का अवलोकन करते है जिसके सम्मुख वायुमण्डल हमे दृष्टिगोचर होता है। अत इस घटना का कारण तो स्वय वायुमण्डल मे ही निहित होना चाहिए। फिर भी यह सामान्य रग-अवशोषण की क्रिया नही है, क्योकि सूर्य तथा चन्द्रमा किसी भी माने मे नीले नही दीखते बल्कि कुछ-कुछ पीले ही ये दिखाई देते है। अत निस्सन्देह यह अत्यन्त बारीक जर्रो वाले धुएँ-जैसी ही घटना है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि आकाश का प्रकाश सूर्य का परिक्षेपित प्रकाश मात्र है! हम जानते है कि स्पेक्ट्रम के बैंगनी सिरे के ज्यो-ज्यो निकट हम पहुँचते है त्यो-त्यो नन्हे जर्रो द्वारा होने वाला परिक्षेपण भी बढता जाता है। दरअसल आकाश का रग अधिकाश बैंगनी प्रकाश से (जिसके लिए हमारी आँख

1 The famous Swiss geologist, A Heim, has written a splendid book called Luftfarben (Zurisch, 1912), in which he describes in popular and enthusiastic way the colours of the sky and the twilight phenomena The coloured reproduction of water-colours are superb 2 H Drachman

अधिक सवेदी नही है) निर्मित होता है, और इसमे काफी मात्रा नीले रग की होती है और थोडी मात्रा हरे रग की तथा अत्यल्प मात्रा पीले और लाल की, इन सभी रगो का योग आकाशीय नीला रग प्रदान करता है।

तो अब पदार्थ के वे जर्रे कौन से है जो वायुमण्डल मे प्रकाश का परिक्षेपण करते है ? ग्रीष्म ऋतु मे, एक लम्बी अवधि के सूखे के उपरान्त, हवा, रेत और मिट्टी के असख्य जर्रो से भर जाती है जो हवा मे उतराते है और जिनके कारण दूर के भू-दृश्य हमे धुधले दीखते है, ऐसे ही अवसरो पर आकाश का नीलापन हलका पड जाता है और वह कुछ सफेदी लिये हुए प्रतीत होता है। किन्तु पानी की कुछ भारी बौछारो के उपरान्त जबकि वर्षा के कारण गर्द धुल जाती है, वायु स्वच्छ और पारदर्शी बन जाती है और तब आकाश का रग गहरा और सपृक्त नीला हो जाता है। जब कभी ऊँचे अलकामेघ प्रगट होते है जिनके कारण वायु बर्फ के क्रिस्टलो से भर जाती है, तो यह मनोरम नीला रग विलुप्त हो जाता है तथा वह अपेक्षाकृत अधिक श्वेत वर्ण मे परिणत हो जाता है। अत न तो वास्तव मे धूल के कण और न ही पानी और बर्फ के नन्हे जर्रे, आकाशीय महराबदार छत के नीले रग का परिक्षेपण करते है। एक मात्र सम्भावना यह है कि स्वय हवा के अणु परिक्षेपण-केन्द्र सरीखे काम करते है—अवश्य यह प्रभाव हलका ही होता है, फिर भी इतना प्रबल तो होता ही है कि हवा की कई मील मोटी तहो की चमक मे उल्लेखनीय वृद्धि हो जाती है और यह वृद्धि बैगनी तथा नीली किरणो के लिए निश्चय ही विशेष अधिक होती है ($\frac{1}{\lambda^4}$ का नियम)।

सूर्य की रोशनी, जो हमे अब दीखती है, नीले और बैगनी प्रकाश से वञ्चित होती है जिसे हवा मे परिक्षेपित कर दिया होता है। इसीलिए सूर्य हलका पीला वर्ण धारण कर लेता है जो उस वक्त और भी प्रमुख हो उठता है जब सूर्य आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित होता है, तब इसकी किरणो को वायु मे अपेक्षाकृत लम्बा मार्ग तय करना पडता है। सूर्य का यह पीतवर्ण क्रमश नारगी वर्ण और फिर लाल रग मे परिणत हो जाता है—यह लाल रग अस्त होते हुए सूर्य की एक प्रमुख विशिष्टता है।

प्रकाश के तरगदैर्ध्य के ० १ भाग से भी छोटे कणो द्वारा परिक्षेपण का रैले का प्रख्यात सूत्र निम्नलिखित समीकरण द्वारा व्यक्त होता है।

$$S = \text{नियताङ्क} \times \frac{(n-1)^2}{N\lambda^4}$$

जिसमे S इकाई आयतन द्वारा होनेवाला परिक्षेपण प्रगट करता है, N प्रति इकाई आयतन जर्रो की सख्या है, तथा n वर्त्तनाङ्क है।

१७३ क. वायुजनित अनुदर्शन[1]

वायुमण्डल के अनुदर्शन का निरीक्षण करने के निमित्त दूर-स्थित वन एक उत्तम मटमैली पृष्ठभूमि का काम देता है और जितनी ही अधिक इसकी दूरी होती है उतना ही अधिक धुँधला तथा नीला यह प्रतीत होता है। हमारे और वन के बीच हवा की मोटी तह सूर्य की किरणो द्वारा बगल से प्रकाशित होती है, तो उससे परिक्षेपित होने वाला प्रकाश उस पृष्ठभूमि पर उसी प्रकार छा जाता है जैसे किसी झीने पर्दे का प्रकाश उसके पीछे स्थित चीजो पर छा जाता है। इस प्रकार प्रकाशित भाग तथा अँधेरे वाले भागो के बीच का अन्तर बहुत कुछ अशो मे कम हो जाता है, फलस्वरूप पृष्ठभूमि की प्रदीप्ति **अधिक एकसम** दीखती है, साथ ही साथ **अधिक नीले वर्ण** की भी। इस **वायु-जनित अनुदर्शन** की मात्रा के अनुसार वृक्षो के झुरमुट की दूरी का हमारा अन्दाज भी अनायास ही प्रभावित होता है। एक वृक्ष जो १०० गज की दूरी पर हो, निकट के वृक्ष की अपेक्षा अधिक नीला वर्ण लिये हुए दीखता है। हरे रग की घास का मैदान, दूरी के बढने पर आश्चर्यजनक तेजी के साथ नीले-हरे वर्ण का हो जाता है और बाद मे नीले रग का। दूर की पहाडियाँ अक्सर मनमोहक नीले रग की दीखती है, ठीक उसी प्रकार का नीलारग जैसा सोलहवी शताब्दी के चित्रकार वान आइक[2] तथा मेम्लिग[3] आदि अक्सर एक बडे पैमाने पर पृष्ठभूमि के दृश्य के चित्रण के लिए इस्तेमाल करते थे। समुद्रतट के टीले भी जो हरियाली से परिपूर्ण तरगो की भाँति, एक के पीछे दूसरे, शृग की श्रेणियो की शक्ल मे दूर तक चले जाते है, मनमोहक 'नीले' क्षितिज उपस्थित करते है। इस वायुजनित अनुदर्शन के कारण प्रत्येक वर्ण उसी नीलेपन को धारण करके एक-दूसरे के साथ समरूप से मिल जाता है, केवल मकानो के लालरग तथा अत्यन्त निकट के घास के मैदानो के हरे रग प्रमुखरूप से उभरकर रगो के इस साम्य मे व्यवधान उपस्थित करते है। भू-दृश्यो मे इसका आप स्वय अवलोकन कीजिए।

इसके प्रतिकूल हम चमकीली पृष्ठभूमि मे रगो का परिवर्तन उनके पूरक रगो मे प्राप्त करने का प्रयत्न कर सकते है। पर्वतीय प्रदेशो मे हिमाच्छादित पहाड को चुन सकते है, मैदानो मे पुञ्ज-मेघो की पक्तियो का अवलोकन कर सकते है जो

1 Aerial Perspective

2 Heim, Luftfarben (cf, §172), Vaughan Cornish, Geogr, Journ 67, 506, 1926, from which paper especially the end of § 173 has been taken 3. Van Eyck and Memling

निकट से तो चकाचौध उत्पन्न करनेवाले श्वेत रग के दीखते है, किन्तु दृश्य मे अधिक दूरी पर दीखनेवाले बादल क्रमश **पीले** पडते जाते है।

फिर भी मटमैली पृष्ठभूमि पर परिक्षेपित नीला प्रकाश चमकीले भागो के पीलेपन की तुलना मे कही अधिक सुस्पष्ट दीखता है। पहली दशा मे अँधेरे का स्थान प्रकाश की अल्पमात्रा ले लेती है, और दूसरी दशा मे प्रचुरमात्रा की प्रदीप्ति मे केवल अल्पमात्रा का परिवर्तन हो पाता है, अत **आपेक्षिक** अन्तर बहुत ही कम होता है (§६४)।

देश के मैदानी इलाक़ो के विस्तृत क्षितिज पर वायुजनित अनुदर्शन अपने पूर्ण गौरव के साथ विकसित होता है और आर्द्रता की मात्रा मे निरन्तर परिवर्तन होते रहने के कारण वायु के अणुओ द्वारा परिक्षेपित नीले प्रकाश तथा धुँधले आकाश के प्रबलतर और अधिक भूरे प्रकाश, बारी-बारी से प्रमुखता प्राप्त करते रहते है।

कभी-कभी पानी की दो बौछारो के दर्मियान उच्च दाब की वायु का क्षेत्र हमारे ऊपर से गुजरता है और तब वायु अत्यन्त पारदर्शी तथा स्वच्छ हो जाती है। अग्रभूमि मे छाया तथा रग स्पष्ट उभरते है तथा पृष्ठभूमि के अँधेरे भाग नीललोहित–नीला वर्ण धारण कर लेते है।

धुन्ध वाले दिन अग्रभूमि मे रगो की विविधता उतनी नही हो पाती, और ये भूरे से ही प्रतीत होते है। बीच की भूमि के उभार अधिक स्पष्ट हो उठते है क्योकि गड्ढे वाले भाग उभारवाले भागो की अपेक्षा धुन्ध की अधिक मोटी तह मे से देखे जाते है (किन्तु §९१ देखिए) और अन्त मे बहुत दूर के दृश्य अधिक अस्पष्ट हो जाते है।

ग्रीष्म की बढ़िया ऋतु मे, जबकि बैरोमीटर की ऊँचाई अधिक होती है, वायु मे धूल के बहुत से कण मौजूद होते है, और तब आकाश बहुत ही चमकीला दीखता है किन्तु इसका नीलापन अधिक नही होता, अत प्रकाश और छाया के बीच विपर्यास कम ही उभर पाता है और फिर यह भी बात है कि प्रेक्षक की आँखे आकाश की चमक से निरन्तर चकाचौध खाती रहती है।

चाँदनी रात का दृश्य सर्वोत्तम उस वक्त होता है जब हवा मे धुन्ध कत्तई मौजूद नही होती है, क्योकि इसकी वजह से प्रकाश मन्द पड जाता है, विपर्यास हलका जान पडता है, और दृश्य के लिए अधिक सम्भावना यह होती है कि वह एकरस भूरापन धारण कर ले।

वायुजनित अनुदर्शन के कारण ही नाविक को दूर का समुद्रतट नीले रग का तथा वायव्य-सा दीखता है, जिसके मुकाबले मे लहर अधिक गाढे नीले रग की प्रतीत होती

है और दृश्य की अग्रभूमि मे ... उभर आती है। दूर का प्रदेश उसे शान्ति का परिचायक, एक मायावी राज्य सा प्रतीत होता है।

१७३ ख. पर्वतीय प्रदेश मे प्रकाश और वर्ण। वायुयान से दीखनेवाला भू-दृश्य

चौरस मैदानो मे रहनेवालो के लिए पर्वतीय दृश्य का आश्चर्य्यजनक आकर्पण मुख्यत वहाँ की वायु की स्वच्छता के कारण उत्पन्न हुआ समझना चाहिए, न कि पहाडो की ऊँचाई के कारण। फैक्टरी या बडे नगरो का धुआँ वहाँ मौजूद नही होता, फलस्वरूप वहाँ की हवा मे धूल के बडे जर्रो की सख्या कम होती है, रग अधिक सपृक्त होते है और ... है। भू-दृश्य के रगविन्यास के मौलिक सौन्दर्य्य का, जो मैदानी इलाको मे औद्योगिक विकास के प्रभाव से निरन्तर दूषित होता जा रहा है, पहाडो पर अभी भी पूर्ण वैभव के साथ आनन्द लिया जा सकता है। फिर अधिक ऊँचाई के कारण यहाँ वायु विशेषरूप से अधिक विरल होती है अत इसकी परिक्षेपण-क्षमता घट जाती है। १०००० फुट से अधिक ऊँचाई पर अनुभवहीन यात्री दूरियो के आँकने मे बार-बार एकसी ही गलती करता है। अनजाने ही वह हलके परिक्षेपण का कारण यह समझ बैठता है कि सामने का दृश्य निकट ही स्थित है। पहाडो पर से हम देख सकते है कि सूर्य की तेज रोशनी से प्रकाशित नीचे की हवा किस प्रकार घाटी को एक आवरण की तरह ढक लेती है, जबकि नीचे घाटी के लोगो के लिए तेज रोशनी से प्रदीप्त पर्वतचोटियो के देखने मे बाधा डालनेवाली कोई भी चीज मौजूद नही होती।

१३००० फुट से अधिक ऊँचाई पर आकाश नीला-काला दीखता है, सूर्य और चन्द्रमा अपना सामान्य खुशनुमा पीतवर्ण प्रदर्शित करने के बजाय प्रचण्ड श्वेत प्रकाश के दीखते है। चमकीले बर्फ से ढके मैदान चकाचौध उत्पन्न करते है और परछाइयाँ गहरे कालेरग की और तीव्र होती है। इन तीव्र विपर्यासो को देख कर ही हम यह बात पूर्णरूप से महसूस कर पाते है कि चौरस प्रदेशो के दृश्यो मे कितना साम्य तथा कोमलता रहती है।

वायुयान से देखने पर भी प्रकाशीय प्रभाव भिन्न होता है। कम ऊँचाई पर उडते समय नीचे के भू-दृश्य से आँख तक पहुँचने वाले प्रकाश को परिक्षेपण करने वाले वायु-स्तरो मे से होकर कम दूरी पार करनी होती है। जब तक हम ठोस भूमि पर होते है, दृश्यो को एक धुँधलेपन का आवरण ढके रहता है, यह आवरण इस दशा मे लगभग

पूर्णतया विलुप्त हो चुका होता है और पहली बार सभी रग अपने पूर्ण वैभव तथा सपृक्तता के साथ प्रदर्शित होते है। इससे यह बात समझ मे आती है क्योकि प्रत्येक व्यक्ति जिसे वायुमार्ग से यात्रा करने का अवसर मिल चुका है, इन दृश्यो के प्रति आकर्षण का अनुभव करता है और अधिक ऊँचाइयो पर यह प्रभाव उत्तरोत्तर आल्पसपर्वत के प्रेक्षणो के सदृश होता जाता है।

१७३ ग. हाथ की ओट मे ऑख--एक बेलनाकार नली द्वारा प्रेक्षण[१]

दूरी पर गौर से देखते समय हम स्वभावत अपने हाथ से ऑख के ऊपर ओट दे लेते है। ऐसा हम क्यो करते है ? हाथ इधर-उधर से आनेवाले प्रकाश को ऑख मे प्रवेश करने से रोकता है जो ऑख मे स्थित माध्यम द्वारा परिक्षेपित होकर भू-दृश्य को एक सामान्य श्वेत प्रकाश के आवरण से आच्छादित कर देता। सुरक्षा का यह साधन उस वक्त और भी कारगर होता है, जब उँगलियो को हम इस तरह मोड लेते है कि वे मोटे तौर पर एक खोखले बेलन की शक्ल धारण कर लेती है और तब इसके भीतर से हम देखे तो भू-दृश्य के रग आश्चर्यजनक रूप से सशोधित हो जाते है। और ये प्रभाव उस दशा मे और भी लाक्षणिक होते है जब हम कार्डबोर्ड की बनी खोखली बेलनाकार नली मे से देखते है जिसके सिरो पर नन्हे छिद्र वाले डायफ्राम[२] बने हो, जैसा अगले अध्याय मे बतलाया गया है।

पहले निकट की चीजो को देखिए। उनके सभी रग अधिक सपृक्त और समृद्ध हो जाते है। देवदार का वृक्ष अधिक हरा दीखता है। सूराख को, जिसमे से आप देख रहे है, धीरे-धीरे यदि आप चौडा करे तब रग मे पीलेपन का पुट नजर आता है, चौडाई मे थोडी भी वृद्धि करे तो उसके कारण रग मे पर्य्याप्त अन्तर आ जाता है जिससे सिद्ध होता है प्रकाश का परिक्षेपण मुख्यत अल्पमान के कोण पर होता है। रग ज्यो-ज्यो अधिक सपृक्त होते जाते है त्यो-त्यो दृश्य का विपर्यास अधिक बढता जाता है। इससे इस बात का समाधान हो जाता है कि क्यो ऑखो पर हाथ की ओट लगाने के हम अभ्यस्त है।

१ इस विषय के सम्बन्ध मे हाल्डेन द्वारा कुछ प्रेक्षण किये गये है जिनका भलीभाँति समाधान नही किया जा सका है (The Philosophy of a Biologist Oxford 1935 p 52। खोखले बेलन मे से देखने पर रग मे पीलेपन का समावेश हो जाता है, हवा और समुद्र लगभग श्वेत दीखते है, यदि आकाश पर कोई बादल गुजरता है तब नीला रग पुन प्रगट हो जाता है (क्यों ?)। 2 Diaphragm

अव उसी तरीके से दूर के भू-दृश्य का अवलोकन करिए। आप पायेंगे कि यह प्रकाश के आवरण से आच्छादित दीखता है जो सामान्यत निलछौंवे रग का होता है और स्पष्टत वायु तथा धूल के नन्हे कणो द्वारा होनेवाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है। यह दिलचस्प बात है कि जब तक हम समूचे भू-दृश्य का अवलोकन करते है तब तक इस आवरण की ओर हमारा ध्यान नही जा पाता। पहाडो का दूरस्थ ढाल अक्सर भूरे या बादामी रग का दीखता है जिसपर जहाँ तहाँ हरे वन के खित्ते मौजूद दिखाई देते है, किन्तु बेलनाकार नली मे से देखने पर हम पाते है कि वास्तव मे ढाल का समस्त भाग नीला है वैसा ही जैसा कि वन, किन्तु इस दशा मे ढाल का रग अधिक गहरा दीखता है तथा इसका नीला रग अधिक भूरापन लिये रहता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस दशा मे अनजाने ही भू-दृश्य पर से हम उस एक सार वर्ण के आवरण को हटा लेते है। इसी प्रकार के प्रेक्षण मैदानो म भी किये जा सकते है। कमरे के अन्दर से भी बेलनाकार नली मे से जब भू-दृश्य को हम देखते है तो हम कह उठते है कि खिडकी के काँच गर्द से ढके है—इसके पूर्व हमारे ध्यान मे यह बात नही आ पायी थी।

१७४ नाइग्रोमीटर की सहायता से किये गये प्रयोग[1]

'नाइग्रोमीटर'[2] एक अत्यन्त सीधे-सादे यत्र को दिया गया विद्वत्तापूर्ण नाम है। कागज की दफ्ती की बनी हुई बेलनाकार खोखली नली लेते है जैसी ड्राइङ्ग कागज को डाक से भेजने के लिए काम मे लायी जाती है। इसकी लम्बाई २० इच तथा चौडाई लगभग १ इच होती है तथा दोनो सिरो पर छोटा ढक्कन लगा रहता है। एक ढक्कन मे १।४ इच व्यास का सूराख कटा रहता है, दूसरे मे १।८ इच व्यास का। फिर काले कागज की टोपी बेलन के दोनो सिरो पर चढा दी जाती है, बस उपकरण इस्तेमाल के लिए तैय्यार हो जाता है।

इस उपकरण मे से देखते समय दोनो मे से छोटे सूराख को आँख के सामने रखना चाहिए, तब दूसरा सूराख करीब-करीब पूर्णत अन्धेरी पृष्ठभूमि पर प्रकाशित दिखलाई पडता है। कुछ फासले पर स्थित खिडकी की ओर नली का मुँह करिए, तब आप खिडकी का खुला हुआ अपेक्षाकृत अधेरा भाग स्पष्ट रूप से नीलापन लिये हुए देखेंगे, जो आपके और खिडकी के दर्मियान की धूप से प्रकाशित हवा द्वारा परिक्षेपित होनेवाला प्रकाश है। खिडकी के निकट जाइए—जितना ही करीब आप जायँगे, प्रकाश का नीलापन

1 R. Wood, Phil Mag 1920, **39**, 423, 1920 2 Nigrometer

उतना ही कम होता जायेगा---परिक्षेपण करनेवाला वायु-स्तम्भ भी छोटा होता जाता है। छोटी दूरियो के लिए यह बेहतर होगा कि नाइग्रोमीटर को एक ऐसे बक्स की ओर
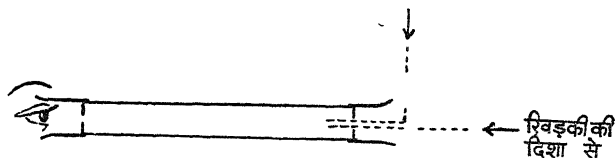
चित्र १३५—**नाइग्रोमीटर द्वारा प्रेक्षण; वायुमंडल के परिक्षेपण की नाप।**

इङ्गित करे जिसमे एक छोटा सूराख कटा हो और जिसके भीतर काला रग पुता हो, यह एक लगभग 'कृष्ण वस्तु'[१] सरीखा काम करता है।

अब हम यह ज्ञात करेगे कि वायु का कितना लम्बा स्तम्भ प्रकाश का उतना ही परिक्षेपण करता है जितना वायुमण्डलकी समस्त गहराई। कॉच का एक टुकडा लीजिए जिसकी पीठ पर कालिख पुती हो (उदाहरण के लिए फोटोग्राफी की प्लेट, जो खूब काली पड गयी हो)और इसे सूराख के आधे भाग के सामने नली के अक्ष के साथ ४५° के कोण पर रखिए। यदि आप ऐसा कर सके, तो प्रेक्षण की दिशा इस प्रकार चुनिए कि कॉच से परावर्त्तित होनेवाला प्रकाश आकाश के उस भाग से आये जो सूर्य से लगभग ९०° की दूरी पर हो। छिद्र के विना ढके हुए भाग मे से हमारी खुली हुई, अपेक्षाकृत अँधेरी खिडकी दीखती रहती है। अब हमे पीछे की ओर कितनी दूर जाना होगा ताकि छिद्र के दोनो अर्द्धभाग समान तीव्रता वाले प्रकाश से प्रकाशित दीखे ? मौसम जब स्वच्छ धूप का रहता है, तब अब पायेगे कि आवश्यक दूरी करीब ३५० गज होगी, जब धूप तो रहती है किन्तु थोडी धुन्ध भी रहती है तो आप पायेगे कि यह दूरी कदाचित् सिर्फ १४० गज ही होगी।

परावर्त्तन द्वारा कॉच प्रकाश की प्रारम्भिक तीव्रता को घटाकर ५ प्रतिशत कर देता है। अत सूर्य से ६०° के फासले पर आकाश द्वारा परिक्षेपण वायु के उस स्तम्भ द्वारा होने वाले परिक्षेपण के बराबर है जिसकी लम्बाई ३५०×२० गज=४ मील है (मोट तौर पर)। अब यदि वायुमण्डल को इस तरह दबा सकते कि इसकी समूची ऊँचाई के लिए इसका घनत्व उतना ही हो जाता जितना पृथ्वी की सतह के निकट, तब यह समतुल्य ऊँचाई ५ ५ मील प्राप्त होती। क्योकि प्रति वर्ग सेण्टीमीटर पर

1 Black body

खडे वायुस्तम्भ का सम्पूर्ण भार १०३३×१०³ ग्राम प्राप्त होता है, तथा धरती के निकट की हवा का भार प्रति घन सेण्टीमीटर ० ००१२९३ ग्राम है अत हमे समतुल्य ऊँचाई निम्नलिखित प्राप्त होती है—

$$\frac{१०३३ \times १०^{३}}{० ००१२९३} = ८ ८ \times १०^{५} \text{ सेन्टीमीटर} = ५ ५ \text{ मील।}$$

प्रकाशीय[1] रीति से प्राप्त किये गये अङ्क के साथ इसका मिलान कुछ बहुत बुरा नही है। इसे हम इस बात का प्रमाण मान सकते है कि परिक्षेपण करनेवाले कण, जिनके कारण वायुजनित परिपेक्षण उत्पन्न होता है, उसी किस्म के है जिस किस्म के वे कण है जो आकाश को नीला प्रकाश प्रदान करते है। और यह बात कि हमारा प्रयोग-फल, ४ मील, गणना से प्राप्त अङ्क ५ ५ मील से थोडा कम पडता है, यह सिद्ध करती है कि धूलिकणो की मात्रा अधिक होने के कारण हवा की निचली तहो मे ऊपर की तहो की अपेक्षा अधिक प्रवल परिक्षेपण होता है। इसके अतिरिक्त फल प्राप्त करने की हमारी क्रिया हर दृष्टि से अत्यन्त स्थूल विधि की क्रिया है, अत इससे तो हम अधिक-से-अधिक यही आशा कर सकते है कि बस सही कोटि का फल प्राप्त हो सकेगा।

१७५ साइनोमीटर[2] (आकाश का नीलापन नापने का यंत्र)

जस्ते की सफेदी (जिक ह्वाइट) तथा बिस्टर[3] को प्रशन-नीला[4] या कोवाल्ट-नीला के साथ विभिन्न अनुपातो मे मिलाइए। इन मिश्रणो का रग फीका नही पडने पाता है। कागज की दफ्ती की नन्ही-नन्ही पट्टियो पर इनके लेप चढाकर उनपर अङ्क लिख दीजिए, बस आकाश के वर्ण की नाप के लिए पर्य्याप्त साधन प्राप्त हो गये। यात्रा करते समय अब भी इस तरीके को काम मे ले आते है, तथा विभिन्न अङ्को की पट्टी के प्रकाश की सचरना की जॉच बाद मे वर्णविज्ञान की रीतियो द्वारा कर ली जाती है। व्यावहारिक उपयोग के लिए इस ढग के रग-माप के स्केलो का निर्माण किया जा चुका है और कुछ दिनो पूर्व तक ये बने बनाये खरीदे जा सकते थे। इसके प्रतिरूप आसानी से तैय्यार किये जा सकते है।[5]

1 Optical
2 Cyanometer
3 Bistre (पीलापन लिये हुए रक्तिम पीत रग)
4 Prussion blue (श्यामवर्ण लिये हुए नीला रग)
5 लिके के स्केल तथा इसके उपयोग के लिए देखिए Spangenberg, Annalin d. Hydrographic 71, 93 1943

नीलेपन के इन स्केलो का उपयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारी पीठ सूर्य की ओर हो तथा स्केल पर सूर्य की रोशनी पडती रहे।

१७६. आकाश पर प्रकाश का वितरण

सायनोमीटर की सहायता से, यदि यह आपके पास हो या अपने उपयोगी यत्र नाइग्रोमीटर की सहायता से किसी धूपवाले दिन आकाश मे प्रकाश के वितरण का अध्ययन कीजिए। विशेषतया अपने गिर्द के आकाश का अध्ययन मनोयोगपूर्वक करिए। आकाश के एक भाग की दूसरे भाग से तुलना करने के लिए किसी छोटे दर्पण को काम मे ले आइए (प्लेट XIII) और समान प्रदीप्ति की रेखाएँ (आइसोफोटो[1] रेखाएँ) तथा समान नीलेपन की रेखाएँ चित्र १३६ की भाँति खीचिए, सूर्य की विभिन्न ऊँचाइयो के लिए इस क्रिया को दुहराइए।
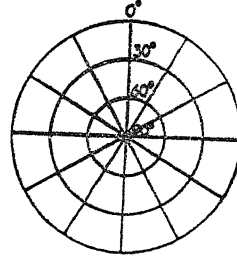
चित्र १३६—आकाश की समान प्रदीप्ति की रेखाएँ तथा समान नीलेपन की रेखाएँ खींचने के लिए मानचित्र।

'कुछ काल उपरान्त अभ्यस्त आँख को आइसोफोटो रेखाओ का मार्ग सहज ही दीख जाता है मानो आकाश की पृष्ठभूमि पर ये रेखाएँ नीले रग मे चित्रित कर दी गयी हो।'— सी० डोर्नो[2]।

सूर्य जब नीचे स्थित होता है तो सबसे कम प्रदीप्ति का बिन्दु सूर्य से गुजरनेवाले ऊर्ध्व वृत्त पर सूर्य से लगभग ९५° की दूरी पर पडता है और जब सूर्य ऊँचाई पर स्थित होता है तो यह बिन्दु इस वृत्त पर ६५° की दूरी पर पडता है। इस बिन्दु से ही 'अन्धकार रेखा' गुजरती है जो आकाश को दो भागो मे बाँटती है, एक प्रदीप्त भाग सूर्य के गिर्द स्थित होता है, दूसरा प्रदीप्त भाग इसके सामने पडता है। इन भागो की आकृति तथा आकार सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करते है। प्रकाश के इस वितरण को निम्नलिखित तीन घटनाओ के मिश्रित प्रभाव से उत्पन्न हुआ मान सकते है—

१ प्रकाश की दीप्ति सूर्य के निकट तेजी से बढती है, यहाँ तक कि यह चकाचौध उत्पन्न करने लग जाती है, इसका रग उत्तरोत्तर, अधिक उज्ज्वल श्वेत होता जाता है (आप को किसी इमारत के साये मे खडा होना चाहिए, साये के हाशिये के निकट।)

1 Isophotes 2 C Dorno

२ सूर्य से ९०° की दूरी पर आकाश का प्रकाश सबसे अधिक मन्द और सबसे अधिक नीला रहता है किन्तु

३ इसके अतिरिक्त एक और भी प्रभाव मौजूद होता है। प्रकाश-तीव्रता ऊर्ध्व बिन्दु से क्षितिज की ओर बढती है और साथ-ही-साथ इसका रग भी श्वेत मे परिणत होता जाता है। यह प्रभाव अभी ऊपर दिये गये दोनो प्रभावो के साथ मिल जाता है।

प्रथम घटना को नाइग्रोमीटर की सहायता से हम अच्छी तरह नाप सकते है। दृष्टिक्षेत्र के आधे भाग को ऐसे कॉच से ढक देते है जिसके पीछे काला रग पुता हो, यह कॉच सूर्य के निकट वाले आकाश के भाग को प्रतिविम्बित करता है, और दृष्टिक्षेत्र के शेष अर्द्ध भाग को हम सूर्य से ४०°–५०° पर स्थित आकाश की ओर इङ्गित करते है। नाइग्रोमीटर की दिशा इधर या उधर कुछ अशो तक बदलकर हम आसानी से ऐसी दिशा प्राप्त कर सकते है कि दृष्टिक्षेत्र के दोनो अर्द्धभाग समान प्रदीप्ति के दीखे। इस प्रकार दिशा के साथ प्रदीप्ति मे परिवर्त्तन, दृष्टिक्षेत्र के उस अर्द्धभाग मे विशेष प्रमुख होते है जो आकाश के चमकीले भाग के परावर्त्तन से प्रकाशित होता है। इस बात से कि इस तरह का सन्तुलन सम्भव है, यह निष्कर्ष निकलता है कि सूर्य के निकट के इस बिन्दु की प्रदीप्ति सूर्य से ४५° की दूरी पर पडने वाले बिन्दु की प्रदीप्ति की कम-से-कम बीस गुनी अवश्य होगी। आपतित प्रकाश की दिशा के साथ अल्पकोण बनाने वाली दिशा मे होनेवाले इस प्रबल परिक्षेपण का कारण हवा मे उतराते हुए स्थूल आकार के कण है जो धूल के जर्रे या नन्ही बूँदे, दोनो ही हो सकते है। यह इस तथ्य के अनुरूप है कि सूर्य के निकट आकाश का रग कम नीला होता है, बल्कि यह अधिक श्वेत, स्वय सूर्य की तरह कुछ पीलापन लिये हुए होता है, क्योकि बडे आकार के कण सभी वर्णों के प्रकाश का परिक्षेपण समान मात्रा मे करते है।

द्वितीय प्रभाव स्वय परिक्षेपण के नियम का ही परिणाम है। प्रति-सूर्य बिन्दु के मुकाबले मे सूर्य से ९०° कोण की दिशा मे परिक्षेपण कम-से-कम दो गुना अधिक निर्बल अवश्य होता है, फिर बडे आकार के कण इतने बडे कोण की दिशा मे मुश्किल से ही प्रकाश का परिक्षेपण कर पाते है। अत जो कुछ हमे दिखलाई पडता है वह स्वय वायु के अणुओ द्वारा परिक्षेपित गहरे नीले रग का प्रकाश होता है।

तृतीय प्रभाव मुख्यत हमारी ऑख और क्षितिज के दर्मियान की हवा की तह की अत्यधिक मोटाई के कारण उत्पन्न होता है। यद्यपि हवा का प्रत्येक कण बैगनी और नीली किरणो का विशेष अधिक परिमाण मे परिक्षेपण करता है, किन्तु परिक्षेपण करने

वाले कण से हमारी आँख तक के लम्बे मार्ग मे यही रग सबसे अधिक मात्रा मे क्षीण पड जाते है। वायु की तह जब बहुत ही अधिक मोटी होती है, तब ये दोनो प्रभाव ठीक एक दूसरे को नष्ट कर देते है।

मान लीजिए कि हमारी आँख से x दूरी पर आयतन का एक नन्हाँ सा परिमाण sdx भाग का परिक्षेपण करता है। हमारी आँख तक पहुँचते-पहुँचते प्रकाश की यह मात्रा e^{-sx} के अनुपात मे क्षीण हो जाती है। एक असीमित मोटी तह से प्राप्त होनेवाला प्रकाश इसी तरह के सभी आयतन परिमाणो dx से प्राप्त प्रकाशमात्राओ का योग होगा अर्थात् $\int_{0}^{\infty} se^{-sx}\, dx$ जो 1 के बराबर होगा। स्पष्ट है कि यह फल s से मुक्त है, अर्थात् इसमे रग नही है। अत क्षितिज के निकट का आकाश चमकीला और श्वेत हो जाता है और करीब-करीब सूर्य से प्रकाशित सफेद पर्दे के सदृश हो जाता है।

इस बात की भी बहुत कुछ सम्भावना है कि धरती के निकट के वायुस्तरो मे धूल के कण अधिक सख्या मे मौजूद होते है जो प्रकाश के परिक्षेपण को और अधिक तीव्र तथा वर्ण को अधिक श्वेत बना देते है यद्यपि इस दशा मे वायु स्तरो की मोटाई को असीमित नही मान सकते। हाल मे यह पाया गया है कि ऊपर वर्णन किये गये परिक्षेपण प्रभाव आकाश के रगो का पूर्णत समाधान नही करते। वायुमण्डल मे अत्यधिक ऊँचाई पर, अल्प मात्रा मे पायी जानेवाली गैस, ओजोन (जो आक्सीजन का एक विलक्षण रूप है) के कारण भी आकाश के रगो पर अतिरिक्त प्रभाव पडता है।[१] ओजोन का रग एक दम सच्चा नीला होता है जैसा नीले काँच का, और यह रग अवशोषण के कारण उत्पन्न होता है, परिक्षेपण की वजह से नही। ओजोन के प्रभाव का योग उस वक्त स्पष्ट होता है जब सूर्य क्षितिज के समीप पहुँचता है, यदि आकाश के रग के निर्माण मे केवल परिक्षेपण का ही हाथ होता तब इस दशा मे ऊर्ध्व विन्दु के निकट आकाश के रग मे भूरेपन का पुट नजर आना चाहिए, वल्कि पीलेपन का पुट भी। किन्तु यह अब भी अपना नीला वर्ण धारण किये रहता है—ऐसा ओजोन की उपस्थिति के कारण ही होता है।

सदैव, आकाश के सबसे कम प्रदीप्त भाग का ही रग अधिकतम नीला होता है और यही पर रग सबसे अधिक सपृक्त भी होता है। इसका अर्थ है कि कोई भी ऐसे बादल नही मिलते है जिनके अन्दर ० ०००१ मिलीमीटर से छोटे कण मौजूद हो क्योकि

1 E O Hulburt, Journ, Opt Soc Amer **43**, 113, 1953

स्थानीय तौर पर ये प्रकाश-तीव्रता मे वृद्धि कर देगे और तिसपर भी नीले वर्ण को बिना किसी तबदीली के छोड देगे।

रस्किन का कहना है कि नीला आकाश रग के सम उतार-चढाव का सर्वोत्तम दृष्टान्त है।[1] वह हमे परामर्श देता है कि सूर्यास्त के बाद आकाश के एक भाग का हम खिडकी के काँच द्वारा प्रतिबिम्बित अवस्था मे अध्ययन करे या फिर वृक्षो और मकानो के स्वाभाविक फ्रेम से घिरी हुई अवस्था मे उसका अध्ययन करे। इस बात की कल्पना करने का प्रयत्न कीजिए कि आप किसी चित्र का अवलोकन कर रहे है और तब रगो के परिवर्तन के साम्य तथा कोमलता की सराहना आप कर सकते है। आकाश के एक भाग से दूसरे भाग की ओर अपनी आँखे तेजी के साथ फिराइए ताकि आप की आँखे समानुयोजित होने के पूर्व, आकाश के वर्ण और दीप्ति की तुलना कर सके। या वाटिका ग्लोब (§ ११) का उपयोग कीजिए, अथवा ऐसा चश्मा काम मे लाइए जिसमे बादामी रग के शीशे लगे हो या फिर लाल रग का कॉच काम मे लाइए, आप अब अन्तर को और स्पष्ट देख पायेगे और अलका मेघ की सरचना की विपुल बारीकियाँ दीख पडेगी।

१७७ नीले आकाश के रंग की परिवर्तनशीलता

नीले आकाश का रग प्रतिदिन वायु मे मौजूद धूल तथा जलबिन्दुओ की मात्रा के अनुपात मे बदलता रहता है, इस प्रकार की तुलना के लिए सायनोमीटर अनिवार्य रूप से आवश्यक है। नीले आकाश पर दीप्ति का वितरण सामान्यत निम्नाङ्कित किस्मो मे से किसी एक के अनुसार होता है[2]—

(क) शुद्ध ध्रुवीय और महाद्वीपीय वायु, ऊँचे दाब का प्रदेश, और वर्ण की बौछारो के दर्मियान अस्थायी रूप से स्वच्छ हुआ आकाश,

गहरा नीला वर्ण लगभग सूर्य के निकट तक पहुँचता है, यद्यपि ज्यो-ज्यो यह सूर्य के निकट पहुँचता है त्यो-त्यो यह शनै शनै अधिक चमकीला और श्वेत होता जाता है।

(ख) समुद्री-उष्णकटिबन्धीय गर्दगुबार भरी हवा, धुन्ध, स्तार-मेघ, या स्तार-पुञ्ज मेघ के विलुप्त होने पर,

सूर्य के गिर्द हम एक धवल मण्डलक देखते है जो करीब १०° तक की दूरी तक लगभग एक समान रूप से चमकीला रहता है, इसके बाहर इसकी

1 Ruskin, Elements of Drawing

2 F Volz Ber d deutschen Wetter dienstes, 2, No. 13, 1954

चमक घट जाती है, विशेषतया २५° की दूरी पर, और तब इसका रग सामान्य पृष्ठभूमि की तरह का नीला हो जाता है।

(ग) विलुप्त होता हुआ ठण्डा पाला, देर से मौजूद वायुराशियाँ, शुष्क अवस्था की एक लम्बी अवधि के उपरान्त,

सूर्य के गिर्द एक नीला-श्वेत मण्डलक प्रगट होता है, जो १५°–३०° की दूरी पर एक बादामी या पीतवर्ण का वृत्ताकार हाशिया प्रदर्शित करता है और यह हाशिया आगे जाने पर नीले आकाश के रग मे मिल जाता है। (बिशप के छल्ले के लिए देखिए § १९६)।

सूर्य की ऊँचाई जितनी कम होती है, ख और ग मे वर्णित मण्डलक उतने ही अधिक बडे होते है। सूर्य्य की ऊँचाई जब ४५° से घटकर १०° पर आती है तो मण्डलक का आकार दो गुना हो जाता है। विशेष दशाओ मे, जब बिशप का छल्ला दृष्टिगोचर होता है तो असाधारण रूप से बडे आकार का मण्डलक प्रगट हो सकता है।

छुट्टी के दिनो मे इटली के आकाश की तुलना आप यहाँ के आकाश के नीले रग से कीजिए। इङ्गलैण्ड के नीले आकाश की तुलना उष्ण कटिबध के आकाश से करिए।

दिन मे विभिन्न समयो पर आकाश के नीले रगो की तुलना करिए। सूर्योदय या सूर्य्यास्त के समय आकाश अधिकतम नीला रहता है[1] और यह बात सहज ही समझ मे भी आती है क्योकि ऊर्ध्व बिन्दु के निकट के बिन्दु इस वक्त सूर्य्य से तथा क्षितिज से ९०° की दूरी पर स्थित होते है (देखिए § १७६)।

चित्र १३७—छोटे बड़े आकार की कणिकाओं द्वारा विभिन्न दिशाओ मे प्रकाश का परिक्षेपण।
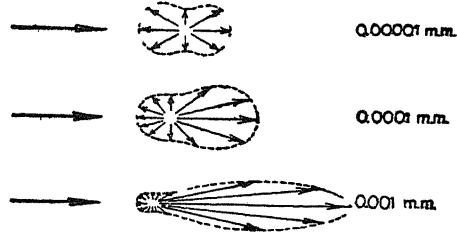
नन्हे कण बैंगनी और नीले प्रकाश का विशेष मात्रा मे परिक्षेपण करते है और यह परिक्षेपण हर दिशा में समान मात्रा मे होता है।

बड़े आकार के कण सभी वर्ण के प्रकाश (श्वेत प्रकाश) का परिक्षेपण समान प्रबलता के साथ करते है और यह परिक्षेपण अधिकांश अल्पकोण वाली दिशा में ही होता है (चित्र १३७)।

1 Phys Rev **26**, 497, 1908

१७८. दूर के आकाश का रग कब नारङ्गी वर्ण का होता है और कब हरे वर्ण का ?

हम देख चुके है कि आकाश जब निरभ्र होता है तो क्षितिज का रग वैसा ही होता है जैसा किसी सफेद कागज का, जिसपर सूर्य का प्रकाश सीधे ही पड रहा हो। अत स्पष्ट है कि सूर्यास्त के लगभग, जबकि सभी चीजे सूर्य से सुहावने नारङ्गी रग के प्रकाश से आलोकित होती रहती है, वही रग समूचे क्षितिज पर भी प्रगट होता है।

किन्तु ऐसे भी अवसर आते है जब दूरस्थ क्षितिज, सूर्य के अस्त होने के क्षण से बहुत पहले ही नारङ्गी रग धारण कर लेता है। घने श्यामवर्ण के बादलो की पेटी सम्पूर्ण भू-दृश्य के एक सिरे से दूसरे सिरे तक छायी रहती है, और बहुत दूर क्षितिज के निकट नीचे ही केवल थोडा-सा खुला भाग दीखता है जहाँ से सूर्य का प्रकाश आता रहता है (चित्र १३८)। ऐसे मौको पर आकाश के इस नन्हे से भाग का रग आश्चर्यजनक रूपसे सुहावने नारङ्गी वर्ण का होता है जो दूरस्थ फार्म आदि के अन्धकारमय काले सिल्युएत प्रस्तुत करता है और ये सिल्युएत आकृतियाँ, भू-दृश्य के शेष भाग के अन्धकारमय होनेके कारण और भी अधिक प्रभावोत्पादक बन जाती है।

चित्र १३८—भू-दृश्य का एक बड़ा भाग जब घने बादलो की पेटी से ढका होता है तब कभी-कभी क्षितिज खुशनुमा नारंगी वर्ण का दिखलाई पडता है।

क्रिया इस प्रकार होती है, x स्थिति पर वायु के एक आयतन पर विचार कीजिए जो ऐसी सूर्यरश्मियो द्वारा प्रदीप्त हो रही है जो वायुमण्डल मे X लम्बाई की दूरी तय करके आती है। मान लीजिए कि तय किये गये मार्ग के प्रति किलोमीटर द्वारा प्रकाश का s भिन्नाश परिक्षेपित होता है, तब x स्थिति पर प्रकाश तीव्रता e^{-sX} की समानुपाती होगी। x स्थिति के अणु हमारी आँख की दिशा मे भिन्नाश s के अनुपात में आपाती प्रकाश परिक्षेपित करते है, अत यदि x स्थिति पर प्रदीप्ति-तीव्रता इकाई हो, तो इसका भिन्नाश se^{-sx} हमारी आँख मे पहुँचेगा। किन्तु x स्थिति पर प्रकाश-तीव्रता e^{-sX} की समानुपाती है, अत आँख मे वास्तव मे प्रवेश करने वाले प्रकाश की मात्रा $se^{-sX} \times$

e^{-px} या $se^{-s(X+x)}$ समानुपाती होगी। इस पद का मान s के सामान्य मान के लिए अधिकतम होता है, किन्तु s का मान जब बहुत बडा या बहुत छोटा होता है तो इस पद का मान करीब-करीब शून्य हो जाता है। दूसरे शब्दो मे, अधिक लम्बे तरग-दैर्ध्य का प्रकाश जिस वायुस्तर से गुजरता है उसके द्वारा वह अधिक मात्रा मे परिक्षेपित नही होता, इसके प्रतिकूल लघु तरग-दैर्ध्य का प्रकाश वायुमण्डल मे से होकर लम्बा रास्ता तय करने मे अत्यधिक मात्रा मे क्षीण हो जाता है। चित्र १३९ की ग्राफ रेखाएँ यह प्रदर्शित करती है कि एसे वायु-प्रदेशो से जिनके लिए $X+x$ क्रमश ०, ५, १०, १५, २५ और ३० मील है, हमारी आँख तक पहुँचनेवाले प्रकाश की सरचना कैसी होती है। महत्तम मान, अर्थात् हम तक पहुँचने वाले प्रकाश मे महत्तम तीव्रता वाला वर्ण, प्रदीप्त होने वाले वायुप्रदेश की दूरी के बढने के अनुसार ही नीले से लाल रग की ओर खिसकता चला जाता है। जब $X+x$ का मान
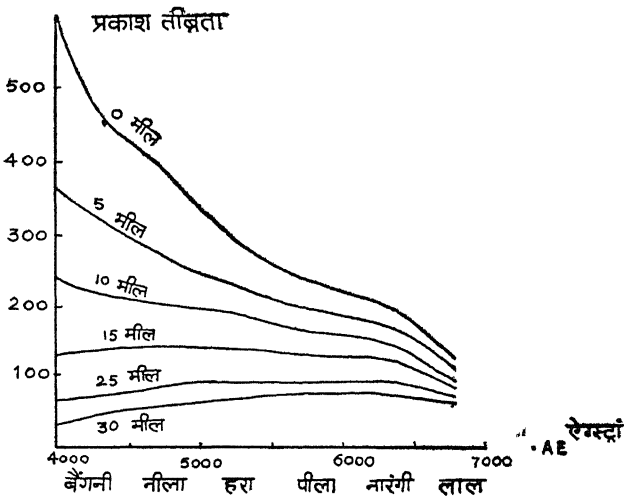
चित्र १३९—आँख से विभिन्न दूरियो पर स्थित वायु के एक छोटे आयतनवाले प्रकाश की सरचना।

२० मील है, तब इस महत्तम तीव्रता वाले प्रकाश का वर्ण करीब-करीब हरा रहता है, किन्तु ३० मील के लिए यह नारङ्गी रग मे परिणत हो गया है।

कुछ अवसरो पर आकाश के वर्ण मे दिखाई देने वाले मनोरम हरे रग की उत्पत्ति का भी इससे समाधान होता है जैसे हिमपात के बाद। ग्राफ चित्र १३९ मे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि इन रग-आभा मे हरा वर्ण अन्य वर्णों की तुलना मे थोडी ही अधिक प्रमुखता प्राप्त करता है, अत यह हरा रग केवल अल्पमात्रा मे ही सतृप्त होगा, प्रेक्षण मे भी ऐसा ही पाया जाता है।

क्षितिज से आने वाले प्रकाश मे हरे और पीले वर्ण के अवयव वास्तव मे सर्दैव ही मौजूद होते है, यद्यपि जब वायु बादल विहीन होती है तो निकट के कणो से आने वाले नीले प्रकाश के साथ वे मिलकर श्वेत प्रकाश उत्पन्न करते है। ज्योही प्रकाशपथ के एक हिस्से पर कोई छाया पडती है, तो तुरन्त प्रकाशवर्ण के अलौकिक प्रभाव उत्पन्न होते है, और आकाश मे घिरे बादल जब कभी विभिन्न स्थलो पर फटकर उसके खुले भाग प्रदर्शित करते है तो रग के तरह-तरह के शेडो का निर्माण सम्भव होता है।

१७९. सूर्यग्रहण के अवसर पर आकाश का रग

सूर्य का आशिक ग्रहण हमे अवसर प्रदान करता है कि हम देख सके कि चन्द्र की छाया के कारण आकाश का रग किस प्रकार बदल जाता है तथा यह कि जिस ओर से छाया आती है उस ओर का रग, जिधर की ओर छाया बढती है उधर के रग से किस प्रकार भिन्न होता है।

सूर्य का पूर्णग्रहण, जो दुर्भाग्यवश अत्यन्त ही दुर्लभ अवसरो पर लगता है, कही अधिक शानदार किस्म के रगो का प्रदर्शन करता है।

आकाश के जिस ओर से छाया आती है उधर का रग गहरा नीललोहित होता है, मानो गरज तरज वाला तूफान उठने वाला हो। सर्वग्रास पर दूरस्थ आकाश गहरे नारङ्गी वर्ण का होता है क्योकि उस स्थान के वायुमण्डल के भाग पूर्ण ग्रहण के क्षेत्र की सीमा से बाहर होने के कारण सूर्य की किरणो द्वारा अब भी प्रकाशित होते रहते है और इस क्षण वायुमण्डल के अप्रकाशित भाग के पार उन्हे हम सीधे ही देखते है (देखिए § १७८)।

१८० नीले आकाश के प्रकाश का ध्रुवण (देखिए § १८२)

नीले आकाश से आने वाला प्रकाश काफी अधिक मात्रा मे ध्रुवित होता है। यह प्रभाव विशेषतया उस वक्त स्पष्ट होता है जब कि सूर्य आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित होता है। 'निकल' की सहायता से इन प्रभावो का निरीक्षण किया जा सकता है या और भी अधिक सरल तरीका यह होगा कि कॉच का टुकडा काम मे लाये जिसके

पीछे कालिख पुती हो।[1] यदि कॉच पर प्रकाश की किरण अभिलम्ब के साथ लगभग ६०° का आयतनकोण (ध्रुवण कोण) बनाती हुई गिरती है, तो परावर्त्तित प्रकाश लगभग पूर्णरूप से ध्रुवित होता है और परावर्त्तित होने वाले कम्पनो की दिशा आयतन-तल के समकोण होती है।

अब हम देखेगे कि ठीक ऊर्ध्व दिशा का आकाश कॉच मे किस प्रकार प्रतिबिम्बित होता है, इस कॉच को ऑख की सतह से करीब ८ इच ऊपर रखना चाहिए ताकि यथासम्भव परावर्त्तन ध्रुवणकोण पर ही हो (चित्र १४०, a)। यदि आप दिक्-सूचक की सभी दिशाओ की ओर बारी-बारी से अपना रुख करे और साथ ही साथ कॉच को इस प्रकार पकडे रहे कि आपके सिर के ऊपर के आकाश के **उसी भाग** को यह सदैव प्रतिबिम्बित करता रहे तो आप देखेगे कि परावर्त्तित प्रतिबिम्ब उस वक्त सबसे अधिक **चटकीला** होता है जब आप सूर्य्य की ओर मुँह करते है या जब ठीक उसकी विपरीत दिशा मे, किन्तु इन दिशाओ की समकोण दिशा मे जब आप खडे होते है तो प्रतिविम्ब **मन्द प्रकाश** का दीखता है। इससे सिद्ध होता है कि ऊर्ध्व बिन्दु के आकाश से आने वाला प्रकाश उस धरातल के समकोण दिशा मे कम्पन करता है जिसमे सूर्य्य, ऊर्ध्व बिन्दु तथा आप की ऑख स्थित होती है। जब कभी प्रकाश क्षुद्र कणो से परिक्षेपित होता है तो यह नियम व्यापक रूप से लागू होता है।

इसके बाद क्षितिज के निकट वाले आकाश के प्रतिबिम्बन की हम जॉच करेगे, और कॉच को इस तरह रखे रहेगे कि आपतन और परावर्त्तन के कोण ध्रुवण कोण के बराबर हो (चित्र १४०, b)। हम देखते है कि सूर्य की ओर तथा उसके प्रतिकूल दिशा मे प्रतिबिम्ब चटकीला दीखता है और इसकी समकोण दिशा मे मन्द प्रकाश का। सूर्य की दिशा मे यह चटकीला दीखे तो कोई आश्चर्य की बात नही, किन्तु अन्य तीन दिशाओ मे ऑखो को, परावर्त्तक कॉच के बिना, आकाश बहुत कुछ एक-समान प्रदीप्ति का दीखता है, अत परावर्त्तित प्रकाश मे जो अन्तर हम देखते है, वह यथार्थ मे ध्रुवण की घटना है। सूर्य की प्रतिकूल दिशा के क्षितिज से हमारे पास आने वाला प्रकाश केवल अल्पमात्रा मे ध्रुवित होता है जबकि इसकी समकोण दिशा मे ध्रुवण प्रबल मात्रा मे होता है और कम्पन ऊर्ध्व दिशा मे होते है, अर्थात् सूर्य, प्रेक्षित बिन्दु, तथा ऑख से गुजरने वाले तल की समकोण दिशा मे।

1 It is possible to buy polarising film a newly invented device called polaroid

प्रश्न उठता है कि क्या स्वय प्रकृति कभी हमारे लिए इस प्रकार के परीक्षणो का आयोजन करती है। अवश्य ही शान्त पानी पर होने वाले आकाश के प्रतिबिम्बन मे भी हमे मन्द प्रकाश का भाग दीखेगा। पानी की सतह को हम ऐसी दिशा से देखते है कि आपतन कोण ५०° से कुछ अधिक ही हो, और तब चारो दिशाओ मे हम घूम जाते है, सूर्य जब आकाश मे थोडी ऊंचाई पर ही स्थित होता है तो उत्तर और दक्षिण
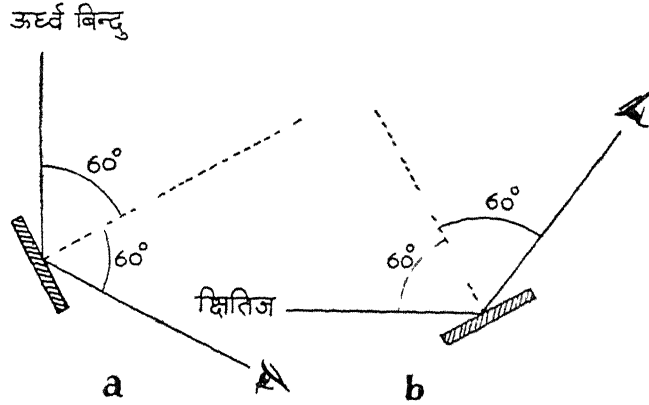
चित्र १४०–**आकाश के प्रकाश के ध्रुवण की जांच, (a) ऊर्ध्व बिन्दु के निकट, (b) क्षितिज के निकट।**

की ओर का पानी पूरब और पश्चिम की ओर के पानी की अपेक्षा स्पष्ट रूप से कम प्रकाशित दीखता है। मेरा निज का अनुभव यह है कि यह प्रयोग कभी-कभी ही सफल होता है, सदैव नही। आम तौर पर या तो समूचे आकाश की प्रदीप्ति पर्याप्त रूप से एक समान नही होती या फिर पानी की सतह पर्याप्त रूप से समतल नही होती।

और भी अधिक विश्वसनीय तथ्य है कि कभी-कभी छोटे बादल, जो हवा मे मुश्किल से ही दृष्टिगोचर हो पाते है, पानी के प्रतिबिम्बन मे अधिक स्पष्ट दिखलाई पडते है क्योकि इनका प्रकाश, ध्रुवित न होने के कारण परावर्त्तन द्वारा आकाश के ध्रुवित प्रकाश की तुलना मे कम मात्रा मे क्षीण हो पाता है। अवश्य यही प्रभाव और भी अधिक स्पष्ट उस वक्त होता है जब आकाश और बादल को 'निकल' के पार से देखते है या कालिख लगे काँच से उनका परावर्त्तन कराते है। अच्छा होगा यदि सूर्य जब पूरब या पच्छिम मे थोडी ही ऊँचाई पर हो, हम ऐसे किसी छोटे बादल को देखे

जो उत्तर या दक्षिण की ओर २०° से लेकर ४०° की ऊँचाई पर स्थित हो, जहाँ कि आकाश मे प्रकाश-ध्रुवण अधिकतम होता है। प्रकाश के कम्पन की दिशा आकाश के इस भाग को सूर्य से मिलाने वाली रेखा के समकोण होती है, अर्थात् कम्पन ऊर्ध्व धरातल मे होते है, अत सामने मेज पर पडे हुए काँच मे आकाश के इस स्थल से आये हुए प्रकाश को अत्यन्त क्षीण अवस्था मे हम देखते है और तब नन्हा बादल अधिक स्पष्ट दिखलाई पडता है।

आकाश के ध्रुवण की जाँच के निमित्त उपयुक्त उपकरण सवार्त का ध्रुवणदर्शी[1] है जो एक सरल यत्र होने के बावजूद भी अत्यन्त सुग्राही होता है। किन्तु इस ख्याल से ही कि कुछ थोडे-से ही प्रकृति के पुजारी इतने भाग्यशाली होगे कि उनके पास यह यत्र मौजूद हो, तथा इस कारण भी कि ये घटनाएँ ऋतुविज्ञान सम्बन्धी प्रकाश के एक पूर्णतया पृथक् क्षेत्र की चीजे है, हम यहाँ पर इस विषय से सम्बन्ध रखने वाले कुछ ग्रन्थ-साहित्य का उल्लेख करने तक ही अपने को सीमित रखेगे।[2] उन व्यक्तियो के लिए जो क्रमबद्ध प्रेक्षण करने मे रुचि रखते है, यह एक अत्यन्त ही स्फूर्तिदायक तथा विविधतापूर्ण विषय है।

किसी 'निकल' को उसके अक्ष के गिर्द केवल घुमाकर, उसकी सहायता से आकाश के ध्रुवण का प्रेक्षण आसानी से कर सकते है। निम्नलिखित विधि एक अत्यन्त सवेदी विधि है, किन्तु सन्ध्या के धुँधलके मे ही इसे व्यवहार मे ला सकते है। किसी तारा को चुन लीजिए जो इतनी फीकी रोशनी देता हो कि बस वह मुश्किल से दीखता भर हो और 'निकल' मे से देखते हुए यह ज्ञात करने का प्रयत्न कीजिए कि क्या 'निकल' की कुछ विशेष स्थितियो मे तारे की दृश्यता उसकी अन्य स्थितियो की तुलना मे बढ जाती है। यह विधि उसी सिद्धान्त पर आधारित है जो ऊपर दिये गये नन्हे बादलो के प्रेक्षण के लिए लागू होता है। तारे का प्रकाश ध्रुवित नही होता और पृष्ठभूमि का प्रकाश जितना अधिक मन्द होगा उतना ही अधिक स्पष्ट वह तारा प्रतीत होगा, अत तारे की दृश्यता मे परिवर्त्तन, पृष्ठभूमि की प्रदीप्ति के परिवर्त्तन का सूचक है, फल-

1 Savart's poloriscope

2 Fr Busch and Chr Jensen, Tatsachen und Theorien der atmosphorischen polarisation (Hamburg, 1911), Plassmann, Ann d Hydr **40**, 478, 1912
Jensen in Kleinschmidt, Hardbuck der Meteor Instrumente p. 666 (Berlin, 1935)

स्वरूप ध्रुवण का सूचक भी। सूर्य की ओर की दिशा की समकोण दिशा मे, तारे की दृश्यता मे करीब-करीब दीप्ति-माप-श्रेणी के १ अंक की वृद्धि हो जाती है।

यही वजह है कि दिन के समय 'निकल' (nicol) दूरस्थ वस्तुओ के लिए उनकी दृश्यता बढा देता है बशर्ते इसे इस प्रकार घुमाया जाय कि आकाश से परिक्षेपित होने वाले प्रकाश को यह रोक दे।[1] दूर से सफेद रंग के खम्भे, प्रकाश-गृह, समुद्र के उजले रंग के पक्षी आदि मटमैली पृष्ठभूमि की तुलना मे अधिक स्पष्ट दीखते हैं—अवश्य [illegible] वाले दिन [illegible] है, धुन्ध वाले दिन भूरे आकाश से आने वाले प्रकार का ध्रुवण पर्याप्त मात्रा मे नही हो पाता। सूर्य से ९०° कोण वाली दिशा मे आम तौर से 'निकल' का प्रभाव सर्वाधिक होता है।

कालिख लगे कॉच की सहायता से नीचे आकाश के विभिन्न विन्दुओ के प्रकाश के ध्रुवण की जाँच कीजिए और इस प्रकार उनका एक आम सर्वेक्षण प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिए। क्या यह सम्भव होगा कि ठीक सूर्य के ऊपर की, तथा प्रति सूर्य के ऊपर की असाधारण ध्रुवण की दिशाओ मे प्रेक्षण प्राप्त कर सके? और उस दशा मे क्या होगा जब कि नीचे आकाश के प्रकाश को वाटिका-ग्लोब द्वारा परावर्त्तित करा ले और तब ध्रुवण कोण पर कालिख लगे काँच द्वारा इसका प्रेक्षण करे?

१८१. हेडिन्जर ब्रुश[2]

प्रयोगशाला के अनेक भौतिकीज्ञ उस वक्त आश्चर्य करते है तथा अविश्वास प्रकट करते है जब हम उन्हे बतलाते है कि केवल कोरी ऑखो से, बिना किसी यंत्र की सहायता लिये, हम देख सकते है कि आकाश का प्रकाश ध्रुवित होता है! किन्तु इसमे थोडे अभ्यास की आवश्यकता पडती है। इसके लिए आरम्भ हमे पूर्णतया ध्रुवित प्रकाश से करना चाहिए जो कॉच की सतह से ध्रुवण-कोण पर आकाश की रोशनी को परावर्त्तित कराने पर मिलता है (§ १८०)। समान रूप से नीले रंग के आकाश के प्रतिबिम्ब को मिनट दो मिनट तक देखते रहने पर एक प्रकार का 'संगमर्मर' जैसा प्रभाव प्रकट होने लगता है। उस दिशा मे जिधर हमारी ऑख देख रही है, थोडी ही देर बाद एक अद्भुत आकृति दिखलाई देती है जिसे 'हेडिन्जर

1 H N Russell, Science, 63, 616, 1917

2 Haidinger's, Brush, Busch and Jensen, see note on p. 256. Helmholtz, Physiologische Optik, 3 rd ed part 2, p 256. Th Mendelssohn, Revue Fac Sc Istambul, 3, Fasc 2, 1938

ब्रुश' का नाम दिया गया है, यह शक्ल चित्र १४१ मे दिखायी गयी आकृति से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। यह एक पीत वर्ण का ब्रुश-जैसा होता है जिसके
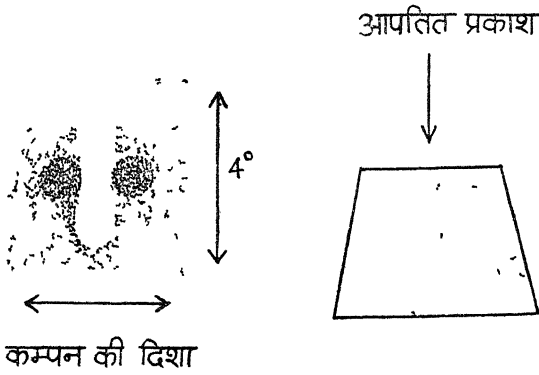
चित्र १४१—**हेडिजर ब्रुश; एक अद्भुत आकृति जो नीले आकाश मे देखी जा सकती है और यह ध्रुवण की सूचक है।**
(प्रकाश का ब्रुश पीत वर्ण का होता है, इसके बगल के बादल नीले वर्ण के होते हैं।)

दोनो ओर नीला धब्बा मौजूद रहता है। पीत वर्ण का ब्रुश काँच पर परावर्त्तित होन वाले प्रकाश के आपतन धरातल मे स्थित होता है, दूसरे शब्दो मे, यह पीला ब्रुश सदैव प्रकाश की कम्पन दिशा के **समकोण** पडता है।

यह ब्रुश चन्द सेकण्डो मे विलुप्त हो जाता है, किन्तु यदि आप अपनी दृष्टि उसके निकट ही काँच के किसी बिन्दु पर गडाये रखे तो आपको ब्रुश फिर दिखलाई देगा। यह आकृति आसपास की पृष्ठभूमि पर आसानी से दृष्टिगोचर नही हो पाती, और अनुमानत इसमे मुख्य बात यह दीखती है कि कैसे अनिवार्य रूप से अव्यवस्थित पृष्ठ-भूमि पर इस धुधली आकृति को पहचान ले। इसके लिए दिन मे कई वार चन्द मिनटो के लिए अभ्यास करना चाहिए। एक या दो दिन उपरान्त नीले आकाश की ओर देखने पर हेडिन्जर ब्रुश को काफी आसानी से पहचाना जा सकता है यद्यपि आकाश का प्रकाश केवल आशिक रूप से ही ध्रुवित होता है। सन्ध्या के धुँधलके मे यदि मै क्षितिज की ओर स्थिर दृष्टि से देखता हूँ तो इस ब्रुश को मै विशेष स्पष्ट देख पाता हूँ, सारा आकाश मानो एक जाली से घिरा जान पडता है, जिस ओर दृष्टि डालता हूँ उधर ही यह विशिष्ट आकृति दिखलाई पडती है। इस बात से बडी प्रसन्नता प्राप्त

होती है कि इस तरीके से, बिना किसी यत्र की सहायता लिये, ध्रुवण की दिशा मालूम कर सक्ते है, और यही नही, बल्कि ध्रुवण की मात्रा का भी अन्दाज लगा सकते है। पीत वर्ण के ब्रुश को यदि वृहत् वृत्त के चाप की दिशा मे बढाएँ तो आम तौर पर यह सूर्य की ओर इगित करता है जो यह प्रगट करता है कि परिक्षेपित प्रकाश सामान्यत. उस धरातल की समकोण दिशा मे कम्पन करता है जिसमे सूर्य, वायु के अणु तथा आँख स्थित होती है।

हेडिजर ब्रुश का अवलोकन और भी अधिक स्पष्ट रूप से वाटिका-ग्लोब मे होने वाले आकाश के प्रतिबिम्बन मे किया जा सकता है जबकि सूर्य का प्रतिबिम्ब प्रेक्षक के सिरे की आड मे आ जाता है (देखिए § ११)।

इस दशा मे सूर्य के निकट एक छोटा सा ऐसा प्रदेश भी देखा जा सकता है जिसमे पीला ब्रुश सूर्य की ओर इङ्गित नही करता, बल्कि इसकी समकोण दिशा मे वह इङ्गित करता है। सामान्य प्रभाव तथा अतिक्रम प्रभाव वाले प्रदेशो के दर्मियान की सीमा एक छाया-जैसी दीखती है।

नेत्र-रेटिना के पीतबिन्दु के द्विवर्णिक प्रभाव[1] के कारण हेडिजर ब्रुश का निर्माण होता है। सभी प्रेक्षको को यह अद्भुत आकृति एक-सी नही दिखलाई पडती, यह बात निस्सन्देह इस पीत बिन्दु की शक्ल और सरचना पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए कुछ लोगो को इस आकृति का नीला हिस्सा नही दीखता, कुछ को पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक मिला हुआ दिखलाई देता है तो अन्य लोगो को नीला भाग एक दूसरे से मिला दीखता है (चित्र १४२)।
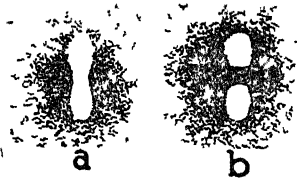
चित्र १४२—हेडिजर ब्रुश सदैव एक ही तरह का नहीं दीखता है। (a) यहाँ ब्रुश का पीतवर्ण अविरत एक सिरे से दूसरे सिरे तक चला गया है। (b) यहाँ नीला वर्ण अविरत है।

निम्नलिखित दोनो समभिकथन एक दूसरे के विरोधी है,

(क) प्रथम अनुभूति यह होती है कि पीला भाग एक सिरे से दूसरे सिरे तक अविच्छिन्न है, अधिक देर तक देखते रहने से जब आँख मे श्रान्ति आ जाती है तब प्रतिबिम्ब बदल जाता है और नीला भाग अविच्छिन्न दीखता है।[2]

1 Dichroism 2 Hardinger, Ann d Phys 67, 435, 1846

(ख) सदैव उस रग का प्रदेश अविच्छिन्न दीखता है जो आँखो को मिलाने वाली रेखा के समकोण पडता है। अत यदि नीले आकाश के किसी निश्चित बिन्दु को आप देखे और अपने सिर को ९०° घुमा दे तो पहले आप एक रग को अविच्छिन्न देखेगे और बाद मे दूसरे रग को।[1] आकृति की अस्थायी प्रकृति के कारण, इसके बारे मे किसी निश्चित मत का स्थिर करना कठिन होता है।

आँख के सामने यदि हरा या नीला काँच रखे तो हेडिजर ब्रुश बहुत अधिक स्पष्टता से देखा जा सकता है, जबकि लाल या पीले काँच को आँख के सामने रखने पर यह विलुप्त हो जाता है।[2] यह एक दिलचस्प बात है कि क्षितिज पर यह ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति के मुकाबले मे दो गुने आकार का दीखता है, उसी प्रकार जिस तरह सूर्य, चन्द्रमा और तारा-समूह क्षितिज पर अपेक्षाकृत बडे दीखते है।

१८२ कुहरे और धुन्ध द्वारा प्रकाश का परिक्षेपण

तडके सुबह का हलका धुन्ध, जिसमे से होकर सूर्य चमकता हुआ दीखता हो, आह्लाद तथा स्फूर्तिदायक होता है और अत्यन्त नीरस दृश्य को भी काव्यजनित सौदर्य प्रदान करता है। अधिक घना धुन्ध दूर के दृश्य के लिए रुकावट डालता है, किन्तु निकट के वृक्ष और मकानो पर इस तरह का धुँधलापन डाल देता है जैसा हम केवल दूर की वस्तुओ पर देखने के अभ्यस्त है, इसी के साथ निकट की इन वस्तुओ द्वारा सम्मुख होने वाले बडे आकार के कोण से हम विशेष प्रभावित होते है और ये कोण अपने तई इस बात का आभास देते है मानो ये वस्तुएँ असाधारण रूप से ऊँची हो। इन अनुभूतियो के (जो प्राय अवचेतन मन मे ही होती है) परस्पर मिलने के फलस्वरूप बडी इमारते महलो-जैसी शानदार प्रतीत होती है तथा मीनारो की चोटियाँ बादलो को छूती जान पडती है।[3]

धुन्ध मे से देखने पर वस्तुओ के रग मे आम तौर पर कोई परिवर्त्तन नही दीखता। सूर्य की चमक यद्यपि बहुत अधिक घट जाती है, किन्तु अब भी यह उज्ज्वल रहता है और सडक पर लगे निकट के लैम्प तथा दूर के लैम्प के रग मे कोई उल्लेखनीय अन्तर

1 Brewster, Ann d Phys **107**, 346, 1859 Aphascıntly ın agreement, A Hoffmann, Weter 34, 133, 1917

2 Stokes, Papers 5

3 Vaughan Cornısh, Geogr, Journ **67**, 506, 1926

नही दीखता । किन्तु कुछ अन्य उदाहरण भी है जैसे सूर्य जब क्षितिज से काफी ऊँचाई पर होता है तो कुहरे मे से वह लाल रग का दीखता है । अवश्य सब कुछ धुन्ध की बूँदो के आकार पर निर्भर करता है, बूदे जब लगभग प्रकाश के तरग-दैर्ध्य के बराबर छोटी होती है, तो प्रकाशस्रोत ललछवे रग का दीखता है, अत ये मुख्यत नीली और बैगनी किरणो का परिक्षेपण करती है, जबकि पीली और लाल किरणो का परिक्षेपण अपेक्षाकृत कम मात्रा मे होता है (§ १७१) ।

ऐसे अवसरो पर स्वय धुन्ध श्वेत रग का होता है, निश्चय ही नारङ्गी वर्ण के सूर्य के मुकाबले मे तो यह अधिक ही सफेद दीखता है क्योकि यह पार आनेवाली किरणो तथा परिक्षेपित किरणो, दोनो से ही प्रकाशित होता है । इस प्रकार का घना धुन्ध नीलापन लिये नही होता, परिक्षेपित प्रकाश सभवत आपतित प्रकाश का ९९ प्रतिशत होता है और इस कारण समष्टि रूप से धुन्ध को सफेद ही दीखना चाहिए यद्यपि आयतन का प्रत्येक नन्हा भाग नीले प्रकाश का परिक्षेपण विशेप अधिक मात्रा मे भले ही करे ।

अपेक्षाकृत बडी बूंदे, जिनसे धुन्ध का निर्माण होता है, प्रकाश के अधिकाश को सामने की ओर, प्रारम्भिक आपाती दिशा के साथ अल्प कोण बनाने वाली दिशा मे परिक्षेपित करती है (§ १७७)। इससे इस बात का स्पष्टीकरण हो जाता है कि क्यो हलका धुन्ध लगभग सूर्य की दिशा मे देखने पर अत्यधिक स्पष्ट दिखलाई पडता है । जगल के अन्दर धूप मे धुन्ध की बढिया फोटो रोशनी के खिलाफ रख ली जाती है जब कि सूर्य की ओर से तनिक हटी हुई दिशा मे केमरे का मुह रखते है ।

अपेक्षाकृत घने धुन्ध के बारे मे सबसे अधिक आश्चर्यजनक बात है छाया का 'ठोसपन' (चित्र १४३) । किसी वृक्ष की ओर जाने पर जिसके तने पर सूर्य की
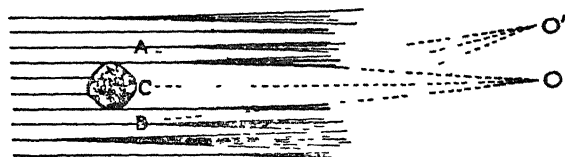
चित्र १४३--**धुन्ध में वस्तु के पीछे छायाएं कैसे बनती हैं ।**

रोशनी पड रही हो, आप AO तथा BO दिशा मे ढेर-सा प्रकाश देखेगे क्योकि इन दिशाओ मे धुन्ध की अनेक बूँदे पडती है जो प्रकाश का परिक्षेपण करके वायु को

स्वय प्रकाशित-सा कर देती है। C O दिशा मे आप को बहुत कम रोशनी दीखती है क्योकि आप ऐसी वायु मे से देख रहे है जिस पर प्रकाश पड नही रहा है। अब यदि अपनी आँख थोडा एक तरफ हटाए, बिन्दु O′ तक, तब धुन्ध के प्रकाशित तथा अ-प्रकाशित भाग एक दूसरे के ऊपर पडते है और छाया अस्पष्ट हो जाती है, और फिर A O′ तथा B O′ दिशाओ से मुश्किल से ही प्रकाश आ पाता है क्योकि इतने बडे कोण की दिशा मे परिक्षेपण नगण्य-सा ही हो पाता है (§ १७७)।

इस प्रकार प्रत्येक शाखा के, प्रत्येक खम्भे के पीछे, उसकी छाया शून्य मे लटकती-सी रहती है, और छाया उस वक्त तक कतई नही दीखती, जब तक हम एक दम छाया के निकट उसके अन्दर तक, न पहुँच जायँ। इससे भी अधिक अद्भुत दृश्य रात को दीखता है जब कि सडक का प्रत्येक लैम्प, हरएक मोटरकार का हेडलैम्प, धुन्ध को स्वय-प्रकाशित कर देता है, और प्रत्येक वस्तु के पीछे उसकी छाया बनाता है जो केवल पीछे की ओर से दृष्टिगोचर हो पाती है। धुन्ध के अन्दर टहलना, प्रकाशीय दृष्टि से, वास्तव मे आह्लादकारी होता है।

और भी अधिक विलक्षण बात उस वक्त देखने मे आती है जब धुन्ध वाले दिन सूर्य के रुख खडे होकर हम सामने की किसी मीनार को देखते है या किसी खम्भे को देखते है जो सडक के लैम्प को ठीक अपने पीछे ढक लेता है। दोनो ही दशाओ मे मीनार या खम्भे के ऊपर छाया हमे दिखलाई देती है। यह विचित्र घटना सहज मे ही समझ मे आ सकती है यदि इस बात पर विचार करे कि हवा की एक पट्टी ABCDEF, मीनार के पीछे आ जाती है जो सूर्य की किरणो से प्रकाशित नही होने पाती। इस पट्टी के केन्द्रीय धरातल मे स्थित प्रेक्षक W यदि WV दिशा मे देखे तो उसे VW दिशा से कम रोशनी मिलेगी, किन्तु दिशा V′W से अधिक रोशनी मिलेगी। अत उसे अँधेरा छाया-मडलक मीनार के ऊपर मौजूद दिखलाई देगा। यदि वह दाहिने या बाये हटता है, तो यह अँधेरी छाया क्रम से बाये या दाहिने को झुक जायगी। यदि वह और भी अधिक दूरी तक हट जाता है तब छाया विलुप्त हो जाती है क्योकि बडे कोण की दिशा मे धुन्ध प्रकाश का परिक्षेपण नही कर पाता (चित्र १४३ क)।

कभी-कभी छाया के आरपार देखने पर आप उसकी धारियाँ देख सकते है, उदाहरण के लिए जब मकानो की छतो पर सूर्य की किरणे तिरछी पडती है और आप लगभग छाया की दिशा मे ही देखते है जो हवा मे हलकी आकृति की तरह दृष्टिगोचर होती है।

धुन्ध द्वारा पीछे की ओर होने वाले परिक्षेपण का प्रेक्षण करना विशेष कठिन होता है। धुन्ध की बूँदे अत्यन्त क्षुद्र आकार की होनी चाहिए, फिर भी धुन्ध को घना
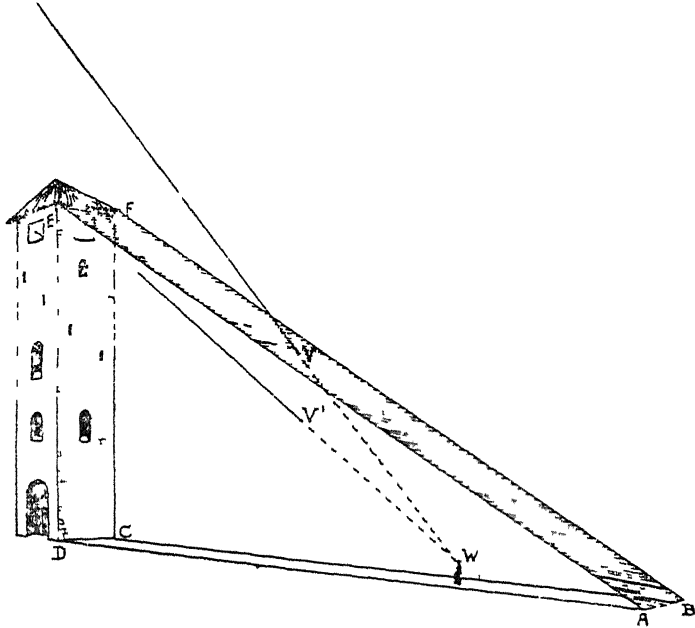
चित्र १४३ क—**धुन्ध के समय ऊँची मीनार के सिरे पर छाया मडलक कैसे बनता है।**

होना चाहिए, और हमारे पीछे चकाचौध उत्पन्न करने वाले तीव्र प्रकाश का स्रोत हो, तथा सामने मटमैले रग की पृष्ठभूमि। कभी-कभी, धुन्ध वाली रात्रि मे यदि खुली खिडकी के सामने हम खडे हो और हमारे पीछे से तेज प्रकाश आ रहा हो, तो हम अपनी छाया देख सकते है जो धुन्ध के पर्दे पर प्रक्षेपित होती है। इस बात पर ध्यान दीजिए कि छाया जमीन पर नही बनती है, क्योकि यह उस वक्त भी मौजूद रहती है जब लैम्प आपके सिर की ऊँचाई से थोडा नीचे स्थित होता है। अपनी आँखो को बाहर के अन्धकार के प्रति अभ्यस्त होने दीजिए तथा अपने हाथो से, बगल की रोशनी को आँख तक पहुँचने से रोकिए (चित्र १४४)। धुन्ध पर आप की बाहो

की छाया बहुत लम्बी प्रतीत होती है तथा आपके शरीर की छाया बृहत्काय और नुकीली दीखती है। छाया की तमाम धारियाँ आपके सिर की छाया की ओर एकत्र होती है, जो लैम्प का प्रतिबिन्दु भी है। इस बिन्दु के गिर्द आभा की चमक मौजूद होती है जो सबसे अधिक स्पष्ट उस वक्त होती है जब आप उधर-उधर थोडा हिलते है। यह आश्चर्यजनक चित्र 'ब्रोकेन की प्रेतछाया' के अतिरिक्त और कुछ नही है, जो धूप मे ऊँचे पर्वत शिखर के धुन्ध पर इतनी प्रभावोत्पादक दीखती है।

चित्र १४४—**ब्रोकेन की प्रेतछाया, धुन्ध के रूप में।**

इस घटना के बृहत् आकार धारण करने का कारण यह है कि छाया एक धरातल मे नही पडती बल्कि दस-बीस गज की गहराई तक यह फैली रहती है।

सायकिल सवार को, जिसके पीछे से मोटरकार के हेडलैम्प की चकाचौध पैदा करने वाली रोशनी आती है, कभी-कभी कुहासे पर स्वय अपनी छाया एक बृहत् आकार की दिखलाई पडती है। पीछे से आती हुई दूसरी सायकिल के लैम्प की रोशनी यदि पहले सायकिल सवार के सिर पर पडती है, तब भी यह घटना उत्पन्न होती है।

प्रकाश की चमक और उस पर बनने वाली छाया की लकीरे इस कारण उत्पन्न होती है कि कुहरे की बूँदो द्वारा प्रकाश के अल्पाश का पीछे की दिशा मे परिक्षेपण होता है, वे तमाम प्रकाश-रश्मियाँ जो हमारी आँख की छाया **की ओर केन्द्रित** होती जान पडती है, वास्तव मे **समानान्तर** होती है (या लगभग)। (देखिए §§ १९१, २१७)।

१८३ वर्षा और पानी की बूँदों की दृश्यता

बौछार के समय अच्छा होगा यदि इस बात का प्रेक्षण करे कि वर्षा की गिरती हुई बूँदे किस दिशा मे सबसे अधिक आसानी से दिखलाई पडती है। ये बूँदे न तो चमकीले आकाश के सम्मुख दिखाई देती है और न जमीन के सामने, किन्तु मकानो और वृक्षो के सामने दृष्टिगोचर होती है। स्पष्ट है कि वे केवल तभी देखी जा सकती

है जब वे प्रकाश रश्मियों को उनके मार्ग से विचलित करके उस क्षेत्र मे चमक उत्पन्न करती है जहाँ पहले अन्धकार था। अवश्य ही प्रकाश की किरणे मुख्यत **अल्प कोण** पर विचलित होती है (०° से लेकर ४५° तक)। प्रकाश के दिये हुए अल्प विचलन के लिए पृष्ठभूमि का चमकीलापन जितना ही अधिक बढेगा बूँदे उतनी ही अधिक स्पष्ट दीखेंगी। वर्षा के समय यदि धूप निकली हुई है तो सूर्य की दिशा के निकट की बूँदे अत्यधिक चमक के साथ जगमगाती है, इसका कारण यह है कि सूर्य और आकाश की प्रदीप्ति मे अन्तर बहुत ही अधिक होता है, अत वर्त्तन करने वाली प्रत्येक बूँद स्पष्ट दीख जाती है।

मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख इन बूँदो को आप लगभग सदैव ही मोतियो की तरह चमकती हुई देख सकते है, हलकी रोशनी के आकाश के सम्मुख वे बहुत कम ही मटमैली दीखती है। यह इस व्यापक सिद्धान्त के अनुरूप है कि आँख की सुग्राहिता प्रकाश तीव्रताओ के पारस्परिक अनुपात द्वारा निर्धारित होती है न कि उनके **अन्तर**
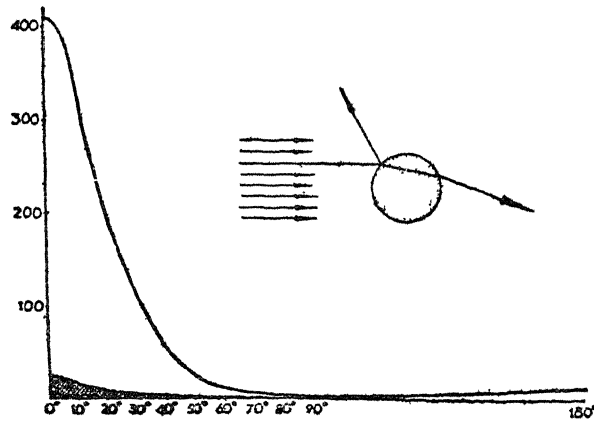
चित्र १४५——वर्षा की बूँदो में जगमगाहट उत्पन्न करनेवाला सूर्य का प्रकाश हर दिशा में परावर्तित तथा वर्तित होता है। चित्र में भिन्न विचलन कोणो के लिए प्रकाश-तीवता का वितरण दिखलाया गया है। (शेड वाला स्थल परावर्तित किरणो में जानेवाली प्रकाश मात्रा बतलाता है।)

द्वारा (§ ६४)। यदि तीव्रता मान १०० का प्रकाश बूँद पर गिरता है और परि-क्षेपित होने वाले प्रकाश की तीव्रता १० हो तो ऐसे मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख यह

भली-भाँति दीखेगा जिसकी प्रदीप्ति-तीव्रता ५ हो, क्योंकि यहाँ तीव्रता का अनुपात २ १ है। इसके प्रतिकूल उसके पार गुजरने वाले प्रकाश की तीव्रता १०० से घटकर ९० हो जाती है, इसका अर्थ है कि आकाश की पृष्ठभूमि पर देखे जाने पर बूँद के लिए तीव्रता का अनुपात केवल १० ९ है, जो मुश्किल से ही दृष्टि की पकड मे आ पाती है। किन्तु यदि बूँदे हमारे निकट स्थित हो जैसे छतरी से गिरने वाली बडे आकार की बूँदे, तो गिरते समय ये मटमैले रग की दीखती है। और मूसलाधार वर्षा मे काले बादलो के बीच के खुले आकाश की पृष्ठभूमि के सामने मटमैले रग की समानान्तर धारियाँ हमे दीखती है। इसी प्रकार की घटना का प्रेक्षण फौआरो मे तथा पौदो के सीचते समय पानी की फुआर मे भी किया जा सकता है।

प्रकाश के सामान्य नियमो को लागू करके हम आसानी से इस बात का हिसाब लगा सकते है कि प्रकाश के प्रतिफलित वितरण मे बूँद की सतह से परावर्त्तित होने वाली किरणे कितना योग देती है और कितना योग वे किरणे देती है जो वर्त्तन के उपरान्त बूँदो मे से होकर गुजरती है (चित्र १४५)। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्त्तित होने वाली किरणे ही अपेक्षाकृत अधिक योग देती है और अवश्य ही प्रकाश को अल्प कोण पर विचलित करती है, ठीक जैसा कि प्रत्यक्ष प्रेक्षण से हमे निष्कर्ष प्राप्त हुआ था।

१८४ खिडकी के काँच पर प्रकाश का परिक्षेपण जिस पर पानी की सघनि बूँदे पडी हो

रेलगाडी की खिडकी मे से जिस पर पानी की बूँद घनीभूत हुई हो, देखने पर बाहर के सडक के लैम्प चारो ओर से चकाचौध वाली ज्योति से परिवेष्टित दिखाई देते है। ऐसे प्रकाश के घेरे की त्रिज्या का अनुमान आसानी से लगा सकते है तथा खिडकी से आँख की दूरी A को भी मालूम कर सकते है। आप पायेगे कि परिक्षेपण उस वक्त करीब-करीब पूर्णतया रुक जाता है जब कोण $\alpha = \frac{r}{A}$ का मान ० ०५—० १० रेडिएन अर्थात् ३°—६° तक पहुँच जाता है।

इस दशा मे ये नन्ही बूँदे पूर्ण गोले की शक्ल की नही होती, बल्कि परिमित ऊँचाई के गोल खण्ड ही ये होती है। ऐसी बूँदो के हाशिये के निकट वाले भाग से ही किरणो का विचलन अधिकतम होता है। मानो ये किरणे एक पतले प्रिज्म द्वारा मोड दी जाती है जिनके नन्हे शीर्षकोण का मान δ है, अत इनमे होने वाले विचलन कोण

का मान $\alpha = (n-1)\delta$ होता है। चूँकि पानी का वर्त्तनाङ्क n१ ३३ है, अत प्रिज्म के शीर्ष कोण δ का मान १०°–२०° तक हो सकता है (चित्र १४५ क)।
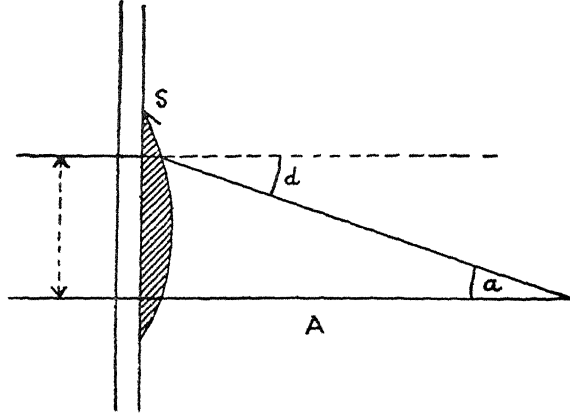
चित्र १४५ क—**खिडकी के कांच पर पडी हुई पानी के बूंद से प्रकाश का परिक्षेपण। (ऊपर बिन्दुरेखा के नीचे d की जगह अलफा α पढ़िए और बायीं ओर बिन्दुरेखा के बगल में r रखिए)**

१८५ हवा मे तैरते हुए कणो की दृश्यता[1]

जल की बूँदो की दृश्यता का उपर्युक्त विवरण बहुत कुछ अशो मे वायु मे तैरती हुई सभी चीजो के लिए लागू किया जा सकता है। धूल के बादल, सूर्य की दिशा मे उससे उलटी दिशा की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से देखे जा सकते हैं। धूप वाले [illegible] रीब ३° की ऊँचाई तक अक्सर देखा जा सकता है जब कि हम सूर्य की ओर देखते हैं, लगभग आध मील से कम की दूरी पर दृश्यो के रग साफ पहचाने नही जा पाते और दूरस्थ गिर्जाघरों की मीनारे दिखलाई नही देती। यदि हम सूर्य की प्रतिकूल दिशा मे देखे तो क्षितिज से लगा हुआ धुँधलापन और भी मटमैला हो जाता है। सूर्य के निकट के धुधलेपन की पेटी और उसके प्रतिकूल दिशा की मटमैली पेटी का अन्तर विशेष रूप से स्पष्ट उस वक्त देखा जा सकता है जब हम गुब्बारे मे वैठकर या पहाड पर चढते समय इस धुन्ध के

1 Visibility

ऊपरी सिरे तक पहुँच जाते है। परिवर्त्तन की सीमा सूर्य से लगभग ८०° की दिशा पर मिलती है, जहाँ कि धुन्धलके के स्तर की चमक करीब-करीब आकाश की चमक के बराबर होती है।

रात्रि का जब आगमन होता है तो उगता हुआ चन्द्रमा गहरे लाल रग का रहता है, किन्तु आश्चर्यजनक तेजी के साथ यह पीत-श्वेत रग मे परिणत हो जाता है।

यदि हलके धुन्ध के समय चिमनी के साये मे खडे हो तो हमे सूर्य प्रकाश के एक आभामण्डल (आरिएल) द्वारा घिरा दीखता है जो कि उस वक्त तक प्रकट नही हो पाता जब तक कि हमारी आँख धूप की चमक की चकाचौध मे रहती है। किसी-किसी वक्त इस आभामण्डल का हाशिया लाल रग का होता है। धूल तथा पानी की नन्ही बूदो से उत्पन्न होने वाला इसी तरह का प्रकाशीय प्रभाव कुछ हलके रूप मे उस वक्त भी देखा जा सकता है जब कुहरा मौजूद नही होता (§ १९७)।

नन्हे कीडे-पतगे जब प्रेक्षक के उसी ओर होते है जिधर सूर्य, तो वे रोशनी की चिनगारियो की तरह नाचते हुए नजर आते है, किन्तु सूर्य की उलटी दिशा मे वे मुश्किल से ही दिखलाई देते है। राई की बालो के रेशे जो हवा मे ऊँचाई पर लहराते है, अस्त होते हुए सूर्य की किरणो के सामने से देखने पर चित्ताकर्षक, स्वर्णिम नीललोहित रग के चमकते है। सूखे पत्ते, पत्थर की रोडियाँ, टहनियाँ, आदि जब कभी वे सूर्य के सामने से देखी जाती है तो सभी चमकती है जबकि प्रतिकूल दिशा मे वे कठिनाई से या बिलकुल ही नही दिखलाई देती।

ये प्रेक्षण इस बात की पुष्टि करते है कि पर्दे के हाशिये पर प्रकाश की किरणे अल्पमान के कोण पर ही विवर्त्तित होती है। यही बात छोटे आकार के ग्लोब द्वारा होने वाले परावर्त्तन, वर्त्तन या विवर्त्तन के लिए भी लागू होती है बशर्ते वे अत्यन्त छोटे न हो (§§ १७७, १८३)। टेढी-मेढी शक्ल की चीजे लगभग उसी आकार के छोटे पर्दे या ग्लोब-जैसा आचरण करती है।

१८६ सर्चलाइट

सर्चलाइट की किरणावलि विभिन्न दिलचस्प प्रेक्षणो के लिए सामग्री प्रदान करती है। सर्व-प्रथम हमे यह स्मरण रखना होगा कि वायु मे मौजूद धूल तथा जल की बूँदो के बिना जिन्हे यह प्रकाशित करती है, यह किरणावलि बिलकुल ही नही दृष्टिगोचर होगी। अत किरणपुज का चमकीलापन वायु की शुद्धता का प्रमाण उपस्थित करता है।

यह कुछ विचित्र जान पड़ता है कि यह किरण-रेखा कुछ फासले पर अचानक ही खत्म हो जाती है, और ऐसा उस वक्त भी होता है जब कि आकाश अत्यन्त निर्मल होता है और कोई भी बादल मौजूद नहीं होता जो रुकावट के लिए पर्दे-जैसा काम करे। व्याख्या इस प्रकार है—बिन्दु O पर खड़े प्रेक्षक के पास AO, BO, CO आदि दिशाओं में किरणपथ के प्रत्येक बिन्दु से प्रकाश पहुँचता है। किन्तु किरण रेखा कितनी ही अधिक लम्बी क्यों न हो, उसे इस पर कोई भी बिन्दु OD दिशा के आगे नहीं दीखेगा, यह OD दिशा LC के समानान्तर है। यह दिशा ही प्रेक्षक के लिए
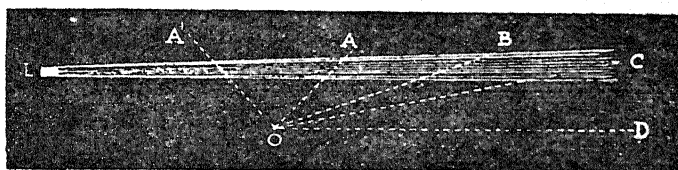
चित्र १४६—सर्च लाइट से जानेवाली प्रकाश-शलाका अत्यन्त निश्चित दिशा में अचानक समाप्त होती जान पड़ती है।

किरण-रेखा का 'अन्त' बतलाती है, अतः किरण-रेखा की दिशा आकाश में सही-सही निर्धारित हो जाती है। किरण-रेखा के दूर के भागों से प्रेक्षक के पास प्रकाश पर्याप्त मात्रा में पहुँचता है, इसका कारण अवश्य ही यह हो सकता है कि उसकी दृष्टि-रेखा दूर के भागों को तिरछी दिशा में काटती है अतः इस सीध में परिक्षेपण करने वाले कणों की तह मोटी होती है; इसके प्रतिकूल, दिशा OA में प्रकाशित वायु के अन्दर दृष्टि-रेखा-पथ की लम्बाई कम ही होती है।

जाकर किरणपुंज के निकट खड़े होइए और ४५° तथा १३५° की दिशाओं में प्रकाश-तीव्रता की तुलना कीजिए। आप पायेंगे कि A'O दिशा में सामने की ओर का परिक्षेपण, दिशा AO के पीछे की ओर के परिक्षेपण की तुलना में बहुत अधिक प्रबल है। फिर भी दोनों ही दशाओं में दृष्टि-रेखा की सीध में उपस्थित परिक्षेपण पदार्थ की मात्राएँ समान हैं, और यह हम मान ही सकते हैं कि A की दिशा में किरण-रेखा का व्यास तथा दिशा A' में प्राप्त व्यास में अन्तर इतना कम है कि इसे हम नगण्य समझ सकते हैं। स्पष्ट है कि इसका कारण धूलिकणों द्वारा होने वाला असंमित परिक्षेपण है, क्योंकि इन कणों का आकार काफी बड़ा होता है, अतः ये सामने की दिशा में सबसे अधिक परिक्षेपण करते हैं (§ १७७)। इस प्रयोग के लिए अधिक

विश्वसनीय तरीका यह होगा कि किसी लाइटहाउस के निकट खडे होकर किरणरेखा की प्रकाश-तीव्रता की तुलना इन दो दशाओ मे करे, पहले किरण जब हमारी ओर तिरछी दिशा मे आती है, और फिर जब किरण तिरछी दिशा मे हम से दूर जाती है।

इस ढग के कुछ प्रयोग एक वास्तव मे बढिया टार्च के किरणपुज के साथ किये जा सकते है बशर्ते रात का अन्धकार काफी गहरा हो। किरण-रेखा का अन्तिम छोर इतना स्पष्ट बनता है कि इसकी सहायता से अन्य लोगो के लिए विशेष तारे की स्थिति इङ्गित की जा सकती है।[1]

१८७ दृश्यता[2]

दृश्यता की नाप भूमिप्रदेश के ऐसे खुले मैदान मे की जाती है जिसमे अनेक भूमि-चिह्न ऐसे लिये जा सके जो प्रेक्षक से क्रमश बढती हुई दूरियो पर स्थित हो, इस तरह के उपयुक्त भूमिचिह्न फैक्टरी की चिमनियाँ या दूरस्थ गाँवो के चर्च की मीनारे हो सकती है जिनकी दूरी किसी अच्छे मानचित्र से मालूम की जा सकती है। अब प्रेक्षक प्रत्येक दिन यह ज्ञात करता है कि कौन-सा चिह्न बस दिखाई भर दे रहा है, इसी चिह्न की दूरी को 'दृश्यता' का नाम दिया गया है। यदि ऐसे चिह्न-बिन्दु पर्याप्त सख्या मे उसे लभ्य नही है तो वह अपनी सामान्य अनुभूति के अनुसार 'दृश्यता' का तखमीना ०–१० माप स्केल पर प्राप्त कर सकता है। प्रकाश्यत प्रेक्षणफल कई बातो के अत्यन्त जटिल मिश्रण द्वारा निर्धारित होते है, विशेषतया वायु मे उपस्थित पानी की बूँदो तथा धूलिकणो द्वारा, जिनके कारण अँधेरे भागो पर एक कृत्रिम आभा फैल जाती है। मान लीजिए कि एक वस्तु प्रकाश-मात्रा A परावर्त्तित करती है, इसके सामने ही वायु प्रकाश-मात्रा B परावर्त्तित करती है तथा वस्तु के पीछे की वायु से प्रकाश-मात्रा C परावर्त्तित होती है। फिर कल्पना कीजिए कि वायु-मण्डल मे से गुजरने के उपरान्त प्रकाश मात्राओ A, B, C से क्रमश. मात्राएँ a, b, c हमारी आँख मे प्रवेश करती है। तव दूरस्थ वस्तु की दृश्यता $\frac{a+b}{b+c}$ द्वारा निर्धा-

1 Davis, Science, 76, 274, 1933

2 W E Knowles Middleton, Visibility in Meteorology (Toronto 1941), Fr, Lohle, Sichtbeobachtungen (Berlin 1941)—Both with numerous references to the extensive literature

रित होती है, और ऊपर बतायी गयी विधि के अनसार नापी जाने वाली दूरी द्वारा निर्देशित दृश्यता भी इसी भिन्नाश पर निर्भर है। इससे यह बात समझ मे आती है कि दृश्यता क्यो अकेले वायुमण्डलीय परिस्थितियो पर ही निर्भर नही करती, बल्कि कुछ हद तक यह सूर्य की स्थिति पर भी निर्भर है। सूर्य के प्रभाव को न्यूनतम बनाने के उद्देश्य से सर्वसम्मति से यह मान लिया गया है कि भूमिचिह्न या निर्देशन बिन्दु के लिए लगभग १० फुट ऊँची कोई मटमली रग की वस्तु लेनी चाहिए जो आकाश की पृष्ठभूमि पर स्पष्ट दीखे तथा आँख पर ० ५° और ५° के दर्मियान का कोण बनाये। यह एक दिलचस्प बात है कि जब ये शर्ते पूरी होती है तब यह दिखाया जा सकता है कि दृश्यता, सूर्य की स्थिति या भूमिचिह्न की किस्म के प्रभाव से करीब-करीब पूर्णतया मुक्त होती है।

रात्रि मे किसी लैम्प को हम चुन सकते है जिसकी दूरी ज्ञात हो या फिर प्रथम माप श्रेणी के किसी तारे की उस न्यूनतम कोणीय ऊँचाई को डिग्रियो मे नाप सकते है जिस पर वह दीखने लग जाता है। अवश्य ये प्रयोगफल दिन मे प्राप्त किये गये परिणाम से पूर्णतया मेल नही खाते, क्योकि नापी जाने वाली राशि की मात्रा दोनो दशाओ मे एकदम समान नही होती।

अनगिनत प्रेक्षको द्वारा प्रेक्षण किये गये है और उनके परिणाम आकिक पद्धति से प्राप्त किये गये है। दृश्यता निर्धारित करने मे निस्सन्देह मुख्य तत्त्व है उस धूल की मात्रा जो हवा अपने अन्दर लिये रहती है। नगरो और फैक्टरियो से काफी फासले पर पायी जाने वाली धूल के बडे कण अधिकतर नमक के क्रिस्टल होते है जो समुद्र जल की उन नन्ही बूँदो के वाष्पन से बनते है जो लहरो द्वारा वायु मे प्रक्षेपित हो जाती है। महाद्वीपो के ऊपर की वायु की धूल मे सबसे अधिक मात्रा अमोनियम सल्फेट $(NH_4)_2 SO_4$ की होती है, उद्योग-व्यवसाय मे प्रज्वलन के फलस्वरूप अमोनिया NH_3 तथा सल्फर ट्राई आक्साइड SO_3 की ढेर-सी राशियाँ वायुमण्डल मे पहुँचती है, ये गैसे परस्पर सयोग करके क्रिस्टलो का निर्माण करती है या पानी की नन्ही बूँदो मे ये घुल जाती है। औद्योगिक प्रान्तो मे धुएँ या कालिख के जर्रे ऊपर आते है और नमक के घोल की नन्ही बूँदो पर चिपक जाते है। यूरोप मे धूप के दिनो मे जबकि वायुमण्डल के उच्च दाब के प्रदेश मे हम इस तरह अवस्थित होते है कि हमारे अगल-बगल अल्प दाब के प्रदेश हो (ऋतुचार्ट पर यह प्रदेश स्फान (वेज)[1] की शक्ल का दीखता

1. Wedge, पच्चड

है) तब दृश्यता सर्वोत्तम होती है क्योकि ये अल्प दाब, ताजी 'ध्रुवीयवायु, अपने साथ ले आते है जिनमे धूल के नाभिकणो की सख्या अत्यन्त ही कम होती है। मौसम की ये विशेष परिस्थितियाँ आम तौर पर थोडी ही अवधि के लिए बनी रह पाती है। इसके प्रतिकूल दृश्यता उस वक्त दूषित हो जाती है जब एक ही स्थान पर उच्च दाब एक लम्बे काल तक वैसा ही बना रहता है, फलस्वरूप धूल धीरे-धीरे करके वायु के निचले स्तरो मे उतर आती है।

समुद्रतट पर रहने वालो के लिए इन दशाओ मे दृश्यता की तुलना करना दिलचस्पी की बात होगी कि जब समुद्र से हवा भूमि की ओर बहती है और जब स्थल से समुद्र की ओर बहती है। किन्तु ऐसा सदैव ही आर्द्रता की समान दशाओ मे करना चाहिए—अर्थात् जब शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर के निरीक्षण एक-से रहे। बात यह है कि थोडे फासले पर (१ किलोमीटर से कम दूरी के लिए) दृश्यता के लिए धूल के नाभि-कणो पर उपस्थित जलवाष्प का प्रभाव विशेष अधिक होता है, वायु की आर्द्रता जितनी अधिक होगी, दृश्यता उतनी ही कम होगी। यह पहलू खास तौर से उस दशा मे महत्त्वपूर्ण हो जाता है जब आर्द्रता ७० प्रतिशत से अधिक हो जाती है और धूलिकण नमक के क्रिस्टलो से निर्मित होते है।

स्काटलैण्ड के एक छोटे से कस्बे मे, वायु जब पर्वतो की ओर बहती थी तो उस वक्त दृश्यता छ या नौ गुनी पायी गयी बनिस्बत उस वक्त के, जब कि वायु घनी आबादी के प्रदेश से होकर आती थी। आर्द्रता का प्रभाव इस बात से स्पष्ट है कि वायु-वाष्प-मानलेखी[1] का निरीक्षण अक जब ८° था तो दृश्यता चार गुनी थी बनिस्बत उस वक्त के जब कि निरीक्षण अङ्क २° था। इस बात का भली-भाँति चित्रण हम कर सकते है यदि मानचित्र पर हम उन दिशाओ मे रेखाएँ खीचे जिधर से हवा आ रही है और इनकी लम्बाइयाँ दृश्यता की दूरी के अनुपात मे रखे।

आर्द्रता के विभिन्न मान के लिए ऐसी ही रेखाएँ खीचनी चाहिए। इस प्रकार वक्र रेखाओ का सेट प्राप्त हो जायगा तो विभिन्न स्रोतो से आनेवाली हवाओ की औसत पारदर्शिता बतलायेगा। हडताल के आरम्भ होते ही दृश्यता अचानक ही अत्यधिक बढ जाती है।

और फिर आँकडो से पता चलता है कि तेज हवाएँ जब चलती है तो दृश्यता बढ जाती है और गर्मी के मौसम (मार्च से अक्टूबर तक) मे जाड़े की अपेक्षा दृश्यता

1 Psychrometer

अधिक अच्छी रहती है। साधारणतया प्रात की अपेक्षा तीसरे पहर को दृश्यता अच्छी रहती है क्योकि दिन मे वायु की ऊपर जानेवाली धाराएँ नीचे के स्तरो मे उतराने वाले धूलिकणो को आकाश मे ऊँचाई पर पहुँचा देती हैं। वर्षा या तुषारपात के एक लम्बे काल के उपरान्त समस्त धूल नीचे बैठ जाती है और दृश्यता प्राय अत्युत्तम हो जाती है।

यह एक मार्के की बात है कि पानी की बौछार मे से हम कुहरे की बाढ या बादलो की अपेक्षा बहुत अधिक दूर तक देख सकते है यद्यपि इन्ही बादलो से यह पानी गिरता है। इसका कारण निम्नलिखित तर्क से स्पष्ट होगा (यद्यपि यह तर्क प्रत्यक्षत अत्यन्त ही मोटे हिसाब पर आधारित है)—

मान लीजिए कि हवा के इकाई-आयतन मे मौजूद पानी का आयतन V है। अब इस आयतन V को व्यास d आकार की बूँदो मे विभाजित कीजिए—प्रत्येक बूँद का आयतन लगभग d^3 होगा। अत दिये हुए आयतन मे बूँदो की सख्या होगी $\frac{V}{d^3}$ और चूँकि प्रत्येक बूँद लगभग d^2 क्षेत्रफल की सतह घेरती है, अत इन बूँदो से घिरने वाली कुल सतह $\frac{Vd^2}{d^3} = \frac{V}{d}$ होगी। अत बूँदे जितनी छोटी होगी उतनी ही कम उनके समूह की पारदर्शिता होगी। घने कुहरे के लिए V लगभग $१०^{-६}$ कोटि का होता है और आश्चर्य की बात है कि मूसलाधार वर्षा के लिए भी V का मान लगभग इतना ही होता है। किन्तु कुहरे की बूँदो का व्यास ० ०१ मिलीमीटर की कोटि का होता है जबकि वर्षा की बूँदो का व्यास ० ५ मिलीमीटर की कोटि का। अब एक ऐसे स्तम्भ पर विचार कीजिए जिसका सिरा एक वर्ग सेण्टीमीटर क्षेत्र का हो, और उसकी आडी लम्बाई l हो। प्रकाश की आधी मात्रा रोकने के लिए $\frac{Vl}{d} = —$ ० ५ होना चाहिए, अत कुहरे के लिए l=५ मीटर=५ ५ गज प्राप्त होता है और वर्षा के लिए l=२५० मीटर=२८० गज प्राप्त होता है। ये निष्कर्ष सही कोटि के परिमाण के हैं। इस उदाहरण से यह बात भली-भाँति स्पष्ट होती है कि गणनाफल बहुत कुछ अशो मे इस बात पर निर्भर करता है कि वर्षा की बूँदे नन्हे आकार की हैं या बडे आकार की। कभी-कभी ऐसा होता है कि भारी वर्षा मे जबकि जमीन पर गिरने पर बूँदे बिखर कर अत्यधिक नन्हे आकार की बूँदो मे परिणत हो जाती हैं और उनमे से होकर हम भूमि के निकट ही देखते है तो दृश्यता मे भारी ह्रास हो जाता है। यह भी हमारे तर्क के अनुरूप ही बैठता है।

१८८. सूर्य कैसे पानी 'खीचता'[1] है ?

शरत्काल की मनोरम प्रात की बेला है, चमकती हुई धूप वृक्षो के झुरमुट को पार करके आती है। दूर से हम देख सकते है कि धुन्धवाली हवा मे किरणो की शलाकाएँ कितने बढिया तरीके से एक दूसरे के समानान्तर जाती हुई प्रतीत होती है! किन्तु निकट आने पर ऐसा लगता है कि वे अब परस्पर समानान्तर नही रही, बल्कि अकेले एक ही बिन्दु—सूर्य से विकिरित हो रही है।

इसी तरह की एक बडे पैमाने की घटना से भी हम परिचित है। जब घने, किन्तु बिखरे हुए बादलो के पीछे सूर्य छिप जाता है और वायु मे बारीक किस्म का कुहरा भरा रहता है तो प्राय इन सूर्य-रश्मियो के पुञ्ज बादलो के बीच के खुले भागो मे सूर्य से विकिरित होते हुए देखे जा सकते है जो कुहरे की नन्ही बूँदो द्वारा होनेवाले परिक्षेपण की बदौलत कुहरे मे प्रकाश की पथरेखाओ के रूप मे प्रदर्शित होते है। ये सभी रश्मि-शलाकाएँ वास्तव मे परस्पर समानान्तर होती है (इन्हे बढाने पर ये अवश्य सूर्य से गुजरती है, किन्तु सूर्य इतने अधिक फासले पर है कि इन किरणो को 'समानान्तर' कहना उचित ही है)। इनके अनुदर्शन[2] से हमे ऐसी अनुभूति होती है मानो ये किसी एक बिन्दु से प्रसारित होती है, इनके लिए विलुप्त होनेवाला बिन्दु सूर्य होता है, ठीक उसी प्रकार जैसे रेल की पटरियाँ फासले पर एक-दूसरे से मिलती हुई जान पडती है (प्लेट XV, a)।

बादलो के इधर-उधर हटने के अनुसार इनमे से कुछ किरणे प्रबल अथवा क्षीण हो जाती है या अपना स्थान-परिवर्तन करती है, इत्यादि। कभी-कभी समूचे भू-दृश्य पर ये किरणे छा जाती है, या फिर यह कि सूर्य किसी अकेले बादल के टुकडे के पीछे छिप जाता है तो उसकी काली छाया पडती है। पर्वतीय प्रदेशो मे इस तरह की छाया-शलाकाएँ अक्सर दिखलाई पडती है जो निम्न ऊँचाई पर स्थित सूर्य के सामने पर्वत-श्रेणियो या चोटियो के आ जाने के कारण बनती है।[3]

प्रकाश-किरण की शलाकाएँ चन्द्रमा से भी उत्पन्न हो सकती है किन्तु इनकी प्रकाश-तीव्रता इतनी क्षीण होती है कि वे केवल तभी दिखलाई पडती है जब वायु-मण्डल द्वारा होनेवाला परिक्षेपण प्रबल होता है। यह अत्यन्त दुर्लभ घटना अपशकुन की छाया-जैसी हमारे ऊपर डाल देती है।

1 'Draws water' 2 Perspective 3 Vaughan Cornish, Scenery and the Sense of Sight (Cambridge, 1935)

ये किरण-पुञ्ज क्यो सूर्य से अल्प दूरी पर ही दिखलाई पडते है, उदाहरण के लिए बहुत ही कम अवसरो पर ये ९०° की दूरी पर दीखते है ? (देखिए §§ १७७, १८२, १८३)

१८९. सान्ध्य प्रकाश के रग[1]

एक साधारण व्यक्ति के लिए आदर्श सूर्यास्त का अर्थ होता है कि वह सुनहले नीललोहित रग के बादलो के आवरण-परिधान से ढका है जिसके अन्दर से गहरे खुशनुमा रग का प्रकाश दमक रहा हो। बाल-सुलभ उत्कण्ठा के साथ वह इसमे ऊँट या शेर की आकृति प्रदर्शित होती हुई देखने का प्रयत्न करता है या किसी जगमगाते हुए महल या अग्नि की लपटवाले किसी अलौकिक समुद्र को देखने की कल्पना करता है। किन्तु एक भौतिकीज्ञ तो अपने प्रेक्षण का प्रारम्भ सूर्यास्त के सरलतम रूप से करने का प्रयत्न करता है और इसके लिए वह पूर्णतया निरभ्र और चमकीले प्रकाश का आकाश चुनता है। वह अध्ययन करता है रगो के विस्तार की बारीकियो का और क्षण-क्षण बदलनेवाले रगो की कोमल आभा का तथा वह इस बात का अध्ययन करता है कि दिन का नीला आकाश रात्रि के घने अन्धकार मे किस प्रकार परिणत हो जाता है, और इन सब की अनुभूति कुछ थोडे अभ्यास के उपरान्त ही हो पाती है। ये सभी परिवर्त्तन बार-बार लगभग उसी क्रम मे घटित होते है, इन घटनाओ का विकास प्रकृति की एक महान् नाटचलीला है—विदा होनेवाले सूर्य की नाटचलीला।

इन प्रकाशीय घटनाओ से आविर्भूत होनेवाली अनन्त शान्ति की इस अनुभूति का कारण क्या है ? इन घटनाओ की तुलना इन्द्रधनुष से कीजिए जो प्रफुल्लता और आह्लाद की अनुभूति जगाता है। गोधूलि बेला का यह वातावरण निस्सन्देह मिश्रित रगो वाले चौडे वृत्त चापो के कारण है जो आसमान मे दूर तक इतनी अधिक आडी स्थिति मे पडे रहते है कि वे करीब-करीब क्षैतिज ही जान पडते है। भू-दृश्यो की सरचना मे जहाँ कही भी क्षैतिज रेखा मौजूद होती है, वह शान्ति और विश्रान्ति का आभास कराती है।

सूर्यास्त के रगो का गम्भीर अध्ययन हमे वायुमण्डल के इन उच्चतम स्तरो की दशाओ के बारे मे सूचना देता है जो आकाश के उन प्रदेशो के मुकाबले मे जहाँ बादलो का निर्माण होता है, काफी अधिक ऊँचाई पर होते है, इन स्तरो के बारे मे हमारा

1 The extensive literature is condensed in P. Gruner & H Kleinert Die Dammerungserscheinungen (Hamburg, 1917)

ज्ञान नगण्य-सा ही है, सिवाय उस जानकारी के जो उनके द्वारा होनेवाले प्रकाश के परिक्षेपण से हमे प्राप्त होती है। इस अध्ययन का प्रारम्भ करने के लिए सर्वोत्तम अवसर अक्टूबर और नवम्बर के महीने है। इस घटना की स्पष्टता दिन प्रतिदिन बदलती रहती है, प्राय उनके रगो के वैभव को धूल और धुन्ध हर लेते है, और शहरो मे तो खासकर धुएँ द्वारा ऐसा होता है। इस कारण इन घटनाओ के अध्ययन की बार-बार पुनरावृत्ति की जानी चाहिए।

सन्ध्याकालीन सुन्दर रगो का ठीक तौर से अवलोकन करने के लिए आँखो को पूर्ण विश्राम दे लेना चाहिए। अस्त होने के पहले सूर्य पर हम चाहे कितने ही अल्प काल के लिए दृष्टि क्यो न डाले, हमारी आँखे कुछ समय के लिए इतनी अधिक चकाचौध खा जायँगी कि हम सन्तोषजनक रूप से अपना प्रेक्षण जारी नही रख सकते। यदि हम पूर्वीय आकाश का प्रेक्षण करने का इरादा रखते हो तो हमे पश्चिम के अत्यन्त चमकीले आकाश की ओर अधिक देर तक नही देखना चाहिए। हर बार यदि घर के अन्दर जाकर या पुस्तक की ओर देख लेने पर, हमारी आँखो को एक क्षण के लिए विश्राम मिल जाता है, तब हम अनुभव कर पाते है कि सूर्यास्त की घटना के रग कितने अधिक समृद्ध है तथा पहले-जैसे प्रतीत हुए थे इसकी अपेक्षा कितने अधिक विस्तार तक वे फैले हुए है। अत मै परामर्श दूँगा कि प्रेक्षण का आरम्भ इस बात से कीजिए कि पहले समष्टिरूप से सूर्यास्त की घटना के विकास का अवलोकन कीजिए और तब, इसके उपरान्त, आकाश के प्रत्येक भाग के विशिष्ट सौन्दर्य का अध्ययन कीजिए।

आकाश के विभिन्न भागो की परस्पर तुलना एक छोटे दर्पण की सहायता से बार-बार कीजिए जो आप की भुजा की लम्बाई की दूरी पर रखा गया हो। इस प्रकार आकाश के जिस भाग का अप अवलोकन कर रहे है उस पर बिलकुल ही भिन्न दिशा के आकाशीय भाग का प्रतिबिम्ब आप प्रक्षेपित कर सकते है।

विविध रगोवाली इस घटना मे ये रग एक दूसरे के साथ इतने पूर्णरूप से मिल जाते है कि कदाचित् इनमे किसी भी आकृति को देख पाने मे आप कठिनाई महसूस करेगे। फिर भी इसका गुर बिलकुल ही सीधा-सादा है। आकाश पर आप समान **प्रदीप्ति** या समान **रंग-आभा** की कल्पित रेखाएँ खीचिए, इनके विवरण मे इन्ही रेखाओ का बार-बार उल्लेख आया है, जैसे उदाहरण के लिए, जब हम यह कहते है कि सूर्यास्त की घटना का निर्माण सामान्यत रगीन वृत्तचापो की शक्ल मे होता है।

ससार के इस भाग (हालैण्ड) के आकाश के लिए एक खुली स्वच्छ शाम के आदर्श सूर्यास्त का विवरण नीचे दिया जा रहा है (चित्र १४७)। सूर्य की ऊँचाई के लिए

दी गयी ऋणात्मक सख्या यह प्रकट करती है कि सूर्य क्षितिज से उतना ही नीचे है।

सूर्य की ऊचाई ५°, सूर्यास्त से आध घण्टे पूर्व।

चित्र १४७—**सूर्यास्त के दौरान में आकाश का रग जब कि आसमान साफ हो। (हाशिये के अक क्षितिज से ऊपर या नीचे सूर्य की स्थिति बतलाते है।)**

क्षितिज के निकट आकाश का रग खुशनुमा पीला या पीला-लाल रग धारण कर लेता है जो दिन मे सामान्यत दीखने वाले श्वेत-नीले रग से पूर्णतया भिन्न होता है। सूर्य के नीचे की **क्षैतिज पट्टियाँ** पीत वर्ण की रगीन धारियो के रूप मे हलकी-हलकी दृष्टिगोचर होती है। ('पट्टियो' से हमारा अभिप्राय केवल इतना ही है कि समान रग-आभा की रेखाएँ क्षैतिज तल मे अवस्थित होती है, न कि यह कि विभिन्न रगो के लिए सुस्पष्ट सीमाएँ मौजूद होती है।) इनके ऊपर सूर्य के समकेन्द्रीय एक बृहत्काय अत्यन्त चमकीला श्वेत रग का प्रकाश का धब्बा दीखता है जिसे चमकीली ज्योति का नाम दिया गया है, प्राय. यह हलके तौर पर दीखने-वाले भूरे छल्ले से घिरा रहता है।

पूर्वीय क्षितिज के निकट यदि सफेद बादल मौजूद हुए तो ये कोमल रक्तिम वर्ण धारण कर लेते है और ऊपर की दिशा के आकाश मे **प्रति-सान्ध्य प्रकाश** का ऊपरी भाग प्रकट होता है, जो ६° से लेकर १२° तक की ऊँचाई का एक रगीन हाशिया होता है—यह नारङ्गी, पीले, हरे तथा नीले वर्णो मे रग-परिवर्त्तन करता है।
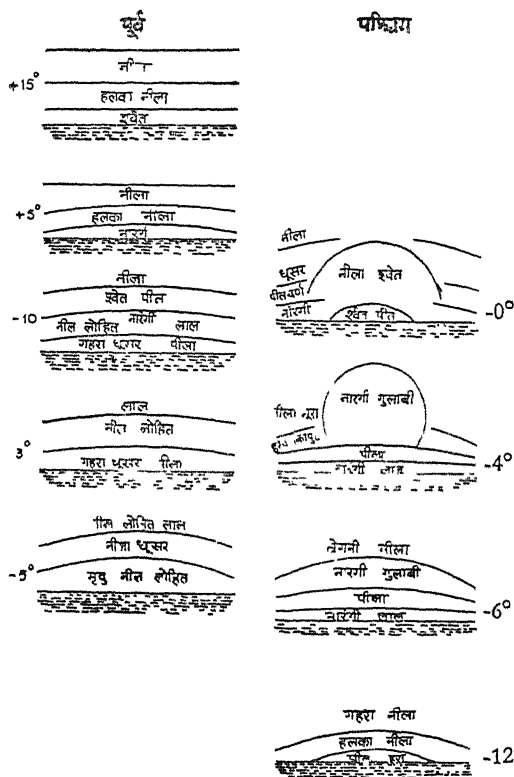
सूर्य की ऊँचाई ०°, सूर्यास्त—किन्तु यह न सोच लीजिए कि सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ अब समाप्त हो गयी ! इसका रोचक पहलू तो अब आरम्भ हो रहा है। **पश्चिम में**—क्षितिज के सहारे रग समुदाय की क्षैतिज पट्टियाँ दीखती है, नीचे से ऊपर की ओर इनका रग श्वेत-पीला, पीला तथा हरा होता है। इसके ऊपर मिलती है देदीप्यमान् उज्ज्वल चमक, श्वेत और पारदर्शी, तथा यह भूरे वृत्त से घिरी रहती है जिसकी ऊँचाई ५०° तक पहुँचती है। **पूर्व मे—पृथ्वी की छाया** ऊपर लगभग उसी क्षण उठने लगती है जिस क्षण सूर्य अस्त होने लगता है। यह एक अत्यन्त चित्ताकर्षक नीले-भूरे रग का वृत्तखण्ड होता है जो नील-लोहित वर्ण के स्तर के ऊपर से धीरे-धीरे खिसकता है। आम तौर पर क्षितिज के ऊपर ६०° से आगे उसे नही देखा जा सकता। कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि सूर्य के अस्त होने से बहुत पहले से ही पृथ्वी की छाया की झलक देखने लग जाती है, किन्तु यह तो केवल धूल या कुहरे की तह होती है। पृथ्वी की छाया के ऊपर होता है अपनी पूर्ण आभा सहित प्रति-सान्ध्य प्रकाश। और भी ऊपर मिलता है पश्चिम के आकाश के प्रकाश का **दीप्तिमान् प्रतिबिम्बन** जो कि दूर तक फैली हुई विस्तृत प्रदीप्ति का प्रकाश होता है।

सूर्य की ऊँचाई –१° से –२° तक, सूर्यास्त के १० मिनट उपरान्त, पश्चिम मे—क्षैतिज धारियाँ, नीचे से ऊपर की ओर अब क्रमश भूरी, नारङ्गी रग की तथा पीली हो जाती है। तेज प्रकाश की चमक जिसके चारो ओर भूरे रग का घेरा रहता है अभी भी ४०° की ऊँचाई तक पहुँचता है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया ऊपर की ओर और भी ऊँचाई तक खिसकती जाती है और इसके अन्दर की सभी चीजे अब मटमैले, एक समान रग की दीखती है जो बहुत कुछ हरे-नीले वर्ण का होता है (एक आत्मनिष्ठ विपर्यास[1] का रग ! देखिए § ९५)। प्रति-सान्ध्य प्रकाश[2] के गिर्द रगीन हाशिया बनने लग जाता है जिसमे नीचे से ऊपर बैगनी, गहरा लाल, नारङ्गी, पीला, हरा, नीला रग मौजूद होता है और इनके ऊपर होता है तेज प्रकाशवाला प्रतिबिम्बन।

सूर्य की ऊँचाई –२° से –३° तक, सूर्यास्त के १५ से २० मिनट बाद तक, पश्चिम में—अब सान्ध्य प्रकाश की घटनाओ का सबसे अधिक रोचक दृश्य आरम्भ होता है। तेज प्रकाश की चमक के सिरे पर क्षितिज से करीब २५° की ऊँचाई पर

1. Subjective contrast 2 Counter-twilight

एक गुलाबी रग का धब्बा प्रकट होता है। तेजी के साथ यह बढता जाता है, किन्तु साथ ही साथ इसका काल्पनिक केन्द्र नीचे की ओर खिसकता है। अत इसकी शक्ल एक वृत्तखण्ड की तरह हो जाती है जो उत्तरोत्तर अधिक चिपटा होता जाता है। यह **नील-लोहित** प्रकाश आश्चर्यजनक रूप से मृदु पारदर्शिता के रगो को बिकिरित करता है जिसमे पूर्ण नीललोहित की अपेक्षा गुलाबी और नारङ्गी वर्ण का पुट अधिक होता है। क्षैतिज धारियो का रग और भी धुंधला हो जाता है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया अब और भी अधिक ऊँचाई पर स्थित होती है। ऊपर वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश पूर्णरूप से विकसित हो चुका होता है, और इसके भी ऊपर होता है चमकदार प्रतिविम्बन।

सूर्य की ऊँचाई,–३° से –४° तक, सूर्यास्त के २० से ३० मिनट उपरान्त; पश्चिम में—तेज प्रकाश की चमक अब भी ५° से लेकर १०° तक की ऊँचाई पर है। नीललोहित प्रकाश का उभार और भी अधिक हो गया है। प्रकाश की अधिकतम तीव्रता क्षितिज से १५° और २०° के दर्मियान की ऊँचाई पर है, सिरे का हाशिया लगभग ४०° की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई –४° से –५° तक, सूर्यास्त के ३० से लेकर ३५ मिनट उपरान्त तक, पश्चिम में—नीललोहित प्रकाश का उभार महत्तम। पश्चिम के रुख की इमारतो पर नीललोहित प्रकाश की चमक आरोपित हो जाती है, भूमि की मिट्टी सपृक्त वर्ण की दीखती है और उसी प्रकार वृक्षो के तने भी (विशेषतया भोजपत्र के वृक्षो के तने)। शहर के बीच तग गलियो मे जहाँ से पश्चिम का क्षितिज दृष्टिगोचर नही हो सकता, इमारतो पर पडने वाले सामान्य प्रकाश से स्पष्ट पता चलता है कि नीललोहित रग का प्रकाश आसमान मे चमक रहा है। इस बात की सावधानी रखिए कि पश्चिम के आकाश पर देर तक दृष्टि न जमाये रखे और यथासम्भव अधिक से अधिक समय तक घर के भीतर रहिए, केवल प्रेक्षण के लिए ही समय-समय पर बाहर निकलिए। **पूर्व मे**—पृथ्वी की छाया मे कभी-कभी मास के रग का हलके लाल वर्ण का हाशिया प्रकट होता है, यह निम्नतम ऊँचाई वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश है। इसके प्रकट होने का कारण यह है कि पूर्व दिशा, स्वय सूर्य के बजाय नील-लोहित रग के प्रकाश द्वारा प्रकाशित हो रही है। हमारे देश (हालैण्ड) के जलवायु मे यह बहुत ही कम अवसरो पर दिखाई देता है।[1]

1. Photographs in Ch. Combier La Meteorologie **16.** 117. 1940

प्रथम दीप्ति-श्रणी के तारे अब दृष्टिगोचर होने लगते है।

सूर्य की ऊँचाई –५° से लेकर –६° तक, सूर्यास्त के ३५ से लेकर ४० मिनट बाद तक, पश्चिम मे—तेज प्रकाश की चमक अब गायब हो चुकी होती है। नीललोहित प्रकाश हलका पडने लगता है, प्रकाश्यरूप से यह क्षैतिज धारियो मे समा जाता है क्योकि ये धारियाँ अब अधिक चमकीली और नारङ्गी वर्ण की दीखती है। **पूर्व में**—पृथ्वी की छाया की सीमा-रेखा पूर्णतया विलुप्त हो चुकी होती है। यदि नीचे का प्रति-सान्ध्य प्रकाश मौजूद है तो पृथ्वी की द्वितीय हलकी छाया उस वक्त देखी जा सकती है जिस क्षण नीललोहित प्रकाश विलुप्त होता है।

सूर्य की ऊँचाई –६° से लेकर –७° तक, सूर्यास्त के ४५ से लेकर ६० मिनट बाद तक, पश्चिम मे—नीललोहित प्रकाश गायब हो जाता है और नीले-श्वेत रग की चमक बची रह जाती है जो **सान्ध्य प्रकाश की चमक** है, इसकी उँचाई १५° से लेकर २०° तक पहुँचती है। क्षैतिज धारियाँ क्रमश नारङ्गी वर्ण की, पीली तथा कुछ-कुछ हरे रग की हो जाती है। नीललोहित प्रकाश के लोप होने पर ऐसा अनुभव होता है मानो भू-दृश्य का प्रकाश तेजी के साथ घट रहा है; अक्षरो का पढना मुश्किल हो जाता है, नगरो के लिए सान्ध्य-प्रकाश की बेला खत्म हो गयी।

सूर्य की ऊँचाई, –९°, पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ७° से लेकर १०° की ऊँचाई तक पहुँचती है। **पूर्व में**—नीचे वाला प्रति-सान्ध्य प्रकाश विलुप्त हो चुका है, अकेला एक अन्तिम प्रतिबिम्बन बचा रह जाता है।

आकाश का सबसे अधिक अन्धकार वाला भाग ऊर्ध्व बिन्दु पर थोडा पश्चिम की ओर हटकर स्थित होता है।

सूर्य की ऊँचाई –१२°, पश्चिम मे—क्षैतिज धारियाँ बहुत अधिक फीकी पड गयी है और अब वे हलके हरे रग की दीखती है। हरे-नीले वर्ण की सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ६° की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई–१५°, पचिश्म में—सान्ध्य प्रकाश की चमक अभी भी ३° से लेकर ४° तक की ऊँचाई पर है।

सूर्य की ऊँचाई –१७°, पश्चिम में—सान्ध्य प्रकाश की चमक गायब हो गयी है। पाँचवी दीप्ति श्रेणी के तारे अब दृष्टिगोचर होने लग गये है। काफी यथार्थता के साथ इस क्षण को निर्धारित किया जा सकता है और मौसम के लिहाज से तथा विभिन्न दिनो के लिए यह क्षण बदलता रहता है। आकाशीय सान्ध्य प्रकाश की बेला समाप्त हो गयी।

नील-लोहित प्रकाश पर टिप्पणी—नील-लोहित प्रकाश की तीव्रता में विभिन्न दिनों के लिए बहुत अधिक परिवर्तन होता है। ऊँचाई पर हवा में उतराते हुए बादलों की अत्यन्त झीनी परतों की उपस्थिति इस प्रकाश की तीव्रता में बहुत अधिक वृद्धि कर सकती है, और बारिश के कई दिनों के उपरान्त मौसम के साफ होने पर इस प्रकाश का निर्माण अद्भुत रूप से सुन्दर होता है। औसत तौर पर ग्रीष्म ऋतु के आखीर में या शरद् ऋतु में यह प्रकाश वसन्त ऋतु या ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा अधिक तेज होता है। यह केवल थोड़ी ही मात्रा में ध्रुवित होता है जबकि इर्द-गिर्द के आकाश में प्रकाश का ध्रुवण विशेष रूप से प्रबल होता है। हडिञ्जर ब्रुश का प्रयोग इस अन्तर को प्रदर्शित करने के लिए काफी होता है (§ १८१)।

सान्ध्य प्रकाश के दौरान में इसका निर्माण सदैव ही उसी तरीके का नहीं होता है, जिस तरह की रूपरेखा का हमने वर्णन किया है। निम्नलिखित में से किसी भी एक तरीके से इसकी उत्पत्ति हो सकती है—

(१) चमकीली ज्योति के गिर्द उसे घेरने वाले भूरे वृत्त से। (२) स्वयं चमकीली ज्योति से जो पीले वर्ण से गुलाबी और लोहित वर्ण की हो जाती है। (३) प्रति-सान्ध्य प्रकाश से जो करीब-करीब अदृश्य रूप से ऊर्ध्व बिन्दु पर फैल जाता है और पश्चिम में पहुँच कर पुनः दृष्टिगोचर हो जाता है। (४) कोमल अलका बादलों से जो सूर्य के अस्त हो जाने के बाद उसके प्रकाश से प्रकाशित होते रहते हैं। (५) चमकीली ज्योति के सिरे पर बननेवाले नील-लोहित वर्ण के धब्बे से, जहाँ से ये विस्तारित होते हैं। इसी किस्म का वर्णन पुस्तकों में दिया गया है, किन्तु बहुत अधिक बार यह नहीं दिखलाई देता।

यदि हो सके, तो कभी भी सूर्योदय और सूर्यास्त का अवलोकन करना न भूलिए।

रस्किन—माडर्न पेन्टर्स।

१९०. प्रकाश की घटनाओं की माप

पृथ्वी की छाया की माप करना अत्यन्त सरल है (देखिए विधि § २३५)। एक ग्राफ तैयार कीजिए जिसमें इसकी ऊँचाई को समय के साथ प्लॉट किया गया हो। शुरू में पृथ्वी की छाया करीब उसी दर से ऊपर चढ़ती है जिस दर से सूर्य नीचे डूबता है, बाद में छाया की रफ्तार दो गुनी या तीन गुनी भी हो जाती है।[1] क्षितिज से

1 For a theoretical explanation of the velocity at which the earth's shadow rises, see Pernter—Exner Moreover Fessenkov Russ Astron. Journ 23, 171 1946 and 26, 233. 1949

ऊपर जिस ऊँचाई पर पृथ्वी की छाया विलुप्त हो जाती है, उससे हम वायु की शुद्धता का अन्दाज लगा सकते है। वायु के लेशमात्र के धुँधलेपन के प्रति यह अत्यन्त सवेदन-शील होती है, वायुमण्डल मे धूल के कण जितने ही अधिक होगे उतनी ही जल्दी छाया अदृश्य हो जायगी।
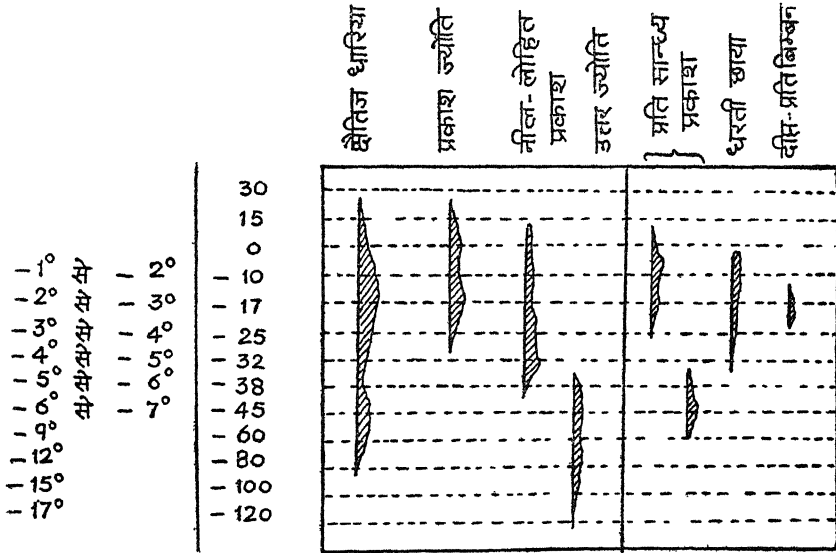
चित्र १४८—**सक्षिप्त सारिणी जो सान्ध्य प्रकाश की विभिन्न घटनाओ के विकासक्रम को प्रदर्शित करती है।**

चमकीली ज्योति और नीललोहित प्रकाश की माप करना अधिक कठिन है। यह तो वाछित है ही कि समय-समय पर आँख को विश्राम दिया जाय, इसके अति-रिक्त यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि आकाश की पृष्ठभूमि के सामने की प्रत्येक सिल्युएत निश्चय ही विपर्यास का प्रभाव उत्पन्न करती है और इस कारण इससे बचना उचित है। कितने आश्चर्य की बात है कि जिसे हम नील-लोहित प्रकाश की सीमा-रेखा समझते है, वह आँख के सामने रखी गयी पेन्सिल या लकडी के चिपटे टुकडे के कारण अपनी स्थिति बदल देती है। सर्वोत्तम तरीका यह होगा कि उसकी ऊँचाई की तुलना भू-दृश्य के वृक्षो या मीनारो आदि से करे।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना वाञ्छनीय होगा कि आकाश की प्रदीप्ति की नाप से पता चलता है कि नील-लोहित प्रकाश की चमक इस कारण नही उत्पन्न होती है कि वहाँ **प्रदीप्ति में वृद्धि** हो गयी है, बल्कि इसलिए कि आकाश के उस भाग मे प्रदीप्ति के **ह्रास की** दर इर्द-गिर्द के भागो की तुलना मे **धीमी हो जाती** है। इस प्रकार उस भाग मे आपेक्षिक प्रदीप्ति महत्तम हो जाती है और इस कारण आखो को ऐसी अनुभूति होती है मानो नया प्रकाश वहाँ से विकीर्ण हो रहा है। इसी प्रकार रग मे परिवर्त्तन होने का कारण यह है कि अन्य तरग-दैर्घ्यो की अपेक्षा कुछ विशेष तरग-दैर्घ्यो की प्रकाश-तीव्रता मे ह्रास की दर धीमी होती है।

नील-लोहित प्रकाश के विलुप्त हो जाने के उपरान्त **उत्तर-प्रकाश ज्योति** की गति दिलचस्प हो जाती है। इसका सबसे ऊपर वाला हाशिया वास्तव मे पृथ्वी की छाया का अन्तिम चरण है, जो ऊर्ध्व बिन्दु की स्थिति को पार करके अब पश्चिम की ओर आ गयी है। यह प्रकाश पहले तो तेजी के साथ नीचे उतरता है, फिर इसकी रफ्तार उत्तरोत्तर धीमी होती जाती है।

१९१. सान्ध्य किरणे[1]

सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ उस वक्त अलौकिक रूप से सुन्दर दीखती है जब पश्चिमी क्षितिज की आड मे स्थित बादल अपनी छाया की धारियाँ आकाश पर एक विशाल पखे की शक्ल मे फैलाते है। क्षितिज के बीच उस काल्पनिक बिन्दु से जहाँ सूर्य स्थित होता है, ये धारियाँ विस्तारित होती है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार 'पानी खीचती हुई' सूर्य-रश्मियाँ दीखती है, केवल इस बार आकाश अत्यन्त स्वच्छ होता है और अब हम देख सकते है कि विशेषतया नील-लोहित प्रकाश मे ये काली धारियाँ कैसी छाया-आकृति बनाती है, इनका नीला-हरा वर्ण विशेष उत्तम विपर्यास उपस्थित करता है तथा यह विपर्यास और भी अधिक निखार इसलिए पाता है कि नेत्रो द्वारा उत्पन्न होनेवाला आत्मनिष्ठ वर्ण-विपर्यास[2] भी इस दशा मे मौजूद रहता है। सान्ध्य किरणो से इस बात का पता चलता है कि नील-लोहित परिक्षेपण की अनुपस्थिति मे आकाश कैसा दीखेगा, और अब पहली बार हम इस बात पर ध्यान दे पाते है कि नील-लोहित प्रकाश का विस्तार ठीक कितनी दूर तक है। इन्हे न केवल पश्चिम मे जिधर सूर्य अस्त हो रहा है, देखा जा सकता है, बल्कि कभी-कभी पूर्वीय आकाश मे भी प्रति-सान्ध्य

1. Crepuscular rays
2 Subjective colour contrast

प्रकाश की नील-लोहित पृष्ठभूमि पर ये दिखाई देती है जहाँ ये प्रति-सूर्य बिन्दु पर जाकर एक दूसरे से मिलती है ।

अत जब कभी सान्ध्य किरणो का प्रेक्षण करे तो पूर्वीय आकाश को भी प्रेक्षण मे शामिल कर लेना चाहिए । परिशुद्ध प्रेक्षण से पता चलता है कि पूर्व तथा पश्चिम की किरणे बिलकुल ठीक जोडे-जोडे मे बैठती है और प्रकाश्यत- दोनो ओर की किरणे एक ही है जो दरअसल समूचे नभोमण्डल के गिर्द जाती है, किन्तु उनके सिरे ही हम भली-भाँति देख पाते है । कभी-कभी तो इन धारियो को एक सिरे से दूसरे सिरे तक, एक बडे वृत्तचाप की शक्ल मे देखना भी सम्भव होता है जिनके सिरे एक दूसरे की ओर झुके होते है, किन्तु हम जानते है कि ये सुपरिचित धारियाँ वास्तव मे परस्पर समानान्तर होती है, इनकी शक्ल प्रकाशीय दृष्टिभ्रम के कारण ही धनुषाकार दीखती है (§ १०८) ।

ये सान्ध्य किरणे केवल वहाँ पर दिखलाई पडती है जहाँ वायु मे परिक्षेपण करनेवाले कण उतराते रहते है । 'पानी खीचनेवाली' सूर्य-रश्मियाँ हलके धुन्ध की पृष्ठभूमि पर दृष्टिगोचर होती है, नील-लोहित प्रकाश की सान्ध्य किरणे सान्ध्य आलोक उत्पन्न करनेवाले अपेक्षाकृत अत्यन्त नन्हे धूलकणो की पृष्ठभूमि पर प्रकट होती है । नील-लोहित प्रकाश-विहीन सान्ध्य आलोक मे सान्ध्य किरणे अनुपस्थित रहती है और ये हरे वर्ण के आकार की पृष्ठभूमि पर तो कभी भी प्रकट नही होती । इसके प्रतिकूल, नील-लोहित प्रकाश जब विलुप्त होकर क्षैतिज धारियो की शक्ल अख्तियार कर लेता है तो इसके बहुत देर बाद तक ये सान्ध्य किरणे दृष्टिगोचर होती रहती है, यह वास्तव मे इस बात का प्रमाण है कि प्रकाश की इन घटनाओ मे से प्रथम घटना सदैव ही उपस्थित रहती है जो पश्चिमीय आकाश की ज्योति मे विशेष योग देती है ।

सान्ध्य किरणे अपने अन्त होनेवाले छोरो पर अधिक आसानी से देखी जा सकती है बनिस्बत इससे समकोण हटी हुई दिशा मे, उसी प्रकार जिस तरह आम तौर पर सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ पश्चिमीय तथा पूर्वीय आकाश मे बीच की दिशाओ की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट दीखती है । और यह भी परिक्षेपण के नियमो का ही परिणाम है (देखिए § १८२) ।

हम इस बात का भी अन्दाज लगा सकते है कि छाया डालनेवाला बादल हमसे कितनी दूर है । यदि बादल पृथ्वी पर होता तो वह ठीक उसी क्षण सान्ध्य किरणे उत्पन्न करता जब सूर्य पृथ्वी के साथ स्पर्शकीय स्थिति मे आता । अब यदि सान्ध्य किरणे ठीक उस क्षण दृष्टिगोचर होती है जब कि सूर्य क्षितिज से कोण α नीचे होता

है, तब हम जानते है कि बादल हमारी आख से αR दूरी पर होगा (R - पृथ्वी की त्रिज्या)। किन्तु बादल यदि स्थिति W मे (चित्र १४९) ऊचाई h पर हो तब प्रेक्षक से उसकी दूरी का मान R ($\alpha-\beta$) तथा R($\alpha+\beta$) के बीच पडेगा जो इस बात पर निर्भर करेगा कि सूर्य S_1 और S_2 दिशाओ के बीच किस विन्दु पर स्थित है। यहा $\cos\beta = \frac{R}{R+h}$ या $\beta=\sqrt{\frac{2h}{R}}$ (सन्निकटत)।
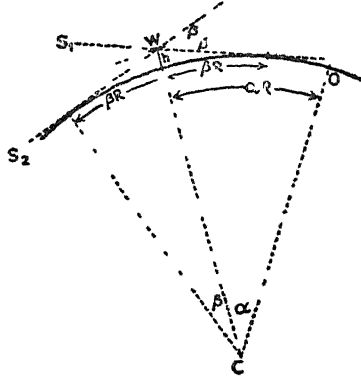
चित्र १४९—**उन बादलो की दूरी का अनुमान लगाना जिनकी वजह से साध्य किरणें उत्पन्न होती है।**

अब मान लीजिए सूर्यास्त के आध घण्टे बाद एक सान्ध्य किरण देखी गयी तो इस वक्त सूर्य की स्थिति क्षितिज से $\alpha=4°$ नीचे होगी। अत इस घटना को उत्पन्न करने वाले बादल की ऊँचाई तीन मील से अधिक नही हो सकती, अर्थात् कोण β का अधिकतम मान होगा $\sqrt{\frac{२+३}{४०००}}=\frac{१}{२८}$ रेडियन या २ ३° (सन्निकटत)। और β के इस मान के लिए हमे $\alpha-\beta$ तथा $\alpha+\beta$ के लिए क्रमश मान १ ७°=० ०३ रेडियन तथा ६ ३°=० ११ रेडियन मिलेगे और बादल की दूरी का मान १२० और ४५० मील के दर्मियान कुछ भी हो सकता है। इस परिणाम से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि क्यो कभी-कभी जब आकाश पूर्णत स्वच्छ और निरभ्र प्रतीत होता है, तो भी सान्ध्य किरणे दिखलाई देती है।

१९२. सान्ध्य प्रकाश की घटनाओ की व्याख्या (चित्र १५०)

कल्पना कीजिए कि सूर्य जब क्षितिज के निकट है, तो उसकी किरणो के पथ का आप अनुसरण कर रहे है। वायुमण्डल मे वे एक लम्बी दूरी तय करती है, वायु के अणु ज्यो-ज्यो बैगनी, नीली तथा हरी किरणो का परिक्षेपण करते है त्यो-त्यो किरणो का रग उत्तरोत्तर और भी अधिक लाल होता जाता है। इस प्रकार अस्त होता हुआ

सूर्य अपना ताम्रवर्ण धारण कर लेता है। क्षितिज के नीचे छिप जाने के उपरान्त भी सूर्य की किरणे हमारे सिर के ऊपर के वायुस्तरो को प्रकाशित करती रहती है। नीचे के वायुस्तर अधिक घने होते है, अत वे अधिकतम मात्रा मे परिक्षेपण करते है जबकि ऊपर के स्तर उत्तरोत्तर अधिक विरल होते जाते है और इस कारण परिक्षेपण भी कम
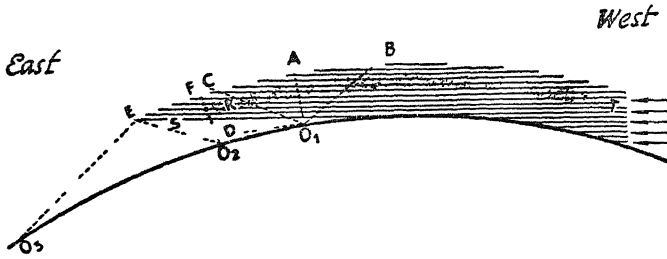
चित्र १५०—**साध्य प्रकाश के रगो की व्याख्या।**

होता जाता है। यदि हम O_1 पर खडे होकर ऊपर की दिशा O_1A मे देखे तो यहाँ हवा की तहो की गहराई अधिक न होगी और फिर अणुओ द्वारा ९०° के कोण पर परि-क्षेपण भी अधिक नही होता है। अत ऊर्ध्व बिन्दु के निकट आकाश अँधेरा दीखेगा। इसके प्रतिकूल O_1B तथा O_1C दिशाओ मे देखने पर आँख मे परिक्षेपित प्रकाश अत्यधिक मात्रा मे पहुँचेगा क्योकि हमारी दृष्टि अब प्रकाशित वायुस्तरो मे लम्बी दूरी तक जाती है। B की ओर से पहुँचने वाला प्रकाश अधिक प्रबल होगा क्योकि इस दशा मे वायु के अणुओ से परिक्षेपित होनेवाले प्रकाश के अतिरिक्त वे किरणे भी आँख मे पहुँचती है जो नन्ही बूँदो, तथा धूल के अपेक्षाकृत बडे आकार के जर्रो द्वारा अल्प कोण पर परिक्षेपित होती है। यहाँ पर हमे **क्षैतिज धारियो** की उत्पत्ति का समाधान मिलता है जिनकी दिशा वही होती है जो बडे आकार वाले जर्रो की तहो की। साथ ही साथ इससे इस बात का भी समाधान मिलता है कि O_1C दिशा मे क्यो **प्रति-सान्ध्य प्रकाश** उत्पन्न होता है और क्यो इसका रग नीले से हरा तथा पीला होकर लाल रग मे परिवर्तित हो जाता है। क्योकि जब हम अपनी दृष्टि थोडा नीचे की ओर करते है तो यह घने स्तरो मे से होकर गुजरती है जो दूर तक फैली होती है, अत परिक्षेपण के कारण अन्त मे केवल लाल रग का प्रकाश ही आँख तक पहुँच पाता है। और भी नीचे, O_1D दिशा मे हमारी दृष्टि के सामने **पृथ्वी की छाया** पडती है, अत

D की दिशा से कुछ भी प्रकाश हमारे पास नही पहुंचता सिवाय इसके कि इस दिशा मे पडनेवाली वस्तुएँ आकाश के सभी भागो से पहुँचनेवाले विसृत मन्द प्रकाश से प्रकाशित होती है, अत हर किस्म के विपर्यास गायब हो जाते है। कुछ समय उपरान्त हमारी स्थिति O_2 पर होगी जहाँ से अब प्रति-सान्ध्य प्रकाश का लाल हाशिया हमे दिखलाई न पडेगा क्योकि अब ऐसी दिशा मे हम देख रहे है जो सूर्य-रश्मियो के साथ अधिक वडा कोण बनाती है, तथा अब हमारी दृष्टिरेखा वायु के प्रकाशित तथा अप्रकाशित भागो के विभाजक धरातल को छूती हुई नही जाती है। बिन्दु E से आने वाली किरणो द्वारा पहुंचनेवाला प्रकाश अपर्याप्त होता है जब कि F से आने वाली अधिक प्रावण्य वाली किरण नीले, पीले तथा लाल प्रकाश की समान मात्राएँ अपने साथ लाती है। इस प्रकार वायुमण्डल के प्रकाशित भाग की सीमारेखा और भी अस्पष्ट तथा धुँधली हो जाती है।

और भी देर वाद सान्ध्यकालीन प्रकाशित स्तरो का प्रावण्य (ढलान) इतना अधिक हो जाता है कि अब पश्चिमी आकाश मे लाल रग का लेशमात्र भी नही दीखता। इस क्षण हमे समझना चाहिए कि प्रेक्षक बिन्दु O_3 पर स्थित है। वायुमण्डल के प्रकाशित भाग की सीमा E जो पृथ्वी की छाया के हाशिये के रूप मे ऊँची चढती हुई ऊर्ध्व बिन्दुओ को पार कर गयी थी (ऐसा करते हुए उसे हम देख नही पाते), पुन पश्चिम के आकाश मे प्रगट होने लगती है क्योकि हमारी दृष्टिरेखा एक बार फिर वायुमण्डल के प्रकाशित तथा अप्रकाशित भाग के विभाजक धरातल के साथ अल्प मान का कोण बनाती है। इसके अतिरिक्त अपेक्षाकृत बडे आकार के जर्रों द्वारा अल्पकोण का परिक्षेपण पुन क्रियाशील हो जाता है और दृश्य का सामान्य प्रकाश अब इतना मन्द हो चुका होता है कि इस क्षीण चमक पर भी हमारा ध्यान आकृष्ट हो जाता है। इसी कारण E, सान्ध्य प्रकाश की चमक की ऊपरी सीमा बतलाता है।

यद्यपि सान्ध्य प्रकाश की अधिकाश घटनाओ का समाधान परिक्षेपण के आधार पर किया जा सकता है, फिर भी आधुनिक अनुसन्धानो से पता चलता है कि अन्य बाते भी इन घटनाओ पर प्रभाव डालती है। हाल मे यह दिखलाया गया है[1] कि पृथ्वी-छाया का नीला-बैंगनी रग मुख्यत ओजोन द्वारा होने वाले अवशोषण के कारण है, यह गैस स्पेक्ट्रम के पीले तथा नारङ्गी वर्ण वाले भाग का हलका अवशोषण करती है,

1 J Dubois, Comptes—Rendus Acad Paris, **222**, 671, 1946, and **226**, 1180, 1948

सान्ध्य प्रकाश की परिस्थितियो मे किरणो का बारम्बार परिक्षेपण होता है, अत इनकी मार्ग-रेखा की लम्बाई इतनी अधिक बढ जाती है कि इस अवशोपण का प्रभाव प्रगट दिखाई पडने लग जाता है ।

अन्त मे नील-लोहित प्रकाश का समाधान करना बाकी रहता है । ऐसा प्रतीत होता है कि यह उन नन्हे धूलिकणो द्वारा होने वाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है, जो १५–२५ किलोमीटर की ऊँचाई पर, जहाँ से स्ट्रैटोस्फियर का प्रारम्भ होता है, उतराते रहते है । जिस किरण-शलाका से इस स्तर को प्रकाशित होते हुए हम देखते है, वह इस पर उस वक्त गिरती है, जब सूर्य क्षितिज से नीचे जा चुका होता है । इस किरण-शलाका का निचला भाग गाढा लाल होगा क्योकि इस भाग की किरणे घने वायु-स्तरो मे से होकर लम्बी दूरी तय करती है । अत स्तर के भाग SR से ही नील-लोहित प्रकाश का अधिकाश प्राप्त होगा । यहाँ आश्चर्यजनक वात यह है कि SR द्वारा होने वाला परिक्षेपण केवल O_2 पर ही दीखता है, O_1 पर नही (जहाँ से उसे पूर्वीय आकाश मे दृष्टिगोचर होना चाहिये था) । इससे हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि परिक्षेपण करने वाले कण वायु के अणुओ की तुलना मे बहुत बडे है, अत वे मुख्यत **सामने** की दिशा मे परिक्षेपण करते है (देखिए §१८२) । जब कभी सन्ध्या को नील-लोहित प्रकाश को प्रगट होते हुए हम देखे तो हमे समझ लेना चाहिए कि यह इस बात का सूचक है कि धूलकणो द्वारा सामने की दिशा मे होने वाले परिक्षेपण के शकु मे हम अब प्रवेश कर गये है ।

१९३ उषा तथा सन्ध्याकाल मे क्या कोई अन्तर है ?

यदि कोई अन्तर है भी तो इतना सूक्ष्म कि वास्तव मे किसी लाक्षणिक अन्तर का विवरण देना सम्भव नही है । फिर भी एक महत्त्वपूर्ण बात यह है प्रात आँख को पूर्ण विश्राम मिल चुका होता है और वह प्रकाश-तीव्रता को अविरत रूप से बढती हुई देखती है, अत प्रात की आलोक-घटनाओ के प्रति यह सन्ध्या की घटनाओ की अपेक्षा अधिक सुग्राही होती है ।

वायु की आर्द्रता की मात्रा अधिक होने के कारण सान्ध्य आलोक मे रगो की सम्पन्नता अधिक होती है तथा इस कारण भी कि वायु अपेक्षाकृत अधिक विक्षुब्ध होती है, तथा प्रात की अपेक्षा सन्ध्या को हवा मे धूल के कण भी अधिक मात्रा मे मौजूद होते है ।

१९४ 'प्रभात के पूर्व अन्धकार सबसे अधिक घना होता है।'

उत्काओ के सुविख्यात प्रेक्षक डेनिग अग्रेजी भाषा की उस लोकोक्ति मे अक्षरश विश्वास करते है। दिन निकलने के ठीक पहले वह कुछ घबराहट-सा महसूस करते है और वे चीजे जिन्हे वे अभी तक निश्चित रूप से भलीभाँति देख पा रहे थे, अब दृष्टि से गायब होती जान पडती है।

प्रकाश-ज्योति की माप से अवश्य पता चलता है कि कभी-कभी प्रदीप्ति अनियमित तौर पर घटती-बढती रहती है, किन्तु यह घट-बढ इतनी कम मात्रा मे होती है तथा इतनी अधिक परिवर्त्तनशील होती है कि इसका कोई वास्तविक अर्थ नही लगाया जा सकता। सभवत उषा की प्रथम ज्योति नेत्र की समानुयोजन[1]-क्षमता को उद्वेलित कर देती है यद्यपि यह ज्योति अभी तक इतनी क्षीण तथा विस्तार मे इतनी सकुचित रहती है कि आसपास की वस्तुएँ इस कद्र प्रकाशित नही हो पाती कि वे दिखलाई पड सके।

१९५ उषा तथा सान्ध्यकालीन लालिमा, मौसम की पूर्वसूचना के रूप मे

सन्ध्या के समय आप कहते है कि मौसम अच्छा होगा क्योकि आकाश लाल रग का है।

और सुबह को आप कहते है कि आज खराब मौसम होगा क्योकि आकाश मे लालिमा है। अरे पाखण्डी लोगो, आप आसमान का चेहरा तो पढ लेते है, किन्तु युग का सकेत क्या आप नही पहचान सकते ? मैथ्यू (XVI, 2–3)

यह प्राचीन तथा व्यापक नियम, जैसा कि आधुनिक आँकडो द्वारा प्रमाणित हो चुका है, अधिकाश दशाओ मे वास्तव मे सही उतरता है। प्रत्येक दशा का समाधान उसके निज के तरीके पर किया जा सकता है।

यदि सन्ध्या काल मे हम लालिमा देखते है तो इसका अर्थ है कि पश्चिम का आकाश स्वच्छ है। चूँकि ऋतु की दशाएँ आम तौर पर पश्चिम से पूरब को हटती है, अत हम यह आशा कर सकते है कि मौसम सुहावना रहेगा। किन्तु यदि अल्पदाब का प्रवेश आने को होता है तो इसके घने बादल अपनी छाया दूर-दूर तक फेकते है और सन्ध्याकालीन समूचा आकाश फीके पीले रग का धूमिल तथा हलकी फुआर की सूक्ष्म बूँदो से भरा दीखता है, ऐसे आकाश को तूफान और वर्षा का पूर्व-सूचक समझा जा सकता है।

1. Adaptation

क्षैतिज धारियाँ सुर्ख केवल तभी होती है जब हवा मे धूल या पानी की नन्ही बूँदे मौजूद होती है, सुबह के वक्त अधिक धूल तो होती नही है, अत सुर्ख रग अवश्य पानी के कारण होगा।

१९६. सान्ध्य प्रकाश के सामान्य क्रम मे व्यवधान

सान्ध्य प्रकाश की घटनाएँ, ऊँचाई पर स्थित वायुस्तरो की शुद्धता आँकने के लिए अत्यन्त सूक्ष्म किस्म के साधन है। सन् १८८३ से १८८६ तक के असामान्यत विविध रगो से परिपूर्ण सूर्योदय तथा सूर्यास्त इस बात के प्रत्यक्ष परिणाम थे कि डच द्वीपसमूह के ज्वालामुखी 'क्राकातोआ' के उद्‌गार के दौरान ज्वालामुखी की बारीक राख कुछ ही महीनो मे समस्त ससार के वायुमण्डल मे फैल गयी थी। किन्तु इसके पूर्व और इसके बाद भी छोटे पैमाने पर प्रकाशीय व्यवधान बारम्बार घटित हुए है जो आम तौर पर ज्वालामुखी के उद्‌गार से सम्बन्धित थे। उदाहरणत १८३१ मे सिसली-के निकट पैन्टीलेरिया ज्वालामुखी, १९०२–०४ मे मोण्ट पेली, १९०७–०९ काम-चट्का मे जादुल्का तथा १९१२–१४ मे अलास्का मे काटमाई। विसूवियस या एटना के प्रत्येक प्रचण्ड उद्‌गार के पश्चात् असामान्य सान्ध्य प्रकाश की आशा की जा सकती है, यद्यपि यहाँ (हालैण्ड) तक ज्वालामुखी की बारीक राख को पहुँचने मे एक हफ्ते से भी अधिक समय आम तौर पर लग जाता है।

इस बात की सम्भावना अधिक जान पडती है कि सूर्य पर धब्बो तथा तेज-शृगो[1] का बाहुल्य सान्ध्य प्रकाश की घटनाओ मे व्यवधान उपस्थित करता है क्योकि सूर्य से विसर्जित इलेक्ट्रान, आयन तथा परमाणु हमारे वायुमण्डल मे आयनीकरण का कारण बन सकते है। इस सिद्धान्त के अनुसार महत्तम प्रभाव १९३८ तथा १९४९ मे होने चाहिए।

सान्ध्य प्रकाश के व्यवधान के एक तृतीय कारण का पता उस वक्त चला जब १८, १९ मई १९१० को पृथ्वी हेली धूमकेतु की पूँछ मे से होकर गुजरी। सान्ध्य प्रकाश की यह शानदार घटना इस बात की द्योतक जान पडी कि धूमकेतु के धूलकण वायुमण्डल मे प्रवेश कर गये थे (§ १६७)। ठीक इसी प्रकार की प्रभावोत्पादक घटना सन् १९०८ मे देखी गयी जब उत्तर साइबीरिया के मरुस्थल प्रदेश मे विशाल-काय उल्का-प्रस्तर आ गिरा था।

1 Prominences

मुख्य प्रकाशीय घटनाएँ, जो सान्ध्य प्रकाश के व्यवधान की सूचक है, निम्नलिखित है—

(क) 'विशप का छल्ला'[1]। दिन भर सूर्य एक चमकीले, नीले-श्वेत मडलक के केन्द्र पर रहता है जिसके गिर्द लाल-भूरे रग का छल्ला मौजूद रहता है। मडलक के सबसे अधिक चमकीले भाग की त्रिज्या लगभग १५° के कोटि की होती है। सूर्य जब बहुत ही कम ऊँचाई पर होता है तब यह बिशप का छल्ला एक तरह का त्रिभुज बन जाता है जिसका आधार क्षैतिज रहता है। चूँकि छल्ले के सामने से अलका बादल गुजरते हुए देखे जा सकते है, अत सिद्ध होता है कि यह छल्ला वायुमण्डल मे बहुत अधिक ऊँचाई पर बनता है।

(ख) इसी प्रकार का ताम्रवर्ण का लाल छल्ला कभी-कभी प्रति-सूर्य बिन्दु पर भी देखा जा सकता है, इसकी त्रिज्या लगभग २५° होती है।

(ग) आकाश का नीला रग गँदला और सफेदी लिए हुए होता है, सूर्य जब क्षितिज के निकट होता है तो यह मटमैले लाल रग का दीखता है क्योकि धुन्ध की तह मे से होकर यह चमकता है। छठी दीप्ति-श्रेणी के तारे और पाँचवी श्रेणी के तारे भी अब दृष्टिगोचर नही हो पाते है।

(घ) असामान्य रूप से कम सख्या मे प्रभामण्डलो की उपस्थिति।

(ङ) असामान्य रूप से स्वच्छ रात्रि।

(च) असामान्य रूप से तेज, आग की लपट-जैसी नील-लोहित रोशनी।

(छ) द्वितीय नील-लोहित ज्योति। यह सान्ध्य प्रकाश के दौरान मे होनेवाला परिवर्त्तन है। नील-लोहित प्रकाश-ज्योति जब मन्द पड जाती है और सूर्य क्षितिज से ७° या ८° नीचे पहुँच जाता है, तब एक क्षीण लाल-बैगनी ज्योति उस स्थल पर प्रगट होती है जहाँ नील-लोहित प्रकाश प्रगट हुआ था और उसी भाँति इस लाल-बैगनी ज्योति का भी विकास होता है। सूर्य जब १०° या ११° क्षितिज से नीचे पहुँचता है तो इसका अवसान हो जाता है।

(ज) परा-अलका[2] बादल (देखिए § १९८)।

(झ) रात्रि के देदीप्यमान बादल (देखिए § १९९)।

(ञ) चन्द्रमा मे हरे रग का पुट दीखता है।

साधारण कोटि के लोग भी इनमे से विशेष प्रमुख घटनाओ द्वारा प्रभावित हो जाते है। किन्तु सूक्ष्म बारीकियो का प्रेक्षण कर सकने के लिए विशेष अभ्यास की

1. Bishop's Ring 2 Ultra-cirrus

आवश्यकता होती है, तभी इस बात का पता लगा सकते है कि दो सूर्यास्तो का एक समान होना कभी भी सम्भव नही है और ये सूक्ष्म अन्तर प्रकाशीय घटनाओ के न्यून-तम व्यवधानो को पहचानने के लिए अत्यन्त सूक्ष्मग्राही साधन साबित होते है।

१९७ सूर्य के गिर्द प्रकाश की चमक[1]

यदि हम सूर्य की ओर मुँह करके इस तरह खडे हो कि स्वय सूर्य एक छत के हाशिये की आड मे पडे तो हम देखेगे कि सूर्य के चारो ओर एक प्रकाश-ज्योति विकिरित हो रही है और ज्यो-ज्यो सूर्य से फासला बढता जाता है त्यो-त्यो यह ज्योति भी क्षीण होती जाती है। कुछ गजो के फासले पर रखे हुए वाटिका-ग्लोब मे भी इसे स्पष्ट देखा जा सकता है बशर्ते सूर्य के प्रतिबिम्ब को आप अपने सिर की ओट मे ले ले। कुछ प्रेक्षको का दावा है कि इसके दो भाग होते है—(क) एक रजतश्वेत मडलक जिसकी त्रिज्या २° से लेकर ५° तक होती है—(यह परिवर्तनशील होती है) और जो सामान्यत तीसरे पहर को प्रगट होता है, (ख) एक बहुत बडे आकार का प्रकाश-वृत्त जिसकी त्रिज्या निश्चय ही ३०° से लेकर ४०° तक होती है, जो शायद ही कभी अनुपस्थित रहता हो, और सन्धि बेला पर यह 'तेज चमक' मे परिवर्त्तित हो जाता है। अन्य प्रेक्षको के अनुसार इस चमक मे पाये जाते है ० २५° से लेकर २° तक की त्रिज्या का एक पीत वर्ण का श्वेत आभामण्डल, २° से लेकर ५° तक की त्रिज्या का नीला-श्वेत कान्तिचक्र, १५° से लेकर २३° तक की त्रिज्या का केन्द्रीय मडलक, १०° से लेकर ४०° तक के त्रिज्या का भीतरी मडलक तथा २५° से लेकर ७०° तक का एक बाहरी मडलक। इनके आकार अधिकतर सूर्य की ऊँचाई पर निर्भर करते है और ये दिन प्रति दिन बदलते रहते है। उदाहरण के लिए, ऐसा प्रतीत होता है कि जब सूर्य बहुत ही कम ऊँचाई पर होता है—क्षितिज से २° ऊपर—तो यह एक ऐसे आभामण्डल (आरिएल) से घिरा होता है जिससे मटमैले पीले रग की किरणे निकलती है और जब क्षितिज से १° की ऊँचाई पर सूर्य पहुँचता है तो यह आभामण्डल विलुप्त हो जाता है।

सूर्य के गिर्द के प्रकाश के ज्योतिमापन के सम्बन्ध मे सूक्ष्म अनुसन्धान बहुत कम ही किये गये है। अधिक सम्भावना इस बात की है कि जो हमे छल्ला-सा मालूम पडता है वह केवल प्रकाशतीव्रता के ह्रास की दर मे कमी होने के कारण उत्पन्न होता है, जो अन्यथा सूर्य से दूरी के बढने के साथ शनै -शनै घटती जाती है। यह परिक्षेपित प्रकाश निस्सन्देह

1. J Maurer, Met. Zs 32 and 33, 1915-16

धूल कणो, पानी की बूंदो, या बर्फ के जर्रो द्वारा सूर्य-प्रकाश के विवर्त्तन से उत्पन्न होता है—ये सभी अल्प कोण पर परिक्षेपण करते है (§ १८२)। छोटे, बड़े सभी आकार के कण होते है, अत ये आभामण्डल तथा कान्तिचक्र एक दूसरे के ऊपर अध्यारोपित होते है, फलस्वरूप रगो का मुश्किल से ही भान हो पाता है। इस प्रकाश-ज्योति की चमक मे अन्तर तथा प्रकाशमात्रा के वितरण वायु की शुद्धता के परिचायक है, अत यह उचित ही है कि इनका प्रेक्षण हम जारी रखे। ये तुरन्त वायुमण्डल मे होनेवाले प्रकाशीय विक्षोभ का पता देते है और सान्ध्य आलोक की घटनाओ से ये निकट सम्बन्ध रखते है।

जब कभी ज्वालामुखी की राख वायु मे उतराती होती है तो इस प्रकाशज्योति की परिधि के रूप मे एक अस्पष्ट भूरे-लाल रग का छल्ला, **बिशप का छल्ला**, प्रगट होता है (§ १९६)।

१९८ सान्ध्य प्रकाश के अलका या परा-अलका मेघ[1]

दुर्लभ परिस्थितियो मे सूर्यास्त के ठीक पहले आकाश निरभ्र प्रतीत हो सकता है और तब थोडी देर उपरान्त हलके बादलो की परत प्रगट होती है जो पश्चिमी आकाश मे कम ऊँचाई पर नीले-भूरे रग की दीखती है। एक अत्यन्त मार्के की बात यह है कि केवल सूर्य के अस्त होने के समय ही ये बादल दृष्टिगोचर होते है और सो भी जबकि इनकी ऊँचाई–३° तथा–७° हो। इससे यह सिद्ध होता है कि ये कुछ निश्चित दिशाओ से ही प्रकाशित हो पाते है। किन्तु यह प्रेक्षण इतनी कम बार किया जा सका है कि इसे हम कोई व्यापक महत्त्व नही दे सकते। परा-अलका बादल के प्रगट होने के साथ आम-तौर पर विशेष रूप से विविध रगो वाले सूर्यास्त, तथा प्रकाशीय विक्षोभ मिलते है (§ १९६), अत हम बेखटके इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि ये ज्वालामुखी की राख से निर्मित होते है। ये इतने झीने होते है कि दिन मे ये दिखलाई नही पडते, बल्कि सन्ध्या के धुँधलके मे ये प्रगट होते है, प्रत्यक्षत इस कारण कि अन्धेरी पृष्ठभूमि पर ये तेज रोशनी से प्रकाशित होते है। इस बात का यदि विचार करे कि सूर्य की ऊँचाई जब-७° थी तो क्षितिज से १०° की ऊँचाई पर ये दृष्टिगोचर थे, तो हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि इनकी ऊँचाई सात मील से विशेष अधिक नही हो सकती, इससे सिद्ध होता है कि ये स्ट्रैटोस्फियर[2] के सबसे नीचे के स्तर मे उतराते रहते है।

1. M. Wolf, Meteorol. Zeitschr, **33**, 517, 1916 2 Stratosphere

१९९ रात्रि के देदीप्यमान् बादल[1] (प्लेट XII)

ये अत्यन्त पतले बादल होते है जो अन्य सभी किस्म के बादलो के मुकाबले बहुत अधिक ऊँचाई पर स्थित होते है, किन्तु ये वायुमण्डल की सामान्य-परिस्थितियो मे भी देखे गये है। आश्चर्य की बात है कि ये केवल उत्तर अक्षाश ४५° तथा ६०° के दर्मियान तथा दक्षिण मे भी इन्ही अक्षाशो के दर्मियान देखे गये है, विशेषतया मई के मध्य से लेकर अगस्त के मध्य तक। हमारे यहाँ (हालैण्ड) के अक्षाशो के लिए खास तौर पर जून के अन्त मे इन्हे देखने का प्रयत्न कीजिए।

सूर्य जब तक अस्त नही हो चुका होता है तब तक तो आकाश पूर्णत निर्मल रहता है। सूर्यास्त के लगभग चौथाई घण्टे बाद देदीप्यमान् बादल नन्हे डैनो के रूप मे, या पसलियो की तरतीब मे, या धारियो की शक्ल मे, प्रगट होना शुरू करते है, सूर्यास्त के एक घण्टे या कुछ और अधिक देर बाद ये सबसे अधिक स्पष्ट दिखलाई देते है। उत्तर-ज्योति (§१८९) की पृष्ठभूमि पर ये प्रकाशित दीख पडते है, जबकि सामान्य अलका बादल **मटमैले** रग के होते है। अत स्पष्ट है कि अभी भी सूर्य का प्रकाश इन पर प्रचुरता से पड रहा है, सो निश्चय ही ये स्ट्रैटोस्फियर मे काफी ऊँचाई पर होगे। सही बात तो यह है कि ये स्वय प्रकाश उत्सर्जित नही करते। इनके नीले-श्वेत प्रकाश का अवलोकन घण्टो तक किया जा सकता है, समय ज्यो-ज्यो बीतता जाता है त्यो-त्यो इनके स्तरो की प्रकाशित सतह का क्षेत्रफल कम होता जाता है और क्षितिज से इनकी ऊँचाई भी घटती जाती है, अर्द्धरात्रि को इसकी ऊँचाई न्यूनतम होती है, और इसके बाद प्रकाश्यत यह पहले की अपेक्षा अधिक चमकीला हो जाता है। क्षितिज पर १०° से अधिक ऊँचाई पर ये बादल बिरले ही अवसरो पर दिखलाई देते है, इन दशाओ मे सूर्य की ऊँचाई $-१०°$ से $-१६°$ तक बदलती हुई पायी गयी है। इनकी रहस्यमय रजत-श्वेत आभा, जो क्षितिज के निकट सुनहले पीत वर्ण मे परिणत हो जाती है, अत्यन्त प्रभावोत्पादक होती है। धूल के कण जिनसे ये बादल बने है स्पष्टत. अत्यन्त बारीक होने चाहिए क्योकि ये मुख्यत नीला प्रकाश परिक्षेपित करते है, यह इस बात से प्रगट है कि नीले कॉच मे से देखने पर यह प्रकाश दृष्टिगोचर होता है, किन्तु लाल रग के कॉच मे से देखने पर नही। इससे यह बात समझ मे आ जाती है कि क्यो ये बादल

1 R Suring, Naturwiss, 23, 555, 1935, Die Wolken (Leipzig, 1936) p, 30 C Storner, Univ Observ Oslo Public No 6. 1933 and Astrophysica Norvegica I, 87, 1935

सान्ध्य आलोक की लालिमा का रग नही धारण करते, क्योकि वे ही किरणे आकाश मे ऊँची चढकर रात्रि के इन बादलो द्वारा परिक्षेपित होती है जो वायुमण्डल मे से गुजरने पर लाल रग धारण नही करने पाती। कुछ प्रेक्षको का कहना है कि इन बादलो से आनेवाला प्रकाश ध्रुवित नही होता, जबकि अन्य प्रेक्षको के अनुसार इस प्रकाश मे प्रबल ध्रुवण मौजूद रहता है (इस ध्रुवित प्रकाश के कम्पन, सूर्य, बादल तथा पृथ्वी से गुजरने वाले धरातल की लम्ब-दिशा मे होते है, अर्थात् उसी दिशा मे जिस दिशा मे नीले आकाश के तथा अन्य परिक्षेपण क्रियाओ के ध्रुवित प्रकाश का कम्पन होता है।) क्या यह सम्भव है कि देदीप्यमान् रात्रि-बादल कभी बडे आकार के, कभी छोटे आकार के कणो से बने होते है ?

प्रकाशित भाग की ऊपरी सीमा का प्रेक्षण करके इनकी ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है, बेहतर होगा कि क्षितिज से नीचे सूर्य की विभिन्न स्थितियो के लिए ये प्रेक्षण किये जायें। एक उदाहरण मे पाया गया कि जब क्षितिज से सूर्य की गहराई β=१२°, १३° और १४° थी तो ऊपरी सीमा की क्षितिज से ऊँचाई α क्रमश. १०°,५° तथा ३° के बराबर थी। रात्रि के इन बादलो की ऊँचाई h के लिए आसानी से हम यह सूत्र प्राप्त कर सकते है कि $h = \frac{R}{4}\beta^2\left(\frac{2\alpha+\beta}{\alpha+\beta}\right)^2$ जिसमे R पृथ्वी की त्रिज्या है, तथा कोण α और β रेडिएन मे नापे गये है।

इस प्रकार प्राप्त की गयी ऊँचाई को थोडा बढा देना चाहिए क्योकि वे किरणे, जो पृथ्वी की लगभग स्पर्शी होती है, परिक्षेपित नही होती है। अधिक सही तरीका यह है कि उसका फोटो दो स्थानो से लिया जाय। आम तौर पर जो फल प्राप्त होता है उसके अनुसार अधिकतर दशाओ मे इनकी ऊँचाइयाँ पचास से लेकर साठ मील तक मिलती है। एक बार इनकी ऊँचाई ज्ञात कर लेने पर हम इन बादलो मे लकीरो के रूप मे पडी धारियो का सही आकार भी मालूम कर सकते है। औसत तौर पर एक धारी से अगली धारी तक की दूरी चार से ६ मील तक होती है।

रात्रि के इन बादलो का महत्त्व इस बात के कारण बढ जाता है कि हमारे वायु-मण्डल के उच्च स्तरो की वायुधाराओ के बारे मे ये सूचना दे सकते है। यदि फोटोग्राफ नही लिये जा सके तो बादल-दर्पण[1] की मदद से बादलो का वेग मालूम कर सकते है, अधिकतर ये उत्तर-पूर्व दिशा से ४० से लेकर ८० गज प्रति सेकण्ड की रफ्तार से आते

1. Cloud-mirror

है, अक्सर पश्चिम-उत्तर-पश्चिम से ३० गज प्रति सेकण्ड की रफ्तार से और कुछ अवसरो पर अत्यधिक रफ्तार, ३०० गज प्रति सेकण्ड की, भी नापी गयी है।

पहले सामान्यत यह सिद्धान्त मान लिया जाता था कि देदीप्यमान् रात्रि-बादलो की रहस्यमय प्रकाशीय घटना ज्वालामुखी के प्रचण्ड उद्गार द्वारा वायुमण्डल मे बहुत ऊँचाई पर फेकी गयी राख के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु अब यह घटना इतनी अधिक बार देखी जा चुकी है कि बरबस हमे एक और कारण की भी कल्पना इसके लिए करनी पडती है—यह है हमारे गिर्द ब्रह्माण्ड मे मौजूद अत्यन्त बारीक धूल, जो हमारे वायुमण्डल मे उल्काओ तथा उल्का-प्रस्तरो द्वारा लायी जाती है तथा कदाचित् उन धूमकेतुओ द्वारा भी जो पृथ्वी के निकट से गुजरने पर अपने मार्ग मे काफी अधिक मात्रा मे ब्रह्माण्डीय धूल छोड जाते है। १९०८ मे साइबीरिया मे जो बृहत्काय उल्का-प्रस्तर गिरा था, उसके ठीक बाद ही अत्यन्त विलक्षण रात्रि-बादल दीख पडे थे। अन्य दशाओ के लिए अधिक सम्भव यही है कि धूल की उत्पत्ति ज्वालामुखी द्वारा होती है।[1]

इन बादलो का फोटो लेने के लिए चौडे मुँह के लेन्सवाले केमरे का उपयोग करना उपयुक्त होगा। ३ लेन्स वाले केमरे के लिए सूर्य जब क्षितिज से ९°, १२°, १४° तथा १५° नीचे था तो क्रमश प्रकाशदर्शन १६ सेकण्ड, ३५ सेकण्ड, ७२ सेकण्ड तथा १२२ सेकण्ड का दिया गया था।

२०० रात्रि मे सान्ध्य प्रकाश तथा रात्रि की प्रकाशीय घटनाएँ

यदि हम सान्ध्य प्रकाश की घटना के एक दम हलके रूप का अध्ययन करना चाहते है तो हमे इसका प्रारम्भ रात मे ही कर देना चाहिए जबकि हमारी आँखो को पूर्ण विश्राम मिल चुका होता है,और तब हमे उषा के प्रथम चरणो का प्रेक्षण करना चाहिए। मई मे, या अगस्त-सितम्बर के महीने मे ऐसी रात चुननी चाहिए कि आसमान मे चन्द्रमा न हो तथा आकाश पूर्णतया निरभ्र हो और स्थान ऐसा चुनना चाहिए जो मनुष्य की बस्ती से यथासम्भव अधिकतम दूरी पर हो। यह आसान तो नही होगा कि सामान्य दैनिक क्रम मे व्यवधान डाले और अर्द्धरात्रि मे आरम्भ करके बाहर मैदान मे कुछ घण्टो तक प्रेक्षण करे। किन्तु एक बार इस कठिनाई पर हावी हो जाने के बाद हमे प्रचुर प्रतिदान इस रूप मे मिलता है कि हमारे सामने एक शानदार दृश्य का प्रादुर्भाव होता है। नक्षत्रो से जगमगाते आकाश की शोभा की तो कल्पना भी नगर का साधारण निवासी नही कर सकता। बडे आश्चर्य की बात है कि हमारी आँखे अँधेरे मे देख सकने

1. R Suring, Die Wolken (Leipzig, 1936) pp 30-36

की क्षमता को कितनी अधिक सीमा तक बढा लेती है और यह भी उल्लेखनीय बात है कि बाहर निकलते ही जितने तारे हम देख पाते है, उससे कितने अधिक तारे एक घण्टे बाद हमे दिखाई देने लगते है। ऐसा लगता है मानो समस्त आकाश दीप्तिमान् हो उठा है। यह वह उपयुक्त क्षण है जब कि अत्यन्त मन्द प्रकाशीय घटनाओ का प्रेक्षण किया जा सकता है जिनमे से कुछ तो स्पष्ट देखी जा सकती है और कुछ बहुधा अदृश्य ही रहती है।

सर्वप्रथम हम सभवत नीचे ही क्षितिज पर इक्के-दुक्के, प्रकाश की फीकी चमक देखेगे। यह दूरस्थ नगरो और गाँवो की रोशनियो का प्रतिबिम्बन है। आकाश की बदली, धुन्ध या स्वच्छता के अनुसार कुछ रातो को, अन्य रातो की अपेक्षा, यह प्रकाश अधिक चटकीला दीखता है। इन कारणो का लेखा-जोखा आसानी से किया जा सकता है बशर्ते सदैव एक ही स्थान से प्रेक्षण करे।

आकाश के ठीक बीचोबीच एक फीते की भाँति आकाशगगा फैली हुई दीखती है जो प्रकाश के छोट-बडे धब्बो से बनी होती है जिसके बीच-बीच मे अन्धकार के प्रदेश मौजूद होते है। जिन्होने पहले कभी तारो से जगमगाते आकाश का अवलोकन नही किया है वे इसके कतिपय भागो की चमक से आश्चर्यचकित रह जायेंगे।

पृष्ठभाग का आकाश क्षितिज के निकट अधिक स्पष्ट दिखाई देता है, क्षितिज के सहारे चारो ओर हाशिये पर 'धरती-आलोक' से यह मण्डित रहता है जिसकी चमक लगभग १५° की ऊँचाई पर अधिकतम होती है। यह हमारे वायुमण्डल का एक तरह का सतत फीका 'अरोरा'[1] प्रकाश है। हमारी दृष्टि की रेखा जितनी अधिक तिरछी दिशा मे होगी उतनी अधिक दूरी तक दीप्त स्तर मे से निगाह गुजरती है, अत- 'धरती-आलोक' उतना ही अधिक चमकीला दीखता है। क्षितिज के निकट इसकी दीप्ति घट जाती है, इसकी वजह है वायु के कारण प्रकाश का मन्द पड जाना।

कभी-कभी चौडी चमकीली धारियाँ दिखलाई देती है।[2] वर्ष मे दो बार अगस्त-सितम्बर और नवम्बर-दिसम्बर मे प्रकाश्यत इनका विशेष तौर पर बाहुल्य होता है। ये बृहत् उल्का-झाडियो की घटनाओ से सम्बन्धित जान पडती है, १५-१६ नवम्बर के करीब चमकीली धारियो के दृष्टिगोचर होने की अच्छी सम्भावना रहती है। ख्याल किया जाता है कि हमारे वायुमण्डल मे ब्रह्माण्डीय धूल के प्रविष्ट कर जान पर ये उत्पन्न

1 Aurora

2 C Hoffmeister, Die Sterne, 11, 257, 1931 Die Meteore (Leipzig 1937), p 118

होती है। ये धारियाँ अत्यधिक ऊँचाई पर स्थित होती होगी, क्योकि ये अत्यन्त धीमी रफ्तार से सरकती दिखाई पडती है। ऊर्ध्व विन्दु के आसपास इनकी गति अधिक-से-अधिक १° प्रति मिनट हो पाती है। वर्ष मे एकाध बार हमारे देश (हालैड) मे **'उत्तरीय प्रकाश'** दिखलाई पडता है। कम से कम उन वर्षो मे तो अवश्य ही, जब सूर्य के धब्बो की क्रियाशीलता महत्तम होती है, उदाहरणत सन् १९३८ मे ओर कदाचित् १९४९ मे। आकाश मे उत्तर की ओर ये वृत्तचाप, किरण-पुज आदि की शक्ल मे प्रगट होते है, प्राय ये किरणे तेजी के साथ हरकत करती है, और उनकी लम्बाई घटती-बढती रहती है। सावधान रहिए कि कही फासले पर हिलती-डुलती 'सर्चलाइट' से आप धोखा न खा जायें!

आकाश मे पूरे राशिचक्र[1] पर **राशिचक्रीय प्रकाश** के कारण चमक बढी हुई दीखती है, जो सूर्य के निकट विशेषरूप से अधिक प्रवल होती है और प्रति-सूर्य विन्दु की दिशा मे यह चमक तेजी से घटती जाती है। इसकी शक्ल एक तिर्यक् सूची स्तम्भ के मानिन्द होती है जो वसन्तऋतु मे सूर्यास्त के उपरान्त पश्चिम के क्षितिज से ऊपर उठता है और शरद ऋतु मे सूर्योदय से पहले पूर्व दिशा के क्षितिज से (देखिए § २०१)।

इन सब घटनाओ से पृथक्, स्वय आकाश की एक पृष्ठभूमि के रूप मे निश्चित चमक होती है। आपके फले हुए हाथ, वृक्षो और इमारतो की सिल्युएत इसके सामने काले रग मे स्पष्ट उभरती है। इस चमक का ५० प्रतिशत तो मन्द रोशनी के लाखो-करोडो अदृश्य नक्षत्रो के कारण उत्पन्न होता है, ५ प्रतिशत पृथ्वी के वायुमण्डल द्वारा होनेवाले नक्षत्रो के प्रकाश के परिक्षेपण से उत्पन्न होता है और शेष 'वायु-ज्योति' के कारण। रात्रि-आकाश की ज्योति क्षितिज की ओर बढती है और १५° की ऊँचाई पर अधिकतम हो जाती है। ऐसा उच्चतम वायुमण्डलीय स्तरो (आयनस्फियर) के हलके दीप्तिकरण के कारण होता है, जिनका दिन के समय प्रकाशित होने के कारण आयनीकरण हो गया रहता है, और अब रात्रि मे अपनी अवशोपित ऊर्जा को वे विकिरित करते है। इसके स्पेक्ट्रम मे अत्यन्त रोचक उत्सर्जन रेखाएँ मिलती है जिनमे से अधिकाश अरोरा की उत्सर्जन रेखाओ के समान होती है। कुछ प्रेक्षको के अनुसार यह ज्योति एक-सम नही होती है, बल्कि जगह-जगह पर इसकी चमक न्यूनाधिक होती है, देदीप्यमान् स्तरो मे से अधिक लम्बी दूरी तक हमारी निगाह जाती है तो चमक भी उसी

1. Zodiac

हिसाब से अधिक दिखलाई पडती है, तदुपरान्त क्षितिज के और निकट की दिशा मे चमक की कमी वायुमण्डल द्वारा होनेवाले दीप्ति-ह्रास के कारण है।

फोटो एलेक्ट्रिक सेल से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस चमक के प्रकाश का रग स्पष्टत लाल होना चाहिए। किन्तु हमारे नेत्र के दण्ड स्पेक्ट्रल के इस भाग की किरणो के प्रति सुग्राही नही होते और रात्रि-आकाश अभी भी निलछौवे रग का प्रतीत होता है।

रात्रि-आकाश की दीप्ति मे सामान्यत अधिक घट-बढ नही होती। तथापि कुछ राते असाधारण रूप से अधिक दीप्तिमान् होती है जबकि इनकी दीप्ति सामान्य की चौगुनी हो जाती है। चाँदनी की अनुपस्थिति मे भी ऐसी रात्रि को घडी के अङ्क पढे जा सकते है तथा बडे आकार की वस्तुएँ पहचानी जा सकती है। ऐसी घटनाओ का समाधान इस प्रकार कर सकते है कि सूर्य से उत्सर्जित आयनीकृत गैसो की धाराएँ हमारे वायुमण्डल मे पहुँचती है जो इस असाधारण चमक के प्रकाश के लिए उत्तरदायी है।

अन्त मे हम **'रात्रि के सान्ध्य प्रकाश'** की घटना के प्रेक्षण पर आते है। आकाश के उत्तरीय पार्श्व पर धरती-आलोक के हाशिये का निरीक्षण कीजिए। इस ओर हाशिये की ऊँचाई धीरे-धीरे लगभग १०° बढ जाती है, अधिकतम ऊँचाई उस बिन्दु के ऊपर होती है जहाँ सूर्य (अवश्य जो अब विलुप्त हो चुका है) क्षितिज के नीचे अवस्थित होता है। यही **'रात्रि का सान्ध्य प्रकाश'** है। इसे सदैव ही इस बात से पहचाना जा सकता है कि ज्यो-ज्यो रात बीतती है त्यो-त्यो यह अनिवार्य रूप से सूर्य के साथ-साथ पूर्व को खिसकता जाता है। सूर्य से ऊपर इसकी ऊँचाई ४०° की कोटि की होती है, मर्वाधिक उपयुक्त परिस्थितियो मे (ग्रीनलैण्ड मे) यह सूर्य के ऊपर ५५° की ऊँचाई तक प्रेक्षणगम्य रहता है। अत स्पष्ट है हमारे देश (हालैण्ड) के जलवायु मे ग्रीष्म-ऋतु मे रात्रि कभी भी पूर्णतया अन्धकारमय नही होती, दरअसल सान्ध्य प्रकाश सारी रात मौजूद रहता है। केवल जाडे मे हमारा रात्रि का आकाश पूर्ण रूप से अन्धकारमय होता है। उससे यह बात भी समझ मे आती है कि क्यो उष्ण कटिबन्ध का तारो भरा आकाश गहन अन्धकार लिए हुए होता है, कारण यह है कि पृथ्वी के इन भागो मे सूर्य इतनी तेज ढाल पर नीचे उतरता है और क्षितिज के बहुत नीचे तक पहुँच जाता है। कुछ ऐसे भी दृष्टान्त मौजूद है जबकि रात्रि का सान्ध्य प्रकाश असामान्य रूप से तेज होता है।

सूर्योदय से ढाई-तीन घण्टे पूर्व सान्ध्य प्रकाश की चमक असमित हो जाती है, पूर्व की ओर ऊँची उठकर वहाँ से फिर तेज ढाल पर नीचे को आ जाती है और इस तरह कुछ देर उपरान्त प्रकाश के शकु का आकार धारण कर लेती है जो ऊपर की ओर ढालआँ

होती है—यह 'राशिचक्रीय प्रकाश' है—इसके अक्ष का झुकाव वस्तुत वही होता है जो क्रान्तिवलय[1] का (§२०१)।

सूर्योदय से लगभग ढाई घण्टे पहले जबकि सूर्य क्षितिज से अभी २०° नीचे रहता है, राशिचक्रीय प्रकाश के पेंदे पर सूर्य से थोडा दाहिने हटकर, एक अत्यन्त फीका नीले वर्ण का प्रकाश प्रगट होता है, कठिनाई से ही यह प्रेक्षणीय हो पाता है और धीरे-धीरे यह ऊपर को उठता है तथा साथ ही बायी ओर, सूर्य की तरफ फैलता भी जाता है (चित्र १५१)। यह **तड़के की उषा-प्रकाशज्योति** है जो आध घण्टे मे ऊर्ध्व बिन्दु
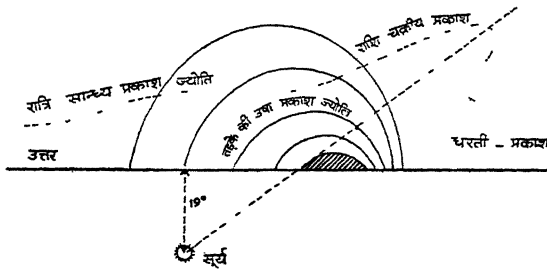
चित्र १५१—**रात्रिकालीन साध्य प्रकाश।**

तक पहुँचती है। तडके की उषा-प्रकाश ज्योति के वृत्तचाप आम तौर पर सूर्य के ठीक ऊपर स्थित होते हैं। यदि तडके की उषा-प्रकाश-ज्योति दाहिनी ओर हटी हुई प्रतीत होती है तो इसका कारण यह है कि इसकी चमक दाहिनी ओर के राशिचक्रीय प्रकाश की चमक के साथ मिल गयी होती है। किन्तु उषा-प्रकाश की चमक ज्यो-ज्यो बढती जाती है त्यो-त्यो यह प्रमुखता प्राप्त करती जाती है और शीघ्र ही यह पुन-सूर्य के ऊपर अपनी सामान्य स्थिति हासिल कर लेती है। फिर तो यह सूर्य की दैनिक गति मे उसके साथ-साथ ही रहती है और धीरे-धीरे यह उत्तरोत्तर दाहिनी ओर सरकती जाती है।

अब मन्द प्रकाश के तारे (पाँचवी दीप्ति-श्रेणी के) लुप्त हो चुके होते है किन्तु अधिक तेज प्रकाश वाले तारे अभी तक पहचाने जा सकते है, तथा भूमिखण्ड के प्रमुख चिह्न भी अब पहचान मे आने लग गये हैं। पश्चिमी आकाश मे प्रति-ज्योति[2] काफी

1. Ecliptic 2 Counter-glow

प्रमुखता प्राप्त कर चुकी है। उषा की पीत वर्ण की ज्योति प्रगट होना शुरू करती है जो सिरे पर हलकी पडकर हरे-नीले रग मे परिणत हो जाती है। यथार्थ उषा का आरम्भ हो चुका है, सूर्य की ऊँचाई इस समय –१७° से लेकर –१६° होती है (और भी देखिए § १८६)।

वर्ष की अन्य ऋतुओ मे घटना का क्रम इसी प्रकार का होता है,किन्तु सूर्य की ऊँचाई भिन्न होती है। उदाहरण के लिए जून मे सूर्य क्षितिज से १०° या १५° से अधिक नीचे नही जा पाता है, अत वे सभी घटनाएँ जो उस वक्त घटती है जब कि सूर्य और अधिक नीचे होता है, इस वक्त दिखलाई नही पडती।

२०१ राशिचक्रीय प्रकाश[1]

जब सूर्यास्त का सान्ध्य प्रकाश समाप्त हो चुकता है या प्रात कालीन धुँधलका आरम्भ होने को होता है, तो वर्ष के कुछ महीनो मे हम मृदु विकिरण का राशिचक्रीय प्रकाश एक चिपटे शीर्षवाले सूचीस्तम्भ के रूप मे तिरछी दिशा मे उठते हुए देख सकते है। इसका उठाव जितना अधिक सीधा ऊपर की ओर होता है उतनी ही अच्छी प्रकार हम इसका प्रेक्षण कर पाते है। सर्वाधिक उपयुक्त अवसर होते है जनवरी, फरवरी और मार्च के महीनो मे, सन्ध्याकालीन पश्चिमी आकाश मे, तथा अक्टूबर, नवम्बर और दिसम्बर मे तडके सुबह को, पूर्व के आकाश मे (उतना उपयुक्त नही, जितना पश्चिम के आकाश मे)।

जून-जुलाई मे हमारे देश (हालैण्ड) के अक्षाशो मे इसका कुछ भी भाग नही दीख पडता है क्योंकि तब सूर्य क्षितिज से काफी नीचे नही उतर पाता है और इसलिए देर तक बनी रहनेवाली सान्ध्य प्रकाश की घटना के कारण राशिचक्रीय प्रकाश को उससे पृथक् पहचाना नही जा सकता।

इसकी स्थिति निर्धारित करने के लिए हमे प्रेक्षण का प्रारम्भ स्वय राशिचक्र की खोज से करना चाहिए–अर्थात् उस बृहद् वृत्त को ढूँढना चाहिए जो **मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ** तथा **मीन** तारा-राशियो से गुजरता है।

यह वह मार्ग है जिसे सूर्य वर्ष भर मे तय करता हुआ हमे 'दिखाई' देता है। अवश्य ठीक जिस क्षण सूर्य किसी राशि मे अवस्थित है उस क्षण उस राशि को हम देख

1 Fr Schmid Das Zodiakallicht (Hamburg, 1928) W Brunner, Publication Sternw Zurich, 1935

नही सकते, किन्तु ज्यो ही यह अस्त होता है और अन्धकार का पदार्पण हो जाता है, तब उस तारा-राशि का शेष भाग दृष्टिगोचर हो जाता है। एक प्रकार का ज्योतिर्मय धुन्ध-सा समूचे बृहद्-वृत्त पर फैला रहता है जो सूर्य के निकट सबसे अधिक चमकीला और चौडा होता है और वहाँ से दोनो दिशाओ की ओर यह सँकरा होता जाता है। सूर्य के एक ओर तो राशिचक्रीय ज्योति का वह भाग होता है जिसे हम तडके प्रात काल देखते है, और दूसरी ओर वह राशिचक्रीय ज्योति होती है जो सन्ध्या को देखी जाती है। जाडे की ऋतु मे एक अनुभवी प्रेक्षक **राशिचक्रीय प्रकाश** को लगातार ६ महीने तक सुबह और शाम दोनो वक्त देख सकता है।

यह ज्योति स्वय हलकी होती है, लगभग उसी कोटि की जिस कोटि की आकाश-गगा की ज्योति, किन्तु यह उस कद्र दानेदार, असतत, नही होती है तथा यह अधिक दूधिया रग की होती है। इसे देख सकने के लिए अभ्यास की जरूरत होती है। अवश्य चन्द्रमा मौजूद नही होना चाहिए और प्रत्येक लैम्प, चाहे वह फासले पर ही क्यो न हो, बाधा डालता है, जबकि शुक्र तथा बृहस्पति सरीखे चमकीले ग्रह भी कष्टदायक साबित हो सकते है। बडे नगरो के सामीप्य से भी बचना चाहिए, प्रेक्षण करने के लिए सबसे बढिया जगह एक ऊँचा स्थल होगा जिसके चारो ओर खुला दृश्य प्राप्त हो।

नक्षत्रो के चार्ट पर आसानी से पहचाने जानेवाले तारो के लिहाज़ से राशिचक्रीय प्रकाश की सीमारेखा खीचकर प्रेक्षण का आरम्भ करना चाहिए और बाद मे समान दीप्ति की रेखाएँ खीच लेनी चाहिए। बीच का भाग सबसे अधिक चमकीला होता है और चमक सिरे और हाशिये की ओर धीरे-धीरे घटती है, किंतु उत्तर की अपेक्षा दक्षिण की ओर अधिक तेजी से घटती है। अत सबसे अधिक चमकीला भाग, कम प्रदीप्ति वाले भागो के समिति-अक्ष के लिहाज से दक्षिण की ओर हटा हुआ प्रतीत होता है। इस किस्म के स्थूल रेखाचित्र द्वारा हम इस प्रकाशीय घटना की चौडाई का अन्दाज़ लगा सकते है जो अक्ष के समकोण नापी जाने पर सूर्य से ३०°, ९०° तथा १५०° की दूरियो पर क्रम से ४०°, २०° तथा १०° मिलती है।

राशिचक्रीय ज्योति के प्रेक्षण के लिए यदि समूची रात व्यतीत करने का कष्ट उठाएँ, और इस बदलते हुए दृश्य के सुन्दर परिवर्त्तनो का गुणाङ्कन करे तो हमारी मिहनत भलीभाँति सार्थक होगी। सूर्यास्त के लगभग दो घण्टे बाद, जब सूर्य की स्थिति −१७° पर होती है, एक बहुत ही फीकी ज्योति का शकु, स्फान[1] की शक्ल का, दक्षिण-

1. Wedge, पच्चड

पश्चिम दिशा मे तिरछा उठता हुआ दृष्टिगोचर होता है। सूर्य की स्थिति जब –२०° पर पहुँचती है तो आकाश इतना अधिक अन्धकारमय हो चुकता है कि अब प्रकाश का एक विशालकाय सूची-स्तम्भ देखा जा सकता है। पश्चिम की यह राशिचक्रीय प्रकाश-ज्योति, रात के दौरान मे अधिक सीधी हो जाती है और उत्तरोत्तर अधिक दूर तक फैलती जाती है, तारो के लिहाज से इसकी स्थिति मोटे तौर पर पहले-जैसी ही बनी रहती है। थोडा-सा स्थानान्तर पहचाना भर जा सकता है—तारे जो राशिचक्रीय ज्योति के कुछ दक्षिण स्थित थे, बाद मे हटकर राशिचक्रीय प्रकाश के उत्तर मे पहुँच जाते है। इस अद्भुत घटना के प्रेक्षण के लिए अत्युत्तम समय जाडे की ऋतु का पूर्वार्द्ध होता है।

शनै-शनै पश्चिम की राशिचक्रीय ज्योति मन्द पडने लगती है और पूर्वीय राशि-चक्रीय ज्योति पूर्व दिशा मे प्रकट होती है। करीब-करीब यह अर्द्धरात्रि का वक्त होता है, जो कि सुविख्यात 'प्रति-ज्योति'[1] (गेगेन्शीन) देखने के लिए उपयुक्त समय होता है—यह उन घटनाओ मे है जिनका प्रेक्षण अत्यधिक कठिन होता है, इसे हम केवल जाडे की स्वच्छ रात्रि मे ही देखने की आशा कर सकते है जबकि आकाश अत्यन्त अन्धकार-पूर्ण होता है। प्रति-सूर्य बिन्दु पर (§१२०), अर्थात् वस्तुत दक्षिण मे अत्यन्त मन्द प्रकाश का एक सेतु दिखाई पडता है जो पूर्वीय और पश्चिमीय राशिचक्रीय ज्योतियो के सिरो को मिलाता है। तदनन्तर रात के दौरान मे पूर्वीय राशिचक्रीय ज्योति नक्षत्रो के साथ गति करती हुई देखी जा सकती है और साथ ही साथ स्थानान्तरित होते हुए भी, तारे ज्योति के सूचीस्तम्भ के उत्तर से दक्षिण की ओर हरकत करते जान पडते है। एक बार पुन ऐसा जान पडता है मानो राशिचक्रीय प्रकाश आकाश की दैनिक गति का तो साथ देता है, किन्तु तारो के लिहाज से रच मात्र पिछड जाता है।

दिन निकलने वाला है, सूर्य की स्थिति जब –२०° या –१९° होती है, तो ऐसा प्रतीत होता है मानो पूर्वीय राशिचक्रीय प्रकाश के सूची-स्तम्भ का पेदा चौडा होकर अधिक दीप्तिमान् हो गया है। जब सूर्य –१९° से लेकर –१७° तक पहुँचता है तब प्रभात का उषा-आलोक प्रकट होता है।

राशि चक्रीय प्रकाश, सूर्य के गिर्द मौजूद ब्रह्माण्डीय धूल के एक बृहत्काय मडलक द्वारा सूर्य के प्रकाश के परिक्षेपित होने से उत्पन्न होता है—यह मडलक क्रान्तिवलय-तल के दोनो ओर बाहर की ओर तक पहुँचता है। धूलि-कणो के दर्मियान अन्तर्ग्रहीय विरल गैस भी मौजूद होती है जो आशिक रूप से आयनित होती है, अत इसके मुक्त

1. Gegenschein

इलेक्ट्रान भी परिक्षेपण मे योग देते है। धरती से धूलिकणो के इस बादल को हम सूर्य की रोशनी से प्रकाशित देखते है और हमारी निगाह ज्यो-ज्यो सूर्य के निकट आती है त्यो-त्यो इस बादल की चमक बढती जाती है।

किन्तु प्रात या सन्ध्याकालीन आकाश मे प्रकाशदीप्ति के प्रत्याशित वितरण मे कुछ व्यवधान उपस्थित हो जाता है, क्योकि आकाश के वे ही भाग रात्रि के सान्ध्य प्रकाश से भी आलोकित होते है (§२००), यह सान्ध्य प्रकाश के अन्तिम क्षणो की अत्यन्त क्षीण ज्योति होती है जो वायुमण्डल के उच्चतम स्तरो द्वारा परिक्षेपित होने पर हमारी ओर आती है। इस प्रकाश की चमक भी सूर्य के निकट की ओर बढती है, किन्तु चमक की यह वृद्धि वास्तविक राशिचक्रीय प्रकाश की वृद्धि की तुलना मे अधिक तीव्र होती है, इस प्रकाश की समज्योति रेखाएँ वृत्तचाप की शक्ल मे, सूर्य को मिहराब की तरह परिवेष्टित करती है, जैसा कि सभी सान्ध्यकालीन घटनाएँ करती है, राशिचक्र का इन पर कोई असर नही पडता है (चित्र १५१)। राशिचक्रीय प्रकाश तथा सान्ध्य प्रकाश के सम्मिश्रण से उस लाक्षणिक प्रकाश-सूचीस्तम्भ का निर्माण होता है जिसका हम प्रेक्षण करते है। क्षितिज तथा राशिचक्र के स्थिति-परिवर्त्तन से हम समझ सकते है कि क्यो रात के दौरान मे तथा वर्ष के दौरान मे इस प्रकाशीय घटना का कुछ हद तक स्थानान्तर होता है—यह स्थानान्तर प्रेक्षणस्थल की भौगोलिक स्थिति पर भी आश्रित होता है। अत इसमे वायु-ज्योति को भी जोडना चाहिए जो क्षितिज से १५° की ऊँचाई पर महत्तम प्रकाशतीव्रता प्रदर्शित करती है, क्योकि इससे नीचे वायुमण्डल द्वारा अवशोषण के कारण यह उत्तरोत्तर मन्द होती जाती है।

फोटो इलेक्ट्रिक नाप द्वारा हाल मे, राशिचक्रीय प्रकाश के बारे मे हमारी जानकारी मे विशेष वृद्धि हुई है। इससे मालूम किया गया है कि यह प्रकाश ध्रुवित होता है, और किसी-किसी स्थल पर तो ध्रुवण की मात्रा ३० प्रतिशत तक पहुँच जाती है। सूर्य की ओर दिशा EZ मे चमक की वृद्धि परिक्षेपण के कोण के कारण तो है ही, साथ मे इस कारण भी कि इस ओर धूलि के बादल की घनता बढ जाती है। 'प्रति-ज्योति' उस प्रकाश के कारण उत्पन्न होती है जो मडलक के बाहरी भागो से परिक्षेपित होता है, अर्थात् दिशा CE से, सूर्य के उलटे रुख की ओर दीखनेवाली हलकी ज्योति का सन्तोषजनक रूप से समाधान नही किया जा सका है (चित्र १५२)।

यह प्रतिपादित किया गया है कि क्रान्तिचक्रीय प्रकाश की चमक नियमित तौर पर हर दो या तीन मिनट पर बढती और घटती है तथा ये परिवर्त्तन चुम्बकीय सूई के विक्षोभ के साथ घटते है। यह भी कहा जाता है कि यह प्रकाश चुम्बकीय तूफान के

दौरान विशेष रूप से तीव्र हो जाता है। इन प्रेक्षणो को स्वीकार करने के पूर्व बेहतर होगा कि इनकी वास्तविकता की जॉच इस तरह कर ले कि कम-से-कम दो व्यक्तियो को एक ही समय अलग-अलग स्वतत्र रूप से प्रेक्षण करने दे और इस बात का पूरा इतमीनान भी कर ले कि ये परिवर्त्तन बादलो के आवरण या उनकी छाया के कारण तो नही उत्पन्न होते है।
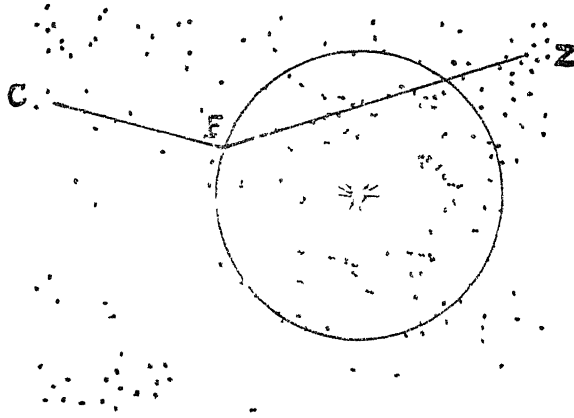
चित्र १५२—**राशिचक्रीय प्रकाश सूर्य के निकट क्यों अधिक तीव्र होता है।**

सर्वग्रास सूर्यग्रहण के दौरान एक अत्यन्त रोचक प्रेक्षण किया जा सकता है जबकि इस बात की सम्भावना मौजूद रहती है कि चन्द्रमा का छायाशकु, कान्तिचक्रीय प्रकाश का परिक्षेपण करनेवाली धूल के स्तरो मे से गुजरता हुआ देखा जा सके। सूर्य के अस्त होने के उपरान्त ही ये प्रेक्षण किये जाने चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है कि चान्द्र कान्तिचक्रीय प्रकाश का भी अस्तित्व होता है जो चन्द्रमा के उदय होने के ठीक पहले और इसके अस्त होने के बाद प्रकट होता है, किन्तु इस ज्योति का प्रेक्षण कम-से-कम उतना ही कठिन है जितना 'गेगेन्शीन' का।

२०२. चन्द्रग्रहण

पृथ्वी की छाया जब चन्द्रमा पर पडती है तो चन्द्रग्रहण लगते है। क्या यह उचित न होगा कि यह देखा जाय कि यह छाया दीखती कैसी है ? इस दृष्टिकोण से

विचार करे तो चन्द्रग्रहण वास्तव मे स्वय हमारी धरती के बारे मे जानकारी हासिल करने का एक साधन साबित होता है।

कोई भी दो चन्द्रग्रहण एक-से नही दीखते। बहुत कम ही ऐसा होता है कि चन्द्रमा इस पूरी तरह छिप जाय कि रात्रि के आकाश मे यह बिलकुल ही न दीखे। सामान्यत छाया के केन्द्र भाग का रग फीके ताम्रवर्ण सरीखा लाल होता है जो ऐसे रगो से परि-वेष्टित होता है जिनकी चमक बाहर की ओर बढती जाती है। एक कुशल प्रेक्षक निम्न-लिखित कटिबधो का विवरण देता है—

०–३०', सुर्खी लिए हुए काला, बाहरी हाशिये की ओर अधिक चटकीला बादामी मिश्रित नारङ्गी रग।

३०'–४१' भूरे रग का हाशिया, जिसकी चमक सर्वत्र बहुत कुछ एक समान।

४१'–४२' सक्रमण हाशिया

इससे और बाहर की ओर हरे, नारङ्गी और गुलाबी रग के वृत्त मिलते है। अवश्य ही विपर्यास प्रभाव इनके निर्माण मे योग देते है।

इनके रग तथा जिस ढग से ये बदलते रहते है, दोनो से हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि हम यहाँ सामान्य किस्म की छाया का अध्ययन नही कर रहे है। वस्तुत बारीकी से अन्वेषण करने पर हम देखते है कि धरती के गोले की छाया के लिए यह नितान्त असम्भव है कि यह चन्द्रग्रहण उत्पन्न करे क्योकि हमारे वायुमण्डल के कारण उत्पन्न होनेवाली, किरणो की वक्रता इन्हे थोडा-बहुत पृथ्वी के गिर्द मोड देती है। इस दशा मे 'पृथ्वी की छाया' और कुछ नही होती सिवाय उस किरण-शलाका के, जो हमारे वायु-मण्डल की निचली तहो को लगभग पाच मील की ऊँचाई तक पार कर चुकी है और अपनी इस यात्रा के फलस्वरूप गहरे लाल रग की हो गयी है। ऐसा उसी प्रकार होता है जिस प्रकार सान्ध्य बेला मे वायुमण्डल के घने स्तरो मे से होकर हम तक पहुँचने वाली सूर्यरश्मियो का रग बदल जाता है, केवल इस दशा मे किरणो द्वारा तय की गयी दूरी के दो गुनी होने के कारण रग और भी धूमिल हो जाता है। अत छाया के केन्द्रीय भाग का रग हमारे वायुमण्डल की पारदर्शिता की मात्रा का सूचक है। यह निरे सयोग की बात नही है कि ऐसे अवसरो पर जबकि हमारे वायुमण्डल मे ज्वालामुखी के उद्गार की धूल की प्रचुर मात्रा मौजूद रहती है, तो ग्रहण के अवसर पर चन्द्रमा अत्यन्त ही अन्धकारमय दीखता है। औसत रूप से चन्द्रमा जब पृथ्वी की छाया के उत्तरी भाग मे स्थित होता है तो औसत रूप से चन्द्रग्रहण अधिक अन्धकारमय दीखते है बनिस्बत उस वक्त के जबकि चन्द्रमा छाया के दक्षिणी भाग मे होता है, अत प्रत्यक्षत

हमारे उत्तरी गोलार्द्ध मे दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा, ज्वालामुखी तथा मरुस्थल वाली धूल की मात्रा अधिक है।

चन्द्रग्रहण के प्रकाश को आँकने का एक सरल तरीका इस विलक्षण बात के उपयोग मे है कि प्रकाश की तीव्रता जब कम होती है तो हमारी आँख अब चीजो का सूक्ष्म विवरण नही देख पाती है, उदाहरण के लिए सान्ध्य प्रकाश मे समाचारपत्र के बडे शीर्षक तो अभी भी पढे जा सकते है, किन्तु सामान्य छापे के अक्षर अब हम नही पढ पाते। इसी प्रकार अब हमे इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि चन्द्रमा के धरातल के बडे मैदान (तथाकथित 'समुद्र') जो साधारणत भूरे धब्बो के रूप मे दिखलाई देते है, चन्द्रग्रहण के समय (क) कोरी आँखो से दिखलाई देते है या (ख) ३ से १० इच वाले उपदृश्य लेन्सवाली दूरबीन से दिखलाई देते है या (ग) कि और भी बडी दूरबीन से।

प्रेक्षण के ये तीन तरीके इस बात मे हमे सहायता देने के लिए काफी होगे कि चन्द्र-ग्रहणो का हम हलके, औसत तथा अन्धकारमय श्रेणियो मे मोटे तौर पर वर्गीकरण कर सके। इन तरीको पर कई बरसो के दौरान मे प्राप्त किये गये सक्षिप्त विवरणो की विधिवत् तुलना से अवश्य अनेक महत्त्वपूर्ण निष्कर्षो के लिए सामग्री प्राप्त हो सकेगी। (ध्यान रखिए कि दूरबीन किसी प्रकाशित धरातल के प्रतिबिम्ब को अधिक चमकीला नही बनाती, बल्कि केवल प्रकाशीय आवर्द्धन के कारण ही दृश्यता मे वृद्धि हो जाती है।)

२०३. भस्म सरीखे धूसर[1] रग का प्रकाश

दूज का चाँद जब प्रगट होता है तो उसके नाखूनी हाशिये की ओर उसके धरातल के शेष भाग को हम हलकी रोशनी से प्रकाशित देख सकते है (चित्र ८०)। यह धूसर रग का प्रकाश पृथ्वी से आता है, जो चन्द्रमा पर से देखने पर, एक तेज रोशनीवाले बृहत्काय प्रकाश-स्रोत की भाँति चमकता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि धूसर रग का यह प्रकाश सदैव एक-सी ही प्रबलता का नही रहता। कुछ मौको पर यह लगभग अदृश्य रहता है, अन्य अवसरो पर यह दूधिया श्वेत रग का होता है और इतना तेज कि चन्द्रमा की सतह पर आम तौर पर दिखाई देनेवाले काले धब्बे स्पष्ट पहचाने जा सकते है। इस धूसर रग के प्रकाश की प्रबलता की तब्दीलियो का कारण यह है कि चन्द्रमा के रुख के पृथ्वी के अर्द्धभाग मे कुछ अवसरो पर बहुत-से महासागर होते है,

1 Ashgrey

तो अन्य अवसरो पर बहुत-से महाद्वीप, और कुछ मौको पर उसके ऊपर बादल छाये होते है तो अन्य समय आसमान अधिक साफ रहता है। इस प्रकार इस धूसर रग के प्रकाश पर एक नजर डालकर हम पृथ्वी के अर्द्ध भाग की हालतो की विस्तृत जानकारी का अन्दाज लगा सकते है। इस दृष्टि से इस धूसर रग के प्रकाश का अध्ययन सच पूछिए तो, भूमण्डल सम्बन्धी भौतिक विज्ञान के अन्तर्गत आता है।

भस्म-धूसर रग के प्रकाश की प्रबलता को कई दिनो तक माप अक १ से १० द्वारा आँकिए (१ = अदृश्य, ५ = दृश्यता पर्य्याप्त हो, १० = जब प्रकाश अत्यधिक चमकीला हो)। आप शीघ्र ही देखेगे कि दृश्यता चन्द्रमा की कला पर बहुत अधिक मात्रा मे आश्रित है, क्योकि इसका प्रकाशित नव चन्द्र-भाग अधिक चौडा हो जाने पर आखो पर चकाचौध उत्पन्न कर देता है। अत विभिन्न दिनो के लिए इस भस्म धूसर-प्रकाश की दृश्यता की तुलना का केवल तभी कुछ अर्थ हो सकता है, जब यह तुलना चन्द्रमा की एक-सी कला के लिए की जाय। इसके प्रतिकूल क्षितिज से ऊपर चन्द्रमा की ऊँचाई इस प्रकाश की दृश्यता को बहुत ही कम मात्रा मे प्रभावित करती प्रतीत होती है।

२०३ (क) उडन तश्तरियाँ[1]

रॉकी पर्वतमाला के ऊपर उडान करते समय एक अमेरिकन यात्री ने अजीब किस्म के वायुयानो की कतार देखी जो आश्चर्यजनक वेग से हरकत करते जान पडते थे, और इनकी तुलना उसने 'उडन तश्तरियो' से की[2]। इस विवरण से जन-साधारण अत्यन्त प्रभावित हुए। तब से प्रति वर्ष इसी प्रकार की वस्तुओ के बारे मे सैकडो रिपोर्टें प्राप्त होती रही है—पहले तो युनाइटेड स्टेट्स से, फिर बाद मे यूरोप से भी।

सामान्यत ये विवरण बतलाते है कि प्रकाश के धब्बे दिखलाई पडते है जो अनियमित कक्षाओ मे हरकत करते है—कुछ देर के लिए वे स्थिर हो जाते है और तब फिर तेज रफ्तार से गति करते है। कुछ प्रेक्षण तो दिन के समय भी प्राप्त किये गये है। कुछ लोगो ने तो यह आशका प्रगट की कि ये उडन तश्तरियाँ कोई रूसी गुप्त युद्धास्त्र है तथा कुछ का ख्याल था कि ये अन्तरिक्ष यान है और कुछ लोगो ने बतलाया कि ये मङ्गल-निवासियो के यान है और उनका दावा है कि उन्होने इनसे सम्पर्क भी स्थापित किया था।

१९४७ से पहले भी इस तरह के किस्से सुनने मे आये थे, सन् १८८२ तथा १८९७ मे ये उडन तश्तरियाँ अधिकतम सख्या मे देखी गयी, फिर १८९३, १८९४, १८९६

1 Flying saucers 2 D H Menzel, *Flying saucers* (Cambridge, 1953)

तथा १९०८ मे भी एक प्रकार की उडन तश्तरियाँ देखी गयी थी। मध्यकालीन युग मे प्राचीन काल मे तथा बायबिल के युग मे भी इनका जिक्र आया है।

हाल के प्रेक्षणो के सूक्ष्म विवेचन से पता चलता है कि इन विवरणो मे से अधिकाश की व्याख्या आसानी से की जा सकती है।

१ शुक्र ग्रह महत्तम दीप्ति की अवस्था मे, प्रतीत होनेवाली हरकत उस दृष्टिभ्रम के कारण उत्पन्न होती है जिसका विवरण "गतिशील तारे" के शीर्षक मे किया गया है (§ १०१)।

२ एक दीप्तिमान् उल्का-प्रस्तर या अग्नि का गोला, उसकी पथरेखा पर्य्याप्त समय तक दिखलाई देती रह सकती है और इसमे अनियमित वक्रता भी दृष्टिगोचर हो सकती है।

३ परीक्षण गुब्बारा, जैसा कि ऋतु-वैज्ञानिक प्राय रोज ही आकाश मे हजारो की सख्या मे उडाते है।

४ साधारण वायुयान, जिसे प्रकाश की विशेष परिस्थितियो मे देख रहे हो।

अधिक जटिल व्याख्यावाले प्रेक्षणो के लिए निम्नलिखित सम्भावनाओ पर विचार किया जा सकता है।

५ प्रभामण्डल की घटनाएँ, विशेषतया कृत्रिम सूर्य[1] तथा अनु-सूर्य।[2]

६ वर्त्तन की घटनाएँ।

७ धुन्ध के स्तर तथा प्रकाश की असाधारण परिस्थितियो मे बादलो का निर्माण।

८ विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ, उदाहरण के लिए गुब्बारे, बच्चो द्वारा उडायी जानेवाली पतगे, नेत्र मे बननेवाले उत्तर-प्रतिबिम्ब, बादलो पर रोशनी फेकती हुई सर्चलाइट तथा अरोरा-प्रकाश।

९ जानबूझकर भ्रम उत्पन्न करने के उद्देश्य से आयोजित वञ्चना के प्रयोग या प्रैक्टिकल मजाक।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस तरह के विवरण किसी वेधशाला से विरले ही प्राप्त हुए है। युट्रेरट वेधशाला मे गत वर्ष ३५०० पत्र उल्काओ तथा प्रकाश की असाधारण घटनाओ के बारे मे प्राप्त हुए थे, किन्तु इनमे एक भी पत्र ऐसा न था जो 'उडन तश्तरियो' के अस्तित्व को विश्वसनीय तरीके पर प्रतिपादित करता, प्रेक्षण यत्र की फोकस की खराबी, दृष्टिक्षेत्र मे कुहरे आदि के आवरण या रिफ्लेक्स प्रक्रिया

1 Mock suns 2 Sub-sun

के कारण अत्यधिक आश्चर्यजनक प्रभाव उत्पन्न हो सकते है। यहाँ तक कि रेडार द्वारा प्राप्त किये गये प्रेक्षण भी निर्णयात्मक नही हो पाते।

अत हमे भय की अन्धभावना, युद्ध-विभीषिका या रहस्यवाद के वशीभूत नही होना चाहिए, बल्कि हमे यह स्मरण रखना चाहिए कि इस पुस्तक मे कितनी सारी प्रकाशीय घटनाओ का विवरण दिया जा चुका है जिन सबकी ही व्याख्या सामान्य भौतिकी द्वारा की जा सकती है यद्यपि ये अनेक व्यक्तियो के मन मे अत्यधिक आश्चर्य उत्पन्न करती है।

यदि आप ऐसी घटना देखे जिसे आप 'उडन तश्तरी' समझते हो तो ऐसी दशा मे निम्नलिखित बातो को ध्यान मे रखना लाभदायक होगा।

किसी व्यक्ति से कहिए कि वह आपके प्रेक्षण की जाँच करे। खिडकी के काच या पर्दे मे से जहाँ तक हो सके प्रेक्षण मत कीजिए। सूर्य या चन्द्रमा से घटनास्थल की दूरी का अन्दाज लगाइए। यदि कोणीय दूरी २२° हो तो समझ लीजिए कि यह प्रभा-मण्डल की घटना है।

प्रेक्षण का ठीक समय अकित कीजिए, तथा इर्द-गिर्द के तेज रोशनी के तमाम प्रकाशस्रोतो का भी विवरण लिख लीजिए।

अध्याय १२

भू-दृश्य में प्रकाश और रंग

२०४ सूर्य, चन्द्रमा और तारो के रग

सूर्य की चकाचौध वाली चमक के कारण इसके रग की पहचान करना कठिन होता है। किन्तु व्यक्तिगत रूप से मैं कहूँगा कि यह निश्चित रूप से पीतवर्ण का है, और नीले आकाश के प्रकाश के साथ मिलकर यह एक मिश्रण बनाता है जिसे हम 'श्वेत' कहते है—यही रग कागज के तख्ते का होता है जबकि आसमान साफ हो और धूप निकली हुई हो। इस प्रकार के तखमीने से कठिनाई उत्पन्न होती है क्योकि 'श्वेत' की धारणा मे अनिश्चितता की किञ्चित् मात्रा मौजूद होती है। सामान्यत हमारी प्रवृत्ति यह होती है कि आसपास के वातावरण मे प्राधान्य प्राप्त करनेवाले रग को हम श्वेत या करीब-करीब श्वेत मानते है (देखिए § ९५)।

बदली वाले या धुन्ध के दिन, सूर्य और आकाश से आनेवाली किरणे, पानी की बूँदो द्वारा होनेवाले अनगिनत परावर्त्तनो और वर्त्तनो के कारण आपस मे मिल-जुल जाती है, और इसलिए आकाश का रग सश्लिष्ट श्वेत होता है। यदि हम इस बात का विचार करे कि आकाश का नीला प्रकाश वस्तुत परिक्षेपित प्रकाश है जो पहले सूर्य से आनेवाले प्रकाश मे मौजूद था, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि वायु-मण्डल के बाहर से देखने पर सूर्य भी करीब-करीब श्वेत दीखेगा।

हमे ज्ञात है ही कि अस्त होते हुए सूर्य के **नारङ्गी** या **लाल** वर्ण की उत्पत्ति का कारण यह है कि इसकी किरणे जिस मार्ग को तय करके हमारी आँख तक पहुँचती है उसकी लम्बाई तेजी के साथ बढती जाती है, शनै-शनै अधिकवर्त्तनीय किरणे लगभग पूर्णत परिक्षेपित हो जाती है, और केवल गहरे लाल रग की किरणे शेष रह जाती है (§ १७२)।

कतिपय असाधारण दशाओ मे ऊँचाई पर स्थित सूर्य धुन्ध मे से होकर **ताम्रवर्ण** के लाल वर्ण का चमकता है, अर्थात् कुहरे की बूँदे अब अत्यन्त क्षुद्र आकार की होती

है, और इसी कारण लघु तरग-दैर्घ्यवाले प्रकाश का ये विशेष रूप से परिक्षेपण करती है (§ १८२)।

अन्य दशाओ मे यह **नीलापन** लिये हुए होता है, और कहा जाता हे कि ऐसा अधिकतर उस वक्त होता है जव बादलो का हाशिया नारङ्गी वर्ण का दीखता है। सभव है कि रग-विपर्यास का यह प्रभाव हो या कि नवसिखुए प्रेक्षक सूर्य के एकदम निकट के बादलो के रग ओर स्वय सूर्य के गोले के रग के बीच धोखा खा जाते हो। इससे नितान्त पृथक्, **नीले** सूर्य की घटना है जब कि सूर्य ऐसे घने बादल मे से देखा जाता है जो अत्यन्त सम आकार की बूँदो से बना होता है (§ १६४)।

दिन मे चन्द्रमा प्रभावशाली **विशुद्ध श्वेत** रग का दीखता है क्योकि आकाश से परिक्षेपित गाढा नीला प्रकाश, चन्द्रमा के स्वय अपने पीत वर्ण के प्रकाश के साथ जुड जाता है। और भी, जब यह दिन के वक्त उदय या अस्त होता है तो यह करीब-करीब रगविहीन, धूमिल और केवल रञ्चमात्र पीलापन लिये हुए होता है। जैसे-जैसे सूर्य अस्त होता है, और आकाश का नीला प्रकाश विलुप्त होता जाता है, वैसे-वैसे चन्द्रमा धीरे-धीरे अधिक पीला होता जाता है, एक निश्चित क्षण पर इसका रग मनमोहक **शुद्ध पीत वर्ण** हो जाता है, यद्यपि यह रग सम्भवत अभी भी मौजूद हलकी नीली पृष्ठ-भूमि के सम्मुख, मानसिक विपर्यास के कारण अधिक चटकीला प्रतीत होता है। सान्ध्य प्रकाश जब खत्म होने को आता है तो चन्द्रमा का रग पुन पीत-श्वेत वर्ण का हो जाता है, बहुत सम्भव है कि ऐसा इस कारण होता हो कि आसपास का वातावरण अब अधिक अन्धकारमय हो जाता है, अत चन्द्रमा का प्रकाश हमे अधिक तेज मालूम पडता है, फलस्वरूप आँख की एक विचित्र विलक्षणता के कारण अन्य सभी अत्यन्त तेज प्रकाश-स्रोतो की तरह यह श्वेत रग का जान पडता है (§ ७७)।

रात्रि के शेष भाग के लिए चन्द्रमा हलका पीलापन लिये हुए रहता है, ठीक वैसा ही जैसा दिन का सूर्य दीखता है। जाडे की अत्यन्त स्वच्छ रात्रियो मे इसका रग, जब चन्द्रमा बहुत ऊँचाई पर होता है, करीब-करीब पूर्णरूप से श्वेत हो जाता है, किन्तु क्षितिज के निकट यह उसी प्रकार के **नारङ्गी** तथा **लाल** रग का प्रदर्शन करता है जिस प्रकार अस्त होता हुआ सूर्य। चन्द्रमा के रँग द्वारा, हमारी आँखो पर पडनेवाला, प्रभाव तनिक भिन्न इसलिए होता है कि इसके प्रकाश की तीव्रता अपेक्षाकृत बहुत कम होती है।

पृथ्वी की नीली छाया के मध्य मे पूर्णिमा का चाँद मनोहर कॉस्य-पीत रग का होता है, निस्सदेह वातावरण के अनुपूरक विपर्यास के कारण ऐसा होता है। तेज

चमक के नीललोहित लाल वर्ण के छोटे-छोटे बादलो से घिरे होने पर इसके रग का शेड लगभग **हरा-पीला** हो जाता है, यदि ये बादल नारङ्गी-गुलाबी रग धारण कर ले तो चन्द्रमा का शेड करीब-करीब नीले-हरे मे तब्दील हो जाता है। ये विपर्यास-रग पूर्ण चन्द्र की अपेक्षा नवचन्द्र मे और अधिक स्पष्ट उभरते है।

चन्द्रमा के रग से बिलकुल अलग-थलग, चाँदनी रात मे भू-दृश्य का रग होता है जिसे आम तौर पर नीला या हरा-नीला समझा जाता है। इसमे सन्देह नही कि बहुत कुछ हद तक यह हमारे नारङ्गी रग के कृत्रिम प्रकाश के विपर्यास के कारण उत्पन्न होता है, जो चन्द्रमा से प्रकाशित हमारे नीले आकाश को और भी प्रभावोत्पादक बना देता है।[1]

तारो द्वारा प्रदर्शित रगो के अन्तर की प्रारम्भिक जानकारी हासिल करने के लिए आइए, मृग-व्याध तारा-समूह की बृहत् वर्गाकृति का ध्यानपूर्वक अवलोकन करे। हम देखते है कि बायी ओर के सिरे पर स्थित चमकीले सितारे, आर्द्रा नक्षत्र, का रग अद्भुत प्रकार का पीला है या अन्य तीनो नक्षत्रो की तुलना मे इसे नारङ्गी वर्ण का भी मान सकते है (चित्र ६२)। इस तारा-समूह के निकट ही वृष राशि मे हम नारङ्गी वर्ण का एक और तारा 'रोहिणी' नक्षत्र देख सकते है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस प्राथमिक तथा अत्यन्त सरल रग-विभेद से ही हमे सन्तुष्ट नही हो जाना चाहिए, बल्कि हमे उनके शेड के सूक्ष्म अन्तर को पहचानने का प्रयत्न करना चाहिए। यह हमारी रग-अनुभूति के लिए एक दुस्तर कार्य है, किन्तु अभ्यास से इस दिशा मे बहुत कुछ किया जा सकता है। चूँकि नक्षत्रो के रग के अन्तर उनके विभिन्न ताप (टेम्परेचर) के कारण उत्पन्न होते है, अत हम समझ सकते है कि वे उसी क्रम से रगो का प्रदर्शन करते है जिस क्रम से एक तापोज्ज्वल पिण्ड करता है जो धीरे-धीरे ठण्डा हो रहा है, अर्थात् श्वेत से पीला और नारङ्गी रग धारण करते हुए लाल रग अख्तियार करता। अभी तक इस बात का निर्णय नही हो पाया है कि सबसे अधिक तप्त नक्षत्रो को श्वेत रग का माना जाय या नीले रग का, क्योकि विभिन्न प्रेक्षक इस बात पर एकमत नही है कि वस्तुत 'श्वेत' रग क्या है। कतिपय प्रेक्षक, अन्य लोगो की तुलना मे, आकाश के क्षीण प्रकाशवाली पृष्ठभूमि से अधिक प्रभावित होते है जो हमे नीलापन लिये हुए प्रतीत होता है और जिसे हम रगविहीन समझने के अभ्यस्त हो गये है, क्योकि यह रात्रि के दृश्य का औसत रग होता है।

1 See the discussion in Met Mag **67-69**, 1932-34

निम्नलिखित माप-तालिका नक्षत्रो के विभिन्न रगो का आभास कराती है जिसमे उन्हे आम तौर पर व्यक्त करनेवाले अक दिये गये है तथा कुछ उदाहरण भी। कुशल प्रेक्षको द्वारा इन रगो के बारे मे स्वतन्त्र रूप से प्राप्त किये गये तखमीने अकसर औसत रग से पूरे एक वर्ग ऊपर या नीचे पडते है। यहाँ दिये गये उदाहरणो के तखमीने ऐसे प्रेक्षको द्वारा प्राप्त किये गये थे जिन्होने नीले को नीले वर्ण के रूप मे नही देखा, अत इस कारण, ऋणात्मक मान का समावेश करने की आवश्यकता नही समझी गयी।

रंगो का मापक्रम

–२	नीला	४	विशुद्ध पीला
–१	नीला लिये हुए श्वेत	५	गहरा पीला
०	श्वेत	६	नारङ्गी लिये हुए पीला
१	पीलापन लिये हुए श्वेत	७	नारङ्गी
२	श्वेत-पीला	८	पीलापन लिये हुए लाल
३	हलका पीला	९	लाल

उदाहरण

α बृहत् श्वान मे,	(लुब्धक)	० ८	α लघु सप्तर्षि मे,		३ ८
α अभिजित् तारा समूह मे, (अभिजित्)		० ८	μ लघु सप्तर्षि मे,		५ ८
α सिह मे,	(मघा)	२ १	α स्वाती मे,	(स्वाती)	४ ५
α लघुश्वान मे,	(प्रकाश)	२ ४	α वृश्चिक मे	(ज्येष्ठा)	७ ५
α श्रवण तारासमूह मे,	(श्रवण)	२ ६	शुक्र ग्रह		३ ५
α सप्तर्षि मे,		४ ९	मगल ग्रह		७ ६
μ सप्तर्षि मे		२ ३	बृहस्पति ग्रह		३ ६
			शनि ग्रह		४ ८

स्वभावत तारे भी क्षितिज के ज्यो-ज्यो निकट आते है त्यो-त्यो वे रक्तिम वर्ण के होते जाते है, किन्तु तब उनकी टिमटिमाहट उनके रग का सही अन्दाज लगाने मे आम तौर पर रुकावट पैदा करती है। यह एक ध्यान देने योग्य बात है कि पृथ्वी पर २५००° सेण्टीग्रेड ताप के दहकते हुए पिण्ड को हम 'तापोज्ज्वल' मानते है जबकि इसी ताप का नक्षत्र हमे नारङ्गी-लाल रग का दीख पडता है। सम्भवत इस शारीरिक क्रिया सम्बन्धी घटना का कारण यह है कि नक्षत्र अपेक्षाकृत इतने कम चमकीले होते है कि इनके प्रकाश के, आँख पर पड़ने वाले प्रभाव के लाल वर्ण का अवयव तो बोध-

गम्य हो जाता है, जबकि हरे तथा नीले वर्ण के अवयव बोधगम्य होनेवाले देहलीमान[1] से कम ही रह जाते हैं।

एक और व्याख्या § ७७ मे दी गयी है। एक कुशल प्रेक्षक बतलाता है कि तारो के रग का अनुमान वह चाँदनी रात मे अधिक आसानी से लगा सकता है। क्या ऐसा इस कारण है कि हमारे रेटिना के शकु उस वक्त अधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेते है जव पृष्ठभूमि मे सामान्य रूप से व्यापक दीप्ति मौजूद होती है?

२०४. बादलो का रग

सुन्दर पुञ्ज-बादलो के झुण्ड को आकाश पर धीरे-धीरे सामने से गुजरते हुए देखने मे, तथा इस बात पर विचार करने मे कि क्यो कुछ भाग हलके रग के और कुछ काले रग के होते है, आनन्द-सा आता है। जिन स्थलो पर ये सूर्य से प्रकाशित होते है, वहाँ ये चकाचौध पैदा करनेवाले उज्ज्वल रग के होते है, किन्तु हमारे ऊपर से जब ये गुजरते है तो इनके निचले भाग भूरे या काले-भूरे रग के हो जाते है। पानी की बूँदे परस्पर इतनी घनी ठडी रहती है कि बादल मे रोशनी मुश्किल से ही प्रवेश कर पाती है, बल्कि अनगिनत बूँदो के अधिकाश से यह वापस परावर्त्तित हो जाती है, यह बादल करीब-करीब एक अपादरदर्शी सफेद पिण्ड के मानिन्द होता है। यदि सूर्य पुञ्ज-बादलो से ढका हो तो ये काले रग के दीखते है किन्तु इनके हाशिये चमकीले होते है—'प्रत्येक बादल का किनारा रजतश्वेत होता है।'[2] इस प्रकार प्रकाश और छाया का वितरण हमे बादलो के विभिन्न भागो के बारे मे दिलचस्प जानकारी प्रदान करता है—ऊपर के भाग, नीचे के भाग, सामन के, पीछे के, तथा आकाश मे इन बृहत्काय द्रव्यमात्राओ की वास्तविक शक्ल के बारे मे। इन अनुपातो का सही अन्दाज लगाना, या सूर्य के लिहाज से बादल की स्थिति निर्धारित करना सदैव ही आसान नही होता। उदाहरण के लिए यदि बादल मेरे सामने है और सूर्य उनसे कुछ फासले पर, ऊपर है, तो करीब-करीब केवल छाया ही देख पाकर मै चकित रह जाता हूँ (चित्र १५३, a)। मै सूर्य की विशाल दूरी का पर्याप्त रूप से अनुभव नही कर पाता, और अनजाने ही मै कल्पना कर लेता हूँ कि यह काफी नजदीक है और तब इस बात को स्मरण रखने के बजाय कि बादल को प्रकाशित करने वाली किरणे सूर्य से मेरी आँख तक आनेवाली रेखा के समानान्तर चलती है (चित्र १५३ c) मै अपेक्षा करने लग जाता हूँ कि बादल AB पर किरणे चित्र १५३, b की भाँति पड रही है।

1. Threshold value 2. 'Every cloud has a silver lining'

इन काले बादलो पर प्रकाश और छाया की क्रीडा कितनी ही मायावी क्यो न हो, तथा एक दूसरे पर जो छाया ये डालते है, वे कितनी ही जटिल क्यो न हो, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि अकेले इन्ही से पुञ्ज बादलो के रग के सभी प्रभेदो का समाधान करना असम्भव है। तूफान के बाद जब आसमान साफ हो रहा हो तब यदि केवल
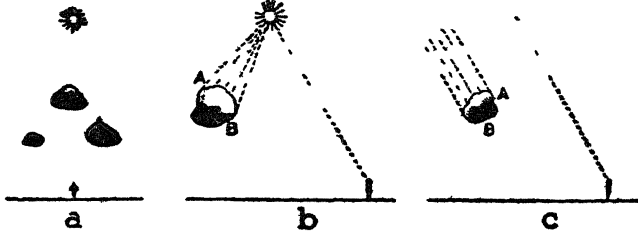
चित्र १५३—पुज बादलो पर प्रकाश और छाया।
(a) उत्तर से दक्षिण की तरफ देखने पर भू-दृश्य और प्रेक्षक।
(b) भ्रमपूर्ण आत्मनिष्ठ धारणाएँ तथा प्रत्याशाएँ।
(c) यथार्थ स्थितियाँ।
(b और c में प्रेक्षक पूर्व से पश्चिम की ओर देख रहा है।)

कुछ थोडे से छोटे-छोटे पुञ्ज-मेघ बच गये हो, जो तेज प्रकाश से आलोकित हो और जिनके लिए इस बात की कोई सम्भावना न हो कि वे एक दूसरे पर अपनी छाया डाल सके, तो वे उत्तरोत्तर अधिक काले होते जाते है और अन्त मे जब वे विलुप्त होने को होते है, तो वे नीले-काले रग के हो जाते है। आम तौर पर ऐसा जान पडता है कि नीले आकाश के सन्मुख दीखनेवाले पुञ्ज-बादलो के झीने भाग नीला+श्वेत रग (जैसी कि आशा की जा सकती है) प्रदर्शित नही करते बल्कि नीला+काला रग।[१]

अन्य अवसरो पर जब किसी पुञ्ज-बादल को एक अन्य बडे बादल की पृष्ठभूमि के सम्मुख देखते है जो कि एकदम श्वेत हो, तो यह भूरा दीख पडता है—इस दशा मे यह प्रश्न ही नही उठ सकता कि केवल तहो की सम्पूर्ण मोटाई के बढने से चमक मे वृद्धि हो जाती होगी। यद्यपि इन घटनाओ को हम दिन प्रतिदिन देखते है, किन्तु अभीतक इनके प्रकाशीय सिद्धान्त का पर्याप्त रूप से अन्वेषण नही किया गया है। अवश्य ही इस धारणा को कि बादल वास्तव मे प्रकाश का अवशोषण कर सकते है,

1. C R, 177, 515, 1923

स्वीकार करने के पूर्व हमे बहुत अधिक सावधानी बरतनी चाहिए, सभी घटनाओं का पहले तो यह मानकर समाधान करने का प्रयत्न करना चाहिए कि ये बादल ठोस श्वेत वस्तु है, और तब हमे इस बात का विचार करना चाहिए कि ये वस्तुत परि-क्षेपण करनेवाले धुन्ध है और अन्त मे इस बात की सम्भावना पर विचार करना चाहिए कि उनके अन्दर मटमैले रग के धूल के जर्रे भी मौजूद हो सकते है ।

यह दिलचस्पी की बात होगी कि उनकी तुलना रेल के इजिन की सफेद भाप से (धुएँ से नही !) करे ! कुछ परिस्थितियो मे, आपतित प्रकाश के साथ बडे कोण वनाने वाली दिशा से देखने पर यह भाप अधिक सफेद दिखलाई देती थी, और सूर्य की दिशा से देखने पर, जबकि आँख मे लगभग आपतन की दिशा मे परावर्त्तित होने वाला प्रकाश ही पहुँचता था यह कम चमकीला दीखता था। कुछ अन्य अवसरो पर सभी दिशाओ से देखने पर भाप पुञ्ज-बादल के सबसे अधिक चमकीले भाग से भी अधिक दीप्तिवाली दिखलाई पडी थी, कदाचित् इसका कारण यह था कि पुञ्ज-मेघ की दूरी अत्यधिक होती हैं, और उससे आने वाला प्रकाश, वायु मे होने वाले परिक्षेपण की वजह से क्षीण हो जाता हैं।

लम्बे फासले से देखने पर श्याम वर्ण के पुञ्ज-मेघ प्राय निलछौवे रग के प्रतीत होते है । यह स्वय बादल का रग नही है, बल्कि यह हमारी आँख और बादल के दर्मियान के वायुमण्डल से परिक्षेपित होकर आने वाले प्रकाश का रग है । इस तरह का श्याम वर्ण का बादल हम से जितनी ही अधिक दूरी पर होगा उतना ही अधिक, उसका रग, पृष्ठ-भूमि के आकाश के रग से मिलता-जुलता होगा। इसके प्रतिकूल, क्षितिज के निकट के चमकीले बादल पीत वर्ण लिये हुए दीखते है (§ १७३) ।

अन्य जाति के बादलो के लिए भी हमे प्रेक्षण प्राप्त करना चाहिए और इन प्रश्नो का समाधान करने का प्रयास करना चाहिए, जैसे कि पानी बरसाने वाले बादल इतने भूरे क्यो होते है, विद्युत कौध वाले बादलो मे हलके नारङ्गी वर्ण के साथ-साथ एक अजीब-सा सुरमई रग क्यो दिखलाई पडता है। क्या ऐसा धूल के कारण है ? किन्तु इन सब चीजो के बारे मे हमारा ज्ञान इतना अपूर्ण है कि हम पाठको को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना ही अच्छा समझते है कि वे स्वय इस सम्बन्ध मे अपने अनुसन्धान आरम्भ करे।

सम्पूर्ण आकाश जब सम रूप से बादलो से ढका होता है, तो उस समय आकाश मे प्रकाश का वितरण-क्रम एक अत्यन्त विशिष्ट प्रकार का होता है, जो दीप्तिमान् नीले आकाश के प्रकाश-वितरण का पूरक रूप समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए

एक छोटे दर्पण की सहायता से ऊर्ध्व बिन्दु के निकट के और क्षितिज के निकट के आकाश की तुलना कीजिए, इन दोनो मे क्षितिज के निकट का आकाश सदैव ही अधिक दीप्तिमान् दीखता है, अनुपात ३ से लेकर ५ तक प्राप्त होता है। (प्लेट XIII)।

२०६ क सूर्योदय और सूर्यास्त के समय बादलो का रग

सूर्यास्त के अपने वर्णन मे हमने बादलो का ख्याल नही किया था। किन्तु अब थोडी देर के लिए हम बादलो के इन चमत्कारपूर्ण दृश्यो की उत्पत्ति पर विचार करेगे जो अनन्त किस्म के रगो और शक्लो मे विभूषित दीखते है, ओर प्रकाश्य रूप से इनमे किसी प्रकार का क्रम नजर नही आता।

प्रारम्भ मे मै बता देना चाहूँगा कि निम्नलिखित विवरण मुख्यत उस दृश्य से सम्बन्ध रखता है जो सूर्य के अस्त होने के पूर्व हमे दिखाई पडता है जबकि स्वय वास्तविक 'सान्ध्यप्रकाश की घटनाओं' पर विचार-विमर्श § १८९ मे किया जा चुका है। सूर्य ज्योही क्षितिज के नीचे पहुँचता है, त्योही बादलो की शोभा भी विलुप्त हो जाती है।

सूर्यास्त के कुछ देर पहले बादल निम्नलिखित से प्रकाश पाते है—

१ सीधे, सूर्य का प्रकाश, सूर्य ज्यो-ज्यो नीचे आता है त्यो-त्यो बादल क्रम से पीले, नारङ्गी और लाल रग मे शनै -शनै परिणत होता जाता है।

२ आकाश का प्रकाश, जो सूर्य के रुख नारङ्गी लाल वर्ण का, और अन्यत्र सब ओर नीले वर्ण का होता है। नारङ्गी-लाल वर्ण का यह प्रकाश, धूल के बडे आकार के जर्रो तथा पानी की बूँदो द्वारा होने वाले प्रबल परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है, ये किरणो मे अत्यल्प मात्रा का विचलन पैदा करते है (§§, १८८, १९२), नीला प्रकाश, वायु-अणुओ द्वारा पीछे की दिशा मे होने वाले परिक्षेपण के कारण उत्पन्न होता है।

अब कल्पना कीजिए कि सूर्य के आसपास कोई बादल है जो आरम्भ मे अत्यन्त झीना था, किन्तु शनै -शनै अब घना होता जा रहा है। इसकी बूँदे प्रकाश को अल्प मान के कोण पर परिक्षेपित करती है, अत पतले स्तर के बादल, अवश्य ही पीछे की तिरछी दिशा मे स्थित सूर्य से ढेर-सा प्रकाश हमारी ओर भेजेगे—परिक्षेपण करने वाले कणो की सख्या जितनी ही अधिक होगी, नारङ्गी-गुलाबी वर्ण का प्रकाश भी उतना ही अधिक प्रबल होगा। किन्तु फिर एक अनुकूलतम[1] अवस्था प्राप्त होती है जिस के आगे बादल

1 Optimum

के स्तर या तो इतने मोटे, या इतने घने हो जाते है कि उन्हे रोशनी आसानी से पार नही कर पाती। अत्यन्त घने बादल अपने मे से प्रकाश को करीब-करीब बिलकुल ही नही गुजरने देते, और आकाश के उस भाग की रोशनी को हमारी ओर परावर्त्तित करते है जो अभीतक नीला ही बना रहता है और जो हमारे रुख के बादलो को अपनी रोशनी से प्रकाशित करता है (चित्र १५४), अत हम देखते है कि सबसे अधिक मनोरम सूर्यास्त की आशा उस वक्त की जा सकती है जब बादल झीनी परतो के हो या आकाश मे बादल यत्र-तत्र बिखरे हो।

सूर्य के अस्त होने वाली दिशा मे हम झीने बादल को पीछे से आने वाले प्रकाश से आलोकित होते हुए देखते है और घने या अधिक मोटे बादल को सामने से आने वाले प्रकाश से आलोकित होते हुए हम देखते है—प्रथम किस्म के बादल चटकीले नारङ्गी-लाल वर्ण के होते है और द्वितीय क़िस्म के मटमैले भूरे-नीले रग के। रगो की इस विभिन्नता की, जिसके साथ-साथ सरचना और आकृतियो मे भी अन्तर मौजूद पाया जाता है, बादलो द्वारा प्रस्तुत दृश्यो की सर्वाधिक मनोरम विशिष्टताओ मे गणना की जाती है।

नीले-भूरे वर्ण के घने बादलो के हाशिये प्राय चित्ताकर्षक सुनहले रग के होते है। ध्यान दीजिए कि हाशिया A जो प्रकाश्यत सूर्य के निकटतम है, हाशिया B की अपेक्षा अधिक प्रबल प्रकाश देता है, क्योकि (क) उस स्थल पर प्रकाश-किरण का विचलन अपेक्षाकृत कम है, (ख) और यदि कल्पना करे कि बादल पूर्णतया गोले की शक्ल का ठोस पिण्ड है, तो हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि सूर्य के निकटतम पडने वाले पार्श्व की ओर एक नन्ही-सी पट्टी भी हम अवश्य देख सकेंगे जिस पर सूर्य से रोशनी सीधे ही आकर गिरती है (चित्र १५४)।
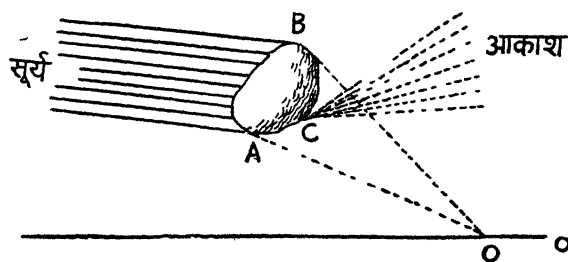
चित्र १५४—**सूर्यास्त के पूर्व बादल पर गिरनेवाले प्रकाश की व्यवस्था।**

यह अनूठा परिक्षेपण उन बादलो के हाशिये पर नही देखा जाता जो सूर्य से बहुत अधिक दूरी पर स्थित होते है, एक ओर सूर्य की रोशनी से सीधे ही प्रकाशित होते है और दूसरी ओर आकाश के नीले प्रकाश से, अत इस दशा मे भी नारङ्गी तथा नीले वर्ण की छटा देखने को मिलती है। सूर्य क्षितिज के नीचे ज्यो-ज्यो डूबता है त्यो-त्यो रग और भी अधिक खुशनुमा होते जाते है, यहाँ तक कि अब सामने, पूरब दिशा के बादलो मे नील-लोहित रग की प्रति-चमक दिखाई देने लगती है।

सूर्य जब पूर्णरूप से अस्त हो जाता है तो इसका प्रकाश आकाश के विभिन्न भागो से शनै -शनै सिमटता जाता है और ऊँचाई पर स्थित बादल सबसे अधिक देर तक प्रकाशित रहते है। इससे एक और मनोरम विपर्यास दृश्य का प्रादुर्भाव होता है, पीछे की ओर के बादल अब भी सूर्य से प्रकाशित होते रहते है और उनके सामने के बादल केवल आकाश की रोशनी से आलोकित होते है।

२०६ ख पृथ्वी के प्रकाश-स्रोतो से बादलो का प्रकाशित होना

सन्ध्या को देहाती प्रदेशो मे जब हम टहलते रहते है और आकाश पर बादल समानरूप से छाये रहते है, तो यत्र-तत्र आकाश मे, नीचे ही फासले पर एक हलकी-सी चमक हम देखते है। यह चमक किसी शहर या बडे क़स्बे से आती है जिसे हम उस की दिशा से पहचान सकते है। क्षितिज से इस चमक की कोणीय-ऊँचाई α का तखमीना 'रेडिएन' मे प्राप्त करिए, और मानचित्र की सहायता से उस नगर या कस्बे की दूरी A ज्ञात करिए, तब उस बादल की ऊँचाई $h = A\alpha$ होगी। उदाहरण के लिए बिल्थोवेन[1] से उत्रेख्त[2] के ऊपर कोण $\alpha=$ ८ ५ ऊँचाई पर चमक का मैने प्रेक्षण किया तो h=७९० मीटर (लगभग ८८० गज) प्राप्त हुआ, जीस्ट[3] के ऊपर $\alpha=$६° था, अत ऊँचाई h= ७८० मीटर (लगभग ८७० गज)। सन् १८८४ मे लन्दन के ऊपर की चमक चालीस मील की दूरी तक दिखलाई पडती थी। इन दिनो कितनी दूरी तक यह दृष्टिगोचर होगी ?

एक बडे नगर के ऊपर की इस चमक का बारीकी से अध्ययन करे तो आप का परिश्रम फलप्रद साबित होगा। जल्दी ही आप को पता चल जायगा कि दिन प्रति दिन यह चमक बदलती रहती है—इसका परिवर्त्तन लगभग उतनी ही प्रचुर मात्रा मे होता है जितनी उत्तरीय प्रकाश[4] का। इस प्रकाशीय घटना मे आप दो अवयव मौजूद पायेगे—(1) एक धुन्ध-सा प्रकाश जो पानी की बूँदो तथा धूल-कणो वाली वायु के

1. Bilthoven 2. Utrecht 3 Zeist 4. Northern lights

सामान्य तौर पर प्रकाशित होने से उत्पन्न होता है, और क्षितिज के निकट यह प्रकाश सबसे अधिक तेज होता है, (ii) बादल की तह पर प्रकाश का धब्बा, जिसकी परिधि करीब-करीब उस नगर का बिलकुल ठीक प्रतिरूप होती है (अर्थात् बहुत कुछ वृत्त की शक्ल की), किन्तु दूर से देखने पर यह सामने की ओर से पिचका हुआ एक दीर्घवृत्त सरीखा दीखता है जिसके हाशिये पर्य्याप्त रूप से स्पष्ट उभरते है, विशेषतया उस वक्त जबकि बादल की तह हमवार, चिकनी होती है। यदि आकाश स्वच्छ और निरभ्र हो या फिर बहुत ही अधिक कुहरा लिये हुए हो, तब नगर की रोशनी की कोई भी चमक ऊपर दिखलाई नही देती। यदि आकाश मे धुन्ध हो तब धुधली चमक का प्रादुर्भाव होता है, किन्तु इसकी सीमा स्पष्ट नही बन पाती। यदि आकाश पर बादल की तह छायी हो तब प्रकाश का धब्बा स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो जाता है। हर प्रकार की दशाओ का सम्मिश्रण सम्भव है, और कभी-कभी कम ऊँचाई पर स्थित इक्के-दुक्के बादलो की छाया भी पडती है या प्रमुख प्रकाश की राशि से अलग-अलग, अनियमित शक्ल के, प्रकाश के धब्बे प्रगट होते है। अवश्य रोशनी के धब्बे की नाप-जोख करके बादल की ऊँचाई प्राप्त की जा सकती है, सर्वाधिक यथार्थ मान धब्बे की सीमा-रेखाओ की ऊचाई से प्राप्त होते है। निपुण प्रेक्षक के हाथो मे यह विधि इतनी यथार्थ उतरती है कि इसकी सहायता से यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि बादल की तह नीचे की भूमि के चढाव-उतार के अनुरूप अवस्थित होती है या नही।

लाकूर[1] दिन के वक्त भी इस किस्म के प्रेक्षण को पूरा करने मे सफल हुआ था। एक बार हिमपात के बाद उसने देखा कि समद्र के ऊपर बादल की तह मटमैले रग की थी जबकि बर्फ से ढके भूमि-प्रदेश के ऊपर यह अधिक चमकीली थी, प्रेक्षक जब इतनी दूर चला गया कि वहाँ से देखने पर इसकी ऊँचाई २०° से अधिक न थी, तब दोनो के बीच की विभाजक रेखा आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गयी। बाद मे उसने पाया कि वनो के ऊपर भी, बादल पर दिखाई देने वाला मटमैला धब्बा स्पष्ट परिलक्षित हो जाता है, यहाँ तक कि कोपेनहेगन नगर भी, जहाँ छतो की बर्फ इस वक्त तक पिघल चुकी थी, इसी किस्म के 'कम प्रकाशित प्रदेश' सरीखा प्रभाव उत्पन्न कर रहा था। प्रकाश-दीप्ति के इन तमाम चढाव-उतार से बादल-स्तरो की ऊँचाई ज्ञात की जा सकती है, और इस प्रकार उनके लिए सदैव परस्पर सगत मान प्राप्त होते है।

इन सभी घटनाओ मे प्रेक्षण के लिए सबसे अधिक आसान, हिमाच्छादित भूप्रदेश और समुद्र का अन्तर है, अत इन्ही से प्रेक्षण का आरम्भ करना सर्वोत्तम होता है।

1. La Cour, Overs Dansk Vidensk Selsk Forh. 75, 1871

यह आर्कटिक-अन्वेषको के 'बर्फ-निमीलन'[1] तथा 'जल-आकाश'[2] के अतिरिक्त और कुछ नही है जिसके द्वारा बर्फ-शिलाओ के आगमन की सूचना पाकर वे सतर्क हो जाते है।

'और सन्ध्या को मैंने उत्तर दिशा के आकाश पर एक अद्भुत् चमक देखी जो क्षितिज पर सबसे अधिक तेज थी यद्यपि यह समूचे आकाश मे ठीक ऊर्ध्व बिन्दु तक देखी जा सकती थी—एक आश्चर्यजनक, रहस्यमय मन्दज्योति, दूरस्थित एक विशाल अग्निराशि के प्रतिबिम्ब के मानिन्द, किन्तु पिशाचलोक की ज्योति सरीखी, क्योकि रोशनी प्रेतच्छाया की तरह सफेद थी।'

—फ्रैन्क, नान्सेन, बोकेन ऑम नोर्ज, क्रिस्टियाना,[3] १९१४

अधिकाश लोगो को यह मालूम नही है कि मिस्र के रेगिस्तानो की रेत भी बादलो पर रगीन ज्योति फेकती है जो दूर से स्पष्ट पहचानी जा सकती है। हिन्द महासागर के एक छिछले भाग से, जहाँ समुद्र का हरा रग विशेष रूप से स्पष्ट निखरा था, क़रीब ३५० या ४५० गज की ऊँचाई पर स्थित बादलो पर हलकी हरी रोशनी पड रही थी। यहाँ तक कि हीदर[4] झाडियो वाले प्रदेश मे भी, जबकि उनपर सुर्ख रग के फूल खिले हो, और उनपर धूप की रोशनी पड रही हो, हलके-फुलके उतराते हुए बादलो की निचली सतह मनोरम नील-लोहित रग धारण कर लेती है।

कुछ दशाओ मे प्रकाश का एक स्थिर धब्बा बादलो की हमवार सतह पर देखा गया है और यह सिद्ध किया जा सका है कि यह दूर की एक झील का केवल प्रति-बिम्बन था। यह घटना केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब मौसम शान्त हो और पानी की सतह पूर्णतया समतल। झील का विस्तार कम-से-कम १ किलोमीटर होना चाहिए तथा सूर्य को आकाश मे कम ऊँचाई पर ही होना चाहिए, अर्थात् क्षितिज से लगभग ७° की ऊँचाई पर, ताकि परावर्त्तन प्रवल हो सके।

२०७. पानी के रग को निर्धारित करने वाले उपादान[5]

अनन्त रूप से परिवर्त्तनशील, सगमर्मर सरीखे रगो के क्षण-क्षण बदलने वाले शेडो से परिपूर्ण, यह आभा हर तरङ्ग के साथ बदलती है तथा इसकी सरचना की बारीकी नेत्रो को शाश्वत आनन्द प्रदान करती है।

1 Ice-blink 2 Water-sky 3 Fr Nansen, Boken Om Norge, Kristiana, 1914 4 Heather 5 Bancroft, J Frankl, Inst, **187** 249, and 459, 1919 V Aufsess, Ann d Phys, **13**, 678, 1904, C V Raman, Proc R Soc **101**, 64, 1922, Shoulejkin, Phys. Rev., **22**, 85, 1923, Ramanathan, Phil Mag, 46, 543, 1925.

आइए इसका विश्लेषण करने का प्रयास करे—

(क) पानी से हम तक आने वाले प्रकाश का कुछ अश पानी की सतह से परावर्त्तित होता है जो शान्त अवस्था मे एक दर्पण सरीखा काम करता है। और आकाश यदि स्वच्छ हुआ तो पानी का रग नीला दीखता है, आकाश पर घने बादल छाये हुए हो तो पानी का रग भूरा, और यदि हलकी ढाल वाला किनारा घास से ढका हो तो पानी का रग हरा होगा। किन्तु पानी की सतह पर यदि तरङ्गे उठ रही हो तब आकाश तथा किनारे की भूमि के रग आपस मे मिल-जुल जाते है—एक की चमक दूसरे पर कौधती है। जब पानी अत्यधिक मात्रा मे तरङ्गित होता है तब केवल इन तमाम रगो का मिश्रण प्रतिबिम्बित होता है।

'जिसे आम तौर पर हम एकसम रग की सतह समझते है, वह वस्तुत लगभग अनगिनत किस्म के वर्णो से प्रभावित होती है जो दूर से दीखने वाले सूर्य-प्रतिबिम्ब की भाँति लम्बाई की दिशा मे खिची होती है, और इसकी चमक, विशुद्धता तथा स्वय इसके धरातल का भी बोध प्रचुर मात्रा मे इस बात पर निर्भर करता है कि हम इन अगणित वर्णो की अनुभूति कितनी मात्रा मे कर पाते है, धरातल की अनवरत गति इनकी असलियत के समझने-बूझने तथा इनका विश्लेषण करने मे बाधा पहुँचाती है।'

—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

(ख) प्रकाश का कुछ अश पानी के भीतर प्रवेश कर जाता है और वहाँ धूल के कणो द्वारा तथा उसके सामान्य ढबैलेपन द्वारा परिक्षेपित होता है। ये जर्रे साधारणत इतने बडे होते है कि वे सभी किरणो का समान मात्रा मे परिक्षेपण करते है, अत बाहर निकलने वाला प्रकाश उसी रग का होता है जिस रग का आपतित प्रकाश, यदि ये जर्रे मिट्टी या रेत के कणो से बने हो तो बाहर निकलने वाला प्रकाश भूरे बादामी रग का हो सकता है। किन्तु अत्यन्त गहरे, स्वच्छ पानी मे प्रकाश का पर्य्याप्त भाग स्वय पानी के अणुओ द्वारा परिक्षेपित होता है और यह वैसा ही मनोरम रग का होता है जैसा आकाश का या ग्लेशियर की मोटी बर्फ-शिला का होता।

(ग) अन्तत, छिछले पानी के भीतर प्रकाश का कुछ अश सदैव ही पेदे तक पहुँचता है और वहाँ उसका विसृत परावर्त्तन हो जाता है और साथ-साथ ही यह पेदे का रग धारण कर लेता है।

(घ) पानी के भीतर अग्रसर होते समय प्रकाश की किरणो मे निरन्तर तब्दीलियाँ आती रहती है। (1) परिक्षेपण के कारण उनकी तीव्रता के कुछ अशका

ह्रास हो जाता है, शुद्धपानी मे बैगनी और नीली किरणे विशेष रूप से क्षीण हो जाती है। (ii) पानी द्वारा **वास्तविक अवशोषण** के कारण, जोकि दो-चार गज गहरे पानी मे ही पर्य्याप्त रूप से बोधगम्य हो जाता है, ये अपने पीले, नारङ्गी तथा लाल रग की किरणो से ठीक उसी प्रकार वञ्चित हो जाती है जिस प्रकार रगीन कॉच मे गुजरने वाला प्रकाश।

पानी मे परिक्षेपण अनिवार्य रूप से मौजूद रहता है, यहाँ तक कि शुद्ध पानी मे भी यह क्रिया होती है, क्योकि पानी मे उसके अणुओ का वितरण समरूप नही रहता और इस कारण इसकी सरचना मे विषमता आ जाती है तथा कुछ मात्रा मे यह कणिकामय[1]-सा हो जाता है, फिर प्रत्येक अणु गोले की शक्ल से कुछ भिन्न होता है। इस परिक्षेपण की तुलना हर दृष्टि से वायु मे होनेवाले परिक्षेपण से की जा सकती है, अर्थात् यह भी $\frac{1}{\lambda^4}$ के अनुपात मे बढता है, अत नीली और बैगनी किरणो के लिए यह अधिकतम होता है। अपेक्षाकृत कम स्वच्छ पानी मे पदार्थ के जर्रे तैरते रहते है, यदि ये अत्यन्त क्षुद्र आकार के हुए तो इनका परिक्षेपण-प्रभाव भी अणुओ के प्रभाव म जुड जाता है, फलस्वरूप नीला-बैगनी परिक्षेपण उत्पन्न होता है। यदि ये बडे आकार के हुए, उदाहरण के लिए, ० ००१ मिलीमीटर से भी बडे, तब ये सभी वर्णो के प्रकाश का परिक्षेपण समान मात्रा मे करते है, और अधिकाश सामने की दिशा मे (§ १८२)।

साधारण साबुन का पानी ऐसे द्रव का एक उत्तम उदाहरण है जिसमे अत्यन्त सूक्ष्म आकार के परिक्षेपण करने वाले कण मौजूद होते है। सामने की दिशा से आलोकित होने पर इसे मटमैली पृष्ठभूमि के समक्ष देखने पर यह निलछौवे रग का प्रतीत होता है, और प्रकाश जब पीछे की दिशा से इस पर पडता है तो यह नारङ्गी वर्ण का प्रतीत होता है (देखिए § १७१)।

झील और नदियो के पानी द्वारा होने वाला अवशोषण मुख्यत लौह (Fe^{+++} आयन) के, तथा ह्यूमिक अम्ल के रासायनिक यौगिको की उपस्थिति के कारण उत्पन्न होता है। २ करोड भाग मे १ भाग लौह की अवधारणा (सान्द्रण)[2] तथा १ करोड भाग मे १ भाग ह्यूमिक अम्ल की अवधारणा के लिए (जैसा कि आम तौर पर पाया जाता है), पानी का रग, वास्तव मे जैसा वह दीखता है उससे अधिक गहरा उसे होना चाहिए। स्पष्टत लौह (Fe^{+++}) यौगिक, प्रकाश की उपस्थिति मे ह्यूमिक अम्ल का आक्सीकरण कर देते है और इस क्रिया मे उनका स्वय अवकरण हो जाता है, तो वे

1. Granular 2 Concentration

Fe^{++} यौगिको मे बदल जाते है। और ये Fe^{++} यौगिक एक बार फिर आक्सीजन से सयोग करके Fe^{+++} यौगिक बन जाते है और यही क्रम आगे चलता रहता है।

अब हम यह प्रदर्शित करने के लिए कुछ उदाहरण प्रस्तुत करेगे कि ये विभिन्न उपादान आपस मे मिलकर किस प्रकार पानी को रग प्रदान करते है।

२०८ सडक पर पडे पानी का रग

इसके लिए एक सरल दृष्टान्त है वर्षा के कारण सडक पर इकट्ठा होने वाला पानी। यदि उसकी ओर देखने की दिशा का आपतन कोण बडा हो तो इस दिशा मे सतह से लगभग सम्पूर्ण प्रकाश का परावर्त्तन होता है और प्रतिबिम्बित वस्तुओ मे विपर्यास प्रचुर मात्रा मे मौजूद रहता है—मिसाल के लिए काली टहनियाँ दरअसल बहुत ही अधिक काली दीखती है। यदि हम पानी के और निकट आये ताकि हमारी दृष्टि-रेखा उत्तरोत्तर ऊँची चढती जाती है तो प्रतिबिम्बन अधिक क्षीण पड जाता है (§५२), और ऐसा जान पडता है मानो पूरी सतह एक प्रकार के एकसम धुन्ध से ढकी है—इस दशा मे सभी रग फीके पड जाते है और सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह होती है कि प्रतिबिम्ब के काले भाग अब वास्तव मे काले नही बल्कि धूसर-भूरे रग के दीखते है। धुन्ध के उत्पन्न होने का कारण यह है कि गड्ढे के पानी पर चारो ओर से प्रकाश गिरता है। और पानी के अन्दर प्रवेश करने पर हर दिशा मे इसका परिक्षेपण हो जाता है। यदि पानी साफ न होकर ढवैला दूधिया हुआ, तो परिक्षेपण, इसमे तैरनेवाले धूलकणो की वजह से होता है, उदाहरण के लिए पानी का रग यदि 'नीला' दीखता है तो इसका अर्थ है कि परिक्षेपित प्रकाश नीला रग धारण कर चुका है और यह वर्ण परावर्त्तित बिम्ब के साथ मिल जाता है, यदि पानी स्वच्छ हो और पेदा हलके रग का जैसा कि समुद्र-तट पर पडे समुद्र-जल के गड्ढो के पेदे का रग होता है, तब सभी परावर्त्तित प्रतिबिम्बो मे एक प्रकार के बालू के रग का पुट आ जाता है और यदि लम्बवत् देखे तो इस दशा मे पेदा तो स्पष्ट दिखलाई पडता है, किन्तु बिम्बो मे, केवल सबसे अधिक चमकवाले ही कतिपय प्रतिबिम्ब नजर आते है। किन्तु पानी साफ हो और पेदा काले मटमैले रग का, तब परावर्त्तित प्रतिबिम्ब, लम्ब दिशा से देखे जाने पर भी विपर्यास मे शुद्ध तथा परिपूर्ण बना रहता है, इतना अवश्य है कि पहले-जैसा चमकीला अब यह नही रहता। साये मे पडे शान्त गड्ढो के पानी मे वृक्षो की पत्तियो के गुच्छो के प्रतिबिम्ब कुछ अवसरो पर रगो की ऐसी विशुद्धता तथा ऐसी स्पष्टता का प्रदर्शन करते है जो कि प्रतिबिम्बित होने वाली स्वय उस वस्तु मे भी परिलक्षित नही होती।

यह एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव है जो मुख्यत इस कारण उत्पन्न होता है कि इस दशा मे इर्द-गिर्द का दृश्य कम चकाचौध पैदा करता है (§ ७)।

किसी व्यक्ति को गड्ढे से विभिन्न दूरियो पर खडे होने के लिए कहिए और तब देखिए उसका प्रतिबिम्ब किस प्रकार बदलता है! यह प्रयोग समुद्रतट पर विशेष रूप से प्रभावोत्पादक सिद्ध होगा।

यहाँ पर हम एक छोटे पैमाने पर इस कारण को प्रदर्शित होते देखते है कि क्यो समुद्र की सतह से नीचे की चीजे (जैसे चट्टाने, पनडुब्बियाँ आदि), जहाज की अपेक्षा, वायुयान पर से अधिक आसानी के साथ देखी जा सकती है।

'अब तथ्य यह है कि सडक के बगल का कोई भी गड्ढा या जलाशय ऐसा नही है जिसके भीतर उतनी ही मात्रा मे भू-दृश्य न सिमटा पडा हो जितनी मात्रा में उसके ऊपर मौजूद है। यह, जैसा कि हम समझे बैठे है, एक भूरी, गँदली, धूमिल चीज़ नही है, इसके हमारी भी तरह हृदय है जिसके अन्तस्तल में ऊँचे वृक्षो की टहनियाँ, और घास की हिलती-डुलती पत्तियाँ है और आकाश के परिवर्त्ती मनोरम रगो की हर किस्म की छटा वहाँ मौजूद है।'—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

२०९ भूप्रदेश के भीतर के जलमार्ग तथा नहरो का रंग

हर नहर तथा खाई के पानी की सतह पर आलोडित तरङ्गे, रग और प्रकाश की निरन्तर परिवर्त्ती छटा उत्पन्न करती है (§§१४–१८)। यह मालूम करने के लिए कि सतह का कोई विशेष भाग तरङ्गित हो रहा है या नही हमे उसे विभिन्न दिशाओ से देखना चाहिए। हलकी तरङ्गे केवल प्रतिबिम्ब के आलोकित तथा अन्धकार वाले भागो की सीमारेखा पर ही दृष्टिगोचर होती है, समरूप से प्रकाशित नीले आकाश के प्रतिबिम्ब मे इन्हे नही देखा जा सकता और न ही घने वनो के अन्धकारमय प्रतिबिम्ब मे (प्लेट XIV)। किन्तु बडी तरङ्गे प्रतिबिम्ब के पर्य्याप्त बडे और समरूप भागो मे भी छाया और प्रकाश के शेड उत्पन्न करती है और ऐसा या तो इस कारण होता है वे किरणो को अत्यधिक विचलित कर देती है या फिर इस कारण कि तरगो के अग्रभाग तथा पृष्ठभाग के परावर्त्तन-गुणाको मे परस्पर पर्य्याप्त अन्तर पड जाता है (§५२ तथा चित्र १५७)।

इस प्रकार के प्रेक्षणो से पता चलता है कि पानी के तरङ्गित तथा शान्त भागो के बीच की सीमा-रेखा करीब-करीब सदैव ही आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट उभरती है। इसका कारण वायु-धाराओ का अव्यवस्थित वितरण नही हो सकता, और यह इस बात

द्वारा विशेष स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट होती है कि वर्षा के समय भी जबकि पानी की पूरी सतह समान रूप से कम्पन करती होती है, सीमारेखाएँ पूर्णतया स्पष्ट बनी रहती है। वास्तविक कारण तो इसके अतिरिक्त और कुछ नही है कि सतह पर तेल की एक अत्यन्त बारीक परत मौजूद होती है जो एक मिलीमीटर के दस लाखवे भाग से भी कम मोटी होती है (तेल के केवल दो अणुओ की मोटाई !) फिर भी हवा या वर्षा के कारण बनने वाली तरङ्गो के शमन करने के लिए यह पर्य्याप्त होती है ! तेल की यह परत प्राणी या वनस्पति जगत् के पदार्थों के सडने-गलने से तैयार होती है या उधर से गुजरने वाले जलयान से टपके तेल से, अथवा नालियो मे आने वाले पानी की गन्दगी से। हवा अपने साथ चिकनाई की इस परत को बहाकर नहर के एक किनारे की ओर कर देती है। सदैव ही आप देखेगे कि पानी उस किनारे की ओर ही तरङ्गित होता है जिधर से हवा आ रही होती है और दूसरे किनारे पर पानी शान्त रहता है। इस शान्त स्थिर भाग मे बहुत-सी पत्तिया और टहनियाँ आदि तैरती रहती है, किन्तु एक दूसरे के लिहाज से उनमे मुश्किल से ही किसी तरह ही हरकत होती है क्योकि तेल की अत्यन्त पतली परत द्वारा वे अपनी स्थिति पर ही बँधी-सी रहती है।

इस प्रकार वन के अन्दर के नाले के पानी की सजीव, चमचमाती हुई सतह और बडे शहरो के गरीब मुहल्लो के जलमार्ग के गाढे, मटमैले, सुरमई रग वाले पानी की सतह के बीच के स्पष्ट अन्तर का सन्तोषजनक रूप से समाधान हो जाता है।

सतह की इन प्रकाशीय घटनाओ का और आगे अनुगमन हम इस बात के अध्ययन द्वारा करेगे कि किस प्रकार यह प्रतिबिम्बन नीचे, अन्दर से आने वाले प्रकाश के साथ निरन्तर स्पर्द्धा करता रहता है। पेड के नीचे, पानी के किनारे हम खडे है। यत्र-तत्र वृक्षो की घनी चोटी के प्रतिबिम्ब हम देखते है और इनके दर्मियान नीचे आकाश के चमकते हुए खण्ड दिखलाई देते है। उन स्थलो पर जहाँ निर्मल आकाश प्रतिबिम्बित होता है, हम पानी के नीचे का पेदा नही देख पाते, क्योकि नीचे से आने वाला प्रकाश अपेक्षाकृत बहुत ही क्षीण होता है। उन स्थलो पर जहाँ गहरे शेड मे वृक्ष प्रतिबिम्बित हो रहे होते है, हम एक गहरे रग का मिश्रण देखते है जो उनकी पत्तियो के रग, पानी के नीचे के पेदे के रग, तथा पानी के अन्दर के धूल-कणो द्वारा परिक्षेपित होने वाले विसृत प्रकाश के परस्पर मिलन से बनता है। इस बात पर ध्यान दीजिए कि पानी के नीचे का पेदा हम केवल किनारे के निकट ही देख सकते है। पानी को कुछ फासले पर देखे तो अब पेदे को देख पाना सम्भव नही होता, क्योकि परावर्त्तित प्रकाश अब आपतनकोण

बढ जाने के कारण बहुत अधिक तेज हो जाता है और नीचे से आने वाले प्रकाश पर यह हावी हो जाता है।

जहाज के पेंदे के मटमैले रग के पृष्ठ-दण्ड[1] का प्रतिविम्ब हरा-हरा, जलीय रग का दीखता है जबकि जहाज के गिर्द उस पर बनी सफेद पट्टी के प्रतिविम्ब का रग केवल सफेद ही रहता है।

'सूर्यके प्रकाश मे पानी का स्थानीय रग सामान्यत गहरा तथा स्फूर्तिमय होता है और जैसा कि हमने देखा, कम प्रकाश वाले प्रतिबिम्बो को यह बरबस प्रभावित करता है, प्राय उनके गाढेपन को यह कम कर देता है। साये मे, परावर्त्तन शक्ति बढकर उच्च कोटि तक पहुँच जाती है।[2] और बहुत अकसर ऐसा होता है कि पानी की सतह पर छाया का स्वरूप वास्तविक छाया द्वारा नही निरूपित होता बल्कि ऊपर की वस्तुओ के अधिक यथार्थ प्रतिबिम्बन द्वारा यह निरूपित होता है।

'एक अत्यन्त गँदले पानी की नदी (जैसे, उदाहरण के लिए फ्लोरेन्स की आर्नो नदी) धूप मे अपने निज के पीले रग की दीखती है और सभी प्रतिबिम्वनो को हलका तथा रगविहीन बना देती है। गोधूलि की बेला मे यह अपनी परावर्त्तन शक्ति अधिकतम सीमा तक पुन प्राप्त कर लेती है, और कर्रारा[3] पर्वत इसमे इतने स्पष्ट प्रतिबिम्वित होते हुए दिखाई पडते है मानो यह एक निर्मल जल की कोई झील हो।'[4]

—रस्किन, माडर्न पेन्टर्स।

सतह के प्रतिबिम्बन के निराकरण के कुछ आसान तरीके इस प्रकार है—

(क) आप सिर के ऊपर एक काली छतरी लगा सकते है, या किसी पुल के नीचे जगह तलाश कर लीजिए, खुली धूप के मौसम मे पानी की गहराई से ऊपर को विस्तृत होने वाले पीत-हरे रग के प्रकाश को अच्छी तरह देख सकेंगे। सतह पर थिरकती हुई तरङ्गिकाएँ अब केवल उस प्रकाश द्वारा देखी जा सकती है जो किञ्चित्

1 Keel 2, भौतिक व्याख्या यह है कि परावर्त्तन-शक्ति साये में बिलकुल ठीक उतनी ही रहती है जितनी धूप में, किन्तु अनुपात $\frac{\text{परावर्त्तित प्रकाश}}{\text{गहराई से परिक्षेपित होकर आनेवाला प्रकाश}}$ धूप में कम होता है और साये में अधिक। 3 Carrara

4 हमारी व्याख्या—सन्ध्या की गोधूलि बेला में रोशनी एक खास दिशा से आती है और सामान्य प्रदीप्ति विलुप्त हो चुकी होती है, जो दिन का नीचे गहराई से आनेवाला परिक्षेपित प्रकाश उत्पन्न करती है और यही तमाम परावर्त्तित प्रतिबिम्बों पर अध्यारोपित हो जाता है।

वर्त्तन द्वारा वे उत्पन्न करती है। पानी के अन्दर की चीजे इधर से उधर धीमी गति से कम्पन करती हुई दिखलाई पडती है—ऐसा प्रतीत होता है मानो पानी एक प्रकार की जिलैटिन हो।

(ख) एक छोटा दर्पण लेकर उसे पानी के अन्दर भिन्न कोणो पर झुकाइए (चित्र १५५) और इस प्रकार उस प्रकाश के रग की जॉच कीजिए जो कुछ दूर तक
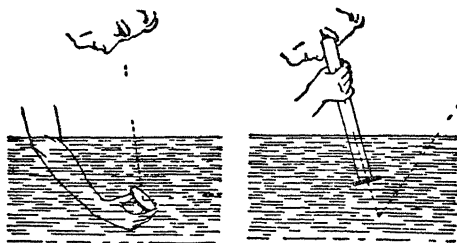
चित्र १५५—**पानी के रग का प्रेक्षण, इसकी सतह पर होनेवाले परावर्तन का परिहार करते हुए।**

पानी मे प्रवेश कर चुका है। यदि किसी साधारण खाई के पानी मे यह प्रयोग करे तो प्रकाश मे आप वास्तविक अवशोषण के कारण, पीला रग देखेगे। पानी यदि बहुत ही उथला हो, तो खाई के पेदे पर गिरे चीनी मिट्टी के टूटे हुए टकडे या पानी के अन्दर रखे गये सफेद कागज से भी काम चल जायगा। समुद्र मे सफेद वृत्ताकार प्लेट इस्तेमाल करते है जिसे एक खास गहराई पर पानी के अन्दर डालते है, किन्तु इसे एकदम **सरल** प्रयोग नही माना जा सकता।

(ग) एक **जल-दूरबीन** का इस्तेमाल कीजिए जो केवल एक टिन की नली होती है,और यदि सम्भव हो तो इसके एक सिरे पर कॉच लगा रखते है (चित्र १५५)। इसकी सहायता से आप पानी के पेदे से या तैरते हुए धूल-कणो से परिक्षेपित होकर नीचे से आने वाले प्रकाश के रग की जॉच कर सकेगे। नहाते समय अपनी जल-दूरबीन को काम मे लाइए। पुरानी चाल के जहाज मे धुर नीचे तक जाने वाला सूराख आप को मिल सकता है जो नीचे पानी मे खुलता है, यह दरअसल एक बडे पैमाने की जल-दूरबीन ही है!

(घ) एक 'निकल' को इस तरह पकड कर उसमे से देखिए कि उसमे से गुजरने पर, पानी की सतह से परावर्त्तित होने वाले प्रकाश का शमन हो जाय (§ २१४)।

२१०. समुद्र का रंग

समुद्र के रग को निर्धारित करने मे आम तौर पर परावर्त्तन का ही प्रमुख हाथ होता है। किन्तु यह परावर्त्तन असख्य, विभिन्न तरीको पर होता है, क्योकि समुद्र का धरातल गतिशील और प्राणवान् होता है जो वायु की प्रकृति तथा तट की बनावट के अनुसार तरङ्गित तथा उद्वेलित होता रहता है। प्रमुख नियम यह है कि दूर के सभी प्रतिबिम्ब क्षितिज की ओर स्थानान्तरित हो जाते है क्योकि हमारी निगाह दूर की तरगो की ढाल वाली सतह पर पडती है (§ १६)। इसलिए समुद्र के दूरस्थ भागो का रग करीब-करीब वैसा ही होता है जैसा २०° से ३०° की ऊँचाई पर आकाश का रग, अर्थात् ठीक क्षितिज के ऊपर के आकाश की अपेक्षा यह अधिक निष्प्रभ होता है (§ १७६), और इस कारण यह रग और भी अधिक निष्प्रभ होता है कि प्रकाश का एक अशमात्र ही परावर्त्तित हो पाता है।

इसके अतिरिक्त समुद्र का अपना 'निज का रग' भी होता है—नीचे से परिक्षेपित होकर आनेवाले प्रकाश का वर्ण। प्रकाशीय दृष्टि से समुद्र की एक महत्त्वपूर्ण लाक्षणिक विशिष्टता है उसकी **गहराई**, यह गहराई इतनी अधिक होती है कि पेदे से करीब-करीब कुछ भी प्रकाश ऊपर वापस आ नही पाता है। यह 'निज का रग' पानी की राशि मे होने वाले **परिक्षेपण** तथा **अवशोषण** के मिले-जुले प्रभाव के कारण उत्पन्न होता है। समुद्र मे प्रकाश का केवल परिक्षेपण हो (परावर्त्तित प्रकाश का विचार न करे) तब इसका रग दूधिया सफेद होगा, क्योकि इसमे प्रवेश करने वाली सभी किरणे अन्त मे अनिवार्यत बाहर निकल आयेगी। समुद्र, यदि केवल अवशोषण करता हो तब वह स्याही के मानिन्द काले रग का दीखेगा, क्योकि तब किरणे पेदे तक पहुँचने के उपरान्त ही वापस आ पायेगी और अवशोषण यदि अत्यल्प भी हुआ, तो पानी के अन्दर की लम्बे मार्ग की यात्रा उनके प्रकाश को विलुप्त कर देने के लिए पर्य्याप्त होगी। फिर भी, जैसा कि अभी बताया जा चुका है, रग का प्रादुर्भाव परिक्षेपण तथा अवशोषण के सम्मिलित प्रभाव के कारण होता है, ऐसा प्रकाश जिसका परिक्षेपण थोडी ही मात्रा मे होता है, पुन पीछे की ओर परिक्षेपित होने के पूर्व पानी के अन्दर अधिकतम दूरी तक प्रविष्ट कर जाता है, और इस लम्बी यात्रा के दौरान मे अवशोषण द्वारा इसका ह्रास भी अधिकतम होता है।

मोटे तौर पर हम कह सकते है कि नीचे से वापस आने वाले प्रकाश की मात्रा, अनुपात $\frac{\text{परिक्षेपण गुणाक}}{\text{अवशोषण गुणाक}}$ के बढने पर अधिक होगी। किन्तु इसकी सर्वांगपूर्ण व्याख्या किसी भी प्रकार से आसान नही है।

समुद्र की विस्तृत जलराशि के रग पर उसके पेदे का प्रत्यक्ष प्रभाव अपने देश (हालैण्ड) के निकट नही देखा जा सकता, कम-से-कम उस दशा मे जबकि पानी की गहराई एक गज से अधिक हो। रस्किन का दावा है कि १०० गज की गहराई पर भी पेदे का प्रभाव समुद्रजल के रग पर प्रचुर मात्रा मे पडता है और समुद्र के अनेक यात्रियो द्वारा भी इसी तरह के और भी दावे किये गये है। तथ्य यह है कि समुद्र के पेदे की स्थानीय उठान, लहरो के उत्थान और ऊपर के पानी के उद्वेलन मे परिवर्त्तन का समावेश करती है और स्वभावत इस स्थान पर अधिक गहरे स्थान के मुकाबले मे, अधिक सख्या मे ठोस कण मथ उठते है जिससे परिक्षेपण मे वृद्धि हो जाती है। अत. समुद्र के पेदे का प्रभाव दरअसल पडता तो है, किन्तु यह प्रत्यक्ष प्रभाव नही है।

२११. उत्तर सागर का प्रकाश तथा उसका रग

छुट्टी के एक दिन, हालैण्ड के रेतीले समुद्र तट पर जो ठीक उत्तर-दक्षिण दिशा मे पडता है, और जहाँ से समुद्र पर शानदार सूर्यास्त देखा जा सकता है, निम्नलिखित प्रेक्षण प्राप्त किये गये। ये घटनाएँ, स्वभावत, दिन के विभिन्न समय के लिए तथा समुद्रतट की विभिन्न स्थितियो के लिए विभिन्न होती है—सारभूत बात है समुद्र की सतह के लिहाज से सूर्य की स्थिति।

१ **शान्त वायु, नीला आकाश**—तडके प्रभात की शान्त बेला, समुद्र की सतह दर्पण की भॉति स्निग्ध। आकाश सर्वत्र नीला, किन्तु धुन्ध लिये हुए। एक नन्ही-सी लहर हमारे पैरो के पास तट पर आकर बल खा जाती है और फेन की बारीक-सी धारी छोड जाती है जो मानो फुसफुसाकर दम तोड देती है—एक खामोशी छा जाती है . ...

आइए अब एक टीले पर खडे हो जायें। सामने समुद्र की सतह मानचित्र की तरह फैली हुई है। इसका एक भाग तो इतना स्निग्ध है कि ऊपर का नीला आकाश इसमे आदर्श रूप से बिना किसी प्रकार की विकृति के, प्रतिबिम्बित हो रहा है, मानो किसी झील से प्रतिबिम्बन हो रहा हो। अन्य भाग भी नीले-भूरे रग के है, किन्तु थोडे मटमैले शेड के। इनकी विभाजक रेखाएँ स्पष्ट देखी जा सकती है, तथा इनका विभाजन भी पृथक्-पृथक् इतना स्पष्ट है कि इच्छा यही होती है कि इनका चित्राकन करे। कुछ ही समय उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है मानो उन्होने अपनी स्थितियाँ एकदम बदल डाली है। इस कारण खुलते हुए रग वाले भागो का निर्माण रेत के टीलो (समुद्र के तट पर जाने वाले लोग इसी नाम से उन्हे पुकारते है) की वजह से नही हो सकता, इनकी

उत्पत्ति का कारण है चिकनाई की एक अतिसूक्ष्म, अत्यन्त पतली परत जो समुद्र की सतह पर फैली हुई होती है—ठीक नहर और खाइयो पर फैली परत की भाँति ये पानी के उद्वेलन को रोकने के लिए पर्य्याप्त होती है। सीधे नाप करके यह सिद्ध किया गया है कि इन क्षेत्रो पर अन्य स्थानो की अपेक्षा पृष्ठ-तनाव बहुत कम होता है। तेल की ये परते कदाचित् जहाजो से फेंके गये कूडा-करकट या उनके इजिन मे इस्तेमाल किये गये तेल से बनती है। जिस स्थल पर परत नही होती, वहाँ पानी की सतह थोडी-बहुत विक्षुब्ध होती है जैसा कि कुछ देर बाद जब सूर्य समुद्र पर चमकता है, देखा जा सकता है—तब तरङ्गित भाग प्रकाश के सागर की भाँति जगमगाता है। इन भागो से प्रदर्शित होने वाले रग अब और अधिक मटमैले हो जाते है, (१) क्योकि प्रत्येक तरङ्ग का अग्रभाग अब अधिक ऊँचे और इसलिए आकाश के कम प्रकाशित नीले भाग को प्रतिबिम्बित करता है, (२) फिर इसलिए भी कि परावर्त्तन अब उतनी तिरछी दिशा मे नही होता, अत इसमे प्रकाश की मात्रा कम ही होती है। 'निकल' को इस तरह रखकर उसमे से देखे कि केवल ऊर्ध्व दिशा के ही कम्पन उसमे से गुजर पाये तब मटमैले भाग अधिक अधकारमय दीखते है, और प्रकाशित भाग और इनके बीच का अन्तर अधिक प्रखर हो उठता है। विभिन्न क्षेत्रो की विभाजक रेखाए करीब-करीब सर्वत्र, तट के समानान्तर ही अवस्थित जान पडती है, ऐसा इसलिए प्रतीत होता है कि अनुदर्शन के कारण सामने की दिशा की रेखाएँ छोटी पड जाती है, क्योकि तथ्य यह है कि तेल की परत से
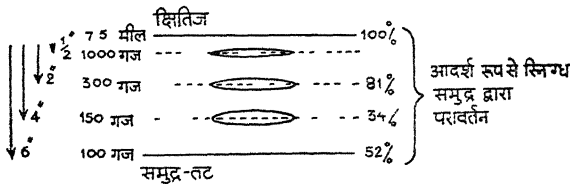
चित्र १५६—३० फुट ऊँचे टीले से समुद्र का अवलोकन। दीर्घवृत्त प्रदर्शित करते है कि समुद्र के धरातल की विभिन्न दूरियो पर वृत्त का अनुदर्शन-सकुचन किस प्रकार का होता है।

ढके हुए क्षेत्र तो हर तरह की शक्ल के हो सकते है (चित्र १५६)। सचमुच के एकाव 'रेत के टीले' पानी के रग मे पीलेपन के आधिक्य के कारण प्रमुख रूप से पहचाने जा

सकते है, किन्तु ऐसा केवल अत्यन्त ही उथले समुद्र मे होता है जैसे ४ से ८ इच तक की गहराई के पानी मे ।

तीसरे पहर समुद्र मे स्नान करते समय, यदि समुद्र शान्त हुआ तो पानी की असाधारण स्वच्छता से हम अवश्य प्रभावित होते है । लगभग १ गज की गहराई तक, पेदे का हम सारा ब्योरा देख सकते है, यहाँ तक कि तैरते हुए नन्हे-नन्हे जीवो को भी । पानी मे रेत मौजूद नही होती या होती भी है, तो नगण्य मात्रा मे, सो भी केवल वहाँ, जहाँ पर तरङ्गिका टूटने को होती है और इसके पीछे रेत के नन्हे बादल ऊपर की ओर भँवर के रूप मे मथ उठते है । यदि हम नीचे की ओर, एक दम अपने निकट के पानी को देखे, तो आकाश का प्रतिबिम्ब बहुत कम ही बाधा डालता है, ओर लगभग ८ इज की गहराई तक पेदे की रेत का पीला रग ही प्रमुखता प्राप्त किये रहता है । १ से लेकर १।। गज तक की गहराई पर रग एक मनोरम हरे वर्ण मे तब्दील हो जाता है और इस दशा मे हमे एक प्रकार की जल-दूरबीन बनानी पडती है ताकि आकाश के प्रतिबिम्बन को रोक सके। यह हरा वर्ण उस प्रकाश का रग है जो पानी मे प्रविष्ट होकर पुन पीछे की ओर परिक्षेपित हुआ है । किन्तु ज्यो ही समुद्र की सतह को कुछ फासले से हम देखते है, त्यो ही प्रतिबिम्बन प्रमुखता प्राप्त कर लेता है और हर तरफ नीले आकाश को हम प्रतिबिम्बित होते हुए देखते है । समुद्री हरे रग तथा आकाशीय नीले वर्ण का एक आश्चर्यजनक विनिमय !

सन्ध्या को सूर्य, कुछ ही अशो की कोणीय ऊचाई पर स्थित बादलो की पेटी के पीछे छिप जाता है—तो इसके ऊपर सान्ध्य प्रकाश की सुनहले और नारङ्गी वर्ण की ज्योति जगमगाती रहती है जो और ऊँचे आकाश पर सन्ध्या के मटमैले नीले रग मे क्रमश समा जाती है। समुद्र अब भी पहले की भाँति ही शान्त है, और समूचे दृश्य को वह अविकृत रूप मे प्रतिबिम्बित करता रहता है। किन्तु पश्चिम की ओर हम नजर डालते है, तो हमे अत्यन्त नन्ही तरगे दिखलाई पडती है (§१७), और समुद्र के दूरस्थ भागो मे जहाँ बादलो की नीली-भूरी पेटी प्रतिबिम्बित होती है, प्रत्येक तरग एक नन्ही, नारङ्गी-पीत वर्ण की रेखा का निर्माण करती है (तरग की झुकी हुई सतह आकाश के अधिक ऊँचाई वाले भाग का प्रतिबिम्बन करती है) । और निकटवर्त्ती भाग मे जहाँ समुद्र नारङ्गी-पीत वर्ण का है, तरङ्गिकाएँ और भी अधिक ऊँचाई पर स्थित, अधिक नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करके अधिक गहरे वर्ण का रेखाच्छादन-सा उपस्थित करती है । दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम की ओर देखने पर जहाँ सान्ध्य प्रकाश के रग विलुप्त हो रहे होते है, हमारी दृष्टि अब तरङ्गो की ढालू सतह पर लम्बवत् नही

पडती और समुद्र मे बादलो की एकसम पेटी का विशुद्ध प्रतिबिम्बन होता है जिसके न तो रग मे कोई अन्तर पडता है न प्रकाशदीप्ति मे, अत क्षितिज रेखा मिट-सी जाती है और समुद्र तथा आकाश एक दूसरे मे मिल जाते है जबकि दूर के जहाज नीले-भूरे अनन्तता मे उतराते हुए जान पडते है।

कुछ दिन बाद, मौसम लगभग पहले जैसा ही था, किन्तु हवा कदाचित् पहले की अपेक्षा और भी हलकी थी और तेल की पतली परत से ढका समुद्र का भाग सन्ध्या को बादलो की पेटी को प्रतिबिम्बित करता हुआ दिखाई दे रहा था जबकि सतह के विक्षुब्ध भाग, प्रतिबिम्ब के स्थानान्तरण के कारण नारङ्गी-पीत वर्ण के आकाश का प्रतिविम्वन कर रहे थे।

२. हलके वेग की हवा, इक्के-दुक्के बादलो वाला स्वच्छ नीला आकाश— टीले के सिरे पर मै अभी पहुँच भी नही पाता हूँ कि नीले-श्याम वर्ण के समुद्र और क्षितिज के निकट के खुलते रग वाले आकाश, के विपर्यास को देख कर चकित रह जाता हूँ। दृश्यता असाधारण रूप से बढिया है—दूर की वस्तुओ की आकृतियाँ सुस्पष्ट उभरती है, और यह दशा सारे दिन बनी रहती है। हलकी पछुआ हवा चल रही है। लहरे समुद्रतट के सहारे दो या तीन फेनिल पक्तियो मे उठती है, यद्यपि खुले समुद्र मे फेन नही दिखलाई पडता। टीले पर हम अब प्रेक्षण के लिए खडे हो जाते है।

तट के पार्श्व मे लहरो का अवलोकन कीजिए (चित्र १५७)। ये अग्रभाग मे मट-मैले पीत-हरे-भूरे रग की दीखती है क्योकि हमारी दृष्टिरेखा प्रत्येक लहर के सामने वाले ढाल के पार्श्व पर लगभग समकोण दिशा मे पडती है, और इस कारण परार्वात्तत प्रकाश का अल्प भाग ही हमारे पास पहुँचता है और फिर यह भी आकाश के केवल क्षीण प्रकाश वाले भाग से। किन्तु हम पीला -हरा प्रकाश भी अवश्य देखते है जो या तो समुद्र की गहराई से वापस परिक्षेपित हुआ है या लहर के पृष्ठभाग से प्रवेश करके सामने की ओर इस पार निकल आया है, किन्तु चूँकि यह प्रकाश अत्यन्त क्षीण ही रहता है अत लहरो का अग्रभाग मटमैला ही रहता है। इसके प्रतिकूल लहरो के पृष्ठभाग क्षितिज से लगे अधिक प्रकाश वाले नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करते है। इस प्रकार प्रत्येक लहर अपने मटमैले पीत-हरे अग्रभाग और हलके नीले पृष्ठभाग के बीच एक सुन्दर विपर्यास प्रदर्शित करती है। ये हलके नीले पृष्ठतल लहरो के दर्मियान चौडे चिपटे गर्त का स्वरूप धारण कर लेते है जिनकी सतह थोडी ही विक्षुब्ध होती है, अत ये अच्छे परावर्त्तक होते है और इसीलिए रग उनका नीला होता है। तट के समानान्तर रेत के

टीलो की कतिपय पक्तियो को उन पर टकराकर टूटनेवाली लहरो से आसानी से पहचाना जा सकता है जबकि उनके दर्मियान की जगहे अधिक स्निग्ध तथा शान्त रहती हैं। तट से और अधिक फासले पर लहरो की शैडिग उत्तरोत्तर अधिक बारीक होती जाती है। वहाँ टूटने वाली लहरे नही होती, किन्तु अग्र-ढाल और पृष्ठतल के ढाल के बीच का विपर्यास बना रहता है।
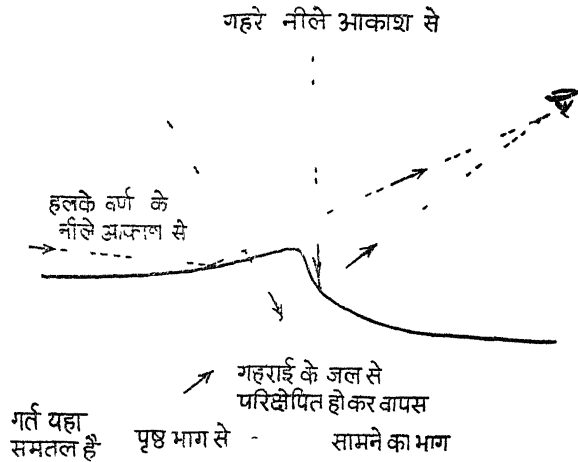
चित्र १५७—समुद्र की तरग मे विभिन्न रंगो का निर्माण कैसे होता है।

पानी पर उत्तरोत्तर अधिक तिरछी दिशा से देखते है तो अब लहरो के बीच के गर्त्त को हम देख नही पाते और अन्त मे उनके पृष्ठतल दृष्टि से पूर्णतया ओझल हो जाते है। अब अग्रभाग की सतह बहुत कम झुकी हुई होती है, अत यह मुख्यत करीब २५° कोणीय ऊँचाई के आकाश का प्रतिबिम्बन करती है। 'परावर्त्तित प्रतिबिम्ब का यह स्थानान्तरण' (§१६), समुद्र के गहरे नीले रग का, तथा समुद्र और क्षितिज से लगे आकाश के परस्पर के विपर्यास का, समाधान करता है। सम्प्रति यह विपर्यास इतना प्रवल इस कारण होता है कि क्षितिज पर आकाश वास्तव मे इतने खुलते रग का होता है, फिर भी इसके ऊपर, थोडी ही दूर पर इसका रग इतना गहरा नीला हो जाता है। इस वात की जॉच इस प्रकार कीजिए, आकाश के ऊँचाई वाले भागो का प्रतिबिम्ब एक छोटे दर्पण द्वारा क्षितिज के आसपास के भागो पर प्रक्षेपित कीजिए, नतीजा आश्चर्य-जनक मिलेगा! साथ ही साथ इस वात पर ध्यान दीजिए कि फासले पर समुद्र आकाश

के सबसे अधिक गहरे रग वाले भाग की तुलना मे भी अधिक गहरे रग का दीखता है—स्मरण रहे कि समुद्र की परावर्त्तनशक्ति १०० प्रतिशत से कही कम होती है। समुद्र और आकाश के दर्मियान का विपर्यास पश्चिम मे अधिकतम होता है और दक्षिण तथा उत्तर की ओर यह कम हो जाता है क्योकि अधिकाश लहरे पश्चिम की ओर से आती है, और जब हम उत्तर या दक्षिण की ओर देखते है तो हमारी दृष्टि लहरो के शीर्ष के बहुत कुछ समानान्तर रहती है, अत उनका प्रभाव घट जाता है (§१७)।

कदाचित् हमारे मन मे शका हो सकती है कि इस समय दीखने वाले प्रबल विपर्यास के लिए सिवाय इसके कि क्षितिज के निकट नीले आकाश की प्रदीप्ति तेजी से बढती है, क्या अन्य कोई कारण नही है। प्रकृति स्वय हमे विश्वास दिलायेगी। एक क्षण के लिए पश्चिमी आकाश का एक भाग अलका मेघो के आवरण से ढक जाता है, अत क्षितिज से लगभग ३०° की कोणीय ऊँचाई तक आकाश करीब-करीब समरूप से श्वेत दीखता है, तुरन्त ही इस दिशा मे समुद्र और आकाश का प्रबल विपर्यास विलुप्त हो हो जाता है, और समुद्र पहले की अपेक्षा बहुत अधिक हरा और प्रकाशवान् हो जाता है। अलका बादलो के हटते ही विपर्यास पुन प्रगट हो जाता है।

जिस हद तक प्रतिबिम्बन समुद्र के रग को प्रभावित करते है, उससे हमे यह नही समझ लेना चाहिए कि अन्य कारणो की हम एक दम उपेक्षा कर सकते है। यत्र-तत्र आपको इक्के-दुक्के बादलो की साया दिखाई दे सकती है—इन स्थानो पर समुद्र अधिक गहरे रग का दीखता है, जबकि सूर्य के प्रकाश मे पडने वाले भागो का रग रेत के रग से अधिक मात्रा मे मेल खाता है। किन्तु यह अशत विपर्यास की एक घटना है, क्योकि [illegible] नाइग्रोमीटर (§ १७४) मे से, तब आप पाते है कि दरअसल वहाँ भी रग नीला ही है, भले ही यह साये वाले भाग की तुलना मे कम नीला ठहरे।[1] जो कुछ भी हो, ये छायाएँ स्पष्ट रूप से सिद्ध करती है कि समुद्र का रग पूर्णतया परावर्त्तन द्वारा ही निर्धारित नही होता बल्कि प्रकाश का कुछ अश पानी के नीचे से भी परिक्षेपित होकर वापस लौटता है। छाया इसलिए दृष्टिगोचर होती है कि परिक्षेपित होकर वापस आने वाला प्रकाश उस स्थान पर अन्य जगहो के मुकाबले मे अधिक क्षीण होता है जबकि परावर्त्तित प्रकाश कमजोर नही पडने पाता है (§ २०९)।

१ समुद्र उस वक्त अत्यन्त मनोरम नीले रग का दीखता है जब यह बिलकुल स्निग्ध शान्त हो, आकाश चमकीले नीले वर्ण का हो और सूर्य्य बादलों की ओट में हो ताकि समुद्र साये में पड़े।

क्या पेदे की रेत पानी मे से होकर सीधे ही चमकती है और क्या पानी के अन्दर के रेत के टीले दूर से अपने तई पहचाने जा सकते है ? मेरे निज के अनुभव के अनुसार ऐसा नही हो सकता, और न ही ऐसे व्यक्ति के लिए जो किसी ऊँचे टीले का समुद्र तट से प्रेक्षण कर रहा हो। रेत केवल तभी दृष्टिगोचर होती है जब पानी बहुत ही उथला हो, शायद ४ से लेकर ८ इच तक गहरा। रेत के टीलो की स्थिति ठीक वही पर निर्मित होने वाली लहरो के कारण मालूम पड जाती है, और इस कारण भी कि टीलो की पक्तियो के बीच पानी की सतह अधिक स्निग्ध होती है (§ २१०)।

एक अद्भुत बात यह है कि क्षितिज के निकट समुद्र पर एक भूरे रग का हाशिया मौजूद होता है जो करीब-करीब नीले रग के मानिन्द हो सकता है (या नीले रग का होता है जो अधिक गहरे नीले रग की भाँति दीख सकता है), इसकी चौडाई आधी डिग्री से अधिक नही होती। टीले को छोडकर उसे देखने के लिए ज्यो ही हम समुद्रतट पर जाने को उद्यत होते है त्यो ही यह हाशिया विलुप्त होना शुरू हो जाता है और तट पर पहुँचने पर यदि हम तनिक झुकते है तो यह पूर्णतया विलुप्त हो जाता है। इससे प्रगट होता है कि यह विपर्यास-जनित हाशिया नही है (§ ९१)। सम्भवत यह इस कारण उत्पन्न होता है कि समुद्र अपेक्षाकृत कम दीप्तिमान् होता है, वायु द्वारा होने वाले परिक्षेपण की वजह से दूरी पर यह नीलापन लिये दीखता है[१] (§ १७३)। समुद्र-तट से इतने फासले पर समुद्र का जल कम गँदला होना चाहिए, इसलिए, यदि इतनी ऊँचाई पर खडे हो कि उतनी दूर का पानी देख सके तो वहाँ का अधिक स्वच्छ पानी अनायास ही तुरन्त पहचाना जा सकता है।

थोडा और दिन चढने पर सूर्य आगे बढ चुका होता है, तब तीसरे पहर, उस दिशा मे जिधर से सूर्य चमकता है, हम जगमग करती सहस्रो चिनगारियाँ-सी देख सकते है। स्वय सूर्य का परावर्तित प्रतिबिम्ब हम नही देख सकते क्योकि हम पानी पर सतह के अत्यन्त ही निकट की दिशा से देखते होते है, अव्यवस्थित रूप से तरङ्गित सतह से प्रतिबिम्बित विशाल प्रकाश-स्तम्भ के एक अश को ही हम देख पाते है। उस दिशा मे समुद्र हलके भूरे, करीब-करीब सफेद, रग का दीखता है।

सूर्यास्त के उपरान्त, पश्चिम दिशा मे समुद्र तेज चमक तथा सुनहले रग के अलका बादलो के आवरण को प्रतिबिम्बित करता है, इसकी ऊर्मिल सतह तथा इसके चञ्चल

१ यह हाशिया उन दिनों भी स्पष्ट दिखलाई पडता है जब आकाश नीरस, भूरे रग का होता है, हवा औसत वेग की और समुद्र गहरे मटमैले रग का होता है।

प्रतिबिम्बन आकाश के पश्चिमी भाग के औसत रग प्रदर्शित करते है। उत्तर और दक्षिण की ओर आकाश का रग हलका होता है और समुद्र की रग-आभा कम चमकीली होती है। हमारी निगाह बार-बार पश्चिम की रग-गरिमा द्वारा आकृष्ट होती है। सुनहले-पीत वर्ण के बादलो के दर्मियान यत्र-तत्र नीले आकाश का टुकडा दीख जाता है—इसका नीला रग विपर्यास के कारण आश्चर्यजनक रूप से सपृक्त दीखता है। शनै -शनै आकाश के रग रक्तिम वर्ण मे परिणत होते जाते है और समुद्र उनका अनुगमन करता है, जबकि ऊँची लहरो का फेन विपर्यास के कारण बैगनी दीखता है। ठीक अग्रभूमि मे गीली रेत का एक सकरा-सा भाग है जिसमे आकाश के कुछ भाग के प्रति-बिम्ब स्निग्ध और पूर्ण (बिना स्थानान्तरित हुए) दीखते है—पहले एक मनोहर स्वच्छ नीले रग के, फिर बाद मे मृदु हरे वर्ण के। अन्त मे, पश्चिम के अलका बादलो पर अब रोशनी नही पडने पाती, उनके रग की आभा गहरे बैगनी वर्ण की हो जाती है, और इसी प्रकार समुद्र के भी रग दब-से जाते है, किन्तु इन शान्तिप्रद सान्ध्यकालीन रागरगो मे, समुद्र तट की गीली रेत उत्फुल्ल नारङ्गी रग की धारी-सी अङ्कित करती है।

३ **तेज हवा उठ रही है, आकाश भूरे रग का है**—समूचे समुद्र पर उभडती हुई लहरो के शृग फेनिल हो रहे है, तट के सहारे झाग की चार-पाँच पक्तियाँ बन गयी है, दक्षिण-पश्चिम से हवा सामने की लहरो का पीछा करती हुई आती है। बादलो की तरह ही समुद्र भूरे रग का है, तनिक हरा मिश्रित भूरा। तट के निकट, लहरो को हम पृथक्-पृथक् देख पाते है और तब हमे पता चलता है कि उनके रग का हरा अश उनके अग्रभाग के ढाल से उत्पन्न होता है जो बहुत थोडा प्रकाश परा-वर्तित करता है, किन्तु भीतर के परिक्षेपण के कारण यह भूरा-हरा प्रकाश उत्सर्जित करता है। पानी अत्यन्त गँदला मालूम पडता है, क्योकि मथ उठने के कारण इसमे ढेर-सी रेत तैरती रहती है। समुद्र दक्षिण-पश्चिम की ओर, जिधर से हवा आ रही है, सबसे अधिक अदीप्तिमान् दीखता है, दक्षिण की ओर, और विशेषतया उत्तर की ओर, इसका रग हलका हो जाता है, करीब-करीब भूरे आकाश की भाँति, यद्यपि उसके मुकाबले मे समुद्र का रग थोडा गहरा ही पडता है (इस दशा मे हम लहरो को समानान्तर दिशा मे देखते होते है)। क्षितिज के निकट समुद्र अधिक नीलापन लिये हुए रहता है, जो कि नीचे स्थित गहरे वर्ण के बादलो का रग होता है, और लम्बे फासले के परिक्षेपण के कारण ही यह रग उत्पन्न होता है, जबकि सिर के ऊपर ये बादल सामान्यत चमकीले श्वेत या गहरे भूरे रग के होते है, और फिर क्षितिज पर नीले हाशिये की घटना

विपर्यास को और भी अधिक प्रखर बना देती है (पृष्ठ ३८८)। भूरे आकाश मे यदि कोई इक्का-दुक्का गहरे रग का बादल प्रगट होता है तो समुद्र की सतह पर गहरे नीले-भूरे रग का एक अस्पष्ट स्थानान्तरित प्रतिबिम्ब पहचान मे आ जाता है। क्षितिज की सीमारेखा कही पर भी स्पष्ट नही हो पाती, विशेषतया दक्षिण और उत्तर मे लहरो के झाग द्वारा उत्पन्न पानी की नन्ही-नन्ही बूँदो की फुआर हवा मे उतराती है जो हमारी दृष्टि-सीमा को घटा कर चन्द मीलो तक ही सीमित कर देती है और फासले पर समुद्र और हवा को एक दूसरे के साथ सम्मिश्रित कर देती है।

मौसम के साफ होने, और उत्तरी-पश्चिमी वायु के बहने पर दशा-स्थिति बहुत कुछ वैसी ही होती है जैसी अभी बतलायी गयी है, किन्तु आकाश मे अनेक नीले खित्ते तथा श्वेत बादल दीखते है जो सूर्य से प्रकाशित होने के कारण चकाचौध उत्पन्न करते है (वायु-जनित अनुदर्शन के कारण इनका हाशिया हलका पीतरजित दिखलाई पडता है, (§ १७३), और इनके अतिरिक्त निलछौवे रग की राशियाँ भी दीखती है। दिक्-सूचक की सभी दिशाओ मे, समुद्र मे २०° से लेकर ३०° तक की कोणीय ऊचाई के आकाश के औसत रग प्रतिबिम्बित होते हुए दीखते है। इस प्रतिबिम्बन मे केवल बडे आकार की राशियाँ ही पहचानी जा सकती है, जबकि सूर्य से प्रकाशित बादल सर्वाधिक प्रमुख दीखते है, और अदीप्तिमान्, विक्षुब्ध समुद्र पर ये चमकीली रोशनी फेकते है।

४. **तूफान**——मै टीलो और मकानो के पीछे ही हूँ, किन्तु अभी से उफनते हुए समुद्र की गर्जना मुझे सुनाई दे रही है। ऊँचे टीले से लहरो के फेन का विहगम दृश्य मुझे दिखाई देता है——समुद्र का दो तिहाई से अधिक भाग उबलती हुई झाग से ढका है, लहरो के श्रृग श्वेत दीखते है, जबकि लहरो के दर्मियान की जगह मे धूसर रग की धारियो के जाल से बिछे है। सदा की तरह तरङ्गो के अग्रपार्श्व पश्चिम की ओर, उत्तर तथा दक्षिण की तुलना मे, अधिक अदीप्तिमान् है और इस कारण पश्चिम दिशा का दृश्य अधिक चटकीला और विपर्यास से अधिक परिपूर्ण दीखता है। अशान्त समुद्र मे मन्द प्रकाश के पानी मे से हर तरफ फेनिल लहरे पृथक्-पृथक् उठती हुई दिखलाई पडती है। बहुत दूर, दक्षिण दिशा मे, सूर्य से प्रकाशित एक लकीर स्पष्ट दिखलाई देती है——झागवाली सतह पर चकाचौध उत्पन्न करनेवाले श्वेत प्रकाश की रेखा, जो शुरू मे अत्यन्त सँकरी तथा लम्बी दीखती है और ज्यो-ज्यो यह निकट आती है त्यो-त्यो यह एक विस्तृत क्षेत्र मे फैलती जाती है। बालू का रग उन स्थलो पर अत्यन्त स्पष्ट उभरता है जहाँ झाग मौजूद नही होता, और सूर्य से प्रकाशित समुद्र गहरे शेड के बादलो का

प्रतिबिम्बन करता है। प्रकाश की इस प्रकार की व्यवस्था मे, नीचे से परिक्षेपित हो कर वापस आने वाला प्रकाश यथासम्भव प्रबलतम होता है—इसलिए भी यह और अधिक प्रबल होता है कि उफनती हुई लहरे रेत की ढेर-सी राशि को मथ देती है जो पानी मे उतराती रहती है। कुछ भागो मे आकाश अत्यन्त गहरे शेड का होता है, और कुछ भागो मे अपेक्षाकृत अधिक प्रकाशमान् और कुछ खित्ते नीले रग के भी होते है। समुद्र के स्थानान्तरित प्रतिबिम्बन अभी भी पहचाने जा सकते है यद्यपि केवल बहुत ही अस्पष्ट तौर पर। प्रमुख दृष्टि-अनुभूति तो पानी के झाग की होती है।

वायु और बादलो की हर सम्भव दशा मे समुद्र पर प्रकाश और वर्ण का अध्ययन करिए।

पथरीले तथा रेतीले समुद्रतट की रग-आभा की तुलना कीजिए। स्नान करते समय भी समुद्र के रग की जॉच कीजिए। लहरो को समुद्र की ही दिशा मे नही बल्कि तट की दिशा मे देखिए। स्नान करनेवाले अन्य व्यक्तियो की छाया देखिए और स्वय अपनी भी। जल-दूरबीन का उपयोग कीजिए।

यदि बन्दरगाह के किसी प्लैटफार्म पर टहलने का अवसर मिले, तो वहाँ जाकर दो प्लैटफार्म के बीच के समुद्र की तुलना बाहर के खुले समुद्र के साथ कीजिए। आकाश की दशा तो समान ही रहती है, अन्तर, समुद्र की सतह के उद्वेलन तथा उसके ढवेलेपन के कारण उत्पन्न होता है।

समुद्र की सतह की सामान्य दीप्ति की तुलना सन्ध्या को देर मे, तथा रात्रि मे कीजिए, यह समय इसके लिए बढिया रहता है क्योकि रगो की विभिन्नता के कारण व्यवधान उपस्थित नही होने पाता तथा अपेक्षाकृत नन्हे ब्योरे हमारा ध्यान बँटा नही पाते।

विपर्यास घटना के प्रति सावधान रहिए। आकाश तथा समुद्र के विभिन्न भागो की तुलना करने के लिए एक नन्हे से दर्पण का इस्तेमाल करना लाभप्रद होगा (§१७६)। तुलना किये जाने वाले दोनो क्षेत्रो A तथा B के दर्मियान अपना हाथ या अन्य काई अदीप्तिमान् वस्तु रखिए, इस प्रकार A तथा B दोनो एक क्षेत्र के हाशिये पर देखे जा सकेगे। नाइग्रोमीटर का उपयोग करिए।

कभी भी बादलो की छाया और उनके प्रतिबिम्ब के बीच धोखा न खाइए, ये पूर्णतया भिन्न स्थानो पर पडते है। आकाश मे जब अलग-अलग बादल मौजूद होते है, तब समुद्र पर प्रकाशदीप्ति का वितरण प्रतिबिम्बन और छाया के सम्मिश्रण पर आश्रित होता है।

२१२. जहाज पर से देखे जाने पर समुद्र का रग

समुद्र तट से दीखने वाले दृश्य की तुलना मे, इस दशा मे एक बडा अन्तर है, ऊँची लहरो का अनुपस्थित होना। इस कारण प्रेक्षक के गिर्द समूचा दृश्य बहुत अधिक समित[1] बन जाता है। किन्तु यह समिति हवा की वजह से बिगड जाती है जो लहरो को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है, जहाज के धुएँ की वजह से, जो एक गहरे रग के बादल जैसा प्रभाव डालता है, तथा जहाज के पृष्ठदण्ड[2] से उत्पन्न होने वाले झाग की वजह से, तथा सूर्य की वजह से भी।

गहराई से वापस लौटने वाले प्रकाश के रग का प्रेक्षण सर्वोत्तम तरीके पर जहाज के पीछे तथा उसके निकट किया जा सकता है, क्योकि वहॉ पर हवा के बादल निरन्तर नीचे की ओर भागते रहते है और तब ये धीरे-धीरे ऊपर उठते है। इन स्थानो पर एक सुन्दर हरा-नीला रग स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, वैसा ही रग जैसा जहाज के गिर्द मॅडराने वाले सूँसो के सफेद रगवाले उदर से परावर्त्तित होता दिखलाई पडता है, या पानी मे गिरने वाले श्वेत रग के पत्थरो से परावर्त्तित होने वाले रग जैसा। रग का यह शेड प्रत्येक महासागर मे दिखलाई देता है, समुद्र का रग समष्टि रूप से चाहे नीला-आसमानी हो या हरा। यह पानी के यथार्थ अवशोषण द्वारा पीले, नारङ्गी तथा लाल रग के प्रकाश अवयवो के अपहरण के कारण उत्पन्न होता है, बैगनी किरणे प्रेक्षक से दूर परिक्षेपित हो जाती है, अत केवल हरा अवयव बचा रह जाता है जो यह विशिष्ट रग प्रदान करता है। वे भाग जहॉ उफनती हुई हरी राशि मे फेन की मात्रा कम होती है, अधिकाश एक प्रकार के नील-लोहित वर्ण के होते है जो हरे रग का अनुपूरक होता है और जिसे हम मानसिक विपर्यास का रग मान सकते है (§ ९५)।

बन्दरगाहो के निकट या बडी नदियो के मुहानो के उथले समुद्र का पानी अत्यन्त गँदला होता है। इस कारण प्रकाश की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा नीचे से परिक्षेपित होकर वापस लौटती है, अत यहॉ परिस्थितियॉ, कुछ हद तक वैसी ही होती है जैसी जहाज के पीछे उठने वाले हवा के बबूलो की राशि मे से देखने के समय। हरे रग की प्रधानता होती है, कदाचित् इसका कारण यह है कि नदी का पानी समुद्र मे ह्यूमिक अम्ल तथा फेरिक यौगिक ले आता है (§ २०७), उनका पीत वर्ण वाला अवशोषण पानी के नीले-हरे रग पर अध्यारोपित हो जाता है। इस किस्म के उथले हरे समुद्र

1 Symmetrical 2 Keel

पर शान्त दिनो मे बादलो की छाया शानदार नील-लोहित-बैगनी रग की उभरती है (§२१६)।

थोडी गहराई पर स्थित सफेद वस्तुओ द्वारा प्रदर्शित 'जल-वर्ण' आम तौर पर गहरे समुद्र के 'यथार्थ रग' से भिन्न होता है। इसकी छानवीन करने के लिए परावर्तित प्रकाश का परिहार करना आवश्यक है, या तो उदाहरण स्वरूप, लहर के अग्र भाग की ओर देखे या फिर § २०९ मे वतलायी गयी किसी एक विधि का अनुसरण करे। गहरे समुद्र के इस 'यथार्थ रग' या 'निज के रग' मे स्पष्ट अन्तर होते है जो इस बात पर निर्भर करते है कि किस समुद्र पर हम यात्रा कर रहे है, इसका प्रेक्षण, वहुत अच्छी तरह, इग्लैण्ड से आस्ट्रेलिया की समुद्रयात्रा मे किया जा सकता है। सामान्यत रगो का वितरण-क्रम निम्नलिखित मिलता है—

जैतूनी हरा	उत्तरी अक्षाश ४०° से उत्तर।
नील रग	उत्तरी अक्षाश ४०° और ३०° के दर्मियान।
पार समुद्रिक रग (अल्ट्रामैरीन)	उत्तरी अक्षाश ३०° से दक्षिण।

कभी-कभी ऐसा होता है कि जैतूनी हरे रग के छिट-फुट प्रदेश निम्न अक्षाशो तक पहुँच जाते है। इस बात का पता लगाना उचित होगा कि किसी विशेष स्थान पर यह हरा रग ऋतुओ के अनुसार वदलता है या नही, क्योकि इसके पक्ष मे कतिपय सकेत मिल भी चुके है। कुछेक गहरे समुद्रो के हरे रग की सन्तोपजनक व्याख्या अभी तक नही की जा सकी है। प्रेक्षणो से पता चला है कि इन समुद्रो के पानी मे तैरते हुए जर्रे भारी मात्रा मे पाये जाते है, किन्तु जैसा कि गणना से पता चलता है, पानी द्वारा सामान्य अवशोषण तथा बडे आकार के जर्रो द्वारा होनेवाला परिक्षेपण, परस्पर मिलकर गहरे नीले से लेकर हलके नीले तक, हर तरह के शेड उत्पन्न कर सकते है, किन्तु हरे रग का समाधान कभी भी इससे नही हो सकता। इस कारण कुछ लोग इसे द्विकोषीय 'अल्जीआ', तथा ऐसे पक्षियो के बीट के कारण उत्पन्न हुआ मानते है जो 'अल्जीआ' खाते है, अन्य लोग इसे परिक्षेपण करने वाले कणो के पीले रग के कारण उत्पन्न हुआ मानते है, जो, मिसाल के तौर पर, पीली रेत के कण हो सकते है। सच्चाई जो कुछ भी हो, वर्ष की ऋतुओ के प्रभाव के सम्वन्ध मे किये गये प्रेक्षण निश्चित रूप से इस बात की ओर इङ्गित करते है कि इस रग की उत्पत्ति कार्बनिक पदार्थो से होती है।

कुछ दुर्लभ अवस्थाएँ मिलती है जब समुद्र-जल दूधिया धवल दीखता है। स्पष्ट है कि सतह के निकट तैरते हुए जर्रो की [illegible] ऊपर

की तहो मे परिक्षेपण करते है और यह परिक्षेपण अवशोषण पर पूर्णत हावी हो जाता है।

२१३ झीलो का रग

पर्वतीय दृश्यो मे झील के रग विपुल सौन्दर्य के स्रोत होते है। उनकी गहराई प्राय इतनी काफी होती है कि पेदे की जमीन के प्रभाव का शमन हो जाता है। अत इस दृष्टि से ये समुद्र के सदृश होती है। फिर भी समुद्र से ये इस माने मे भिन्न होती है कि ये अपेक्षाकृत बहुत अधिक शान्त होती है और इसका कारण है उनकी सतह का बहुत छोटा होना तथा किनारे के पहाडो की वजह से हवा के वेग से उनका सुरक्षित रहना। अत झील की सतह से होने वाला नियमित परावर्त्तन, समुद्र के मुकाबले मे, अधिक महत्त्वपूर्ण योग देता है, सूर्यास्त के रगो का प्रतिबिम्बन उतना बढिया अन्यत्र कही नही होता जितना झील मे, और निश्चय ही पर्वतीय झीलो के पानी की विविध रग-आभा अशत तटभूमि के प्रतिबिम्बन के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु तटभूमि यदि ऊँची तथा अन्धकारपूर्ण हुई तो सतह के प्रतिबिम्बन का लोप हो जाता है और इसके बजाय झील के विस्तृत क्षेत्र उस प्रकाश का रग प्रदर्शित करते है जो लगभग लम्बवत् दिशा मे पानी मे प्रविष्ट होने के उपरान्त पुन परिक्षेपित होकर वापस आता है। § २०९ मे बतलायी गयी विधियो का उपयोग करके इन 'व्यक्तिगत रगो' के बारे मे कुछ जानकारी हासिल की जा सकती है। हर झील के लिए ये रग भिन्न होते है। और उनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—(१) विशुद्ध नीला, (२) हरा, (३) पीत-हरा, (४) पीत-बादामी।

प्रयोगशालाओ के सूक्ष्म परीक्षण से पता चलता है कि 'नीले' रग की झील का पानी लगभग पूर्णत शुद्ध होता है तथा इसका यह रग पानी मे स्पेक्ट्रम के नारङ्गी तथा लाल अवयवो के अवशोषण के कारण उत्पन्न होता है। द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ वर्ग के रगो की उत्पत्ति का समाधान पानी मे मौजूद लौह-यौगिको तथा ह्यूमिक अम्ल की उत्तरोत्तर बढती हुई मात्रा तथा बादामी रग के कणो द्वारा होने वाले परिक्षेपण से हो जाता है (§ २०७)।

अक्सर छोटी झीलो का हरा रग उनके अन्दर भारी मात्रा मे उगने वाले सूक्ष्म आकार के हरे अल्जीआ के कारण उत्पन्न होता है, प्राय जाडे मे भी, जबकि वृक्षो की पत्तियाँ झड चुकी होती है और सभी कुछ बर्फ से ढका होता है, ये झीले स्पष्ट रूप से हरे रग की दीखती है।

लाल रग सूक्ष्म आकार के अन्य जीवो द्वारा उत्पन्न होते है, जैसे बेगिआटोआ,

आसिलैरिया रुबेस्सेन्स, स्टेण्टर इग्नेयस, डाफ्निया प्यूलेक्स, यूग्लेना सैन्यूनिआ या पेरिडिनिया।

ध्रुवण के लिए देखिए § २१४।

२१४. पानी के रंग का 'निकल' द्वारा प्रेक्षण[1]

'निकल', जैसा कि हमे पता है, केवल उन्ही किरणो को अपने मे से गुजरने देता है जिनकी कम्पन-दिशा 'निकल' के लघु कर्ण के समानान्तर होती है। चूँकि पानी से परावर्तित होने वाले प्रकाश मे कम्पन मुख्यत क्षैतिज दिशा मे होते है, अत निकल को इस तरह रखे कि इसका लघुकर्ण ऊर्ध्व दिशा मे हो, तो हम इस परावर्तित प्रकाश की चमक कम कर सकते है, और यदि ऊर्ध्व दिशा के साथ ६५° का कोण वनानेवाली दिशा मे प्रेक्षण करे, तो चमक और भी कम हो जाती है (पानी के लिए ध्रुवक कोण का मान ६५° है)।' हलकी वर्षा के बाद सडक पर पडे पानी के छोटे-से गड्ढे के लिए यह प्रयोग कीजिए। इससे लगभग ५ गज की दूरी पर खडे होइए, और 'निकल' को इस तरह पकडिए कि इसका लघु कर्ण ऊर्ध्व दिशा मे हो। आप आश्चर्यजनक प्रभाव पायेगे, क्योकि अब आप गड्ढे की तली लगभग इतनी अच्छी तरह देख सकते है मानो वहाँ पानी कत्तई हो ही नही। निकल को बारी-बारी से क्षैतिज तथा ऊर्ध्व तल मे घुमाइए, आप देखेंगे कि पानी का गड्ढा क्रमश छोटा और बडा होता प्रतीत होता है। 'निकल' सामान्यत गीले समुद्रतट, सेवार, आग्नेय चट्टानो, भीगी सडक तथा रगीन सतह, और साराश यह कि हर ऐसी वस्तु के रग-सौष्ठव मे, जो दृश्यक्षेत्र मे चमकती है, अभिवृद्धि कर देता है। कारण यह है कि सतह से परावर्तित प्रकाश के उस अश का यह अपहरण कर लेता है जिसके कारण वस्तु के निज के रग मे श्वेत का सम्मिश्रण हुआ करता है।

शान्त समुद्र के धूप वाले भाग, तथा बादलो के छाया वाले भाग, के बीच का विपर्यास, ऊर्ध्व कम्पन की स्थिति मे रखे 'निकल' द्वारा तीव्रतर हो जाता है। इस दशा मे सतह से परावर्तित होने वाली किरणो का शमन हो जाता है,अत परिक्षेपित प्रकाश के अन्तर अधिक स्पष्टता के साथ प्रगट होते है।

'निकल' समुद्र के तेल से ढके भाग तथा शेप भाग के वीच भी विपर्यास की अभि-वृद्धि करता है (§ २११), कदाचित् इसका कारण यह है कि तरगो पर, स्निग्ध सतहो

1 E O Hulburt, J O S A, 24, 35, 1934 इस तरह के प्रेक्षण पोलरायड की मदद से भी किये जा सकते है, किन्तु इस उपकरण मे स्वय अपना रग भी मौजूद होता है जो सही रगों के प्रेक्षण मे व्यवधान डालता है।

के मुकाबले मे, विभिन्न कोण पर परावर्त्तन होता है या फिर इस कारण कि परावत्तन द्वारा होने वाले ध्रुवण मे तेल की परत द्वारा व्यवधान उपस्थित हो जाता है।

अब हवा चलती है तो 'निकल' का प्रभाव विशेष स्पष्ट होता है। निकल के लघु कर्ण को ऊर्ध्व दिशा मे रखकर उसमे से, उमडती हुई लहरो को, देखिए, लघुकर्ण को क्षैतिज दिशा मे रखने के मुकाबले मे अब समुद्र अधिक अशान्त प्रतीत होता है। क्योकि ऊर्ध्व स्थिति मे 'निकल' परावर्त्तित प्रकाश को रोक देता है, अत समुद्र की सतह अधिक अदीप्तिमान् हो जाती है जबकि लहरो के फेन की धवल चमक पूर्ववत् बनी रहती है, अत अब यह अधिक स्पष्ट प्रतीत होती है।

'निकल' को सही स्थिति मे व्यवस्थित करे तो अक्सर क्षितिज अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। सूर्य की दिशा के समकोण देखे तो 'निकल' को ऊर्ध्व स्थिति मे रखने पर समुद्र निश्चित रूप से अधिक अदीप्तिमान् हो जाता है और आकाश अपेक्षाकृत अधिक प्रकाशवान् (§ २११)। इसी कारण इन दिनो सेक्सटैण्ट मे कभी-कभी 'निकल' फिट किये जाते है।

निम्नलिखित प्रयोग उष्ण कटिबध के गहरे समुद्रो से परिक्षेपित प्रकाश के ध्रुवण से सम्बन्ध रखता है—इन समुद्रो का पानी स्वच्छ होता है।[1] कल्पना कीजिए कि प्रयोग ऐसे वक्त किया जा रहा है जब सूर्य आकाश मे ऊँचाई पर स्थित है और पानी की सतह शान्त है। सूर्य की ओर पीठ करके खडे हो जाइए और पानी की ओर लगभग ध्रुवक-कोण की दिशा मे निकल मे से देखिए जिसका लघुकर्ण ऊर्ध्व दिशा मे स्थित हो। परावर्त्तित प्रकाश रुक जाता है और आप प्रकाश की मनोरम नीली चमक को देख सकते है जो परिक्षेपण के उपरान्त नीचे से आती है। 'निकल' को इस तरह घुमाइए कि लघुकर्ण क्षैतिज हो जाय, अब समुद्र कम नीला दीखेगा, बनिस्बत उस दशा के, जबकि उसे बिना 'निकल' के देखते।

यह प्रयोग उस वक्त भी कीजिए जब सूर्य थोडी ही ऊँचाई पर हो, इस बार भी 'निकल' को इस तरह पकडिए कि लघुकर्ण ऊर्ध्व स्थिति मे हो, तथा क्षैतिज तल का अपना दिगश बदलिए। सूर्य के रुख तथा उसकी विपरीत दिशा के रग की तुलना विशेष रोचक सिद्ध होती है। सूर्य के रुख गहरा नील वर्ण आप को दिखलाई पडता है क्योकि इस वक्त सूर्य किरणो की समकोण रेखा मे आप देखते है, अत न केवल परावर्त्तित प्रकाश रुक जाता है बल्कि पानी की गहराई से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश भी आँख तक नही पहुँच पाता। सूर्य की उलटी ओर, रग चमकीला नीला होता है क्योकि अब

1 C—V Raman, Proc R Soc 101A, 64,1922

बहुत कुछ सूर्य-किरणो की दिशा मे आप देखते होते है और परिक्षेपित प्रकाश जो आप की ओर वापस आता है ध्रुवित नही होता। ये दोनो प्रयोग सिद्ध करते है कि समुद्र से परिक्षेपित होने वाला प्रकाश बहुत कुछ मात्रा मे ध्रुवित होता है, जैसा कि वायु मे परिक्षेपित होने वाला प्रकाश (§१८०), अत परिक्षेपण अत्यन्त क्षुद्र कणो द्वारा होता है, कदाचित् स्वय पानी के अणुओ द्वारा।

'निकल' का उपयोग करके नीले जल की झील से तथा गहरे बादामी रग की झील से वापस, परिक्षेपित होने वाले विकिरण के लाक्षणिक अन्तर का पता लगाया गया है। इस अन्तर का प्रेक्षण करने के लिए, जल-दूरबीन की सहायता से परावर्त्तित प्रकाश का परिहार करते हुए सूर्य की दिशा मे अवलोकन करते है (§२०९)। 'निकल' से अब पता चलता है कि नीले रग वाली झील मे परिक्षेपण से वापस आने वाले प्रकाश का कम्पन क्षैतिज दिशा मे होता है और ऐसी ही आशा भी की जाती है, जबकि बादामी रग वाली झील के बडे आकार के जर्रे करीब-करीब अध्रुवित प्रकाश ही परिक्षेपित करते है, जिसमे पानी से बाहर आने पर, ऊर्ध्व दिशा वाले कम्पनो का अल्पमात्रा मे बाहुल्य रहता है (बशर्ते जल-दूरबीन के सिरे पर काँच न लगा हो)।

२१५. पानी के रग की जॉच के लिए मापश्रेणी

इसके लिए सामान्यत फोरेल की मापश्रेणी उपयोग मे लायी जाती है। पहले क्यूप्रिक सल्फेट के मणिभो का एक नीला घोल, और पोटैसियम क्रोमेट का एक पीला घोल तैयार कीजिए—

० ५ ग्राम क्यूप्रिक सल्फेट, तथा ५ घ० सेण्टीमीटर अमोनिया पानी मे मिलाकर पानी डालकर १०० घ० सेण्टीमीटर घोल तैयार कर लीजिए।

० ५ ग्राम पोटैसियम क्रोमेट को १०० घ० सेण्टीमीटर पानी मे घोल लीजिए। अब निम्नलिखित सम्मिश्रण तैयार कीजिए—

(i)	१०० नीला + ०	पीला
(ii)	९८ ,, + २	,,
(iii)	९५ ,, + ५	,,
(iv)	९१ ,, + ९	,,
(v)	८६ ,, + १४	,,
(vi)	८० ,, + २०	,,
(vii)	७३ ,, + २७	,,
(viii)	६५ नीला + ३५	पीला
(ix)	५६ नीला + ४४	पीला
(x)	४६ नीला + ५४	,,
(xi)	३५ ,, + ६५	,,
(xii)	२३ ,, + ७७	,,
(xiii)	१० ,, + ९०	,,

प्राय इनसे भी अधिक गहरे बादामी रगो की आवश्यकता पडती है, विशेषतया झीलो के रग की जाँच के लिए। इस आवश्यकता की पूर्त्ति के लिए, निम्नलिखित विधि से बादामी रग का घोल बनाया जा सकता है।

० ५ ग्राम कोबाल्ट सल्फेट+५ घन सेण्टीमीटर अमोनिया+पानी, ताकि घोल का आयतन १०० घ० सेण्टीमीटर हो जाय।

इस घोल को फोरेल के हरे घोल (अवधारण क्रम XI) के साथ निम्नलिखित अनुपातो मे मिलाइए—

(११)	१०० हरा + ० बादामी		(११–७)	७३ हरा + २७ बादामी
(११–२)	९८ हरा + २ बादामी		(११–८)	६५ „ + ३५ „
(११–३)	९५ „ + ५ „		(११–९)	५६ „ + ४४ „
(११–४)	९१ „ + ९ „		(११–१०)	४६ „ + ५६ „
(११–५)	८६ „ + १४ „		(११–११)	३५ „ + ६५ „
(११–६)	८० „ + २० „			

लगभग ½ इच व्यास की परखनली मे ये मिश्रण रखे जा सकते है। इस माप-श्रेणी के इस्तेमाल मे प्रमुख कठिनाई यह मालूम करने की है कि पानी की सतह का कौन-सा स्थल तुलना का आदर्श प्रमाप माना जाय। आम तौर पर पानी के स्वय 'यथार्थ रग' को ही आदर्श प्रमाप मान लेते है (§§ २०९, २१२)।

दोनो मे से कोई भी मापश्रेणी पूर्णत सन्तोषप्रद नही है। एक अन्य तरीका यह है कि ऐसे रजक तैयार करे जो इन रगो से मेल खाएँ और फिर भविष्य मे तुलना करने के लिए इन्हे रख छोडे।

२१६. पानी पर छाया

'. कि जब कभी स्वच्छ जल पर या कुछ हद तक गँदले पानी पर भी, हम छाया का प्रेक्षण करते है तो यह भूमि पर पडने वाली छाया की भाँति धूप मे सामान्य रूप से चमकने वाली सतह की प्रदीप्ति आभा को थोडा घटा भर नही देती, बल्कि यह पूर्णत भिन्न रग का स्थल उपस्थित करती है जो अपनी परावर्त्तन क्षमता के कारण अगणित रग-शेड धारण कर सकता है और कुछ परिस्थितियो मे यह एकदम विलुप्त भी हो सकता है।'—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

पानी के धरातल से आने वाला प्रकाश अशत उस धरातल से प्राप्त होता है

और अशत उसके नीचे से, अत आपतित किरणो को रोक देने पर ये दोनो ही अवयव बदल जाते है।

१ **परावर्त्तित प्रकाश पर छाया का प्रभाव**—'धरातल जव तरङ्गित होता है, तो दर्शक के दोनो ओर एक परिवर्त्ती दूरी तक, और सूर्य और उसके दर्मियान के एक खास कोणीय मान के लिए जो तरङ्गो के आकार और शक्ल पर निर्भर करता है, प्रत्येक तरङ्ग सूर्य का एक छोटा विम्ब उसके लिए प्रतिबिम्बित करती है (देखिए § १४)। इसी कारण अक्सर चकाचौध उत्पन्न करने वाले प्रकाश के विस्तृत क्षेत्र समुद्र पर देखे जाते है। यदि कोई वस्तु सूर्य और इन तरङ्गो के बीच मे आती है तो यह सूर्य को प्रतिबिम्बित करने की उनकी शक्ति का अपहरण कर लेती है, अत. उनकी समस्त दीप्ति का अपहरण हो जाता है। इसीलिए बीच मे आनेवाली वस्तु, ऐसी जगह पर अत्यन्त गाढी छाया डालती है जो ठीक वस्तु की शक्ल की होती है और ठीक वास्तविक छाया वाले स्थल पर ही पडती है' —रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

रस्किन के शब्दो की सत्यता की परख सबसे अच्छी तरह उस वक्त की जा सकती है जबकि तेज हवा वाली रात्रि मे, नहर का पानी (मिसाल के तौर पर) बहुत अधिक उद्वेलित हो रहा हो। नहर के किनारे चलते हुए हम सडक के लैम्प का प्रतिबिम्ब देखते है जो अनियमित तरीके से लुपझुप करते हुए प्रकाशस्तम्भ सरीखा दीखता है और इसके ऊपर लगातार छायाएँ फिलसती-सी रहती है—उदाहरण के लिए, लैम्प और नहर के दर्मियान के वृक्षो की छाया। सर्वाधिक अनुकूल दृष्टिबिन्दु की स्थिति पर ही पहुँचने पर हम पानी पर पडने वाली छाया की उपस्थिति की अनुभूति कर पाते है, जो केवल एक अल्पमान के सान्द्र-कोण[1] के अन्दर से ही दृष्टिगोचर हो पाती है। आलोचको तथा अन्य व्यक्तियो से जो इस विषय मे रुचि रखते थे, रस्किन ने इस प्रश्न पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श किया था कि इस लिहाज से क्या इन्हे हम 'छाया' की सज्ञा भी दे सकते है या नही। निस्सन्देह यह केवल शब्दो का प्रश्न है।

इससे कुछ भिन्न प्रभाव उस वक्त उत्पन्न होना है जव पानी पर चन्द्रमा एक लम्बे प्रकाश-स्तम्भ के रूप मे प्रतिबिम्बित होता है और हम अचानक पानी पर जाती हुई किश्ती की छाया-आकृति को दीप्ति की इस चमकदार पट्टी पर फिसलते हुए देखते हैं। स्वय किश्ती, प्रकाश की पृष्ठभूमि पर एक काले रग की वस्तु-सी प्रतीत होती है,

1 Solid-angle

किन्तु यह अपनी छाया भी हमारी दिशा मे तरङ्गित पानी पर डालती है तथा यहाँ भी उपर्युक्त विवेचन लागू होता है।

२. परिक्षेपित होकर वापस आनेवाले प्रकाश पर छाया का प्रभाव—गँदले पानी पर छाया स्पष्ट अङ्कित होती है, छाया की स्पष्टता की मात्रा पानी के गँदलेपन या उसकी स्वच्छता की प्रत्यक्ष सूचक होती है। हमारे जलमार्गो पर पडने वाली पुलो तथा वृक्षो की छाया पर ध्यान दीजिए। समुद्र-यात्रा मे पानी पर अपनी छाया देखने का प्रयत्न कीजिए। आप इसे केवल उस तरफ देख पायेगे जिधर जहाज ने पानी को उद्वेलित करके उसमे हवा के बबूले मिला दिये है, किन्तु उस ओर नही जिधर समुद्र स्वच्छ और गहरे नीले रग का है। समुद्र की सतह पर बादलो की छाया का प्रेक्षण कीजिए।

छाया इस कारण दृष्टिगोचर होती है कि पानी मे प्रविष्ट करने पर परिक्षेपित होकर जो प्रकाश वापस आता है, उसकी मात्रा सतह के छाया वाले भागो मे अन्य भागो की अपेक्षा कम होती है। इसके प्रतिकूल, सतह से परावर्त्तित होने वाला प्रकाश क्षीण नही होने पाता, अत यह अपेक्षाकृत अधिक प्रमुखता प्राप्त कर लेता है। इससे यह बात समझ मे आती है कि जब आकाश नीले रग का होता है तो क्यो समुद्र पर बादल की छाया अक्सर निलछौवे रग की बनती है, यद्यपि आसपास के हरे रग के विपर्यास के कारण यह रग थोडा नील-लोहित वर्ण के शेड का प्रतीत होने लगता है (§२०९, २११, २१२)। पानी की निर्मलता के अतिरिक्त प्रेक्षण की दिशा भी महत्त्व रखती है। अत्यन्त स्वच्छ पानी मे स्नान करते समय आप को छाया नही दिखाई देगी, तनिक गँदले पानी मे स्नान करते समय आपको केवल अपनी छाया दिखाई पडेगी, अन्य लोगो की नही, किन्तु अत्यन्त गँदले पानी मे आप को सभी स्नान करने वालो की छाया दिखाई पडेगी। ध्यान दीजिए कि नहर के थोडे-बहुत गँदले पानी पर पडने वाली खम्भे की छाया ठीक तरीके पर केवल तभी दिखलाई देती है जब जाकर आप उस धरातल मे खडे हो जो सूर्य और खम्भे से गुजरता है, अर्थात् जब आप आकाश के उस भाग की ओर देखते है जिधर सूर्य है। तब आपको प्रतीत होगा कि मानो एकाएक पानी पर छाया प्रगट हो गयी है। यह उसी तरह की घटना है जसी धुन्ध के सम्बन्ध मे बतलायी गयी थी।

किञ्चित् गँदले पानी पर पडने वाली छायाएँ एक और विशिष्टता प्रदर्शित करती है, **इनके हाशिये रंगीन होते है**। हमारी ओर पडने वाला हाशिया निलछौवे रग का होता है और दूर वाला नारङ्गी वर्ण का होता है। इस घटना का प्रेक्षण प्रत्येक खम्भे, पुल या जहाज की छाया मे किया जा सकता है। पानी मे तैरते हुए धूल के अगणित कणो से

होने वाले परिक्षेपण के कारण ये रग उत्पन्न होते है—इनमे से अनेक कण इतने छोटे होते है कि ये नीली किरणो का परिक्षेपण अपेक्षाकृत अधिक मात्रा मे करते है। अब हम चित्र १५८ मे देखते है कि हमारी ओर के जर्रे एक अँधेरी पृष्ठभूमि के सम्मुख प्रभासित होते दीख पडते है, अत ये हमारी आँख मे निलछौवे रग का प्रकाश भेजते है, जबकि छाया की दूसरी ओर (वह हाशिया जो हमसे दूर पडता है) हम पेदे से आनेवाला (या इर्द-गिर्द के पानी से परिक्षेपित हुआ) प्रकाश देख पाते है—यह प्रकाश नीली किरणो से वञ्चित हुआ रहता है तथा छाया-प्रदेश के अप्रकाशित जर्रो के कारण यह नारङ्गी वर्ण-रञ्जित हो जाता है। इससे प्रगट होता है कि यह घटना उसी किस्म की है जैसी नीले आकाश तथा अस्त होते हुए पीत वर्ण के सूर्य की घटना (§१७२)। हाशिये के विपर्यास वाले दोनो रगो के कारण हमारे नेत्र इसके लिए विशेष सुग्राही हो जाते है।
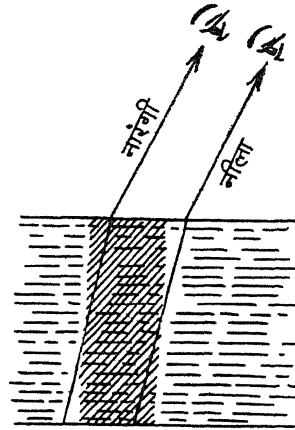
चित्र १५८—गँदले जल पर पड़नेवाली छाया के हाशियो पर रग कैसे प्रगट होते है।

छाया के हाशिये के रगो का प्रेक्षण, हर दृष्टि-बिन्दु से, तथा आपतित प्रकाश और छाया की विभिन्न दिशाओ के लिए कीजिए। इस बात पर भी ध्यान दीजिए कि वनो के झुरमुट मे प्रवेश करने वाली प्रकाश-किरण-शलाका जब स्वच्छ धारा के पानी पर गिरती है तो यह स्पष्ट रूप से निलछौवे रग की होती है, और पेदे पर यह नारङ्गी वर्ण के प्रकाश का धब्बा बनाती है।

२१७. पानी पर बनने वाली हमारी छाया के गिर्द आभामण्डल (आरिएल) (प्लेट XV)

अपने सिर के आकार के चतुर्दिक् रवि-दीप्त जल मे विकेन्द्रित होती हुई रेखाओ की ओर मैने निहारा.

मेरे अथवा अन्य किसी के सिर के आकार से रविदीप्त जल पर विकेन्द्रित होती हुई सुस्पष्ट प्रकाश-रेखाएँ।

वाल्ट ह्विटमैन, 'क्रासिग ब्रुकलिन फेरी' (लीव्ज ऑव ग्रास)

इस मनमोहक घटना का सर्वोत्तम रूप मे अवलोकन उस वक्त किया जा सकता है जब एक पुल से या जहाज के डेक से पानी की अशान्त उत्ताल लहरो पर पडने वाली अपनी छाया को हम देखे। हमारे सिर की छाया से सहस्रो चमकीली तथा काली रेखाएँ चारो ओर अपसृत होती है। यह आभामण्डल (आरिएल) केवल अपने सिर के गिर्द देखा जा सकता है (देखिए § १६८)। किरणे सब की सब बिलकुल ठीक एक ही बिन्दु पर केन्द्रित नही होती है, बल्कि लगभग उसके गिर्द मे एकत्र होती है। एक और विलक्षण बात यह है कि छाया के गिर्द प्रकाशित भाग की सामान्य दीप्ति बढ जाती है।

इस तरह की कोई भी घटना शान्त पानी पर या सम तरङ्गो वाली सतह पर नही दिखलाई देती है, यह भली-भाँति केवल तभी देखी जा सकती है जब सतह पर पानी की छोटी-छोटी अव्यवस्थित ढेरियाँ-सी उठ रही हो। पानी को थोडा-बहुत गँदला अवश्य होना चाहिए, तट से जितनी ही अधिक दूरी पर होगे या खुले समुद्र मे, आभामण्डल उतना ही अधिक निस्तेज दीखेगा।[1]

व्याख्या इस प्रकार है—पानी की सतह की प्रत्येक उठान अपने पीछे प्रकाश या अन्धकार की एक लकीर फेकती है, ये सभी लकीरे सूर्य और आँख को मिलाने वाली रेखा के समानान्तर जाती है, अत अनुदर्शन के कारण हम उन्हे प्रति-सूर्य बिन्दु पर मिलते हुए देखते है—अर्थात् अपने सिर के छाया-बिम्ब पर (§ १९१)।

कुछ अवसरो पर ये लकीरे इतनी स्पष्ट होती है कि प्रतिसूर्य बिन्दु से काफी बडी कोणीय दूरी तक इन्हे देखा जा सकता है। किन्तु आम तौर पर प्रति-सूर्यबिन्दु पर ये सबसे अधिक स्पष्ट होती है, क्योकि इस दिशा मे हमारी दृष्टि या तो भलीभाँति पानी मे से या छाया मे पडने वाले पानी मे से, होकर एक लम्बी दूरी तय करती है। प्रकाशित प्रति-सूर्यबिन्दु के इर्द-गिर्द की सामान्य प्रकाश-तीव्रता की वृद्धि का कारण कदाचित् यह है कि कणो द्वारा होने वाला परिक्षेपण, किरणो के पीछे की दिशा मे, आडी दिशा की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है (§ १९१)।

इस किस्म का एक और आभामण्डल उस वक्त देखा जा सकता है जब हम किसी ऐसे एकाकी वृक्ष के साये मे खडे होते है जिसकी फैली हुई शाखाएँ नीचे पानी पर रोशनी और साया के धब्बे डालती है। इस दशा मे पानी मे प्रविष्ट होने वाली किरणे उसी प्रकार का प्रकाशीय प्रभाव उत्पन्न करती है जैसा सतह की विषमता से उत्पन्न होता है।

इस बात का अनुभव करना रोचक होगा कि वास्तव मे प्रकाश-किरणे सूर्य्य और

1 C V Raman, loc cit

नेत्र को मिलाने वाली रेखा के समानान्तर बिलकुल ही नही जाती क्योकि वर्त्तन के फल-स्वरूप ये अल्प कोण मान पर विचलित हो जाती है। किन्तु इसके प्रतिकूल हमारी ऑख पानी के अन्दर इनके गमन-पथ का अवलोकन करती है जो वर्त्तन के कारण विचलित हो चुका होता है, अत इन सबके बावजूद, पानी मे गमन करने वाली किरण-शलाका का भाग हवा मे गमन करने वाली शलाका की सीध की दिशा मे ही दिखलाई पड़ता है।

२१८. जहाज के पार्श्व पर जल-रेखा की स्थिति

'काष्ठ पर जलरेखा के रूप को बदलने मे तीन परिस्थितियाँ योग देती है—जब लहर पतली होती है, तब पानी मे से होकर लकडी का रग थोडा दिखाई देता है, जब लहर स्निग्ध होती है तो लकडी का रग इसमे से कुछ-कुछ प्रतिबिम्बित होता है, और जब लहर विच्छिन्न होती है तो इसका झाग, लकडी पर जल की स्पर्श रेखा को बहुत कुछ अस्पष्ट तथा विकृत बना देता है'—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

तथापि यह कहना भी उतना ही तर्कसगत हो सकता है कि ठीक उन्ही कारणो से जल-रेखा दृष्टिगोचर हो पाती है! स्थिर दशा मे, या समुद्र पर जाते हुए जहाज़ के लिए देखिए कि वे कौन-सी प्रकाशीय घटनाएँ है जिनकी सहायता से हम पता लगाते है कि पार्श्व पर पानी कहाँ से शुरू होता है—अर्थात् जलरेखा की स्थिति कहाँ पर है।

२१९ जल-प्रपात का रग

प्रकाश यदि अनुकूल हुआ तो चट्टान पर गिरते हुए पानी का हरा रग भली-भाँति देखा जा सकता है। यह एक अद्भुत बात है कि यत्र-तत्र पानी से बाहर निकली हुई चट्टाने, जो दरअसल काली या भूरी होती है, अब लाल रग का पुट लिये हुए दिखलाई पडती है, प्रगटत इसे विपर्यास-रग मान कर ही इस घटना का समाधान किया जाना चाहिए (§ ९५)।

इस घटना का अत्यन्त स्पष्ट रूप मे प्रेक्षण उन स्थानो पर किया जा सकता है जहाँ पानी मे झाग बनता है और छीटे उठते है। अब यह विदित है कि प्रयोगशाला मे विपर्यास-रग अधिक चटकीले उस दशा मे उभरते है जब क्षेत्रो के बीच की सीमारेखा को अस्पष्ट बना दिया जाय। विचाराधीन घटना को प्रदर्शित करने के लिए हम हरी पृष्ठभूमि पर भूरे रग के कागज की एक पट्टी रखते है जिनके ऊपर टिशू (लगभग पारदर्शी) कागज का आवरण लगा हो, तब आप पायेगे कि इन आवरण मे से भूरे वर्ण का ललछौवा विपर्यास-रग कितना बढिया दिखलाई पडता है (फ्लोरकन्ट्रास्ट)।

यह रञ्चमात्र भी असम्भाव्य नही जान पडता कि प्रकृति मे पानी का पारभासक धुन्ध भी इसी प्रकार का कार्य करता है।

२१९ (क) ठोस वस्तुओ के रग

झील, नदियो तथा समुद्र के रगो का अध्ययन करने मे हमने देखा कि किस प्रकार प्रकाश अशत सतह से परावर्त्तित होता है जबकि इसका एक भाग गहराई मे प्रविष्ट करके पानी मे तैरते हुए जर्रो से परिक्षेपित हो जाता है। यही बात ठोस वस्तुओ के लिए भी लागू होती है जिससे ये प्रकाशित होकर दृष्टिगोचर होती है। चट्टानो, पत्थरो, वृक्ष के तनो तथा मिट्टी आदि वस्तुओ मे, जो 'अपारदर्शी' कहे जाते है, हम उनकी सतह की एक मिलीमीटर से भी कम मोटाई की तह मे प्रकाश की उन तमाम घटनाओ को मौजूद पाते है जो पानी की कई मीटर मोटी तह मे पायी जाती है, इस दशा मे परिक्षेपण तथा अवशोपण अपेक्षाकृत बहुत अधिक प्रबल होते है किन्तु सिद्धान्त क्रियाविधि वैसी ही होती है जैसी पानी मे। ठोस वस्तु की विशिष्ट प्रकृति उसकी सतह द्वारा निर्धारित होती है जो खुरदरेपन या चिकनेपन की हर किस्म की ग्रेड धारण कर सकती है, अत हमे दशा के अनुसार नियमित परावर्त्तन, अनियमित परावर्त्तन या परिक्षेपण पर विचार करना होता है।

भू-दृश्य मे नियमित रूप से परावर्त्तन करने वाली वस्तुऍ कम ही मिलती है। चिकनी सतहे बर्फ पर, कॉच के घेरे वाले वाटिकागृह मे, धातु की चीजो पर तथा प्रकाश से जगमगाती वृक्ष-टहनियो पर मिलती है। ऐसे देशो मे जहॉ स्लेट या चमकीले खपरैल काम मे लाये जाते है, हम दूरस्थ नगर की छतो से सूर्य के प्रकाश का चकाचौध उत्पन्न करने वाला प्रतिबिम्बिन देख सकते है——दूर के घरो की खिडकियो के कॉच अस्त होते हुए सूर्य की चमकीली ज्योति परावर्त्तित करते है। ताजे गिरे हुए तुषार के नन्हे क्रिस्टल उस वक्त तेज प्रकाश से अप्रत्याशित तरीके से जगमगाते है जबकि हम अपना सिर हिलाते-डुलाते है——यह इस बात पर निर्भर करता है कि सूर्य की आपाती किरणो के लिहाज से उनकी आकस्मिक स्थिति कैसी बैठती है।

अनियमित परावर्त्तन का एक बढिया उदाहरण उस वक्त हमे मिलता है जब वर्षा से भीगी हुई सडक की पटरी पर हम दृष्टि डालते है। सडक के लैम्प का प्रतिबिम्ब हमे लम्बे खिचे हुए प्रकाशस्तम्भ के रूप मे मिलता है जैसा कि तरङ्गित पानी की सतह से बन सकता है——यह प्रभाव उस वक्त विशेष रूप से स्पष्ट होता है जब सडक पर हम तिरछी दिशा से निगाह डालते है। सतह से परावर्त्तन तथा भीतर से परिक्षेपण,

दोनो गुण प्रदर्शित करने वाली वस्तुओ का एक विचित्र गुण यह है कि इर्द-गिर्द की चीजो का परार्वत्तित प्रतिबिम्ब, तथा उनकी छाया, दोनो को पृथक्-पृथक् किन्तु एक साथ ही वे प्रदर्शित करती है। समुद्र पर बादलो का अवलोकन करते समय यह बात हम देख भी चुके है—यही चीज एक छोटे पैमाने पर उस वक्त देखी जा सकती है जब समुद्रतट की नम भूमि पर धूप मे पक्षिगण किलोल करते होते है।

किन्तु अधिकाश प्राकृतिक वस्तुओ की सतह खुरदरी होती है, इनकी सतहे नन्ही-नन्ही खुरदराहट से भरी होती है, अत ये अब परावर्त्तन नही कर पाती वल्कि ये प्रकाश का परिक्षेपण करती है। खेत, रेत के मैदान या तुषार के ढेर पर पड़ने वाली सूर्य-किरणो की शलाका इनकी सतहो को इस प्रकार आलोकित करती है कि ये वस्तुएँ हर दिशा से दृष्टिगोचर होती है। किन्तु और अधिक ध्यानपूर्वक देखने पर हम पाते है कि ठोस वस्तु से होने वाला परिक्षेपण दिशा के अनुसार पर्याप्त मात्रा मे बदलता है। उदाहरण के लिए,सन्ध्या के उपरान्त देखिए कि सडक के प्रत्येक लैम्प के सामने की भूमि कितनी अच्छी तरह प्रकाशित दिखलाई पडती है, किन्तु लैम्प के पीछे सब कुछ अँधेरा ही दीखता है, दूर से जहाँ तक सम्भव हो, सही अनुमान लगाइए कि जमीन पर गिरने वाला लैम्प का प्रकाश किस बिन्दु पर सबसे अधिक तेज है, नजदीक आने पर आप पायेगे कि अधिक्तम प्रकाश का बिन्दु जो आपने चुना था वह लैम्प के ठीक नीचे न स्थित होकर काफी मात्रा मे आप की ओर हटा हुआ है। इससे हम यह निष्कर्ष निकालते है कि सडक की सतह से सामने की ओर प्रकाश का परिक्षेपण पीछे की ओर की अपेक्षा अधिक होता है, यह अनियमित परावर्त्तन तथा समदिशा के परिक्षेपण के बीच के सक्रमण का एक उदाहरण है।

परिक्षेपण की असमिति के अध्ययन करन का एक और तरीका यह है कि सूर्य के सामने की ओर के भू-दृश्य तथा उसके पीछे की ओर के भू-दृश्य की तुलना करे (§ २२३)।

चूँकि भूदृश्य मे ऐसी सतहो की बहुतायत होती है जो विसृत परिक्षेपण करती है, अत हमारी प्रमुख धारणा दीप्त तथा अदीप्त भागो के बीच के सक्रमण के मृदु होने की बनती है, एक रग से दूसरे रग के दर्मियान का सक्रमण भी मृदु ही दिखलाई पडता है। पानी अथवा अन्य चमकीली सतहो से होने वाले स्थानीय परावर्त्तन के कारण यत्र-तत्र तेज प्रकाश की झलक मिलती है जो दृश्य के [illegible] कर देती है।

२१९ (ख). ऐसी सतह से प्रकाश का परावर्तन जो नन्हे क्रिस्टलो से ढकी हो

जब एक लम्बे काल तक बर्फ पडने के बाद अचानक उसका पिघलना शुरू होता है तो वृक्षो तथा मकानो पर नन्हे-नन्हे अनगिनत बर्फ-मणिभो की तह बन जाती है।

मणिभो की यह तह प्रकाश का अत्यन्त असाधारण तथा अद्भुत तरीके से परिक्षेपण करती है, सीधे ऊर्ध्वदिशा से देखने पर ये मणिभ (क्रिस्टल) मुश्किल से नजर आते है, किन्तु जितनी ही अधिक तिरछी दिशा से आप देखे, उतनी ही अधिक दीप्तिमान् वह सतह दिखलाई पडती है, यहा तक कि स्पर्शी रेखा की दिशा से अवलोकन करने पर सतह चाँदी की तरह चमकने लगती है।

प्रकाश्यत प्रत्येक मणिभ प्रकाश का परिक्षेपण करके उसे करीब-करीब हर दिशा मे फेकता है जिस तरह एक नन्हॉ-सा लैम्प हर दिशा मे प्रकाश बिखेरता है। हमारी दृष्टि-रेखा जितनी ही अधिक तिरछी दिशा मे अवस्थित होती है, उतनी ही अधिक सख्या, इन प्रकाश-स्रोतो की एक दिये हुए सान्द्रकोण के भीतर पडती है। अत. अभिलम्ब[1] से कोण I बनाने वाली दिशा से अवलोकन करने पर प्रकाशदीप्ति Sec I के अनुपात मे उस वक्त तक बढती जायगी जबतक कि ये मणिभ एक दूसरे को ढकने न लग जायॅ। इस दशा मे परिक्षेपण की विशिष्टता ठीक इस कारण उत्पन्न होती है कि ये मणिभ एक दूसरे से दूर-दूर स्थित होते है, अत सीमान्तक दीप्ति केवल अत्यन्त तिर्यक् दिशा मे प्राप्त होती है। इसी प्रकार का प्रेक्षण कभी-कभी उस वक्त प्राप्त होता है जब कोई चमकीली सतह पानी की नन्ही-नन्ही बूँदो से ढकी हो।

२२० हरी पत्तियो का रग

वृक्ष, घास के मैदान, खेत और अलग-अलग पत्तियाँ भी असख्य किस्मो के हरे रग की विपुलता प्रदर्शित करती है। घटना की प्रचुरता मे किसी तरह के व्यवस्थाक्रम का पता लगाने के लिए हम किसी साधारण वृक्ष (बलूत, देवदार, बीच आदि) की एक पत्ती से जाँच का आरम्भ करते है ताकि भूदृश्य के रग-समूह के निर्माण का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त कर सके।

वृक्ष पर लगी पत्ती सामान्यत एक पार्श्व पर दूसरे की अपेक्षा बहुत अधिक मात्रा मे प्रकाशित होती है, और उसका रग मुख्यत इस बात से निर्धारित होता है कि हम पत्ती की उस सतह को देख रहे है जिस पर प्रकाश सीधे ही पडता है या कि दूसरी सतह को। प्रथम दशा मे हम तक पहुॅचने वाला प्रकाश अशत पत्ती की सतह से परावर्त्तित होता है, अत रग हलका हो जाता है, किन्तु इसमे भूरेपन का पुट आ जाता है। और फिर पत्ती पर जब सामने की ओर से (दर्शक के लिहाज से) प्रकाश पडता है, तब हरे रग के साथ निलछौवे वर्ण का पुट मिल जाता है और रोशनी जब पीछे की ओर से

1 Normal

पड़ती है तब उसमें पीत वर्ण का पुट मिल जाता है। यह हमें परिक्षेपित प्रकाश सम्बन्धी प्रेक्षण का स्मरण दिलाता है (§ १७३ क)। और वस्तुतः पत्ती में, यद्यपि यह मोटाई में १ मिलीमीटर से भी बहुत कम होती हैं, परावर्त्तन, अवशोषण तथा परिक्षेपण की क्रियाएँ उसी प्रकार होती हैं जिस प्रकार सैकड़ों फुट गहरे महासागर में। अवशोषण यहाँ क्लोरोफिल की कणिकाओं द्वारा होता है; परिक्षेपण कदाचित् उन अनगिनत कणिकाओं द्वारा होता है जो कोषों में प्रचुरता से पायी जाती हैं, या संभवतः पत्ती के धरातल की विषमता के कारण यह परिक्षेपण सम्पन्न होता है।

साया वाले स्थल से मटमैली पृष्ठभूमि के सम्मुख देखने पर सूर्य की तेज रोशनी में घास का मरकत मणि सरीखा हरा रंग विशेष मनमोहक लगता है (चित्र १५९, a)
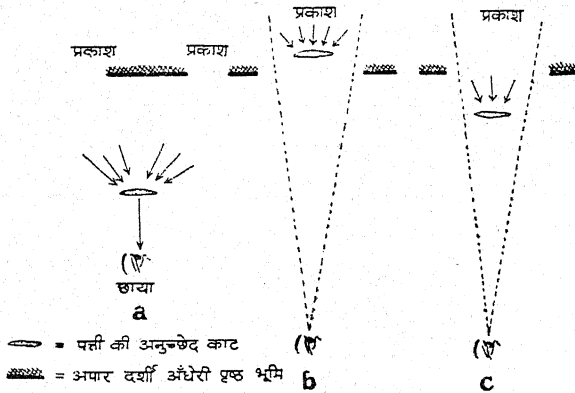
चित्र १५९—**विभिन्न प्रकाश व्यवस्थाओं में हरी पत्तियाँ।**

ऐसा प्रतीत होता है मानो घास की एक-एक पत्ती अक्षरशः हरे वर्ण की अन्तर्ज्योति से प्रज्वलित हो रही है। बगल से इस पर गिरनेवाले आपतित प्रकाश की राशि लाखों सूक्ष्म कणिकाओं द्वारा परिक्षेपित होती है; अतः हर पत्ती तिरछी दिशा में हमारी आँखों की ओर प्रकाश की बौछार फेंकती है।

घास के सामने से, तथा पीछे से प्रकाशित होने पर, रंग का अन्तर तुरन्त देखा जा सकता है यदि हम घास के मैदान में खड़े होकर बारी-बारी से सूर्य की दिशा में तथा उलटी दिशा में देखें। यह अन्तर उस फ़र्क के अनुरूप होता है (चित्रकारों को इसका

पता है) जो विलेम मैरिस[1] द्वारा प्रकाश-पृष्ठभूमि को सम्मुख रख कर चित्रित किये गये भू-दृश्य के हरे रग, तथा मावे[2] की कृतियो के हरे रग मे (जो प्रकाश की ओर पीठ करके चित्रण करना पसन्द करता था) मौजूद पाया जाता है।

सूर्य द्वारा प्रकाशित होने मे तथा नीले आकाश द्वारा प्रकाशित होने मे अन्तर यह है कि सूर्य का प्रकाश अधिक तेज होता है, किन्तु इसका स्थानीय परावर्त्तन अधिक मात्रा मे होता है, इस कारण पत्ती पर रोशनी के धब्बे-से प्रतीत होते है। यदि पत्ती पर सूर्य की किरणो का परावर्त्तन बहुत कुछ नियमानुकूल परावर्त्तन-कोण पर होता है, तो पत्ती का रग हलका भूरा या श्वेत के निकट पहुँचता है। सूर्य जब क्षितिज के निकट होता है ताकि भू-दृश्य पर गहरे लाल रग का रोशनी छा जाय, तब वृक्षो के झुरमुट अपने हरे रग की ताजगी खो देते है, और ये मुरझाये-से दीखते है, क्योकि अब उनपर पडने वाले प्रकाश मे मुश्किल से ही हरी रोशनी का अश मौजूद रह पाता है जिसे पत्तियाँ परिक्षेपित करके वापस फेकती।

दोनो ओर एक ही किस्म की रोशनी पडने पर भी पत्तियो की ऊपरी तथा नीचे की सतह के रग मे फर्क मौजूद होता है। ऊपरी सतह चिकनी होती है अत इससे परावर्त्तन अच्छा होता है और इसलिए यह अधिक धब्बेदार दीखती है। नीचे वाली सतह फीके रग की और कम चमकदार होती है और इसमे रोमछिद्र अधिक होते है, कोष दूर-दूर स्थित होते है तथा बीच की जगहो मे हवा बन्द होती है जो प्रकाश को पत्ती के अन्दर प्रविष्ट होने के पहले ही परावर्त्तित कर देती है (§ २२४)। आम तौर पर ऊपर की सतह के रुख ही प्रकाश पत्ती पर गिरता है। इस बात का प्रेक्षण कीजिए कि पत्ती को १८०° पर उलट देने पर इसका रग किस प्रकार बदल जाता है यद्यपि प्रकाश की व्यवस्था-आदि वैसी ही बनी रहती है! जब कभी हवा का वेग कुछ तेज होता है तो प्रकाश के रुख सभी वृक्ष धब्बेदार-से दीखते है और समष्टि रूप से उनका रग हलका पड जाता है, पत्तियो का रुख हर दिशा मे बदलता रहता है, अत जितनी बार उनकी ऊपरी सतह दिखलाई देती है करीब-करीब उतनी ही बार नीचे वाली सतह भी।

नयी पत्तियाँ पुरानी पत्तियो की तुलना मे अधिक ताजी तथा अपेक्षाकृत अधिक खुलते रग की दीखती है, गर्मी के दिनो मे यह अन्तर हलका पड जाता है।

वृक्ष की चोटी पर बाहर की ओर की पत्तियाँ अन्दर की पत्तियो से भिन्न होती है, ये न केवल आकार, मोटाई तथा रोमाच्छादितता मे भिन्न होती है, बल्कि रग मे भी।

1 Willem Maris 2 Mauve

वृक्ष की जड के निकट की कोपलो तथा तने पर फूटने वाली कोपलो मे सामान्यत बहुत ही हलका अन्तर होता है।

अनेक पौदो की पत्तियाँ धूप या हवा के प्रभाव से चमकती है मानो उनपर वार्निश की गयी हो (जैसे पाश्चात्यविषा[1] का पौदा)। इसका कारण है बाह्य त्वचा के कोषो का फूल जाना, अत पत्ती की सतह मे इतना तनाव आ जाता है कि यह पूर्णत स्निग्ध हो जाती है।

अन्त मे, **पृष्ठभूमि** महत्त्वपूर्ण योग देती है। वृक्ष के नीचे खडे होकर इसकी चोटी का निरीक्षण कीजिए। ये ही पत्तियाँ जो अन्य वृक्षो से निर्मित पृष्ठ भूमि पर चटकीले हरे रग की दीखती थी, आकाग की पृष्ठभूमि के सम्मुख देखे जाने पर तुरन्त काली 'सिल्युएत' मे बदल जाती है। यह प्रभाव पत्ती की दीप्ति, तथा पृष्ठभूमि के आकाश की दीप्ति के पारस्परिक अनुपात पर निर्भर करता है। अत पत्ती पर यदि सब ओर से रोशनी पड रही हो तो यह प्रभाव हलका होता है, विशेषतया उस वक्त जब कि पत्ती पर धूप पड रही हो (चित्र १५९, b) और प्रभाव अधिकतम उस वक्त होता है जब पत्ती पर आकाश के एक परिमित भाग से रोशनी पहुँचती है, जैसा कि अक्सर अन्य वृक्षो से घिरे होने पर होता है (चित्र १५९, c) या सान्ध्य वेला मे, जबकि केवल एक पार्श्व से ही पत्ती पर प्रकाश गिरता है। इस दशा मे सामान्य हरे तथा सिल्युएत (छाया आकृति) के काले रग मे अन्तर इतना अधिक होता है कि जल्दी विश्वास नही होता कि यह केवल प्रकाशीय भ्रम का कौतुक है। तथापि यह विपर्यास घटना के अतिरिक्त और कुछ नही है, चमकीले आकाश की द्युति पृथ्वी की चीजो के मुकाबले मे अत्यन्त अधिक होती है।

२२० (क) हरी पत्तियों के रग पर प्रकाश का प्रत्यक्ष प्रभाव

अब तक जिन प्रभावो का वर्णन किया गया है वे पूर्णतया प्रकाशीय है। किन्तु प्रकाश हरे पौदो पर अपना सीधा प्रभाव भी डालता है जिसके कारण इनके रग चन्द मिनटो मे बदल जाते है।

साये मे पत्तियो के क्लोरीफिल[2] की कणिकाएँ अपनी स्थिति बदल लेती है और कोषो के ऊपर के और नीचे के पार्श्व पर वे पहुँच जाती है, अत पत्तियो का हरा रग एक नवीन आभा धारण कर लेता है। किन्तु धूप मे साइटोप्लाज्म[3] द्वारा ये कणिकाएँ कोष की बगल वाली दीवारो पर पहुँच जाती है, अब पत्तियो का रग कुछ-कुछ पीला-

1 Monkshood 2 Chlorophyll 3 Cytoplasm

पन धारण कर लेता है। उदाहरण के लिए, रग का यह परिवर्त्तन कारण्ड घास के लिए वहुत ही स्पष्ट होता है।

यह भी देखा जा सकता है कि धूप और हवा के प्रभाव से अनेक पौदे स्निग्ध बन जाते है तथा वे इस प्रकार चमकने लग जाते है मानो उन पर वार्निश की गयी हो (जैसे एकोनाइट[1])। ऐसा बाह्य त्वचा के कोषो के कारण होता है जो फूल जाती है, और तब पत्ती की सतह मे तनाव आ जाता है, अत वह चिकनी दीखती है, तथा यह अब परिक्षेपण कम करती है और परावर्त्तन अधिक अच्छी तरह।

२२१. भू-दृश्य के पेड-पौदे[2]

१. पृथक्-पृथक् वृक्ष—भू-दृश्य के अवयवो मे व्यवहारत केवल वृक्ष ही ऐसे होते हैं जिनपर बगल से प्रकाश पडता है, और इस कारण वे सूर्य से आलोकित पार्श्व तथा अप्रकाशित पार्श्व के विपर्यास का अलौकिक सौन्दर्य प्रदर्शित करते है। इसी कारण ये अपने ठोसपन की अनुभूति कराते हैं और 'बारम्बार यह प्रदर्शित करते है कि त्रिविमितीय देश[3] एक दृश्टिगोचर हो सकने वाली वास्तविकता है'। वृक्ष की चोटी के वर्त्तुलाकार[4] होने से यह विपर्यास कुछ हलका पड जाता है। किन्तु रग-विभिन्नता के कारण यह पुन तीव्र हो जाता है।

प्रकाश के रुख देखने पर दूरस्थ पृष्ठभूमि पर वृक्ष काले रग के उभरते है, और पृष्ठभूमि के फासले, उसकी सुदूरता की तीव्र अनुभूति कराते हैं, इस अनुभूति के उत्पन्न करने मे जितना योग पिण्डदर्शन-प्रभाव[5] का है उतना ही रग के शेड-अन्तर का भी है। यही कारण है कि पिण्डदर्शन की तस्वीरो, तथा भू-दृश्य अकित किये गये चित्रो की अग्रभूमि मे, बहुधा वृक्ष प्रदर्शित किया जाता है। इस प्रभाव की कुछ अशो मे उस भू-दृश्य से तुलना कर सकते हैं जिसे एक खुली खिडकी मे से या मेहराब की छत के नीचे से हम देखते हैं। वृक्षो के दर्मियान से गुजरने वाली सडक से देखने पर नगर की इमारते अधिक बडी और वैभवपूर्ण प्रतीत होती हैं।

पृष्ठभूमि के साथ सर्वाधिक प्रभावकारी विपर्यास उस वक्त प्रदर्शित होता है जब वृक्ष सन्ध्याकालीन आकाश के नारङ्गी वर्ण की द्युति वाली पृष्ठभूमि पर रेखाङ्कित होता है। अकेले स्थित रेतीले टीले पर खडे हपुषा[6] के अजीब तरह से विकृत वृक्ष की

1. Aconite 2 See Vaughan Cornish, Geogr Journ 67. 506, 1926 for the first part of this section 3 Space 4 Round
5 Stereoscopic effect 6 Jumper

सिल्युएत (छाया-आकृति) या घनी नुकीली पत्तियो से भरपूर शानदार सरो की छाया-आकृति काली होती है तथा इसकी रूपरेखा अत्यन्त स्पष्ट उभरती है। अन्य वृक्ष अधिक खुले होते ह, भोजपत्र का वृक्ष सबसे अधिक खुला होता है। अपनी सुन्दर त्वचा की बदौलत यह, विशेषतया प्रकाश के रुख देखे जाने पर, तरह-तरह के रग प्रदर्शित करता है जो आकाश के रग के साथ मनमोहक विपर्यास उत्पन्न करते ह।

'फरवरी के अन्त मे किसी धूप वाली सुबह को मै तुम्हे हलके नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर भोजपत्र की टहनियो का रग दिखलाऊँगा। इनकी तमाम बारीक प्रशाखाएँ नील-लोहित ज्योति से दमकती जान पडती है, जबकि इस हलकी चमक के उस पार से आकाश अलौकिक मृदुतापूर्वक आप की ओर झाँकता है। तनिक रुकिए, ध्यानपूर्वक प्रेक्षण कीजिए और इस घटना को समझने के पूर्व यहाँ से जाइए नही। इस दृश्य से इतना अधिक आनन्द प्राप्त होता है कि इस अलौकिक प्रकाश के पुन उत्पन्न होने की घटना के अवलोकन के लिए सब्र के साथ आप अगले जाडे तक प्रतीक्षा कर सकते है'— डुहामेल, ला **पोजेशियाँ-दू-मान्दे**[1] (पृष्ठ १२६)।

२. **वन**—निकट के जगल की सिल्युएत (छाया आकृति), प्रकाश के रुख देखने पर अवश्य अत्यन्त अव्यवस्थित जान पडती है, किन्तु वन स्वय इतना अधिक पारदर्शी होता है और इसके प्रकाशीय प्रभाव इतने विभिन्न होते है कि यह घनता और ठोसपने की अनुभूति नही दे पाता। इसके एकाकार होने का प्रभाव ज्यादा फासले पर अधिक स्पष्ट होता है, जबकि वृक्षो की चोटियाँ, पीछे के गहरे नीले रग की पर्वतीय पृष्ठभूमि पर सुनहले और हरे रग की चमकती है या जब सूर्य के प्रकाश से आलोकित पत्तेदार वृक्षो के समूह के झुरमुट, ऊँचे, अदीप्तिमान् सरो के वृक्षो के सम्मुख स्पष्ट उभरते है। मैदानी क्षेत्र मे स्थित दूरस्थ वन की तुलना वास्तव मे पहाडियो की श्रेणी से की जा सकती है—इसका शेड कम-से-कम उतना ही गहरा होता है, इसका रग वायुमण्डल मे होने वाले परिक्षेपण के कारण, लगभग ठीक उतना ही मनोहर धुन्धमय नीला होता है, तथा यह क्रमागत पक्तियो मे अवस्थित दिखलाई पडता है और आकाशीय अनुदर्शन[2] के कारण इनमे से प्रत्येक पक्ति अलग-अलग स्पष्ट देखी जा सकती है (§९१)।

वन के भीतर का दृश्य अपने ढग का अद्वितीय होता है—न तो कोई क्षितिज दीखता है, और न सीमारेखाएँ। वसन्त ऋतु मे, सिर के ऊपर, हर तरफ हरी-हरी नयी पत्तियाँ दिखलाई पडती है जो उनमे से गुजरने वाले पीत-हरे प्रकाश से चमकती

1 Duhamel, La Possession du Monde 2 Aerial perspective

रहती हैं। ग्रीष्म ऋतु में, श्वेत आकाश की थका देने वाली चकाचौंध से (जिसकी ओर देखना इतना कष्टदायक होता है) बचने के लिए हमारी आँखों को यहाँ आराम मिल सकता है—यहाँ एक बार फिर आजादी से हर दिशा में हम दृष्टि फिरा सकते हैं।

वन में सबसे अधिक प्रकाश दोपहर के समय पहुँचता है जब सूर्य ऐसी ऊँचाई पर चमकता है कि इसकी किरणें वृक्षों की चोटियों से होकर भीतर आ सकें। प्रकाश और छाया की मात्राएँ हर धरातल में भिन्न होती हैं; किसी निश्चित दूरी पर आँख को केन्द्रित करते ही इस रमणीयता का लोप हो जाता है, किन्तु जब इसकी तलाश की बरबस हम कोशिश नहीं करते तो पुनः यह प्रगट हो जाती है, किन्तु स्वभावतः अपने आप यह हमारे परिपार्श्व के प्रभाव के वशीभूत हो जाती है। शरद ऋतु की सुबह को सूर्य रश्मियाँ यत्र-तत्र वृक्ष के तनों पर गिरती हैं और हलकी धुन्ध वाली हवा में इन किरणों के पथ का अनुगमन, विशेषतया सूर्य के निकट की दिशा में देखने पर, किया जा सकता है (§१८३); इस प्रकार आकाशीय अनुदर्शन की माया का हम अत्यन्त निकट का परिचय प्राप्त कर सकते हैं।

३. फूल—हीदर[1] ही लगभग एकमात्र फूल का पौदा है जो भूमि की विस्तृत सतह ढके रहता है। अगस्त में जब इसके फूलों पर बहार रहती है, तो भूक्षेत्र के नील-लोहित रंग तथा आकाश के गहरे नीले रंग का एक अद्भुत् सामञ्जस्य स्थापित हो जाता है, जिसकी कुछ लोग तो प्रशंसा नहीं करते हैं, किन्तु अन्य लोगों के लिए प्रकृति के स्वतंत्र प्राङ्गण तथा उसके प्रचुर प्रकाश में यह असामान्य रूप से अधिक प्रभावोत्पादक सिद्ध होता है। आकाश में छाये भूरे रंग के बादल रंगों के सामञ्जस्य को मृदु बनाते हैं, किन्तु साथ ही साथ प्रकाश और छाया के बीच के विपर्यास को भी कम कर देते हैं।

फूल आने पर फल वाले वृक्षों की जो इतनी चमक-दमक होती है वह बहुत हद तक इस कारण होती है कि वर्ष के उन दिनों में पत्तियों के गुच्छों की बाढ़ स्वल्प ही रहती है। श्वेत और हलके शेड के गुलाबी रंग, नीले आकाश की पृष्ठभूमि पर सर्वाधिक चित्ताकर्षक केवल उस वक्त लगते हैं जब सूर्य उनपर चमकता है या जब किसी टीले या पहाड़ी पर से उन्हें देखा जाता है ताकि उनके पीछे की पृष्ठभूमि में घास के मैदान पड़ें।

४. घास के मैदान—मात्र एक ही रंग का चौरस विस्तृत क्षेत्र, स्निग्धता का तथा खुली, फैली हुई जगह का आभास देता है, तथापि अपने अनेक ब्योरों की कृपा से इसमें

1. Heather

विविधता का पर्याप्त रूप से समावेश हो जाता है जिससे उत्फुल्लता तथा मृदुता का बोध होता है। वरना अन्य कौन-से कारण हो सकते थे जिनकी वजह से रेत के मैदान से ये इतने भिन्न दीखते ? दूर से देखने पर इनका हरा रंग नीला-हरा पुट धारण कर लेता है, तथा और भी दूर जाने पर उत्तरोत्तर यह वायुमण्डल के पार दीखने वाले आकाशीय नीले रंग के संनिकट पहुँचता जाता है।

२२२. छायाएँ तथा अन्धकारमय धब्बे

अपने इर्द-गिर्द नजर फिराइए और दृश्य क्षेत्र में, जहाँ-जहाँ अदीप्तिमान् धब्बे मौजूद हैं, वहाँ देखिए।

(क) वनों तथा झाड़ियों में, वृक्षों के तनों के दर्मियान।

(ख) नगरों में, दूर से दिखाई पड़ने वाली खुली हुई खिड़की।

ये दोनों ही स्थितियाँ 'कृष्ण वस्तु'[१] के उत्तम उदाहरण हैं। भौतिक विज्ञान में 'कृष्ण वस्तु' से अभिप्राय ऐसी 'जगह' से होता है जिसके अन्दर हम केवल एक पतले प्रवेशद्वार में से देख सकते हैं; प्रकाश-किरणें जो इसके अन्दर प्रविष्ट होती हैं, केवल अनेक बार परावर्त्तन प्राप्त करने के बाद ही बाहर निकल पाती हैं, अतः हर बार के परावर्त्तन के फलस्वरूप ये क्षीण होती जाती हैं। इस प्रकार की कृष्ण वस्तु लगभग हर प्रकार के विकिरण का अवशोषण करती है—घने जंगल आपतित प्रकाश का केवल ४ प्रतिशत पुनः उत्सर्जित करते हैं। इसके प्रतिकूल यह स्मरण रखना चाहिए कि जंगल का अन्धकार केवल आपेक्षिक होता है; यदि हम उसके निकट जायँ तो हमारी आँख वहाँ की दीप्ति के अनुसार समानुयोजित हो जाती है और तब हम देखते हैं कि इसके अन्दर की हर चीज़ दीप्ति और अन्धकार का प्रदर्शन करती है। इसी प्रकार कमरे के अन्दर का हर ब्योरा भीतर से देखने पर पृथक्-पृथक् पहचाना जा सकता है, जबकि बाहर से खिड़की के रास्ते देखने पर वही कमरा घुप अन्धकारमय दीखता है।

चमकीले आसमान की पृष्ठभूमि के सम्मुख पड़नेवाली क्षीणकाय वस्तुएँ आम तौर पर काली दीखती हैं, किन्तु यह केवल विपर्यास का परिणाम है (§ २२०)।

छाया के रंगों की विधिपूर्वक जाँच कीजिए !

'सभी साधारण छायाएँ अवश्य किसी-न-किसी रूप में रंगीन होती हैं, वे काले रंग की या सन्निकटतः काले रंग की कभी नहीं होतीं। स्पष्टतः ये दीप्तिमान् किस्म की

1. Black body

होती है यह एक तथ्य है कि छाया के भागो मे भी रग उसी प्रकार मौजूद होते है जिस प्रकार प्रकाशवाले भागो मे —रस्किन।

जहाँ सूर्य का प्रकाश पडता है,वहाँ इसकी पीले वर्ण की पुट वाली तेज किरणे आकाश से विकिरित होनेवाले प्रकाश पर हावी हो जाती है, किन्तु साये के अन्दर प्रकाश केवल नीले या भूरे आकाश से ही पहुँच पाता है। अत छाया, आम तौर पर, अपने इर्द-गिर्द के वातावरण की अपेक्षा अधिक नीलापन लिये रहती है, और यह अन्तर विपर्यास के कारण ओर भी तीव्र हो उठता है।

'अपनी खिडकी से मै लोगो को समुद्र तट पर टहलते हुए देखता हूँ, रेत स्वय तो बैगनी रग की है किन्तु धूप के कारण यह सुनहले रग की दीखती है, उन व्यक्तियो की छायाएँ इतनी अधिक बैगनी है कि जमीन पीली मालूम पडती है—देलाक्रवॉ।

२२३. भू-दृश्य की प्रकाशदीप्ति, सूर्य के रुख तथा उसकी उलटी ओर

लगभग सभी भूदृश्यो के रग और सरचना मे महत्त्वपूर्ण अन्तर देखे जा सकते है जो इस बात पर निर्भर करते है कि हम इन्हे सूर्य के रुख देख रहे है या सूर्य की उलटी दिशा मे। दृश्य का समूचा अनुदर्शन ही बदल जाता है। दृश्य को दोनो दिशाओ मे एक साथ ही देखने के लिए दर्पण को काम मे लाइए (प्लेट XVI)

१ जौ, गेहूँ के नये पौदो के खेत, घास के मैदान, तथा शमीधान्य[1] के खेत, सूर्य की दिशा मे पीत-हरे वर्ण के दीखते है, किन्तु उलटी दिशा मे ये निलछौवे रग के प्रतीत होते है, कारण क्या है? किसी एक पत्ती को 'सूक्ष्मदर्शी' दृष्टि से विशेष तौर पर देखिए। इसे तोड लीजिए, फिर इसे सूर्य के रुख पकडिए, फिर इसे सूर्य की दूसरी ओर रखिए। पहली दशा मे इस पर गिरने वाले प्रकाश का मुख्यत वह अश आप देखेगे जो पत्ती मे से गुजर कर इस पार आता है, दूसरी दशा मे इसकी सतह से परावर्त्तित होने वाला प्रकाश आप देखेगे (§ २२०)। कभी-कभी रग तथा दीप्ति वायु की दिशा द्वारा भी प्रभावित होती है।

२ राई के पके खेत मे तरगे मुख्यत राई की बालो के बदलते हुए रूपदर्शन[2] के कारण उत्पन्न होती है। मान लीजिए हवा सूर्य की ओर बह रही है, सूर्य की ओर मुँह करने पर हमे एक तरह से केवल देदीप्यमान् तरगे दिखलाई पडती है, ये उस वक्त उत्पन्न होती है जब बाले सूर्य की ओर इतनी झुक जाती है कि सूर्य के प्रकाश को ये हमारी आँख की दिशा मे परावर्त्तित कर सके, सूर्य से दूर हटती हुई दिशा मे हम कुछ थोडी ही

1 Lupine 2 Aspect

देदीप्यमान् तरगे, किन्तु बहुत-सी अदीप्तिमान् तरगे देख पाते है। ये अदीप्तिमान् तरगे उस वक्त उत्पन्न होती है जब बाले इस प्रकार झुकती है कि वे निकट की बालो पर अपनी छाया डाल सके।

ये घटनाएँ हवा और दृष्टिरेखा की हर दिशा के साथ तथा सूर्य की ऊँचाई के साथ बदलती रहती है।

३ मशीन से घास कट जाने के उपरान्त लॉन को जब ऐसी स्थिति से देखते है कि मशीन चलाने की दिशा हमारे सामने की ओर जाती है, तब लान उस दशा के मुकाबले मे अधिक हलके रग का प्रतीत होता है, जबकि मशीन चलाने की दिशा हमारी ओर को होती है, पहली दिशा मे परावर्तित प्रकाश की अधिक मात्रा हम देख पाते है (प्लेट XVI देखिए)। कटी हुई ठूँठियो के खेत मे यह विपर्यास अत्यन्त प्रबल होता है, इस दशा मे क्रमागत पक्तियाँ एक के बाद दूसरी बारी-बारी देदीप्यमान तथा अदीप्तिमान् होती है क्योकि फसल काटने वाली मशीन एक पक्ति पर एक दिशा मे चलायी गयी होती है तो दूसरी पक्ति पर उलटी दिशा मे। यदि आप घूम कर उलटी दिशा मे मुँह कर ले तो पक्तियो का शेड का क्रम भी उलट जायगा। हाल का जुता हुआ खेत चमकता हुआ दिखलाई पडता है बशर्त्ते अभी तक गीली बनी हुई उन हलकी लीको की समकोण दिशा से हम देखे।

४ गड्ढे के पानी पर मौजूद कारण्ड घास[1] के पौदे घास के ठीक विपरीत आचरण करते है। सूर्य से दूर जाने वाली दिशा मे ये पीत-हरे रग के दीखते है, और सूर्य के रुख फीके भूरे-हरे रग के। 'सूक्ष्मदर्शी' प्रेक्षण से पता चलता है कि द्वितीय दशा मे सतह से होने वाला अनियमित परावर्त्तन विशेष प्रबल होता है। इस पौदे की पत्तियो के आर पार हम नही देख सकते।

५ हीदर वाले क्षेत्र, जब हीदर का मौसम समाप्त हो चुका होता है तो, सूर्य की दिशा मे अदीप्तिमान् दीखते है। और सूर्य से दूर जाने वाली दिशा मे अधिक देदीप्यमान्, रेशमी झलक युक्त तथा हलके बादामी-भूरे रग के ये दीखते है, प्रगटत परावर्त्तन के कारण ही ऐसा होता है (प्लेट XVI)।

६ फल वाले वृक्ष जब फूलो मे पूरी तरह लदे होते है तो वे केवल सूर्य की उलटी दिशा मे ही देखे जाने पर श्वेत दिखलाई पडते है। सूर्य की रुख देखने पर ये फूल आकाश की पृष्ठभूमि पर काले रग के उभरते है (§ २२०, २२१)।

1. Duckweed

७ इसी प्रकार वृक्षो की शाखाएँ तथा टहनियाँ सूर्य से दूर की दिशा मे देखे जाने पर भूरी तथा बादामी रग की दीखती है और सूर्य के रुख ये काले रग की दीखती है जिनमे ब्यौरा स्पष्ट नही हो पाता।

८ ईट जडी हुई सडक सूर्य के रुख बादामी-सुर्ख रग की दीखती है और सूर्य से दूर की दिशा मे श्वेत-भूरे रग की।

९ ककड वाली सडक सूर्य के रुख श्वेत-भूरी होती है, सूर्य से दूर की दिशा मे बादामी-भूरे रग की।

१० समुद्र मे उठने वाला फेन सूर्य से दूर जाने वाली दिशा मे विशुद्ध श्वेत दीखता है, किन्तु सूर्य के रुख, किल्लोल करते हुए जल के लाखो प्रतिबिम्बो तथा झिलमिलाहटो के बीच यह अपने आप पास के मुकाबले मे कुछ गहरे ही शेड का दीखता है।

११ ऊँची-नीची सतह वाली सडक, बर्फ से ढकी हालत मे, सूर्य के रुख, समष्टि रूप से, बगल मे पडी स्निग्ध बर्फ के मुकाबले मे गहरे शेड की दीखती है, सूर्य से दूर की दिशा मे इसके विपरीत देखने मे आता है।

१२ झील पर उठने वाली तरगे, जब हवा सूर्य की ओर बह रही हो, यदि सूर्य से दूर की दिशा मे देखे तो पानी धूसर नीले रग का प्रतीत होता है जिसमे यत्र-तत्र नीले-काले वर्ण की धारियाँ प्रेक्षण-बिन्दु से विकिरित होती हुई दिखाई पडती है——ये आकाश के नीले भाग की अनुरूपी होती है, इन अनेक तरगो मे से हर एक तरग पृथक्-पृथक् उभरती है। सूर्य के रुख देखने पर सभी कुछ उल्लासप्रद, चटकीले नीले रग का दीखता है, तरगे केवल फासले पर ही देखी जा सकती है और ये अनगिनत सख्या मे होती है (§ २११)।

१३ इस बात पर ध्यान दीजिए कि जब आप सूर्य की दिशा मे देखते है तो तमाम वस्तुएँ जिनके साये वाले पार्श्व आप की ओर पडते है, गहरे शेड की प्रतीत होती है, किन्तु उनके हाशिये मनोरम प्रकाश से चमकते दीखते है। रोशनी के रुख पर फोटो लेने का लाभ यह है कि यह खूबसूरती पकड मे आ जाती है।

ये तथा अन्य बहुत-से दृष्टान्त प्रेक्षण के लिए विपुल अवसर प्रदान करते है। सदैव ही व्याख्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करने मे पहले चीजो का समष्टि रूप मे प्रेक्षण कीजिए, फिर उनके पृथक्-पृथक् रूप मे।

२२४ रग, आर्द्रता से किस प्रकार प्रभावित होते है ?

'यह सच है कि सान्ध्यकालीन वायुमण्डल "सभी चीजो पर अन्धकार का आवरण सा डाल देता" है, किन्तु यह भी सच है कि प्रकृति ने, जिसका कभी भी यह इरादा नही

था कि मानवनेत्र आह्लाद-अनुभूति से वञ्चित रहे, **अन्धकार** द्वारा होनेवाले कान्ति के ह्रास के लिए प्रचुर मात्रा मे क्षतिपूर्त्ति का आयोजन **आर्द्रता** द्वारा उनकी चमक मे वृद्धि करके, किया है। प्रत्येक रग भीगी दशा मे सूखी हालत के मुक़ावले मे दो गुनी चमक प्रदर्शित करता है और जब दूर की चीजे धुन्ध के कारण अस्पप्ट दीखती है, तथा आकाश से चटकीले रग विलुप्त हो जाते है और पृथ्वी पर से धूप की चमक गायब हो जाती है तब अग्रभूमि तरह-तरह के चित्ताकर्षक रग धारण कर लेती है, घास और पत्तियो के झुरमुट पुन अपने पूर्ण हरे रग को प्रदर्शित करते है तथा धूप मे झलसी हुई प्रत्येक चट्टान अकीक पत्थर की तरह चमकने लगती है।'—रस्किन, **माडर्न पेन्टर्स**।

रगो की इस सजीवता का समाधान अकेले आर्द्रता से नही किया जा सकता। हमे इस बात पर भी विचार करना होगा कि वस्तुओ पर ज्यो ही पानी की पतली परत बनती है, त्यो ही उनकी सतह अधिक स्निग्ध हो जाती है, अब श्वेत प्रकाश का हर दिशा मे परिक्षेपण वे नही करती, और इसलिए उनके निज के ही रग प्रमुखता प्राप्त कर लेते है तथा वे अधिक सपृक्त (सतृप्त) हो जाते है।

वर्षा भूमि के रग को पूर्णतया बदल देती है। सडक की पत्थर की रोडियाँ हमसे जितनी ही अधिक दूरी पर होती है तथा हमारी निगाह जितनी ही अधिक तिरछी पडती है, उतना ही अधिक प्रबल परावर्त्तन उनसे होता है। यह आश्चर्य की वात है कि बडे मान के आपतन कोण के लिए न केवल ऐसफाल्ट की सडको पर, बल्कि नाहमवार पत्थर-जडी सडको पर भी इतना बढिया परावर्त्तन होता है! भीगने पर रेत, मिट्टी तथा रोडियो की सडको का रग मटमैला तथा गहरा हो जाता है, वर्षा की प्रथम बूँदे कृष्ण वर्ण के धब्बो की शक्ल मे उभरती है। ऐसा क्यो है? बालू के कणो के बीच की हर सन्धि मे पानी प्रविष्ट हो जाता है। प्रकाश की किरण, जो अन्यथा सबसे ऊपर वाली परतो से परिक्षेपित हो जाती, अब अधिक दूरी तक भीतर प्रवेश करने के उपरान्त ही पुन आँख तक वापस पहुँच पाती है, और इस अपेक्षाकृत अधिक लम्बे मार्ग मे करीब-करीब यह पूर्णत अवशोषित हो जाती है। सूखी मिट्टी आपाती प्रकाश का १४% परावर्तित करती है, गीली मिट्टी केवल ८ या ९%, सूखी रेत ३७% परावर्तित करती है तथा गीली रेत केवल २४% परावर्तित करती है।

एसफाल्ट की सडक पर एकत्र हुआ पानी रग के मनोहर शेड प्रदर्शित करता है,

(क) इस पानी की सतह नीले आकाश को प्रतिबिम्बित करती है।

(ख) हाशिया जहाँ पर जमीन अभी गीली ही होती है, काले वर्ण का होता है।

(ग) इर्द-गिर्द का भूरे रग का वातावरण।

गड्ढो के पानी मे 'अल्जीआ' गहरे हरे रग के रेशेदार पुञ्ज की शक्ल का होता है। पानी से बाहर निकला हुआ भाग रेशो के दर्मियान फँसी हवा के कारण अपेक्षाकृत काफी पीलापन लिये हरे रग का दीखता है। किन्तु इन्ही पाण्डुर वर्ण वाले भागो को पानी के अन्दर डुबा कर हिलाइए और उन्हे दबोच दीजिए तो हवा के बबूले उनके अन्दर से निकल पडेगे ओर साथ ही साथ उनका रग गहरा हो जायगा।

२२४ (क) वर्षा के उपरान्त भू-दृश्य मे चटकीलापन

वर्षा के उपरान्त भू-दृश्य पूर्णतया बदल जाता है, हर जगह पानी की बौछार के प्रभाव परिलक्षित होते हैं। दृश्य की अद्भुत् विलक्षणता न केवल इस कारण उत्पन्न होती है कि छँटते हुए घने बादलो और स्वच्छ चमकीले आकाश के बीच गहरा विपर्यास होता है बल्कि इसलिए भी कि समस्त भू-दृश्य मे चटकीले प्रतिबिम्बन दिखलाई देते है।

खास तौर पर भीगी पत्तियाँ प्रकाश की चमक मे विशेष अभिवृद्धि करती है, जैसे शलजम की पत्तियाँ, बलूत वृक्ष की चोटी तथा खाई के सहारे लगी झण्डियाँ। किन्तु यह चमक केवल सूर्य की दिशा मे ही देखी जा सकती है सो भी जब प्रेक्षण दिशा आपाती किरणो के साथ अल्पमान का कोण बनाये। सूर्य की दिशा से हटने पर तो केवल यत्र-तत्र ओस की एकाध चमकती हुई बूंद दीख जाती है।

घास पर गिरी पेड की पत्तियो द्वारा (जो वर्षा के जल से भीग चुकी होती है) प्रकाश-व्यवस्था की इन परिस्थितियो मे होने वाले चकाचौध के प्रतिबिम्बन से हम चकित रह जाते है। इस प्रभाव से हम सहज ही समझ सकते है कि रेतीले प्रदेशो मे हमारे पुरातत्त्ववेत्ता प्रागैतिहासिक युग के साइलेक्स प्रस्तर अस्त्रो की खोज कैसे करते है। क्षितिज के निकट स्थित सूर्य की ओर वे चलते है ओर भूमि पर पडे उन टुकडो की तलाश करते है जो दूर से अपने चमकीले प्रतिबिम्बन के कारण दीख जाते है। इस प्रकार दानेदार रेत से उत्पन्न परिक्षेपण, तथा साइलेक्स प्रस्तर की चिकनी सतह से होने वाले परावर्त्तन, के पारस्परिक अन्तर से वे लाभ उठाते है।

२२५ भू-दृश्य मे मानव-आकृति

'अपनी खिडकी से मै एक आदमी को, जिसका शरीर कमर-से ऊपर नगा है, गैलरी के फर्श पर काम करते हुए देखता हूँ। जब मै उसकी त्वचा के रग की तुलना बाहर की दीवार के रग से करता हूँ तब मै यह अनुभव करता हूँ कि इस बेजान चीज़ के मुकाबले मे मासल शरीर के झलकते हुए वर्ण विविध रगो से कितने परिपूर्ण है!

यही बात कल प्लास-सेंट-सुल्पीस[1] में भी मैंने देखी, जहाँ एक छोटा लड़का फौआरे की प्रस्तर मूर्त्ति पर चढ़ गया था जिस पर धूप पड़ रही थी। उसका मांसल शरीर निष्प्रभ नारङ्गी वर्ण का था, छाया के हाशिये चमकीले वैंगनी रंग के थे तथा भूमि के रुख के साये के भागों में सुनहले वर्ण के प्रतिविम्बन दीख रहे थे। बारी-बारी से नारङ्गी तथा बैंगनी रंग प्रबल होते थे या फिर ये एक दूसरे में मिल जाते। सुनहले रंग में किञ्चित् हरे वर्ण का पुट मौजूद था। शरीर का यथार्थ वर्ण केवल धूप और खुली हवा में ही देखा जा सकता है। जब कोई व्यक्ति खिड़की से बाहर अपना सिर निकालता है तो हम देखते हैं कि उसके चेहरे का वर्ण-विन्यास, कमरे के अन्दर की तुलना में नितान्त भिन्न होता है। इससे स्पष्ट है कि स्टूडियो के अन्दर कला-साधना कितनी निरर्थक सिद्ध हो सकती है—जहाँ हर कलाकार मिथ्या रंगों के चित्रण का यथाशक्ति प्रयत्न करता है।'

—डेलाक्राअ, **जर्नल।**

सन्ध्या के झुटपुटे में बदली वाले दिन सड़कों पर पुरुषों और स्त्रियों के चेहरों पर छाये सौन्दर्य और मृदुता के भावों का प्रेक्षण कीजिए। —लिनार्दो–दा–विन्ची।

इस उक्ति की बदौलत ही मैंने अनेक बार निष्प्रभ, म्लान तथा भूरे-धूसर दिन के प्रति अपने आक्रोश का शमन किया है।

२२५ (क). सिल्युएत[2] (छाया-आकृति)

इस शब्द का उपयोग उस समय करते हैं जब चमकीली पृष्ठभूमि के सम्मुख अधिक गहरे शेड की अदीप्त वस्तुएँ देखी जाती हैं जो चिपटी आकृति की दिखलाई पड़ती हैं। इस तरह का प्रभाव विभिन्न तरीकों से उत्पन्न हो सकता है —

१. जब वृक्षों और मकानों का अवलोकन सान्ध्य-आलोक के सुनहले प्रकाश की उलटी दिशा की ओर से करते हैं; इस दशा में इन वस्तुओं का जो पार्श्व हमारी ओर रुख करता है वह आकाश में अन्धकार छा जाने के कारण केवल अत्यन्त हलके रूप से ही प्रकाशित हो पाता है। दिन की इस बेला में यह एकांगी प्रकाश-व्यवस्था ही सिल्युएत के निर्माण के लिए निर्णायक तत्त्व है। दिन के अन्य समय भी यह प्रभाव देखा जा सकता है जबकि आकाश में घने बादल छाये हुए हों और क्षितिज के निकट केवल एक सँकरा-सा प्रदेश खुला हो जो खुशनुमा नारङ्गी वर्ण के प्रकाश से चमक रह हो (§१७८)।

1. Place St. Sulpice 2. Silhouettes

२ रात के समय जब सडक पर लगे लैम्पो का प्रकाश सडक पर पडता है तो रोशनी के इस चमकीले टुकडे और हमारी आँख के दर्मियान यदि कोई व्यक्ति सडक पर चल रहा हो तब उसका सिल्युएत दिखलाई पडता है। या जब सूर्य या चन्द्रमा समुद्र की सतह पर तेज चकाचौध उत्पन्न करने वाली रोशनी फेकता है और इसके सामने से कोई किश्ती गुजरती है तो यह एक प्रबल विपर्यास उत्पन्न करती है।

३ कुहरा या वर्षा जब एक झीना आवरण-सा उपस्थित करती है जिसके कारण प्रकाश-दीप्तियो के तमाम क्षुद्र अन्तर मिट से जाते है, इस दशा मे गहरे शेड की बडे आकार की वस्तुएँ अभी भी पहचानी जा सकती है और उनकी आकृति-रेखाएँ पर्य्याप्त रूप से सुस्पष्ट उभरती है। मीनार, मकान तथा वृक्षो के समूह, प्रदीप्त भूरी पृष्ठभूमि के सामने अधिक गहरे भूरे रग के दीखते है।

४ रात मे जबकि बडे आकार की गहरे शेड की वस्तुएँ हलके प्रकाश से आलोकित रात्रि-आकाश की पृष्ठभूमि पर विपर्यास की बदौलत देखी जाती है।

२२५ (ख). एकागी तथा सर्वाङ्गी प्रकाश-व्यवस्था

भू-दृश्य की दृष्टि-अनुभूति बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करती है किस प्रकार की प्रकाश-व्यवस्था मे उसका अवलोकन किया जा रहा है। समस्या पर विचार-विमर्श का प्रारम्भ हम पहले उस परमावस्था को लेकर करेगे जब भू-दृश्य पर प्रकाश एक बगल से पड रहा हो और तब क्रम से अधिक सामान्य प्रकाश-व्यवस्थाओ पर हम विचार करेगे, और अन्त मे उस दशा को लेगे जब कि भू-दृश्य पर पडने वाला प्रकाश पूर्णत विस्तृत हो। हर दशा के लिए हम देखेगे कि भू-दृश्य पर उसका क्या प्रभाव पडता है।

रात्रि मे आर्क लैम्प (प्रकाश के करीब-करीब एक आदर्श बिन्दु-स्रोत) की चकाचौध उत्पन्न करने वाली रोशनी मे जो आसपास के अन्य सभी प्रकाश-स्रोतो पर हावी हो जाती है, छायाएँ अत्यन्त काली तथा तीक्ष्ण बनती है, अत चेहरे की झुर्रियो को अति सवर्द्धित करके लोगो को ये वृद्ध-सा बना देती है।

खुले आकाश के समय धूप मे अब भी छाया तीक्ष्ण तथा काली बनती है, यद्यपि इस दशा मे भी नीले आकाश के विसृत प्रकाश के कारण छाया मे प्रकाश की कुछ मात्रा पहुँच जाती है। हम देखते है कि सूर्य का कुछ भाग जब बादल के पीछे छिप जाता है तो छाया किस प्रकार धुँधली पड जाती है, और सूर्य जब पूर्णतया छिप जाता है तब उससे प्रक्षेपित होने वाली कोई छाया तो नही बनती, केवल ऐसे क्षेत्र मिलते है जिनमे

कुछ अधिक दीप्तिमान् होते हैं, कुछ कम। यह अवस्थान्तर एक अन्य तरीके पर भी उत्पन्न हो सकता है, बन के अन्दर की खुली जगह आकाश के केवल एक परिमित भाग द्वारा प्रकाशित होती है--अत इससे उत्पन्न होनेवाला प्रभाव इस भाग के बडे या छोटे होने के अनुसार ही बदलता रहता है।

सूर्य जब ऊँचाई पर स्थित होता है तब भू-दृश्य के निर्माण मे छायाएँ कोई विशेष महत्त्वपूर्ण भाग नही लेती, सारा दृश्य सर्वत्र चमकीला होता है जो आँखो को थका देने वाला होता है। केवल सूर्य जब आकाश मे नीचे उतरता है तभी प्रकाश और छाया की सम्पन्न विविधता प्रगट होती है।

देहात के सपाट या स्वल्प मात्रा के चढाव-उतार वाले क्षेत्र मे, आकाश मे कम ऊँचाई पर स्थित सूर्य द्वारा प्रक्षेपित छायाएँ जमीन के उभार को तीव्र रूप मे सवर्द्धित करके प्रदर्शित करती है। तब इसकी किरणे भूमि की सतह को करीब-करीब स्पर्श करती हुई जाती है, और आलोक तथा छाया के अत्यन्त विलक्षण प्रभेद उपस्थित करती है। इसे एक छोटे पैमाने पर, यद्यपि अतिशयोक्ति के साथ, रेतीले मैदान पर सूर्यास्त के करीब देखा जा सकता है--उस वक्त मैदान का प्रत्येक ककड या हरएक उभार एक लम्बी छाया डालता है, भूमि चन्द्रमा के भू-दृश्य के फोटो सदृश दीख पडती है और ऐसा मालूम पडता है कि यह कोई मायावी प्रदेश है। दिन के अन्य समयो पर भी इसी तरह का प्रभाव देखा जा सकता है--जैसे उस वक्त जब कि किसी फार्म की सफेदी की गयी दीवार पर उसकी सतह के लगभग समानान्तर किरणे गिरती है, हम अतिरजित रूप मे देख सकते है कि दीवार की सतह कितनी अधिक खुरदरी है।

अन्त मे हम इस बात का आभास देने का प्रयत्न करेगे कि कई दिनो की लगातार धूप और नीले आकाश के उपरान्त जब आकाश पर बादलो का एक समरूप आवरण प्रगट होता है तो भूदृश्य पर कितनी सामञ्जस्य और राहत छा जाती है। अब सर्वत्र चमक मन्द पड जाती है, दीप्ति के अन्तर अब अपेक्षाकृत कम होते है, छायाएं गायब हो जाती है और स्थानीय प्रतिबिम्बन अब नही दिखाई पडते। आखे आजादी के साथ हर दिशा मे देख सकती है--चकाचौध से आखो के चौंधिया जाने का खतरा नही रहता।

सभी दिशाओ से आने वाली प्रकाश-व्यवस्था की एक चरम अवस्था निम्नलिखित विवरण मे व्यक्त की गयी है--

"हिमाच्छादित भूमिखण्ड सान्ध्य प्रकाश मे पूर्णरूप से इतना अधिक समरूप दीखता है कि यह देख पाना नितान्त असम्भव होता है कि सामने की हलके ढाल वाली

पहाडी का आरम्भ कहाँ से होता है या कहाँ पर वह खत्म होती है। केवल हमारी सतुलन-अनुभूति ही हमे इस बात का आभास कराती है, सो भी इतने अचानक तरीके से, कि आश्चर्यचकित होकर हम उस वक्त एक दूसरे का मुँह ताकने लग जाते है जब कि हमे एक अजीब-सी अनुभूति यह होती है कि पूर्णत चिपटी भूमि पर हम नीचे ढाल की ओर चल रहे है।"

इस तरह के उभार-रहित एकसम हिमाच्छादित भू-दृश्य की तुलना, धूप मे दीखने वाले स्काइ की लीको[1] की निलछौवे रग की तीक्ष्ण छाया से कीजिए। यूनानी इमारतो के स्तम्भो की तुलना, एकागी प्रकाश-व्यवस्था मे, तथा सभी दिशाओ से आने वाली प्रकाश-व्यवस्था मे कीजिए, ध्यान दीजिए किस प्रकार तरङ्गित जल की सतह की जगमगाहट उस वक्त गायब हो जाती है जब आकाश पर बादल छा जाते है। हर बार पुन आप भली प्रकार महसूस करेगे कि भू-दृश्य के प्रदीप्ति-वितरण को निर्धारित करने मे धूप और छाया का महत्त्व कितना अधिक है।

1 Ski traces

अध्याय १३

स्वतः प्रकाशित पौदे, जीव तथा पत्थर

२२६. जुगनू

'बी से कहना कि मैंने आल्प्स तथा अपिनाइन्स पर्वत-श्रेणी को पार कर लिया है, और बफ्फॉन द्वारा आयोजित सग्रहालय "जार्दे -दे-प्लान्ते" का मैंने अवलोकन किया, चित्रकला और मूर्तिकला की सर्वश्रेष्ठ कृतियो के नगर लूव्र को मैंने देखा, लक्सेमबर्ग मे रुबेन्स की कृतियाँ देखी तथा मैंने जुगनू देखा ! ! !' फरेडे द्वारा अपनी माता को लिखा गया पत्र—**लाइफ एण्ड लेटर्स**।

वास्तव मे जुगनू 'कीट' जाति का कत्तई नही होता वल्कि यह 'गुवरौडा' की जाति का जीव होता है। मादा जुगनू के पख नही होते, ये रेगती फिरती है, नर जुगनू उडते है। साधारण जुगनू (लाम्पिरिस नाक्टिलूसा[1]) इङ्गलैण्ड के कतिपय दक्षिणी प्रान्तो मे प्रचुरता से पाया जाता है तथा स्काटलैण्ड मे टे नदी के दक्षिण मे, किन्तु आयर्लैण्ड मे नही। पीछे वाले उदर के अन्तिम दो खण्डो मे प्रकाशोत्पादक अग स्थित होता है और इसमे एक विशेष पदार्थ होता है जिसका आक्सीकरण होने पर रासायनिक-दीप्ति से वह स्वत प्रकाशित हो जाता है। उत्सर्जित होने वाली किरणो का रग ठीक वही होता है जिसके लिए हमारे नेत्र सर्वाधिक मात्रा मे सुग्राही होते है और इस प्रकाश मे अवरक्त किरणे नही होती, अत हम कह सकते है कि यह जीव, वास्तव मे प्रकाश का एक आदर्श स्रोत है—काश इसकी चमक थोडी और तेज होती!

नन्हे आकार के इस सुनहले प्रकाश के धब्बे की रमणीयता विलक्षण होती है, और यह करीब-करीब एक तारे की याद दिलाता है। क्यो नही, उदाहरण स्वरूप, इसकी तुलना अभिजित्[2] नक्षत्र से करे जो कि आकाश मे अभी चमक रहा है? तुलना करना आसान नहीं होगा, किन्तु कुछ निकट आकर फिर पीछे हट कर खडे होने पर मै पाता हूँ कि करीब १३ मीटर की दूरी पर जुगनू उतना ही चमकीला प्रतीत होता है जितना

1 Lampyris noctiluca 2 Vega

अभिजित् तारा। यह हम जानते है कि इस तारे से हमे करीव-करीव उतना ही प्रकाश मिलता है जितना १ ४ केन्डल शक्ति के प्रकाशस्रोत से जो १००० मीटर के फासले पर रखा गया हो। अत जुगनू की प्रदीप्ति तीव्रता I ज्ञात कर सकते है।

$$\frac{I}{१३^२} = \frac{१ ४}{१००० \quad १०००}$$, अत I=० ०००२ केन्डल शक्ति।

२२७. समुद्र की स्फुरदीप्ति[1]

समुद्र की स्फुरदीप्ति, हमारे देश (हालैण्ड), के निकट के भागो मे मुख्यत लाखो सूक्ष्म आकार के समुद्री जीवो (नाक्टिलूसा मिलियरिस[2] की जाति के) द्वारा उत्पन्न होती है। ये फ्लैगेलाते[3] वर्ग के प्रोटोजोआ होते है जिनका आकार ० २ मिलीमीटर के लगभग होता है, अर्थात् बस इतने बडे होते है कि नगी आँखो से ये पृथक्-पृथक् विन्दुओ की शक्ल के देखे जा सकते है। ये केवल तभी प्रकाश उत्पन्न करते है जब पानी मे आक्सीजन घुली हो जैसे पानी के मथे जाने पर या लहरो के उद्वेलन के कारण। इसकी वजह से इनके शरीर मे मौजूद एक विशेष पदार्थ का आक्सीकरण हो जाता है किन्तु इसका ताप कुछ खास बढने नही पाता, न ही इस प्रकाश की सरचना उस प्रकाश के मानिन्द होती है जो ताप के कारण चमकने वाली वस्तु से प्राप्त होता है। यह तापजनित विकिरण की क्रिया नही है, बल्कि यह रासायनिक दीप्ति की क्रिया है।[4] इस प्रकाश मे न तो अति-वैगनी किरणे होती है और न अवरक्त किरणे, केवल वे ही वर्ण इसमे मौजूद होते है जो हमारी आँख मे प्रकाश की प्रबल अनुभूति उत्पन्न करते है, जैसे खास तौर पर पीले तथा हरे वर्ण।

यदि समुद्र के पानी मे, जहाँ स्फुरदीप्ति उत्पन्न करने वाले जीव अधिक सख्या मे मौजूद हो, आप अपनी उँगली डुबाएँ तो आप को एक हलकी चुनचुनाहट-सी लगेगी। इस प्रकार दिन मे ही आप पूर्वानुमान लगा सकते है कि रात मे वहाँ के समुद्र मे सुदर स्फुरदीप्ति दिखाई पडेगी या नही।

समुद्र की स्फुरदीप्ति, गर्मी के मौसम मे, अक्सर तपिश वाले दिन की गरज-तडप-वाली सन्ध्या को, विशेष स्पष्ट देखी जा सकती है। बगल की सडक पर लगे लैम्प या होटलो की बत्तियो के कारण सदैव ही इस बात का सदेह उत्पन्न होने लगता है कि समुद्र

1 Phosphorescence 2 Noctiluca miliaris 3 Flagellates

४ सच पूछा जाय तो 'स्फुरदीप्ति' का अर्थ नितान्त भिन्न होना है और समुद्र की दीप्ति के सम्बन्ध मे इसका कभी भी उपयोग नही किया जाना चाहिए।

मे दीखने वाला प्रकाश वास्तव मे स्फुरदीप्ति ही है या कि लहरो के शृंग पर बननेवाले झाग से प्रतिबिम्बित होने वाला प्रकाश। इस कारण इस घटना का सौन्दर्य पूर्णतया निर्दोष उस वक्त होता है जब रात्रि नितान्त अन्धकारपूर्ण हो। तथापि प्रेक्षण की परिस्थितियाँ यदि इस आदर्श को नही पहुँच पाती हो, तो ऐसी हालत मे बेहतर यह होगा कि आप अपने जूते-मोजे उतार डाले और पानी मे प्रवेश करके सतह से नीचे अपने हाथ से जल-राशि को हिला-डुला दे।

यदि स्फुरदीप्ति स्पष्ट दिखलाई नही पडती तो भी पानी को हिलाते समय आपको इक्की-दुक्की चिनगारी यत्र-तत्र दीख जायगी जो बस एक लमहे के लिए रोशनी देती है और फिर गुल हो जाती है। एक बाल्टी को समुद्र के पानी से भर दीजिए और उसे पूर्ण अन्धकारवाली जगह मे रखिए। कम अनुकूल परिस्थितियो वाले दिन भी, आपको स्फुरदीप्ति का आभास मिल सकेगा, यदि इस पानी को आप किसी छिछले बरतन मे उँडेले या जब अल्कोहल, फार्मोल, या कोई अम्ल पानी मे उँडेलकर आप इन सूक्ष्मकाय जीवो को उत्तेजित कर दे। इस स्फुरदीप्ति वाले पानी को गिलास मे उँडेलिए, ये नन्हे जीव सतह पर इकट्ठे हो जाते है। गिलास को हलके ठकठकाएँ, यान्त्रिक कम्पन के कारण ये जीव प्रकाश उत्सर्जित करने लगेगे और यदि इस क्रिया को आप बार-बार दुहराएँ तो प्रकाश का उत्सर्जन शनै -शनै क्षीण पडता जायगा।

कुछ अवसरो पर, समुद्र-जल मे जब स्फुरदीप्ति उत्पन्न होती है तो उसमे पृथक्-पृथक् चिनगारियाँ नही देखी जा सकती है। इस घटना का कारण बैक्टीरिया (Micrococcus Phosphoreus) की उपस्थिति है।

समुद्र की स्फुरदीप्ति के लिए एक मापक्रम तैयार कीजिए!

सर्दी के दिनो की शाम को प्रयोग कीजिए जबकि एक तरह से निश्चित होता है कि स्फुरदीप्ति मौजूद न होगी, और झाग फेकती हुई तरङ्गो का निरीक्षण कीजिए, अनुकूल परिस्थितियो की शाम को आप अन्तर देख पायेगे।

यदि आप समुद्र-यात्रा मे हो (विशेषतया उष्णकटिबधीय प्रदेशो मे) तो अँधेरी रात को आप बाहर निकल कर जहाज के अग्रभाग मे या पृष्ठभाग मे खडे हो जायें ताकि जहाज की रोशनी आड मे पडे। आप प्रकाश-चिनगारियो का अनवरत क्रम देखेगे जो तेजी से पीछे को भागती नजर आयेगी, ये स्वत प्रकाश उत्पन्न करनेवाले तरह-तरह के समुद्री जीवो की वजह से पैदा होती है।

हिन्द महासागर मे तथा अन्य दक्षिणी समुद्रो मे कभी-कभी समूचा समुद्र प्रकाश से जगमगाता हुआ दीखता है, और इसकी सतह पर बृहत्काय आलोक-धारियो का एक

ढाँचा, पहिये की तीलियो की तरह घूमता हुआ जान पडता है—ये वायुजनित तरङ्गे तथा जहाज के अग्रभाग से उत्पन्न हुई तरङ्गे है जो पानी पर गुजरने पर उसे विक्षुब्ध बना देती है और इस कारण इसमे स्फुरदीप्ति पैदा हो जाती है।

२२८. दीप्तिमान् लकड़ी, दीप्ति-युक्त पत्तियाँ

कभी-कभी ग्रीष्म की उमस वाली रात्रि मे, नम जङ्गल के अन्दर हम देख सकते है कि सडन खाती हुई लकडी किस प्रकार हलकी रोशनी पैदा करती है। यह रोशनी लकडी मे हर तरफ प्रविष्ट हुए मधु-फफूँद[1] के रेशे से उत्पन्न होती है।

वसन्त या जाडे मे पेड का ऐसा तना ढूँढिए जिसकी छाल पर बिखरे हुए मटमैले रेशे दीख रहे हो और जो तने पर से आसानी से अलग किये जा सके। ऐसे ही तने के कुछ टुकडे गीली सेवार मे लपेटकर घर ले आइए और अँधेरे कमरे मे उन्हे रख कर काँच के जार से ढक दीजिए। कुछ ही दिनो मे लकडी पर लगी फफूँद के रेशे रोशनी देने लग जायँगे। किञ्चित् अवसरो पर सडन खानेवाली शाखे भी प्रकाश उत्सर्जित करती है, ऐसा बैक्टीरिया के कारण होता है।

'बीच' तथा बलूत की सूखी पत्तियो के बडे ढेर जिनमे पत्तियाँ करीब-करीब आधी सडी हालत मे होती है, सडन की एक खास अवस्था मे स्पष्ट रूप से प्रकाश उत्पन्न करते है। करीब ४ इच से लेकर १२ इच तक मोटाई का ढेर ढूँढिए, बिलकुल ऊपर पडी हुई इक्की-दुक्की पत्तियाँ मत लीजिए, बल्कि अन्दर एक दूसरी से सटी हालत मे पडी हुई पत्तियो को उठाइए जिन पर पीत-श्वेत वर्ण के धब्बे पडे होते है, और ऐसी ही करीब एक मुट्ठी पत्तियो को अन्धेरे कमरे मे ले जाइए। इनकी दीप्ति की उत्पत्ति ऐसी जाति की फफूँद से होती है जिसका अभी तक ठीक-ठीक पता नही लगाया जा सका है।

२२९ (क). रात्रि मे बिल्ली की आँखे[2]

हम सभी जानते है कि कितनी खौफनाक रोशनी बिल्ली की आँखो से निकलती जान पडती है। फिर भी यह वास्तव मे केवल परावर्त्तित प्रकाश होता है, किन्तु सायकिल के परावर्त्तक से या ओस से ढकी घास के हेलिगेन्शीन से आनेवाले प्रकाश (§१६८) के मानिन्द यह प्रकाश भी केन्द्रित परावर्त्तन से प्राप्त होता है। बिल्ली की आँख के कोर्निया मे प्रवेश करनेवाली किरणे आँख के पृष्ठतल पर अत्यन्त स्पष्ट बिम्ब का निर्माण करती है और यह बिम्ब अपनी किरणो को उसी कोर्निया के रास्ते परावर्त्तित

1. Honey fungus 2 Nat. 88,377,1912

करता है जो लगभग उसी मार्ग पर वापस आती है जिस मार्ग पर वे प्रविष्ट होते समय गयी थी। इस घटना का सर्वाधिक स्पष्ट रूप से अवलोकन करने के लिए बिल्ली की आँख, लैम्प तथा प्रेक्षक की आँख एक ही सीधी रेखा मे स्थित होनी चाहिए। ऐसा करने के लिए टार्च को अपनी आँख की ऊँचाई पर रखना चाहिए, बिल्ली की आँखो की द्युति इस दशा मे ९० गज के फासले तक भी दिखाई देगी।

कुत्तो की आँखो से परावर्तित होनेवाला प्रकाश रक्तिम वर्ण का होता है। भेड, खरगोश तथा घोडो की आँखे भी दीप्तिमान् होती है, किन्तु मानवनेत्र नही।

२२९ (ख). सेवार पर प्रकाश का परावर्तन

खुला आकाश प्रभात की सुहावनी बेला है, जबकि घास सर्वत्र ओस से ढकी हुई है। गहरे साये की ओर की खाई मे नियम[1] जाति की सेवार के पौदे खूब उगे हुए है, इनके छोटे नाजुक तने पर नन्ही पत्तियो की दो कतारे लगी है जो इस बात का आभास देती है मानो उन पर जगमगाते हुए नन्हे तारे बिखरे पडे है। प्रत्येक तारा सुनहली हरी रोशनी विकिरित करता है जो जगमगाती हुई ओस की बूँदो की रोशनी की तुलना मे कही अधिक स्थिर है। अधिक बारीकी से प्रेक्षण करने पर हम देखते है कि इन नन्ही पत्तियो के नीचे सर्वत्र छोटी-छोटी बूँदे लटकी हुई होती है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि सूर्य का प्रकाश पत्तियो के हाशिये मे प्रवेश करता है और यहाँ बूँदो मे इसका पूर्ण परावर्त्तन हो जाता है तो एक बार फिर पत्तियो मे से गुजरकर यह बाहर आ जाता है—सुनहले हरे रग की उत्पत्ति इसी क्रिया के दौरान मे होती है।

बवेरिया मे फिश्तेल्गबर्ग की खोह कन्दराओ और दरारो मे पायी जानेवाली सुविख्यात दीप्तिमान् शैवाल सिटोस्स्टेगा ओस्मनडासिया[2] और भी अधिक मनोरम प्रकाश-प्रतिबिम्बन का प्रदर्शन करती है। इस शैवाल मे इसके गोलाकार कोष स्वय ही परावर्त्तक बूँदो का कार्य करते है।

२३०. पौदो के रस की प्रतिदीप्ति

वसन्त मे अखरोट के वृक्ष की छाल को काट कर उसके टुकडे कर लीजिए और उन्हे गिलास के पानी मे डाल दीजिए। पौदे का रस पानी के साथ मिल जाता है और तब यह एक अदभुत नीला प्रकाश देने लगता है जिसका अवलोकन अच्छी तरह उस

1. Mnium 2 Schistostega osmundacea

वक्त किया जा सकता है जब एक उत्तल लेन्स की मदद से सूर्य-किरणो का एक शकु द्रव के भीतर डाल दे। (इसके लिए घडीसाज का आतशी शीशा या परिवर्द्धक कॉच ले सकते है)। इस घटना का कारण यह है कि सूर्य-प्रकाश के पार-बैगनी किरणो का (हमारे लिए जो अदृश्य होती है) तथा बैगनी रग की किरणो का यह द्रव अवशोपण कर लेता है और उनके बजाय नीली किरणो को यह उत्सर्जित करता है। इस तरह के रूपान्तरण को 'प्रतिदीप्ति' कहते है।

कहा जाता है कि बडे पैमाने पर उगाये जाने वाले क्षीरी[1] वृक्ष की छाल भी इस घटना को प्रदर्शित करती है।

२३१ स्फुरदीप्ति प्रदर्शित करने वाली बर्फ और तुषार

एक प्राचीन आख्यान के अनुसार बर्फ से ढके मैदान सूर्य द्वारा काफी अरसे तक प्रकाशित होने के बाद, रात को हलका प्रकाश देते है। शून्य से कई डिग्री नीचे के ताप-क्रम के तुषार के लिए भी कहा जाता है कि यदि सूर्य की किरणे इस पर देर तक गिरती रही है तो इसे अँधेरे कमरे मे ले जाने पर इसमे से प्रकाश निकलता है। कहा जाता है कि ओले, विशेपतया जो तूफान के आरम्भ मे गिरते है, एक तरह की विद्युद् दीप्ति का प्रदर्शन करते है। इस घटना की जॉच कौन करेगा?

२३२. पत्थरो से चिनगारियो का फूटना

कभी-कभी हम देखते है कि किस प्रकार सडक के ककडो पर घोडे अपने खुर इस जोर से मारते है कि चिनगारियॉ फूट निकलती है।

सडक के किनारे पडे चकमक पत्थर या साधारण पत्थर के रोडे उठा लीजिए। ये रोडे बादामी रग का पुट लिए होते है और कोरो पर थोडे पारदर्शी होते है, तथा आम तौर पर कोने उनके हलके घिस गये रहते है—इनकी सरचना मणिभ-जैसी नही होती। ऐसे दो टुकडो को लेकर यथासम्भव अँधेरी जगह मे उन्हे आपस मे एक दूसरे से टक्कर लगाइए—चिनगारियॉ फूटेगी और एक अजीब-सी महक भी पैदा होती है। अन्य पत्थरो के साथ भी यही देखा जा सकता है। टक्कर के फलस्वरूप टूटकर अलग होने वाले जर्रो से ये चिनगारियॉ उत्पन्न होती है क्योकि चोट लगने से ये तप्त हो उठते है। इस क्रिया मे कुछ गैसे भी मुक्त होती है जिनसे यह अद्भुत गन्ध निकलती है।

1. Fraxinus Ornus

२३३. दल-दल का मिथ्या प्रकाश (विल-ओ-द-विस्प[1])

जनश्रुति के अनुसार गिर्जाघर के अहाते मे विल-ओ-द-विस्प की ज्योतियाँ नन्ही लौ की भाँति नाचती है या ये यात्रियो को भ्रम मे डाल कर उन्हे दलदल मे ले जाकर फँसा देती है। किन्तु इनका अस्तित्व, किसी भी अर्थ मे केवल परीलोक का किस्सा नही समझा जा सकता। ये सुविख्यात ज्योतिपज्ञ बेसेल तथा अन्य कुशल प्रेक्षको द्वारा देखी गयी है तथा उन्होने उनका वर्णन किया है, कठिनाई यह है कि यह घटना बहुत ही विभिन्न शक्ले धारण कर सकती है।

विल-ओ-द-विस्प प्रकाश दलदलो मे पाये जाते है, या उन स्थानो पर जहाँ से पीट[2] खोद कर जमीन से बाहर निकाली जाती है तथा टीलो के किनारे, यदा-कदा बगीचे की नर्सरी की नम भूमि पर जिसमे हाल मे खाद डाली गयी हो, ये देखे जा सकते है बशर्ते मिट्टी पर हम अपने पैर पटके, या कीचड वाले गड्ढो और नालियो मे ये दिखलाई पडते है, जबकि उनके अन्दर के पानी को हम हिलाते है। ग्रीष्म ऋतु की रातो को, या शरद की उमसवाली वर्षा की रातो मे, ये जाडे की अपेक्षा अधिक प्रचुरता से दिखलाई पडते है। ये नन्ही लौ सरीखे होते है जो लगभग $\frac{1}{2}$ इच से लेकर ५ इच तक ऊँची होती है और इनकी चौडाई २ इच से अधिक नही होती। कभी-कभी ये एकदम जमीन पर स्थित होते है ओर अन्य अवसरो पर भूमि से करीब ४ इच की ऊचाई पर ये उतराते रहते है। यह कहना कि 'वे नाचते रहते है' प्रकाश्यत सच नही है। वस्तुत होता यह है कि वे अचानक विलुप्त हो जाते है तो उसी के निकट एक दूसरी ज्योति प्रगट होती है और कदाचित् इसीसे ऐसा आभास होता है मानो ज्योति मे तीव्र हरकत हो रही है। कभी-कभी बुझने के पहले वे ज्योतियाँ हवा के साथ कई फुट तक बहा ले जायी जाती है। कई अन्य ऐसे दृष्टान्त देखे गये है जबकि विल-ओ-द-विस्प लगातार घण्टो तक प्रज्वलित रहा है, कभी-कभी सारी रात और दिन तक लौ जलती रही है। जब नयी ज्योति प्रज्वलित होती है तो कभी-कभी एक नन्हे विस्फोट की 'पॉप' सी आवाज़ सुनाई पडती है। कहा जाता है कि ज्योति का रग कभी पीला होता है, कभी लाल या नीला। कई दशाओ मे, जब हम अपना सिर इसकी ज्योति मे रखते है तो गर्मी की अनुभूति नही होती, हाथ की एक छडी जिसमे ताँबे की टेक लगी थी, लौ मे १५ मिनट तक रखी गयी तो इसका तापक्रम करीब-करीब पहले-जैसा ही बना रहा, सूखे तिनके तक इस लौ मे आग पकड नही सके थे। अन्य दशाओ मे इस लौ से कागज तथा रूई की लच्छी

1. Will-O-the-Wisp कच्छ-प्रकाश 2 Peat

को प्रज्वलित किया जा सका था। सामान्यत इसमें कोई गन्ध नही होती, पर यदा-कदा गन्धक की हलकी महक मिलती हैं।

ये रहस्यमयी ज्वालाएँ किस चीज की बनी होती है ? कोई भी अभी तक उस गैस को एकत्र नही कर पाया है जिसके प्रज्वलित होने से यह लौ बनती है। अनुमान लगाया गया है कि यह गैस हाइड्रोजन-फास्फाइड हो सकती है जो हवा मे स्वत दहन की क्षमता रखती हैं, प्रगटत फास्फीन (PH_3) तथा हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) का मिश्रण धुएँ और गध के बिना ही प्रज्वलित होता है और इस तरह यथार्थ घटना को सन्निकटत उत्पन्न कर सकता है। ये गैसे सडने-गलने वाले पदार्थों के विच्छेदन से उत्पन्न हो सकती हैं। इनकी लो रासायनिक दीप्ति का नमूना है, और इसका निम्न ताप एक विशिष्ट गुण है जो इस किस्म की प्रक्रिया मे अक्सर मौजूद पाया जाता है।

परिशिष्ट

२३४. प्राकृतिक घटनाओ का फोटो उतारने के लिए कुछ सुझाव

इस पुस्तक मे वर्णित प्रत्येक प्रकाशीय घटना के बारे मे यह प्रश्न उठना है कि क्या उसका फोटो उतारना सम्भव नही हो सकता। आश्चर्य की बात है, कि यद्यपि इस दिशा मे बहुत कुछ किया जा सकता है, किन्तु अभी तक इतना थोडा ही काम किया गया है। सामान्यत मामूली किस्म के केमरे से काम चल सकता है। केमरे के साथ यदि स्टैण्ड काम मे लाना हो तो इस स्टैण्ड मे गोली पर घूमनेवाला क़ब्जा[1] फिट करा लेना चाहिए (एकाध रूपये मे यह कब्जा मिल सकता है), इस कब्जे की वजह से केमरे को किसी भी दिशा मे इच्छानुसार झुका सकते है। इन्द्रधनुष तथा प्रभामण्डल आदि घटनाओ का फोटो उतारने के लिए चौडे मुँह के लेन्स वाले केमरे की आवश्यकता होगी। अस्त होते हुए सूर्य के कोरोना तथा उसकी विकृतियो का फोटो लेने के लिए केमरे के लेन्स की फोकस-दूरी कम-से-कम १२ इच अवश्य होनी चाहिए।

इनके लिए सदैव ऐसी प्लेट या फिल्म काम मे लाइए जिसकी पीठ पर धुन्ध के निराकरण के निमित्त मसाला[2] पुता हो, और अच्छा होगा कि ये आर्थो या पैन्क्रोमैटिक किस्म की हो। भू-दृश्य के लिए जिसमे तुषार, ओले, फूलो से ढके वृक्ष, वादल या दूरस्थ क्षितिज मौजूद हो, आप आर्थो या पैन्क्रोमैटिक प्लेट और फिल्मो के साथ पीला फिल्टर[3] इस्तेमाल कीजिए। केमरे के अभिदृश्य लेन्स पर सूर्य की रोशनी न पडे, इसके लिए लेन्स के सामने एक खोखला बेलनाकार ओट काम मे लाइए। अच्छा होगा कि भूदृश्य का फोटो उस वक्त ले जब सूर्य आकाश मे अधिक ऊँचाई पर न हो। दृश्य पर सामने, पीछे या ऊपर से प्रकाश गिरने की अवस्थाओ के अन्तर का अध्ययन करने के लिए भी फोटो लीजिए (§२२३)।

केमरे के लिए प्रकाश-दर्शन की समय-अवधि, वायुयान से फोटो उतारने के लिए $\frac{१}{१००}$ सेकण्ड से लेकर चादनी रात मे उतारे जाने वाले फोटो के लिए १ घण्टे तक रखी जा सकती है।

फिल्म को मेटोल–हाइड्रोक्वीनोन[4] डेवेलपर मे धोइए।

1. Ball-joint 2 Anti-halation backing 3. Filter
4. Metol-hydroquinone

२३५. मैदान मे कोणो की नाप कैसे की जाती है

(क) अन्य किसी भी साधन की सहायता के बिना ही तारो की कोणीय ऊँचाई का अन्दाज लगाने का प्रयत्न कीजिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, पहले ऊर्ध्व-बिन्दु की स्थिति निश्चित करने की कोशिश कीजिए और तब घूम जाइए और फिर देखिए कि आप ऊर्ध्वबिन्दु को उसी स्थल पर निश्चित कर पाते हैं या नही। इसके उपरान्त ४५° की कोणीय ऊँचाई ज्ञात करने की कोशिश कीजिए, फिर २२ ५° की और तब ६७ ५° की। आप पायेगे कि सहज प्रवृत्ति यह होती है कि आप अपना सिर पर्य्याप्त मात्रा मे पीछे की ओर नही झुका पाते (§१०९)। एक **कुशल** प्रेक्षक की त्रुटि कभी भी ३° से अधिक नही होती।

(ख) लकडी की तख्ती पर या कागज की दफ्ती पर पिन A, B तथा C इस ढग से लगाइए कि जिस कोण की नाप की जा रही है, वह BA तथा BC दृष्टि रेखाओ के दर्मियान बिलकुल ठीक-ठीक पडे। लकडी को सही तरीके पर व्यवस्थित करना होगा, या तो मेज पर इसे चौरस स्थिति मे रखे या वृक्ष पर कील से इसे जड दे। तब B A और B C रेखाएँ खीच कर अशाङ्कित चाप पर उस कोण का मान पढ लीजिए (चित्र १६०)।

(ग) पतली लकडी की डण्डी लीजिए जिसपर बराबर दूरियो पर पिने या कीले लगी हो और इसके मध्यबिन्दु पर एक दूसरी डण्डी (लम्बाई ३ फुट) का सिरा जोड दीजिए (चित्र १६०, a)। इस तरह प्राप्त ढाँचे को अब ऐसे पकडिए
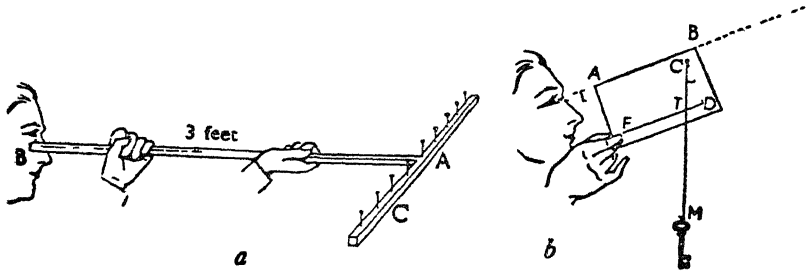
चित्र १६०—**कोण ऑकने का सरल उपकरण।**

कि सिरा B आप के गाल के स्पर्श मे हो तथा कीले A और C विचाराधीन विन्दुओ की सीध मे पडकर उन्हे ढक ले। तव निष्पत्ति $\frac{AC}{BA}$ उन दोनो बिन्दुओ

के दर्मियान के कोण का मान रेडियन मे प्रगट करेगी (१ रेडियन=५७°)। यदि, उदाहरण के लिए, AC = ३ इच हो तव $\frac{AC}{BA}$ = ००८ रेडियन = ४७° होगा। कोण का मान यदि २०° से अधिक हो तव गणना की पद्धति थोडी क्लिष्ट हो जाती है।

(घ) सामने अपनी भुजा तान दीजिए और अपनी उँगलियाँ, अधिक-से-अधिक जितना हो सके, फैलाइए। तो अँगूठे और कनिष्ठा उँगली के पोरो के दर्मियान का कोण लगभग २०° होगा। या सामने भुजा को तानकर, हाथ मे भुजा के समकोण पतली लकडी की डण्डी पकडिए। विचाराधीन दोनो बिन्दुओ की इस लकडी पर आभासी दूरी यदि a से० मी० प्राप्त हो, तव प्रेक्षणाधीन उन बिन्दुओ के दर्मियान का कोण सन्निकटत a डिग्री होगा। इस विधि को और अधिक यथार्थ बनाने के लिए आँख से डण्डी तक की बिलकुल सही दूरी नापनी चाहिए।

(ङ) क्षितिज के ऊपर कोण नापने का एक सरल उपकरण भी लभ्य है जिससे प्राप्त कोण के मान ०५° तक यथार्थ बैठते है। एक आयताकार दफ्ती का टुकडा लीजिए जिस पर बिन्दु C पर एक सूराख बना हो। इस बिन्दु से धागा CM लटकाइए जिसके निचले सिरे पर धातु का एक टुकडा बँधा हो। यह धागा साहुल रेखा का काम देगा (चित्र १६०, b)। प्रेक्षक, मान लीजिए, किसी वृक्ष की ऊँचाई नापना चाहता है, तो वह दफ्ती को इस तरह पकडेगा कि उसकी आँख से वृक्ष की चोटी तक जाने वाली दृष्टिरेखा ठीक दफ्ती के हाशिये AB की सीध मे पडे, प्रेक्षक दफ्ती को ऊर्ध्व धरातल से तनिक एक ओर झुकायेगा ताकि धागा दफ्ती की सतह से अलग होकर स्वतत्रतापूर्वक लटके, फिर उसे यह वापस ऊर्ध्व धरातल मे ले जायगा ताकि धागा उसकी सतह को हलके स्पर्श कर ले। दफ्ती पर A B के समकोण पर रेखा C D खीचते है और A B के समानान्तर D T खीच लेते है। C D की लम्बाई, अच्छा होगा, यदि लगभग ४ इच रखे। अब कोण D C M बराबर होगा A B तथा क्षैतिज नल के दर्मियान के कोण के, और इसका मान अशाङ्कित चाप की मदद से नापा जा सकता है, या इसकी गणना $\tan \frac{TD}{CD}$ से कर सकते है। छोटे मान के कोण के लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{कोण का मान} = \frac{TD\ (\text{इचो मे})}{४}\ \text{रेडियन}$$ (देखिए §§ १, १२०)

पारिभाषिक शब्दसूची

हिन्दी-अंग्रेजी

अ

अकीक–Agate, गोमेद
अखरोट (वृक्ष)–Horse chestnut
अग्रभूमि–Fore-ground
अणु–Molecule
अतिक्रम–Deviation, विचलन
अति-परवलय–Hyperbola
अतिबैंगनी–Ultra violet, पराबैंगनी
अतिरिक्त धनुष–Supernumerary bows
अति सवर्धन–Exaggeration
अत्यधिक शीतलीकृत–Supercooled
अदीप्तियाँ–Dark minima
अधोऽनुमान, न्यूनानुमान–Under estimation
अधोवर्ती सूर्य–Sub-sun
अध्यारोपित–Superimposed
अध्रुवित–Unpolarised
अनन्तदूरी–Infinity
अनियमित–Random
अनीमोमीटर–Anemometer
अनुकल–Integral
अनुकूलतम–Optimum
अनुकूल स्रोत–Coherent sources
अनुपूरक–Complementary
अनुप्रयुक्त–Applied
अनुप्रस्थ काट–Transverse section
अनुरूपी–Corresponding
अनुसूर्य–Sub-sun
अनुस्थापित–Oriented
अन्तरिक्ष-यान–Space-ships
अन्तर्ग्रही–Interplanetary
अन्धकार-रेखा–Line of darkness
अन्धविश्वास–Superstitions
अन्वालोपित–Enveloped
अन्वेषण–Investigation
अपसृत–Diverged
अप्रत्यक्ष–Indirect
अभिजित्–Vega
अभिदृश्य लेन्स–Objective
अभिलम्ब–Normal
अभिलोपित–Obliterated
अमोनिया–Ammonia
अम्ल–Acid
अरुन्धती–Alcor
अरोरा–Aurora

अर्ध गोला–Hemisphere
अलका–Cirrus
अलका-पुञ्ज–Cirro-cumulus
अलका-स्तार–Cirro-stratus
अल्जीआ–Algae
अवकरण–Reduction
अवचेतन–Subconscious
अवतल–Concave
अवधारणा–Concentration
अवमन्दित–Damped
अवयव–Component
अवरक्त–Infra-red
अवशोषण–Absorption
अविच्छिन्न–Cantinuos
अविरत–Continuous
असममित–Assymmetrical
असामान्य रूप से–Abnormally

आ

आंकिक पद्धति से–Statistically
आंशिक ग्रहण–Partial eclipse
आइसोफोटो–Iso-photo
आकाशगंगा–Milky way
आक्सीकरण–Oxidation
आक्सीकृत–Oxidised
आख्यान–Legend
आग्नेय चट्टानें–Granite
आणविक–Molecular
आत्मनिष्ठ–Subjective
आदर्श प्रमाप-Norm for comparison
आपतन तल–Plane of incidence
आपतित–Incident
आभामण्डल–Aureole
आभासी–Apparent
आयनीकरण–Ionization
आयनो-स्फियर–Ionosphere
आयाम–Amplitude
आर्कलैम्प–Arc-lamp
आर्थो–Ortho
आर्थोक्रोमैटिक–Orthochromatic
आर्द्रा नक्षत्र–Betelgeuse
आवर्धित–Magnified
आवृत्ति–Frequency
आश्वेत– Whitish
आस्मिक अम्ल–Osmic Acid

इ

इन्द्रधनुष–Rainbow
इलेक्ट्रान–Electron

उ

उच्च पुंज–Alto-cumulus
उच्च स्तर–Alto-status
उत्क्रमण–Inversion
उत्क्रमण बिन्दु–Point of inversion
उत्तर बिम्ब–After-image
उत्तर प्रकाश-ज्योति–After gloki
उत्तरीय प्रकाश–Northern lights
उत्तल–Convex
उत्तेजित–Stimulated
उत्सर्जन–Emission
उद्दीपन–Iridescence
उद्दीप्त–Iridescent

उपकरण–Apparatus
उपसूर्य–Parhelia
उपादान–Factor
उल्काएँ–Meteors
उष्ण कटिबन्ध–Tropics
ऊर्ध्वपातन–Sublimation
ऊर्ध्व बिन्दु–Zenith
ऊर्ध्वाधर–Vertical
ऊर्म्मिल–Undulating

ऋ

ऋतु-अनुसन्धान विज्ञान–Meteorology
ऋतुविज्ञान–Meteorology

ओ

ओजोन–Ozone
ओस-धनुष–dew-bow

क

कक्षा–Orbit
कणिकाएँ–Grains
कणिकामय–Granular
कनिष्ठा उँगली–Little finger
कन्या–Virgin
कम्पन–Vibration
कम्पार्टमेण्ट–Compartment
कर्क–Crab
कला-अन्तर–Phase-difference
कलिलीय–Colloidal
कास्यपीत–Bronze yellow
कान्तिचक्र–Corona, किरीट
कार्बनिक– Organic
कारण्ड घास–Duck weed
काले-भूरे–Ashgrey
किरीट–Corona
कीट–Insect
कुम्भ–Waterman
कुहरा धनुष–Fog-bow
कुहासा–Mist
कृत्रिम सूर्य–Mock sun
कृष्ण वस्तु–Black body
केन्द्रित परावर्तित प्रकाश–Directed, reflected light
कैण्डल शक्ति–Candle power
कोपलें–Shoots
कोटर–Socket (of the eye)
कोटि–Order
कोबाल्ट सल्फेट–Cobalt Sulphate
कोर्निया–Cornea
कोशा–Cell
क्यूप्रिक सल्फेट–Cupric Sulphate
क्रमागत–Successive
क्रमिक–Gradual
क्रॉस–Cross
क्रान्तिवलय–Ecliptic
क्रिस्टल–Crystal
क्लोरोफिल–Chlorophyll, पर्णहरित
क्वार्ट्‌ज–Quartz
क्षतिपूरक–Compensating
क्षीरी–Fraxinus Ornus
क्षैतिज–Horizontal
क्षैतिज दण्ड–Horizontal bar

ग

गर्त–Trough
गाउन–Gown
गुणात्मक–Qualitative
गुबरैला–Beetle
गुरुत्वाकर्षण–Gravitational attraction
गोलीय खण्ड–Spherical segment
गौण इन्द्रधनुष–Secondary rainbow
ग्लेशियर–Glacier, हिमनद
ग्लोब–Globe

च

चकमक पत्थर–Flint
चरण–Stage, क्रम
चाप– Arc
चिकनाई–Grease

छ

छल्ला–Ring, वलय

ज

जल-आकाश–Water-sky
जल-दूरबीन–Water-telescope
जल-प्रपात–Water-falls
जलरेखा–Water-line
जलवर्ण–Water-colour
जार–Jar
जिंक ह्वाइट–Zink white
जिलैटिन–Gelatine
जीरैनियम–Geranium
जीवाणु–Bacteria
जुगनू–Glow-worm
जैतूनी हरा–Olive green
ज्येष्ठा–Antares

झ

झिरी–Slit
झिलमिलाहट–Flickering

ट

टायर–Tyre
टिमटिमाहट–Scintillations

ठ

ठोसपन–Solidity

ड

डायफ्राम–Diaphregm
डेक–Deck
डैन्डीलियन–Dandellions

ढ

ढवैलापन–Turbidity

त

ततु–Filament
तटस्थ–Neutral
तटस्थता–Objectivity
तड़ित्–Lightning
तड़ित्-अलका–Thunder-cirrus
तरग-शृग–Crests of waves
तरगदैर्ध्य–Wavelength
तरगाग्र–Wavefront
तरगिकाएँ–Wavelets
तलीय खिचाव–Surface tension
तापोज्ज्वल–Whitehot
ताराराशि–Constellation

तात्बो–Talbo
तिनपतिया–Clover
तिर्यक्–Oblique
तीव्रता–Intensity
तुलनायत्र–Frame of reference
तुला–Scales
तुषार–Snow
तेज-श्रृंग–Prominences (of sun)
तैलीय–Oily

थ

थियरी–Theory

द

दक्षिणावर्त–Clockwise
दानेदार–Granular
दायरा–Oval
दिक्सूचक–Compass
दिगंश–Azimuth
दीप्तिमान्–Luminous
दीप्तिमाप श्रेणी–Order of magnitude of illumination
दीप्तिमापी–Photometer
दीर्घवृत्त–Ellipse
दुहरा सूर्य–Double sun
दूरबीन–Telescope
देश–Space
देहली–Threshold
दृश्यता–Visibility
दृश्यस्थल–Scenery
दृष्टि-दिशा–Visual direction
दृष्टि-निर्बन्धता–Persistence of vision
दृष्टि-बिन्दु–Point of view
दृष्टिभ्रम–Illusion
द्विकोपीय अल्जीआ–Diatoms
द्विनेत्री दूरबीन–Opera Glass
द्विवर्णिक–Dichroism

ध

धनु–Archer
धरती-आलोक–Earth-light
धुन्ध–Mist, haze
धूमकेतु–Comet
ध्रुवक कोण–Polarising angle
ध्रुवण–Polarisation
ध्रुवणदर्शी–Polariscope
ध्रुवित–Polarised
ध्रुवीय–Polar

न

नभोमण्डल–Celestial vault
नर्सरी–Nursery
नाइग्रोमीटर–Nigrometer
नाभिक–Nuclei
निअन–Neon
निकट-दृष्टि–Short sight
निकल–Nicol
निम्नदाब–depression
नियामक अक्ष-Axis of co-ordinates
नियामक धरातलपृष्ठ–Surface of reference
निरपेक्ष–Unprejudiced
निर्देशन-बिन्दु–Reference point

निलछवे–Bluish, नीलाभ
निशिताग्र–Cusp
नील–Indigo
नीललोहित–Purple
नेत्रगोलक–Eyeball
न्यूनानुमान–Underestimate

प

पट्टियाँ–Bands
पथरेखा–Locus, बिन्दुपथ
पथान्तर–Path-difference
परखनली–Test-tube
परमाणु–Atom
परमावस्था–Extreme case
परा-अलका–Ultra cirri
परागाशय–Anthers
परामिति–Parameter
परावर्तन–Reflection
परावर्तन-गुणाक–Coefficient of reflection
परिकल्पना–Assumption
परिक्षेपण–Scattering
परिक्षेपण-क्षमता–Scattering power
परिक्षेपित–Scattered
परिपार्श्व–Surroundings
परिभ्रमणगति–Rotatory motion
परिमितीय–Peripheral
परिवर्ती–Changing
परिवर्धक काँच–Magnifying glass
परिवर्धक लेन्स–Magnifying lens
परिवृत–Circumscribed
परिवृत ऊर्ध्व-बिन्दु चाप–Circum-zenithal arc
परिहार–Avoid
पर्किन्ज प्रभाव–Purkinje Effect
पाजिटिव–Positive
पाण्डुर–Pale
पारदर्शी–Transparent
पार-सामुद्रिक–Ultra-marine
पार्थिव–Terrestrial
पावर-हाउस–Power-house
पाश्चात्य विषा–Monkestood
पिण्ड-दर्शन–Steoroscopic vision
पिण्डदर्शन की घटना–Steoroscopic phenomenon
पीट–Peat
पुञ्ज-जलद–Cumulo-nimbus
पुञ्जमेघ–Cumulus
पुञ्ज-स्तारीय–Cumulo-stratus
पूरक–Complementary
पृष्ठदण्ड–Keel
पृष्ठभूमि–Back-ground
पेशियाँ–Muscles
पैन्क्रोमैटिक–Panchromatic
पोटैसियम क्रोमेट–Potassium chromate
पोर–Tip
पोलकी रत्न–Opal
पोलरायड–Polaroid
प्रकाश-गृह–Light-house
प्रकाश-छल्ले–Light-rings

प्रकाश-तीव्रता–Intensity of light
प्रकाशदर्शन–Exposure
प्रकाश-मण्डल–Glory
प्रकाश-स्रोत–Source of light
प्रकाशीय–Optical
प्रक्षेपण–Projection
प्रज्वलन–Combustion
प्रति-चमक–Counter glow
प्रति-ज्योति–Counter glow
प्रति-प्रकाश स्रोतबिन्दु–Anti-light source point
प्रतिदीप्ति–Fluorescence
प्रतिफलित–Resultant
प्रतिरूप–Counter part
प्रति-सान्ध्य प्रकाश-Counter twi-light
प्रति-सूर्य बिन्दु–Anti-solar point
प्रति-सूर्य–Antehelion
प्रत्यक्ष–Direct
प्रत्यावर्तन–Cycle
प्रत्यावर्ती–Alternating
प्रदीप्त चमक–Bright glow
प्रदीप्ति-तीव्रता–Intensity of light
प्रभा-मण्डल–Halo
प्रमाश–Procyon
प्रमुख इन्द्रधनुष–Primary rain-bow
प्रशन नील–Prussian blue
प्राधान्य–Predominance
प्रावण्य, प्रवणता–Gradient
प्रारूप–Pattern
प्रेक्षक–Observer
प्रेक्षणगम्य–Observable
प्रेतछाया–Spectre
प्रिज्म, समपार्श्व–Prism

फ

फलन–Function
फाता मोर्गाना–Fata morgana
फार्बेन लेहर–Farben lehre
फार्मोल–Formol
फास्फीन–Phosphene
फिलामेण्ट, (शिरा), तन्तु–Filament
फिल्टर–Filter
फुहार-उत्पादक–Vaporiser
फोकस दूरी–Focal length
फोटो इलेक्ट्रिक सेल–Photo-electric cell
फ्रेम–Frame
फ्लोर कन्ट्रास्ट–Flor-contrast

ब

बर्फ-निमीलन–Ice-blink
वर्फ-सूची–Ice-needle
वलूत—Oak
बहिर्द्वार–Exhaust port
बाडिस–Bodice
बादल-दर्पण–Cloud-mirror
बादामी–Brown
बाह्य त्वचा का–Epidermal
विन्दुचित्रण–Pointillism
विन्दुपथ–Locus
बीच–Beech

बृहत् वृत्त–Great circle
बृहत् श्वान–Great Dog
बृहस्पति–Jupiter
बैक्टीरिया, जीवाणु–Bacteria
बैंगनी–Violet
बोधगम्य–Perceptible
ब्रह्महृदय–Capella
ब्रह्माण्डीय–Cosmic
ब्रेक–Brake

भ

भस्म-सरीखे धूसर–Ash grey
भास स्थायी–Meta-stable
भू-दृश्य–Landscape
भोजपत्र–Birch

म

मडलक–Disc
मकर–Capricorn
मघा–Regulus
मधु फफूँद–Honey fungus
मनोवैज्ञानिक–Psychological
मरकत मणि–Emerald
मरीचिका–Mirage
मात्रात्मक–Quantitative
मानचित्र–Map
मापश्रेणी–Scales
मायावी–Capricious
मिथुन–Twins
मिथ्याप्रकाश–Will'o-the-wisp
मीन–Fishes
मृगव्याध–Orion
मेष–Ram
मैन्गैनीज–Manganese
मोती के सीप–Mother of pearl
मोबिल आयल–Mobil oil

य

यथार्थता–Accuracy
α ययाति–Persei α
δ ययाति–Persei δ
युग्म तारे–Double stars

र

रजक–Paint
रजत-श्वेत–Silver-white
रश्मिस्पर्शी वक्र–Caustic
β रथी–Aurigo β
राई–Rye
राशिचक्र–Zodiac
राशिचक्रीय प्रकाश–Zodiacal light
रासायनिक प्रदीप्ति–Chemi lumi-niscence
रिम–Rim
रीफ्लेक्स–Reflex
रूपदर्शन–Aspect
रूपान्तरण–Transformation
रेखाछादन–Hatching
रेटिना–Retina
रेडियन–Redian
रेलिंग–Railing
रैखिक गति–Translatory motion
रोमछिद्र–Pores
रोहिणी–Aldebaran

ल

लघु शीर्ष–Lesser minima
लघु श्वान–Little Dog
लचीला–Elastic
ललछवे–Redish
लाइकोपोडियम–Lycopodium
लाक्षणिक–Characteristic
लान–Lawn
लिनार्दो-दा-विन्ची–Leonardo-da-Vinci
लुब्धक–Sirius
लेन्स–Lens
लोकोक्ति–Proverb

व

वक्रसमूह–Family of curves
वरीयता की स्थितियाँ–Poistions of preference
वर्ण–Colour
वर्तन–Refraction
वर्तन कोर–Refracting edge
वर्तुलाकार–Round
वसिष्ठ–Mizare
वस्तुनिष्ठ–Objective
वाटिका ग्लोब–Garden globe
वामावर्त–Anti-clockwise
वायव्य–Ethereal
वायुजनित अनुदर्शन–Aerial Perspective
वायुज्योति–Air-glow
वायुवाष्प-मानलेखी–Psychrometer
विकल्पत –Alternately
विकिरण–Radiation
विक्षेप–Deflection
विचलन–deviation
विच्छेदन–Decomposition
विनिमय–Exchange
विपर्यास–Contrast
विरल–Rare
विराम–Rest
विलयन–Solution
विलोम–Reverse
विवर्तन–Diffraction
विवर्तन ग्रेटिंग-Diffraction grating
विवर्तन धारियाँ–Diffraction finges
विपम–Anomalous
विपम-तलीय–Skew
विषमता–Irregularity
विसरणयुक्त–Diffused
विसर्ग नली–Discharge tube
विसृत–Diffuse
विस्थापनाभास–Parallax
विस्फोट–Explosion
वीणा–Lyre
वेल्ड–Weld
वृश्चिक–Scorpion
वृष–Bull
व्यतिकरण–Interference
व्यवधान–Disturbance

श

शंकु–Cone

शकु और दण्ड–Cone and rod
शनि–Saturn
शमन–Dampout
शमीधान्य–Lupine
शलाका–Beam
शारीरिक प्रक्रिया सम्बन्धी–Physiological
शिराएँ–Filaments
शीर्ष–Maxima
शुक्र–Venus
शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर–Wet and dry bulb thermometer
श्रृंग–Crest
शेड–Shade
शैवाल–Mosses
श्रवण–Altair
श्रान्ति–Fatigue
श्रेणी–Series
श्वेत–White

स

सक्रमण–Transition
सगत–Consistent
सघनन–Condensation
सतत–Continuous
सदर्भवस्तु–Object of reference
सधान–Weld
सपुष्टि–Confirmation
सतृप्त, सपृक्त–Saturated
सभ्रम–Confusion
सरचना–Structure
सविलीन–Merge
सवेदनशील, सवेदी–Sensitive
सश्लिष्ट–Compound
ससृत–Converging
सदिश त्रिज्या–Radius vector
सप्तर्षिमण्डल–Great Bear
सप्लाई–Supply
समकालिक–Simultaneous
समकेन्द्रीय–Concentric
समक्षित–Subtended
समतुल्य–Equivalent
सम दिशा का–Isotropic
सममित–Symmetrical
सममिति–Symmetry
सममिति-अक्ष–Axis of symmetry
समष्टि रूप से–As a whole
समभिकथन–Assertion
समानुयोजित–Adapted
समुद्री हरा–Seagreen
सर्चलाइट–Search light
सर्वग्रास–Totality (of eclipse)
सर्वांगी–All-sided
सर्वेक्षण–Survey
सल्फर-ट्राइ-आक्साइड–Sulphur tri oxide
सल्फाइड–Sulphide
सानिध्य–Juxtaposition
साइटोप्लाज्म–Cytoplasm
साइलेक्स–Silex
सान्द्र कोण–Solid angle

सान्ध्य किरणें–Crepuscular rays
सान्ध्य प्रकाश–Twilight
साम्य–Harmony
सायनोमीटर–Cyanometer
साहुल–Plumb line
सिहृ–Lion
सिल्युएत–Sillhouette
सीमान्तक–Limiting
सुग्राहिता–Sensitivity
सुरमई–Leaden
सूँस–Propoise
सूचीस्तम्भ–Pyramid
सूत्र–Formula
सेक्सटैण्ट–Sextant
सेफ्टी वाल्व–Safety valve
सेवार–Mosses
सैद्धान्तिक–Theoretical
सोडियम–Sodium
सौर परिवृत्त–Parhelic circle
स्काइ–Ski
स्केल–Scale
स्क्रू प्रोपेलर–Screwpropeller
स्ट्रैटोस्फियर–Stratosphere
स्तार-पुञ्ज–Strato-cumulus
स्थानान्तर–Displacement
स्थिराङ्क–Constant
स्पन्दन–Vibration
स्पर्शकीय चाप–Tangential arc
स्फान–Wedge, पच्चड
स्फुरदीप्ति–Phosphorescence
स्वाति–Arcturus
स्वाति तारामसूह–Bootes

ह

हपुषा–Juniper
हाइड्रोजन सल्फाइड–Hydrogen sulphide
हीदर–Heather
हीलियम–Helium
हेड लाइट–Head light
हेडिजर ब्रुश–Haidinger Brush
हेलिगेन्शीन–Heilingenshein
हेल्मेट–Helmet

अंग्रेजी-हिन्दी

A

Abnormal-असामान्य
Abnormally-असामान्य रूप से
Absorption-अवशोषण
Accuracy-यथार्थता
Acid-अम्ल
Adapted-समानुयोजित
Aerial perspective-वायुजनित अनुदर्शन
After-glow-उत्तर प्रकाश-ज्योति
Agate-अकीक, गोमेद
Air-glow-वायु-ज्योति
Alcohol-अल्कोहल
Alcor-अरुन्धती (तारा)
Aldebaran-रोहिणी (नक्षत्र)
Algae-अल्जीआ
Algol -β तिमि
All-sided-सर्वांगी
Altair-श्रवण (नक्षत्र)
Alternately-विकल्पत
Alternating-प्रत्यावर्ती
Alto-cumulus-उच्च पुञ्ज (मेघ)
Ammonia-अमोनिया
Ammonium sulphate-अमोनियम सल्फेट
Amplitude-आयाम
Anemometer-अनीमोमीटर
Anomalous-विषम
Antares-ज्येष्ठा (नक्षत्र)
Antehelion-प्रति-सूर्य्य
Anthers-परागाशय
Anti-solar point-प्रति-सूर्य्य बिन्दु
Apparatus-उपकरण
Apparent-आभासी
Applied-अनुप्रयुक्त
Arc-चाप
Archer-धनु (राशि)
Arcturus-स्वाती (नक्षत्र)
As a whole-समष्टि रूप से
Ash grey-भस्म सरीखा धूसर
Aspect-रूपदर्शन
Assertions-समभिकथन
Assumption-परिकल्पना
Astronomer-खगोल-शास्त्री
Asymmetrical-असममित
Atom-परमाणु
Aureole-आभामण्डल, आरिएल
Aurigo-β रथी
Aurora-अरोरा
Avoid-परिहार

Axes of co-ordinates–नियामक अक्ष
Axis of symmetry–सममिति अक्ष
Azimuth–दिगश

B

Bacteria–बैक्टीरिया, जीवाणु
Background–पृष्ठ-भूमि
Bands–पट्टियाँ
Beam–शलाका
Beat–क्रमिक प्रकाश-दर्शन
Beech–बीच वृक्ष
Beetle–गुबरौडा
Betelegeuse–आर्द्रा (नक्षत्र)
Birch–भोजपत्र
Black body–कृष्ण वस्तु
Blade–ब्लेड, फलक
Bluish–निलछौवाँ
Bodice–बाडिस
Bootes–स्वाती तारासमूह
Brake–ब्रेक
Bright glow–प्रदीप्त चमक
Brown–बादामी
Bronze yellow–कास्य पीत
Bull–वृष (राशि)

C

Candle-power–कैन्डल शक्ति
Capella α–α रथी (ब्रह्म हृदय)
Capricorn–मकर
Carro-stratus–अलका-स्तार (मेघ)
Caustic–रश्मिस्पर्शी वक्र
Celestial vault–नभोमण्डल
Cells–कोष
Changing–परिवर्त्ती
Characteristic–लाक्षणिक
Chemiluminiscence– रासायनिक दीप्ति
Chlorophyll–क्लोरोफिल, पर्णहरित
Circumscribed–परिवृत
Circumzenithal arc–परिवृत ऊर्ध्व बिन्दु चाप
Cirro-cumulus–अलका पुञ्ज (मेघ)
Cirrus–अलका (मेघ)
Clockwise–दक्षिणावर्त्त
Cloud-mirror–बादल-दर्पण
Clover–तिनपतिया (पौदा)
Cobalt blue–कोबाल्ट नीली
Cobalt sulphate–कोबाल्ट सल्फेट
Coefficient of reflection–परावर्त्तन गुणाक
Coherent source–अनुकूल स्रोत
Colloidal–कलिलीय
Colour–वर्ण
Combustion–प्रज्वलन
Comet–धूमकेतु
Compartment–कम्पार्टमेण्ट
Compass–दिक्सूचक
Compensating–क्षतिपूरक
Complementary–पूरक, अनुपूरक
Compound–सश्लिष्ट
Concave–अवतल

Concentration–अवधारणा, सकेंद्रण
Concentric–सकेन्द्रीय
Condensation–सघनन
Condensed–घनीभूत, सघनित
Cone–शकु
Cones and rods–शकु और दण्ड
Confirmation–सम्पुष्टि
Confusion–सभ्रम
Consistent–सगत
Constant–स्थिराक
Constellation–तारा-राशि
Continued–सतत
Continuous–अविरत, अविच्छिन्न
Contrast–विपर्यास
Converging–ससृत
Convex–उत्तल
Cornea–कॉर्निया
Corona–कोरोना, कान्तिचक्र, किरीट
Corresponding–अनुरूपी
Cosmic–ब्रह्माण्डीय
Counter clockwise–वामावर्त्त
Counter-glow–प्रति-चमक, प्रति-ज्योति
Counterpart–प्रतिरूप
Counter twilight–प्रतिसान्ध्य-प्रकाश
Crab–कर्क (राशि)
Crepuscular rays–सान्ध्य किरणे
Crest–शृग
Crest of waves–तरग-शृग
Cross–क्रास
Crystal–क्रिस्टल, मणिभ
Cumulo-nimbus–पुञ्ज-जलद (मेघ)
Cumulo-stratus–पुञ्ज-स्तार (मेघ)
Cumulus–पुञ्ज (मेघ)
Cupric sulphate–क्यूप्रिक सल्फेट
Cusp–निशिताग्र
Cyanometer–सायनोमीटर
Cycle–प्रत्यावर्तन
Cytoplasm–साइटोप्लाज्म

D

Damp out–शमन
Damped–अवमन्दित
Dandelions–डैन्डीलियन
Dark-grey–काला भूरा
Deck–डेक
Decomposition–विच्छेदन
Deflection–विक्षेप
Depression–निम्न दाब
Deviation–विचलन, अतिक्रम
Dew-bow–ओस-धनुष
Diagonal–कर्ण
Diaphregm–डायफ्राम
Diatoms–द्विकोषीय (अल्जीआ)
Dichroism–द्विवर्णिक
Diffraction–विवर्त्तन
Diffraction fringes–विवर्त्तन-धारियाँ
Diffraction gratings–विवर्त्तन ग्रेटिग

Diffuse–विसृत
Diffused–विसरणयुक्त
Direct–प्रत्यक्ष
Directed reflected light-केन्द्रित परावर्त्तित प्रकाश
Disc–मडलक
Discharge tube–विसर्ग लैम्प
Displacement–विस्थापन, स्थानान्तरण
Disturbance–व्यवधान
Divergent–अपसृत
Double sun–दुहरा सूर्य्य
Double stars–युग्म तारे
Duck weed–कारण्ड घास
Dull–धूमिल

E

Eagle–गरुड (तारा-राशि)
Earth light–धरती आलोक
Ecliptic–क्रान्ति-वलय (क्रान्तिवृत्त)
Eclipse–ग्रहण
Elastic–लचीला
Electron–एलेक्ट्रान, इलेक्ट्रान
Ellipse–दीर्घवृत्त
Elizabeth linnaeus–एलीजाबेथ लिनो
Emerald–मरकत (मणि)
Emission–उत्सर्जन
Energy–ऊर्जा
Enveloped–अन्वालेपित
Epidermal–बाह्य त्वचा का
Equivalent–समतुल्य
Erruption–उद्गार
Ethereal–वायव्य
Exaggeration–अति सवर्द्धन
Exhaust post–वहिर्द्वार
Explosion–विस्फोट
Exposure–प्रकाश-दर्शन
Extreme case–परमावस्था
Eyeball–नेत्रगोलक

F

Factor–उपादान
Family of curves–वक्र-समूह
Farbin lehre–फार्बेन लेहर
Fata morgana–फाता मोर्गाना (मिथ्या प्रकाश)
Fatigue–श्रांति
Filament–तंतु
Filter–फिल्टर
Fishes–मीन (राशि)
Flickering–झिलमिलाहट
Flint–चकमक पत्थर
Flor-Contrast–फ्लोर कन्ट्रास्ट
Fluorescence–प्रतिदीप्ति
Focal length–फोकस दूरी
Fog-bow–कुहर-धनुष
Fore-ground–अग्रभूमि
Formol–फार्मोल
Formula–सूत्र
Fraxinus Ornus–क्षीरी (वृक्ष)
Frame–फ्रेम

Frame of reference–तुलना-तंत्र
Function–फलन

G

Garden globe–वाटिका-ग्लोब
Gelatine–जिलैटिन
Geranium–जीरैनियन
Glacier–ग्लेशियर, हिमनद, हिमानी
Globe–ग्लोब
Glory–प्रकाशमण्डल
Glow-worm–जुगनू
Gown–गाउन
Gradient–प्रावण्य, प्रवणता
Gradual–क्रमिक
Grains–कणिकाएँ
Granite rocks–आग्नेय चट्टाने
Granular–दानेदार, कणीय, कणिका मय
Gravitational attraction–गुरुत्वाकर्षण बल
Grease–चिकनाई
Great Bear–सप्तर्षि-मण्डल
Great circle–बृहत् वृत्त
Great Dog–बृहत् श्वान
Ground glass–घर्षित काँच

H

Haidinger's brush–हेडिन्जर ब्रुश
Halo–प्रभामण्डल
Harmony–साम्य
Hatching–रेखा-छादन
Haze–धुन्ध
Head light–हेड लाइट
Heather–हीदर (घास)
Heiligenshein–हेलिगेन्शीन
Helium–हीलियम
Helmet–हेल्मेट
Hemisphere–अर्द्ध गोला
Hexagonal–षट्पहल
Honey fungus–मधु फूँफद
Horizontal–क्षैतिज
Horizontal bar–क्षैतिज दण्ड
Horse-chestnut–अखरोट (वृक्ष)
Hydrogen phosphide–हाइड्रोजन फास्फाइड
Hydrogen sulphide–हाइड्रोजन सल्फाइड
Hyperbola–अतिपरवलय

I

Ice-blink–बर्फ-निमीलन
Ice-needle–बर्फ-सूची
Incident–आपतित, आपाती
Incident rays–आपतित किरणे
Indigo–नील
Indirect–अप्रत्यक्ष
Infinity–अनन्त दूरी
Insect–कीट
Intensity of light–प्रकाश-तीव्रता
Intensity–तीव्रता
Interference–व्यतिकरण
Inversion–उत्क्रमण
Ionization–आयनीकरण

Ionosphere–आयनस्फियर
Iridescence–उद्दीपन
Iridescent–उद्दीप्त
Irregularity–विषमता
Iso-photo–आइसोफोटो
Isotropic–समदिशा का

J

Jar–जार
Juniper–हुपुषा (पौदा)
Jupiter–बृहस्पति (ग्रह)
Juxtaposition–सान्निध्य

K

Keel–पृष्ठ-दण्ड (जहाज़ का)

L

Landmark–भूमिचिह्न
Landscape–भू-दृश्य
Lawn–लॉन
Leaden–सुरमई
Legend–आख्यान
Lens–लेंस
Leonardo-da-Vinci–लिनार्दोदा-विन्ची
Lesser maxima–लघु शीर्ष
Light-house–प्रकाश-गृह
Lightning–तडित्
Light rings–प्रकाश छल्ले
Limiting–सीमान्तक
Little Dog–लघुश्वान (तारा-समूह)
Little finger–कनिष्ठा उँगली
Line of darkness–अन्धकार-रेखा
Lion–सिंह (राशि)
Locus–बिन्दुपथ, पथरेखा
Luminous–दीप्तिमान्
Lupine–शमीधान्य (पौदा)
Lycopodium–लाइकोपोडियम
Lyre–वीणा (राशि)

M

Magnified–आवर्द्धित
Magnifying glass–परिवर्द्धक काँच
Magnifying lens–परिवर्द्धक लेन्स
Manganese–मैंगनीज
Map–मानचित्र
Mars–मङ्गल (ग्रह)
Maxima–शीर्ष
Merge–सविलीन
Metastable–भास-स्थायी
Meteors–उल्काएँ
Meteorology–ऋतु - अनुसन्धान, ऋतुविज्ञान
M[illegible]–[illegible] हाइ-ड्रोक्वीनीन
MilkyWay–आकाश-गंगा
Minimum deviation–अल्पतम विचलन
Mirage–मरीचिका
Mist–धुन्ध, कुहासा
Mizare–वशिष्ठ (तारा)
Mobil oil–मोबिल तेल
Mock sun–कृत्रिम सूर्य
Molecular–आणविक

Molecule–अणु
Monkestood–पाश्चात्य विषा (पौदा)
Monotonous–एकरस
Mosses–सेवार, शैवाल
Mother-of-pearl–सीप का मोती
Muscles–पेशियाँ

N

Negative–निगेटिव
Neon–निअन
Neutral–तटस्थ
Nicol–'निकल'
Nigrometer–नाइग्रोमीटर
Norm for comparison–आदर्श प्रमाप
Normal–अभिलम्ब
Northern lights–उत्तरीय प्रकाश
Nuclei–नाभिक
Nursery–नर्सरी

O

Oak–बलूत
Object of reference–संदर्भ वस्तु
Objective–वस्तुनिष्ठ
Objective–अभिदृश्य लेन्स, वस्तुनिष्ठ
Objectivity–तटस्थता
Obliterated–अभिरोपित
Oblique–तिर्यक्
Observable–प्रेक्षणीय
Observer–प्रेक्षक
Olive green–जैतूनी हरा
Oily–तैलीय
Opal–पोलकी रत्न
Opera glass–द्विनेत्री दूरबीन
Optical–प्रकाशीय
Optimum–अनुकूलतम
Orbit–कक्षा
Order–कोटि
Order of magnitude–दीप्तिमाप श्रेणी
Organic–कार्बनिक
Orientation–अनुस्थापन
Oriented–अनुस्थापित
Orion–मृगव्याध (तारा समूह)
Ortho–आर्थो
Orthochromatic–आर्थोक्रोमैटिक
Oscillations–दोलन
Osmic acid–आस्मिक अम्ल
Oxidation–आक्सीकरण
Oxidised–आक्सीकृत
Ozone–ओजोन

P

Paint–रजक
Pale–पाण्डुर
Panchromatic–पैन्क्रोमैटिक
Parallax–विस्थापनाभास
Parameter–परामिति
Parhelic circle–सौर परिवृत्त
Parhelia–उपसूर्य
Partial eclipse–आंशिक ग्रहण
Path difference–पथान्तर

Pattern–प्रारूप
Peat–पीट
Perceptible–बोधगम्य
Peripheral–परिमितीय
Persei δ–δ ययाति
Persei α–α ययाति
Persistence of vision–दृष्टि-निर्बन्धता
Perspective–अनुदर्शन
Phase-difference–कला-अन्तर
Phosphene–फास्फीन
Phosphorescence–स्फुरदीप्ति
Photo-electric cell–फोटो इलेक्ट्रिक सेल
Photometer–दीप्तिमापी
Physiological–शारीरिक प्रक्रिया सबधी
Pitch dark–घुप अन्धकार
Plumbline–साहुल
Pointillism–बिन्दु-चित्रण
Point of reversal–उत्क्रमण-बिन्दु
Point of view–दृष्टि-बिन्दु
Polar–ध्रुवीय
Polariod–पोलरायड
Polorising angle–ध्रुवक कोण
Polarisation–ध्रुवण
Polariscope–ध्रुवणदर्शी
Polarised–ध्रुवित
Pores–रोमछिद्र
Porpoise–सूँस
Positions of preference–वरीयता की स्थितियाँ
Positive–पाजिटिव
Potassium chromate–पोटैसियम क्रोमेट
Power house–पावर हाउस
Predominence–प्राधान्य
Primary rain-bow–प्रमुख इन्द्र-धनुष
Prism–प्रिज्म, समपार्श्व
Procyon–प्रभाश (तारा)
Projection–प्रक्षेपण
Prominences– तेज शृग (सूर्य के), परिज्वाल
Proverb–लोकोक्ति
Prussian blue–प्रशन नीला
Psychological–मनोवैज्ञानिक, मानसिक
Psychological contrast–मानसिक विपर्यास
Psychrometer–वायुवाष्प मान लेखी
Purkinje Effect–पर्किन्ज प्रभाव
Purple–नील-लोहित
Pyramid–सूची-स्तम्भ

Q

Qualitative–गुणात्मक
Quantitative–मात्रात्मक
Quartz–क्वार्ट्ज, स्फटिक

R

Radial–त्रिज्यीय
Radian–रेडिएन
Radiation–विकिरण
Radius vector–सदिश त्रिज्या
Railing–रेलिंग
Rainbow–इन्द्र-धनुष
Ram–मेष (राशि)
Random–अनियमित
Reddish–ललछौवे
Reduction–अवकरण
Reference point–निर्देशन-बिन्दु
Reflection–परावर्त्तन
Refracting edge–वर्त्तन कोर
Refraction–वर्त्तन
Refrangible–वर्त्तनीय
Regulus–मघा
Resultant–प्रतिफलित
Reverse–विलोम
Rest–विराम
Retina–रेटिना
Rim–रिम, प्रधि, नेमि
Ring–छल्ला
Round–वर्त्तुलाकार
Rotating motion–परिभ्रमणगति
Rye–राई

S

Safety valve–सेफ्टी वाल्व
Saturated–सपृक्त, सतृप्त
Saturn–शनि (ग्रह)
Scales–तुला (राशि)
Scales–माप-श्रेणी, स्केल
Scattered–परिक्षेपित
Scattering–परिक्षेपण
Scattering power–परिक्षेपण-क्षमता
Scenery–दृश्य-स्थल
Scintillations–टिमटिमाहट
Scorpion–वृश्चिक (राशि)
Screw propeller–स्क्रू-प्रोपेलर
Sea-green–समुद्री हरा
Searchlight–सर्चलाइट
Secondary rainbow–गौण इन्द्र-धनुष
Sensitive–सवेदी, सुग्राही
Sensitivity–सुग्राहिता
Series–श्रेणी
Sextant–सेक्सटैन्ट
Shade–शेड
Shoots–कोपले
Short-sight–निकट दृष्टि
Silex–साइलेक्स
Silhouette–सिल्युएत (छायाचित्र)
Silver white–रजत-श्वेत
Simultaneous–समकालिक
Sirius–लुब्धक (तारा)
Skew–विषम तलीय
Ski–स्काइ
Snap shot–स्नैप शाट
Snow–तुषार, हिम
Socket–कोटर (आँख की)

Sodium–सोडियम
Solid angle–सान्द्र कोण
Solidity–ठोसपन
Solution–विलयन
Sombre blue–घूसर नीला
Source of light–प्रकाश-स्रोत
Space–देश
Space-ships–अन्तरिक्ष यान
Spectre–प्रेत-छाया
Spectrum–स्पेक्ट्रम
Spherical segments–गोलीय खण्ड
Stage–चरण, क्रम
Statistically–आंकिक पद्धति से
Steoroscopic vision–पिण्ड-दर्शन
Steoroscopic phenomenon—पिण्ड-दर्शन घटना
Stimulated–उत्तेजित
Strato-cumulus–स्तार-पुञ्ज (मेघ)
Stratosphere–स्ट्रैटोस्फियर
Structure–सरचना
Subconscious–अवचेतन मन
Subjective–आत्मनिष्ठ
Sublimation–ऊर्ध्वपातन
Sub-sun–अघोवर्त्ती सूर्य्य
Subtended–समक्षित
Successive–क्रमागत
Sulphide–सल्फाइड
Sulphur tri oxide–सल्फर ट्राइ आक्साइड
Super-cooled–अति-शीतलीकृत
Supercooling–अति-शीतलन
Supernumerary bows–अतिरिक्त धनुष
Superposed–अध्यारोपित
Superstition–अन्ध विश्वास
Supply–सप्लाई
Surface of reference–नियामक धरातल पृष्ठ
Surface tension–तलीय खिचाव
Surroundings–परिपार्श्व
Survey–सर्वेक्षण
Symmetrical–सममित
Symmetry–सममिति

T

Talbot–ताल्बो
Tangential arc–स्पर्शकीय चाप
Tauri β–β वृष
Tauri ξ–ξ वृष
Tauri γ–γ वृष
Telegraph–टेलीग्राफ
Tenvous–विरल
Terrestrial–पार्थिव
Test-tube–परखनली
Theoretical–सैद्धान्तिक
Theory–थियरी, सिद्धान्त
Three dimensional–त्रिविमितीय
Threshold–देहली
Thunder-cirrus–तडित् अलका (मेघ)
Tip–पोर
Totality–सर्वग्रास (ग्रहण के लिए)

Total reflection–पूर्ण परावर्त्तन
Transition–सक्रमण
Transformation–रूपान्तरण
Translatory motion–रैखिक गति
Transparent–पारदर्शक
Transverse section–अनुप्रस्थ काट
Tropics–उष्ण कटिबन्ध
Trough–गर्त्त
Turbidity–ढबैलापन
Twilight–सान्ध्य प्रकाश
Twins–मिथुन (राशि)
Tyre–टायर

U

Ultra-cirrus–परा-अल्का
Ultra marine–पारसामुद्रिक
Ultra violet–अति बैंगनी
Under-estimation–न्यूनानुमान
Undulating–ऊर्मिल
Uniform–एकसम, एकसमान
Unpolarised–अध्रुवित
Unprejudicial–निरपेक्ष

V

Vaporiser–फुआर उत्पादक
Vega–अभिजित् (तारा)
Venus–शुक्र (ग्रह)
Vertical–ऊर्ध्वाधर
Vibration–कम्पन, स्पन्दन
Violet–बैंगनी
Virgin–कन्या (राशि)
Visibility–दृश्यता
Visual direction–दृष्टि-रेखा

W

Water-falls–जल-प्रपात
Water-line–जल-रेखा
Waterman–कुम्भ (राशि)
Water-sky–जल-आकाश
Water-telescope–जल-दूरबीन
Wave-front–तरगाग्र
Wavelets–तरगिकाएँ
Wave-length–तरग-दैर्ध्य
Wedge–स्फान, पच्चड
Weld–सधान, वेल्ड
Wet & Dry bulb thermometer –शुष्क-आर्द्र बल्ब थर्मामीटर
White–श्वेत
White-hot–तापोज्ज्वल
Whitisth–आश्वेत
Will-O-the-Wisp–मिथ्या प्रकाश

Z

Zenith–ऊर्ध्व बिन्दु
Zinc-white–जिक ह्वाइट
Zodiac–राशिचक्र
Zodiacal light–राशिचक्रीय प्रकाश
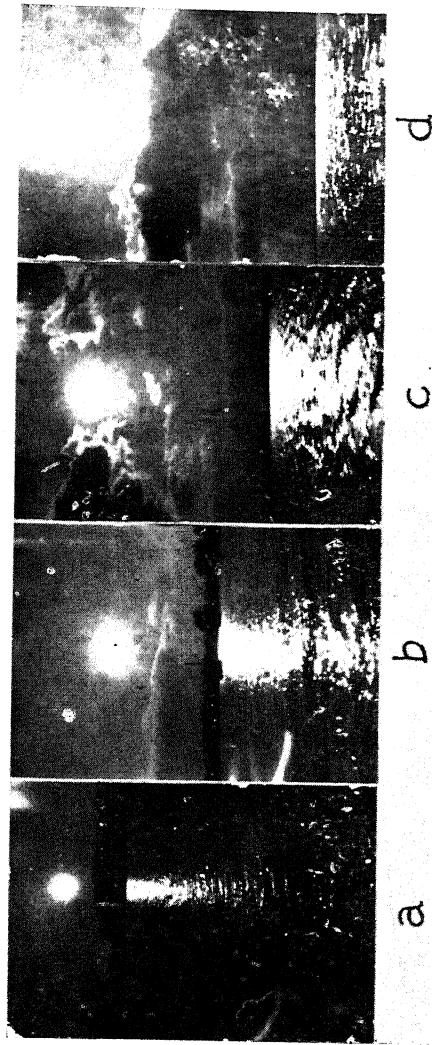
प्लेट II —समुद्र में प्रतिबिम्बित सूर्य एक प्रकाश-स्तम्भ का निर्माण करता है जो सूर्य की ऊँचाई तथा समुद्र के विक्षोभ के अनुसार ही सँकरा या चौड़ा होता है। ध्यान दीजिए कि दूर के समुद्रतट का प्रतिबिम्ब दिखाई नहीं देता। प्रकाश-स्तम्भ सदैव ही क्षितिज के निकट सबसे अधिक चमकीला दीखता है (परावर्तित बिम्ब का स्थानान्तरण देखिए § १६) पृ० ३४।
(From E. O. Hulburt, I. O. S A, 24, 35, 1934)
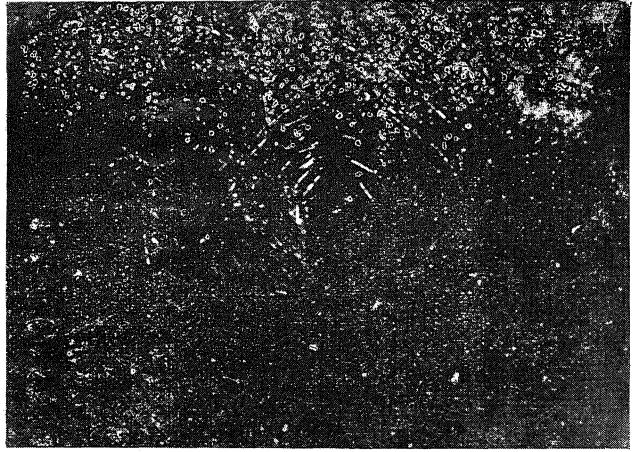
प्लेट III, a—रात के समय वृक्ष के ऊपरी भाग में से जब सड़क के लैम्प को देखते हैं तो चमकती हुई शाखाएँ प्रकाश-स्रोत के गिर्द चमकीले वृत्तों का निर्माण करती हैं (पृ० ३८)।
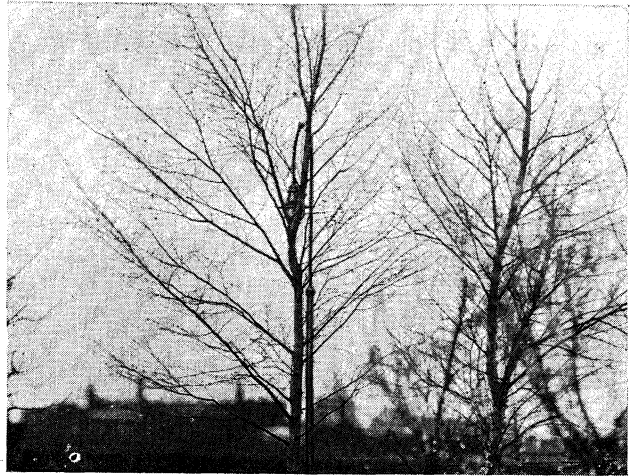
प्लेट III, b—वही वृक्ष दिन के समय। प्रत्येक चमकदार वृत्त किसी विशेष शाखा या टहनी द्वारा निर्मित होता है। (From photographs by Dr. In. A. J. Staring) (पृ० ३८)।
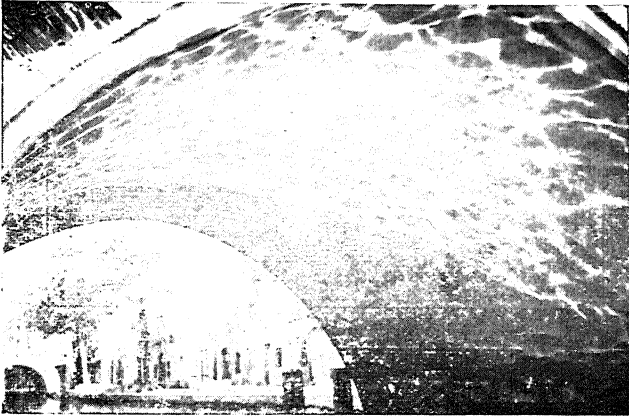
प्लेट IV, a—नहर के पानी की विक्षुब्ध सतह सूर्य की रोशनी का प्रतिविम्ब पुल की भीतरी छत पर विचित्र नमूने की शक्ल में फेंकती है (पृ० ४१)।
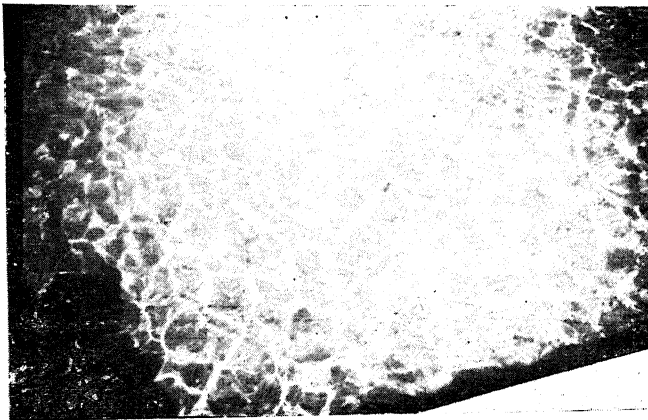
प्लेट IV, b—हलके तरङ्गित होनेवाले उथले जल से वर्तित होनेवाली सूर्य की रोशनी पेंदे पर प्रकाश की लकीरों के रूप में केन्द्रित हो जाती है (पृ० ४१)।
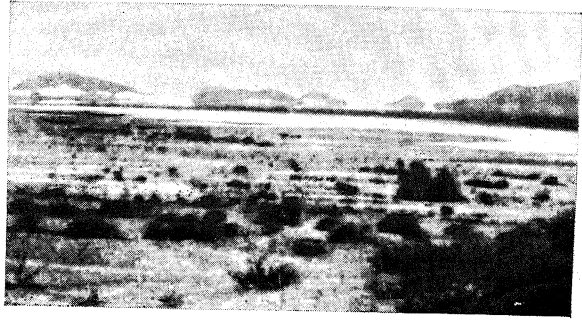
प्लेट V, a—गौण मरीचिका, डेथवैली, कैलीफोर्निया (By Courtesy of the U. S. Weather Bureau) (पृ० ५५)।
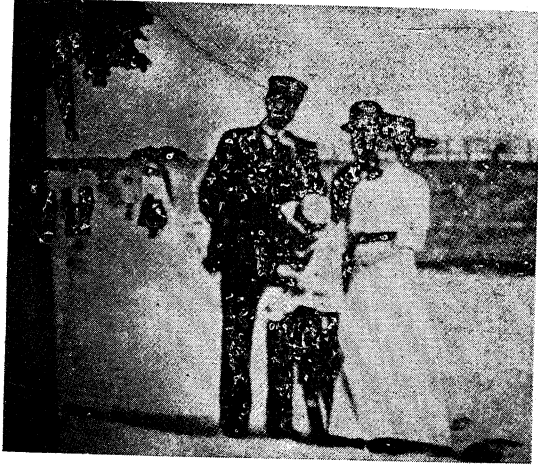
प्लेट V, b—धूप से प्रकाशित एक लम्बी दीवार पर मरीचिका। प्रेक्षक से १८० गज की दूरी पर स्थित बालक की मरीचिका दिखाई दे रही है तथा द्वितीय असामान्य परावर्तन के निर्माण का आरम्भ हो रहा है। दीवार का तापक्रम ४.५° सेंटीग्रेड था, जो वायु के तापक्रम से ऊँचा था। (From W. Hillers, Physikalische Zeitschrift, 14, 718, 1913) (पृ० ५६)।
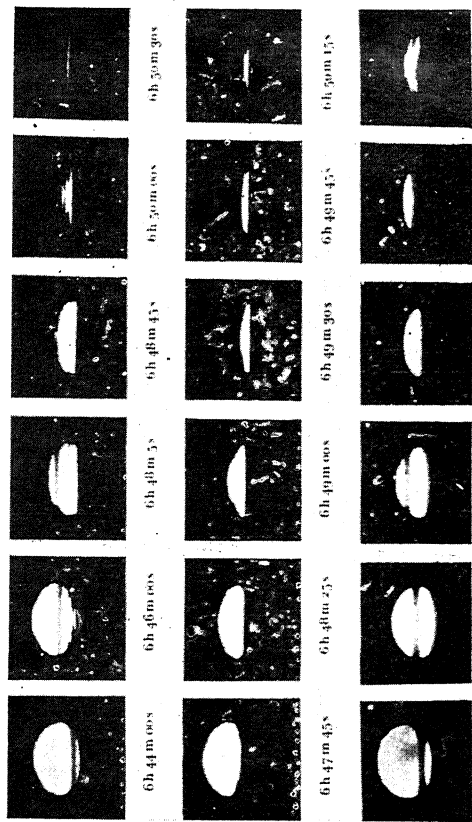
प्लेट VI—पृथ्वी के निकट उत्पन्न होनेवाली किरण-वक्रता के कारण अस्त होते हुए सूर्य की शक्ल की विकृति। (फोटो पैन्क्रोमैटिक फिलम पर ली गयी थी, केमरे के लेन्स की फोकस-दूरी ४ फुट ७ इंच थी तथा इसका मुँह २ इंच चौड़ा था एवं प्रकाश-दर्शन का समय $\frac{१}{८२५}$ सेकण्ड से लेकर $\frac{१}{५}$ सेकण्ड तक रखा गया था।) (From J. F. Chapell, P. A. S. P. 45, 281, 1933) (पृ० ६७)।
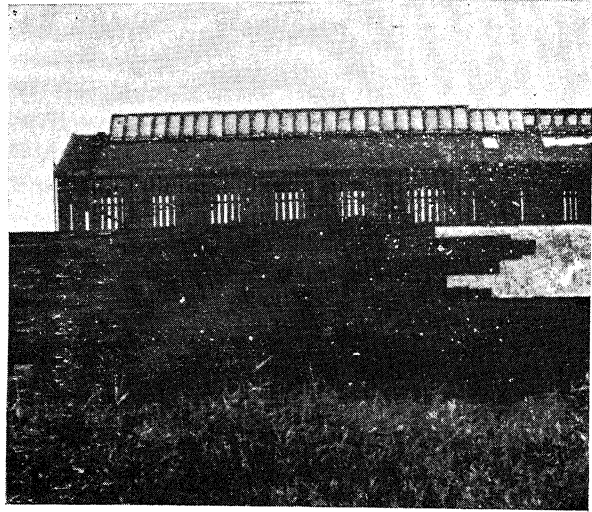
प्लेट VII, a—एक शेड के आमने-सामने के कठघरों के बीच क्रमदर्शन (Beats) (पृ० १०३)।
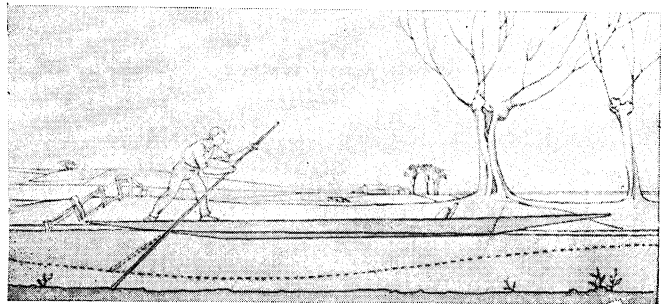
प्लेट VII, b—किश्ती की लग्गी 'मुड़ी' हुई दीखती है तथा नदी का पेंदा 'उठा' हुआ जान पड़ता है। (From 'The Universe of Light' (G. Bell and Sons Ltd. by permission of Sir William Bragg, O. M.) (पृ० ४१,१०३)।
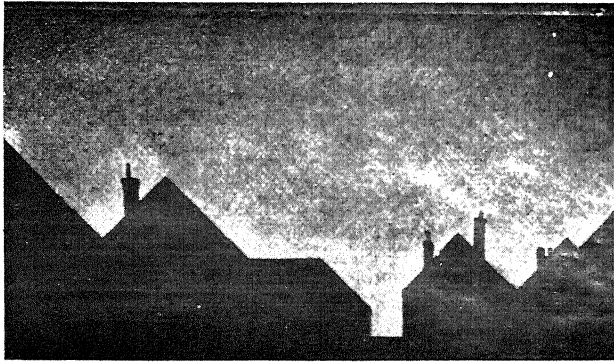
प्लेट VIII, a—शाम के वक्त मकानों की छत के सहारे विपर्यास-हाशिया (पृ० १५८) ।
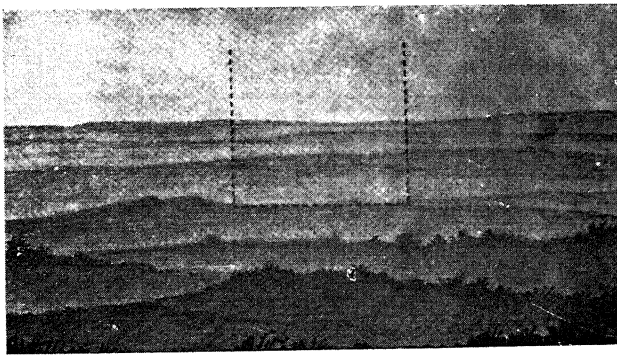
प्लेट VIII, b—ऊर्मिल भूमि पर विपर्यास-घटना । विन्दु-रेखाओं द्वारा प्रदर्शित स्थल पर ओट रखकर दृश्य-स्थल के एक अंश का परिहार करने पर यह दृष्टि-भ्रम दूर किया जा सकता है (पृ० १५८) ।
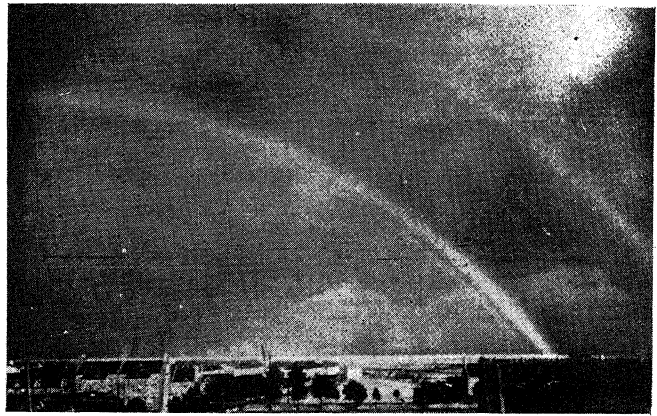
प्लेट IX, a——चटकीले रंग का मुख्य इन्द्रधनुष; फीके रंग का गौण इन्द्र-धनुष। इन्द्रधनुष के निचले छोर पर उसके भीतर तथा बाहर के हाशियों पर प्रकाश का विपर्यास स्पष्ट देखा जा सकता है तथा मुख्य इन्द्रधनुष के नीचे अतिरिक्त धनुष भी स्पष्ट दिखलाई दे रहे हैं। (Copyright, A. Clask, King's College, Aberdeen) (पृ० २०४)।
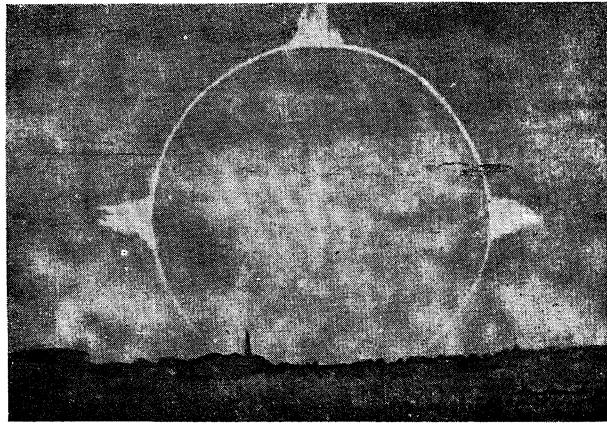
प्लेट IX, b——चन्द्रमा के गिर्द प्रकाशवृत्त या प्रभामण्डल, कृत्रिम चन्द्र, ऊपरी स्पर्शकीय चाप तथा प्रकाश का क्रॉस। (After a watercolour by L. W. R. Wenckebach, by kind permission of the Royal Dutch Met.Inst.) (पृ० २३, २४४)।

प्लेट X—उद्दीप्त बादल। Altocumulus lenticularis, photographed by Cave (International Cloud Atlas, Paris 1932 plate 33) (पृ० २७५)।

प्लेट XI—ओस से ढकी घास वाले मैदान पर हेलिगेन्शीन (पृ० २८०)।
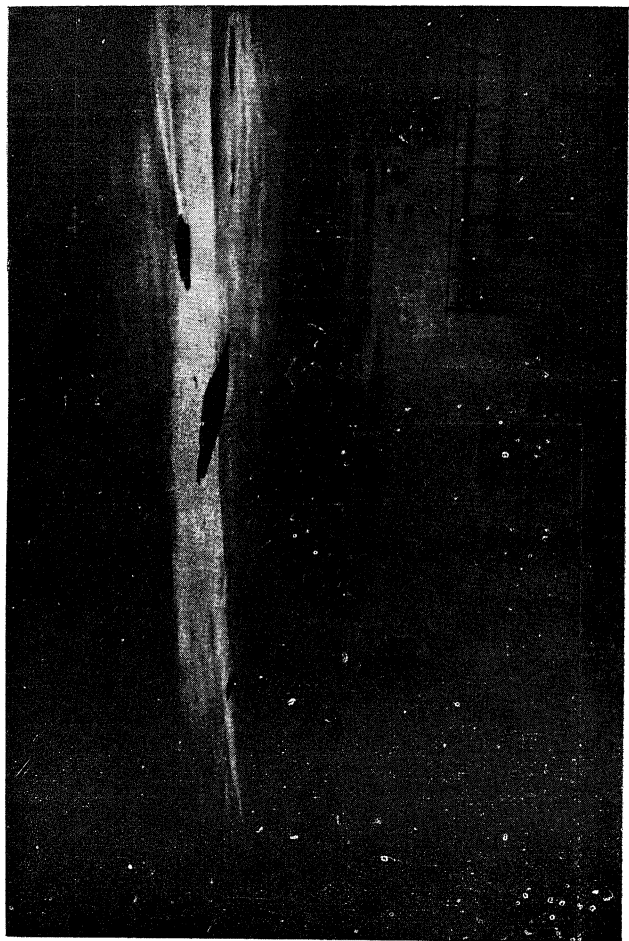
प्लेट XII—रात्रि के ज्योतिर्मय बादल (After C. Stormer, *Vidensk, Akad.* Oslo Avh. I, 1933 No. 2, Plate IX) (पृ० ३४५)।
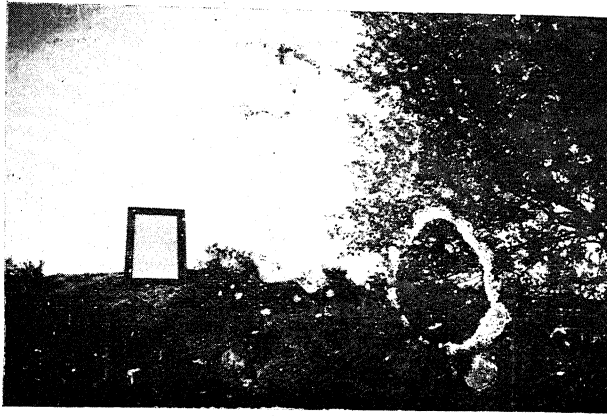
प्लेट XIII, a--एक बड़े आकार के झुके दर्पण में आकाश का ऊर्ध्वबिन्दु प्रतिबिम्बित हो रहा है। आकाश जब नीले वर्ण का होता है तो ऊर्ध्वबिन्दु पर आकाश क्षितिज के निकट के भागों की अपेक्षा कम प्रकाशमान् होता है (पृ० ३६९)।
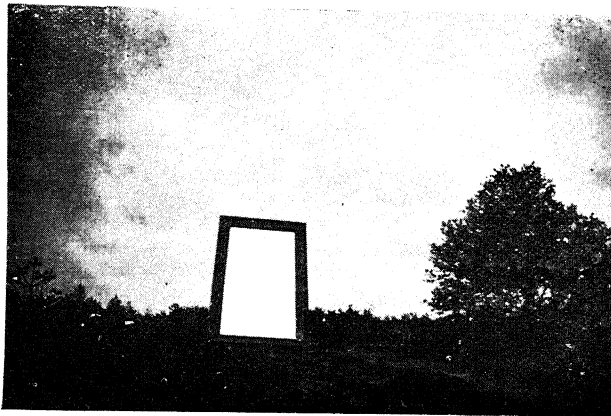
प्लेट XIII, b--वही प्रयोग, जब आकाश पर समरूप से बादल छाये थे। इस दशा में आकाश का ऊर्ध्वबिन्दु क्षितिज के मुकाबले में अधिक चमकीला है (पृ० ३६८)।
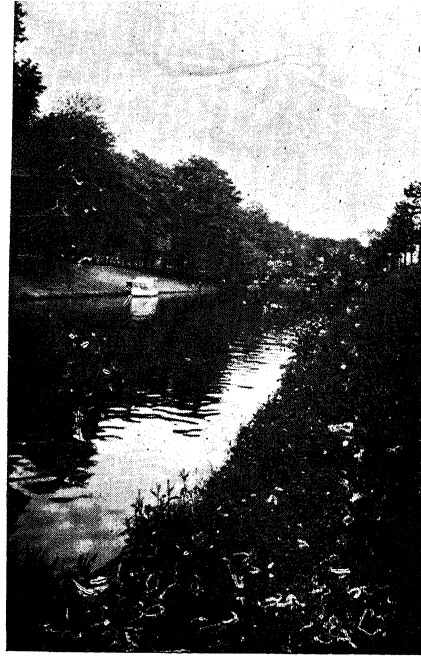
प्लेट XIV, a—पानी की सतह की हलकी तरंगें केवल अँधेरे तथा उजाले प्रतिबिम्बन के सीमा-हाशिये पर ही दृष्टिगोचर हो पाती हैं (पृ० ३७७)।

प्लेट XIV, b—पानी की सतह, अंशतः तरंगित और अंशतः शान्त (द्वि-आणविक तैलस्तर)। तीक्ष्ण सीमारेखा देखिए (पृ० ३७७)।

प्लेट XV, a—सूर्य घने पुन्ज-बादल की छाया नीचे की धुन्ध वाली हवा पर डालता है। सभी प्रकाशकिरण-शलाकाएँ एक ही स्थल से आती हुई जान पड़ती हैं, यद्यपि वास्तविकता यह है कि वे सभी परस्पर समानान्तर हैं (पृ० ४०१)।

प्लेट XV, b—गड्ढे के पानी के विक्षुब्ध धरातल पर छाया पड़ती है; प्रकाश तथा अन्धकार की असंख्य किरणें सिर से अपसृत होती दिखाई पड़ती हैं। केमरा आँख के ठीक सामने रखा गया था (पृ० ४०१)।
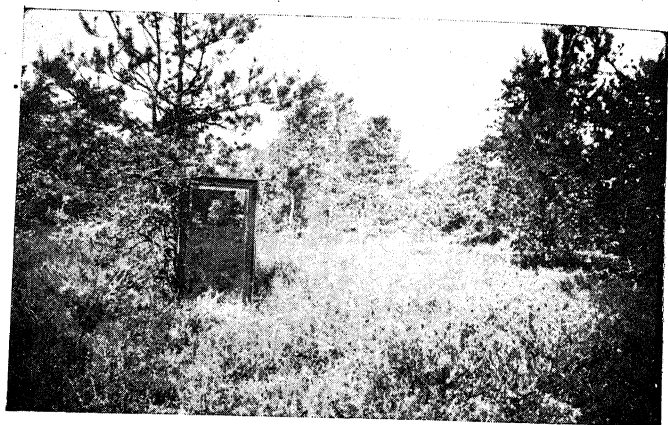
प्लेट XVI, a—हीदर पौदों वाले मैदान का दृश्य, जब कि सूर्य दर्शक के पीछे है; दर्पण में मैदान का प्रतिबिम्ब जिसमें सूर्य सामने पड़ता है (पृ० ४१५)।
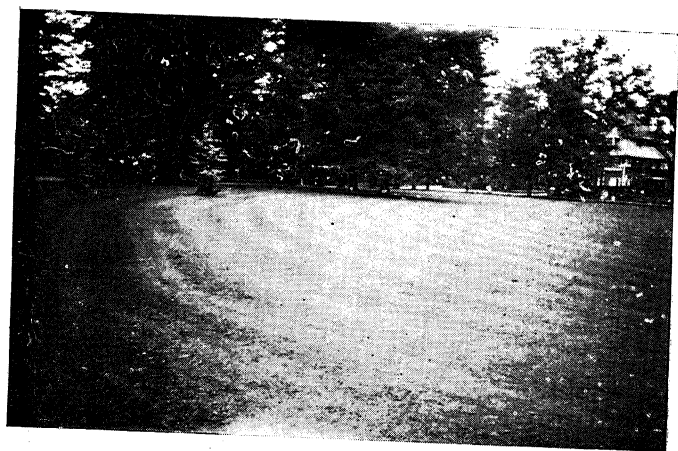
प्लेट XVI, b—लॉन पर घास काटनेवाली मशीन के चलाये जाने पर बने निशान। निशान की ये प्रकाशित तथा अँधेरी धारियाँ उस वक्त विलुप्त हो जाती हैं जब इनकी समकोण दिशा से इनका अवलोकन करते हैं (पृ० ४१५)।